राजधर्मेस्रा
पद्धतराजह
ति १ नंईं
३२५

महाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्मनिरूपणम् (राजनीतिशास्त्रम्)
भाषाटीका सहितम् पत्राणि २१२ (संपूर्णम्)

भारते शान्तिपर्वणि राजधर्म-
निरूपणम् भाषाटीका
२१२ पत्राणि

श्री· शा· प· टी· १ युधिष्ठिरउवाच किमाहुर्दैवतं विप्रा राजानं भर
तर्षभ मनुष्याणामधिपतिं तन्मे ब्रूहि पितामह १
हे पितामहजी राजाको विप्रलोक देवताक्यों कहतेहे और हे भ
रतर्षभ मनुष्योंका अधिपतिक्यों कहतेहे इस हेतूको आपकहो १
भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनं
बृहस्पतिं वसुमना यथा पप्रछ भारत २ ॥
भीष्मउवाच हे भारत इसअर्थमे एक पुरातन इतिहासको
उदाहरण कहतीहे बृहस्पतीको वसुमना राजा जैसे इच्छा करता
भया उसको तुम्हारे प्रतिकहतेहे २
राजा वसुमना नाम कौसल्यो धीमतांवरः
महर्षिं किल पप्रछ कृतप्रज्ञं बृहस्पतिं ३
राजा वसुमना नामक कोशलदेशका महाबुद्धिमानश्रेष्ठभया
हे महाकुशल बुद्धिजो बृहस्पति महाऋषि तिन्हको निश्चयकर्के
इच्छाकरताभया ३ ॥
सर्वं वैनयिकं कृत्वा विनयज्ञो बृहस्पतिं
दक्षिणानंतरो भूत्वा प्रणम्य विधि पूर्वकं ४
सो राजा महात्माजनोकी विनयपूजादि विधांको जानताहे
बृहस्पतिजीको प्रत्युथ्यान नमस्कारादि पूजाविधिकर्के द
क्षिणादानके अनंतर समीप होकर प्रदक्षिणाकर्के बहोड
विधिसे प्रणामकर्के ४ ॥
विधिं पप्रछ राज्यस्य सर्वलोक हितेरतः
प्रजानां सुख मन्विछन् धर्मशीलं बृहस्पतिं ५
राज्यकी विधिके ज्ञानवास्ते बृहस्पतिको इच्छाकरताभया सर्वलो
कके हितविषे रतहे प्रजाको सुखकी वांछाकरताहे धर्मशी
ल बृहस्पतिको जानताभया ५ ॥
वसुमनाःउवाच केन भूतानि वर्धंते क्षयं गछंति
केनवा कर्मवंतो महाप्राज्ञ सुख मक्षय मापनुः ६
वसुमनाउवाच हे महाप्राज्ञ सभही भूतकैसे वृद्धिको प्राप्तहो
तेहे और कौनदोषको हेतुसे क्षयको प्राप्तहोतेहे कौनदेवको
पूजनकरते सुखको प्राप्तहोतेहें ६ ॥

एवं पृष्टो महाप्राज्ञ कौसल्येना मितौजसा
राजसत्कार मव्यग्रं शशंसास्मै बृहस्पतिः ७
हे राजन् इसप्रकार महातेजवान् कौशल्यराजाने बृहस्पतिको प्रश्नकियातो महाप्राज्ञ बृहस्पति राजाको अप्रप्रशंसाके सत्कारपूर्वक वचन कहतेभये ७

बृहस्पतिरुवाच राजमूलो महाप्राज्ञ धर्मोलोकस्य लक्ष्यते प्रजा राजभया देव नखादंति परस्परं ८
बृहस्पतिरुवाच हेमहाप्राज्ञ वसुमनस राजन् लोकमर्यादाका धर्मराज मूलकहै यह सभही प्रजालोक राजदंडभयसेही परस्पर दुर्वल सवलतासे नही भक्षण करतेहै ८

राजा ह्येवा खिलं लोकं समुदीर्णं समुत्सुकं
प्रसादयति धर्मेण प्रसाद्यच विराजते ९
राजा लोकोविषेही संपूर्ण लोक उदयहोनेको उत्कंठा करताहै राजा संपूर्ण प्रजा लोकको धर्मपालना प्रसन्नकरताहै औेर सभको प्रसन्नकर्के आपसंपदावृद्धिकर्के विराजमान होताहै ९

यथाह्य नुदके मत्स्या निराक्रंदे विहंगमाः
विहरेयु र्यथाकामं विहिंसंतः पुनः पुनः १०
निर्जलजलाशय विषे मत्स तडफ मरतेहै औेर जैसे हिंसाभय रहित वनविषे श्येनादि पंक्षी अपनी इच्छासे परस्पर हिंसाविहारकर्के वारं वार नाशको प्राप्तहोजातेहैं १०

यथा ह्यनुदये राजन् भूतानि शशिसूर्ययोः
अंधे तमसि मज्जेयु रपश्यंतः परस्परम् ११
हे राजन् जैसे सूर्यचंद्रमाके नही उदयमो सभही भूत अंधतमके अंधकारमो परस्पर दर्शन ज्ञान विना अंधकूपमें मगनहोजातेहैं जैसे ॥ ११

विमथ्याति क्रमेरंश्च विषह्यापि परस्परं
अभाव मचिरेणैव गच्छेयु र्नात्र संशयः १२
यह सभही परस्पर बलके अतिशयकर्के परस्पर विमर्दकर्के अचिरकालकर्केही अभावको प्राप्तहोवें इसमो संशयनहीहै १२ ॥

एवमेव विना राज्ञा विनश्येयु रिमाः प्रजाः
अंधे तमसि मज्जेयु रगोपाः पशवो यथा १३
ऐसे ही सभही प्रजा राजा विना अधर्मके अंधतमके म
हाकूपविषे डूबजावे जैसे गोपविना पशुगणनष्टहोजा
तीहै तैसे प्रजाभी नष्टहोजावे १३ ॥
हरेयु र्बलवंतो पि दुर्बलानां परिग्रहान्
हन्युर्व्यायच्छमानांश्च यदिराजा न पालयेत् १४
जो राजा प्रजालोकोंको नहीपालनकरेतो दुर्बलेनोके
दारादि कुटुंबोको अपनी सामर्थ्य प्रयत्नकरके रक्षमान
हेतभी बलवान दुष्टलोक हरलेजावे और मारवीजावे १४
ममेद मिति लोकेस्मि न्न भवेत्संपरिग्रहः
नदारा नचपुत्रः स्या न्नधनं न परिग्रहः
विष्वक्लोपः प्रवर्तेत यदिराजान पालयेत् १५
यह गृह कुटुंब मेराहै ऐसा ममताका आग्रह किसीको न
ही होवे न किसीके अपनी दारा कुटुंब रहेगा न किसेके
अधीन अपना गृहस्थ रहेगा जो राजा पालन नहीकरे अप
ना पुत्र रहेगा न किसीको अन्नमिलेगा सर्वप्रकारसे लोकम
र्यादा लोपप्रवृत्त होजावे १५
यानंवस्त्र मलंकारा न्रत्नानि विविधानि च
हरेयुः सहसा पापा यदिराजान पालयेत् १६
जो लोकोंके अश्वादि असवारी है वस्त्रहै अलंकार भूषणहै ना
नाविधरत्नादि संपदा उसको पापी लोकबलसे हरलेवे १६
पतद्बहुविधं शास्त्रं बहुधा धर्मचारिषु
अधर्मः प्रगृहीतः स्या यदिराजान पालयेत् १७
जो राजा पालननही करे तो धर्मचारी लोकोविषे पापीजनो
के किये अनेकशास्त्र पातहोजावे और अधर्मका परिचार
बहोतहोजावे १७
मातरं पितरं वृद्ध माचार्य मतिथीन् गुरुन्
क्लिश्नीयु रपि हिंस्युर्वा यदि राजान पालयेत् १८

हे राजन् जो राजा पालन नहीकरे तो माता पिता वृद्धहोवे और आचार्योंको और अतिथी अभ्यागतोको कोई सेवानहीकरे गुरोकी सेवाभी कोई नहीकरे क्लेशबी देवेगे और इन्द्रकी हिंसाभी करदेवेगे १८ ॥

वधबंध परिक्लेशो नित्य मर्थवतो भवेत
ममत्वं नच विंदेयु र्यदिराजान पालयेत् १९

जो राजा पालन नहीकरे तो द्रव्यसंपदावाले लोकोको वधबंध परिक्लेश सदाही बनारहे अपने गृहसंपदा विषे और स्त्रीक लत्रादिकोविषे ममता संबंध कदापि नहीबनेगा १९

अंतश्चा काल एवस्यु र्लोकोयं दस्युसा द्भवेत
पतेयु नरकं घोरं यदि राजान पालयेत् २०

जो राजा पालन नहीकरे तो लोकोके शरीरके अंतकाल अकालमें ही होजावे लोक सभही चोरोकर्के व्याप्तहोजावे सभही अधर्मप्रवृत्तिसे घोर नरकमें पड़जावे २०

न योनिदोषो वर्तेत न कृषि र्न वणिक पथः
मज्जे द्धर्मस्त्रयी न स्या यदि राजान पालयेत् २१

जो राजा प्रजापालनकरे तो अभिचारकी निंदाकोई नहीकरे न कृषी कर्मचले न वाणिज्य मार्गचले और वेदत्रयी धर्मसभही डूबजावे २१

न यज्ञाः संप्रवर्तेयु र्विधिव त्स्वाप्तदक्षिणाः
न विवाहः समाजो वा यदिराजान पालयेत् २२

जो राजा लोकमर्यादा पालननहीकरे तो विधिवत् पूर्णदक्षिणावाले यज्ञयागादिक न होवे विवाह समाजभी कभी नही होवे २२ ॥

नवृषाः संप्रवर्तेर न्मथ्येरंश्च गर्गराः ॥
घोषाः प्रणाशं गच्छेयु र्यदि राजान पालयेत् २३

जो राजा धर्मपालना नकरे तो वृषजोहे सो गौउएविषे काम भोगकोनहीकरे और गोशाला दधिमथनके गर्गरशब्दनही प्रवृत्तहोवे और जेते गोपनके संचारवाले घोषस्थानभी नाशको प्राप्तहोजावेगे २३ ॥

त्रस्त मुद्विग्न हृदयं हाहाभूत मचेतनम

श्री
रा.ध.
टी.
३

3

तत्रेन विनश्येत्सर्वं यदि राजान पालयेत् २४
जो राजा जगतको पालन नही करे तो साराजगत त्रासकर्के
उद्विगनहोजावे हाहाप्रकारकर अचेतन होजावे क्षणमोंही
सकलविनाशुकों प्राप्तहोवे २४

न संवत्सर सत्राणि तिष्ठेयु रकुतोभयाः
विधिव दक्षिणावंति यदिराजान पालयेत् २५
जो राजा विधीकर्के पाललननही करे तो संवत्सर विधीके प्रीति
विधानमंत्र निर्भय होकर पाठकर्के श्रवणगोचर नहीहोवे वि
धिवत् दक्षिणाभी नही प्राप्तहोवे २५

ब्राह्मणा श्चतुरो वेदा नाधीयेरं स्तपस्विनः
विद्यास्नाता व्रतस्नाता यदि राजान पालयेत् २६
जो राजा ब्रह्मकर्मको नहीपालन नहीकरे तो ब्राह्मण चारोवेदो
अध्ययन नहीकरे तपस्वी लोकतपको नहीकरे विद्यास्नात
लोक विद्याको त्यागदेवे व्रतस्नात लोकव्रत त्यागकरदेवे २६

न लभे द्धर्म संश्लेषं हतविप्र हतोजनः ॥
हतो सर्वेंद्रियो गच्छे यदि राजान पालयेत् २७
जो राजा जगतकी पालना नहीकरे चारवर्णोका लोकधर्म कर्म
के संबंधको नही प्राप्तहोवे अपनेधर्मसे हतविप्रोकर्के सभ
ही जनहत प्रायहोजावे इंद्रियोकी ज्ञानदृष्टि कर्मदृष्टी सभही
हतहोकर अस्वस्थ होजावे २७ ॥

हस्ता हस्तं परिमुषे भिद्येरन्सर्व सेतव:
भयार्त्त प्रद्रवे त्सर्वं यदि राजान पालयेत् २८
जो राजा सर्वलोकको नहीपालन करे तो हस्ता हस्तसे चोरलो
क सर्वस्वको हरलेजावे सभही धर्मसेतु मर्यादा छिन्नहोजावे
भयातुर सभलोक परीयण करजावे २८ ॥

अनया: सं प्रवर्तेर न्भवे द्वैवर्ण संकरः ॥
दुर्भिक्ष माविशे द्राष्ट्रं यदि राजा न पालयेत् २९
जो राजा वर्णधर्मको नहीपाले तो सर्वलोक अन्यायविषे प्रवृत्त
होवे वर्णसंकरजाती सभहोजावे संपूर्णदेशमो दुर्भिक्षप्रवे
श सदाकरे रहेगा २९ ॥

निहत्य हि यथा कामं गृहद्वाराणि शेरते

मनुष्या रक्षिता राज्ञा समंता दकुतो भयाः २०
हे राजन् वक्षमन यह राजाके नहीपालन पालनाके दोषजगत
प्रसिद्धकहेहै ग्ररु राजाकी पालनासे जो गुणहे उन्हको कहतेहै
राजाकी पालनासे सभही लोक रात्रमोभी गृहद्वारोको उघाडकर
अपने इच्छासे निर्भयहोकर सुखनिद्राको करेगे २०
नाक्रुष्टं सहते कश्चि क्षतो वा हस्त लाघवं
यदिराजान सम्यक गां रक्षयत्यपि धार्मिकः २१
जो राजा जगतको पालनकरे तो आक्रंदशब्दको रोदनशब्दको
कहीनही सहारेगा और हस्तलाघवकी ताडनाको कहा सहारे
गा लोकरक्षावास्ते जो राजा सम्यक पृथ्वीको नही रक्षणकरे त
वही संपूर्णलोकोका दुर्वचनासे हस्तादि ताडनासे मर्यादाभंग
से अधर्मपीडाकोसहारतेहै राजरक्षासे अधर्मपीडा कदापि
नहीहोती २१ ॥
स्त्रियश्चा पुरुषा मार्गं सर्वा लंकार भूषिताः
निर्भयाः प्रतिपद्यंते यदि रक्षति भूमिपः २२
जो राजा रक्षाकरताहै तब इस्त्रियां पुरुषसें रहित सर्वभूषणोंक
र्के शोभित निर्भयहोकर अरण्य मार्गमोभी विचरतेहै २२
यजंते च महायज्ञै स्त्रयोवर्णाः पृथग्विधैः
युक्ता श्चाधीयतेविद्यां यदा रक्षति भूमिपः २३
जो राजा रक्षाकरताहै तबही तीनोवर्ण भिन्न भिन्न विधिवाले
यज्ञोकरके यजनकरतेहै और विद्याभी सम्यक् अध्ययनहोतीहै २३
धर्ममेव प्रपद्यंते न हिंसंति परस्परम्
अनुगृह्णंति चान्योन्यं यदा रक्षति भूमिपः २४
जो राजा रक्षाकरताहै तबही लोकधर्म मार्गको सेवनकरतेहै औ
र परस्पर हिंसाभी नहीकरते और परस्पर प्रेमसे अनुग्रह उप
कार करतेहै २४ ॥
वार्ता मूलोह्ययं लोक स्त्रय्या वैधार्यते सदा
तत्सर्वं वर्तते सम्य ग्यदा रक्षति भूमिपः २५
हे राजन् जबराजा रक्षाकरताहै तब यहलोक वार्ता मूल जो या

पार कर्मसोभी त्रयी विद्याकर्के धारण कियाहै सो सभाही
त्रयीविद्याका अवहार राजरक्षासे होताहै ३५

यदा राजाधरं श्रेष्ठा मादाय वहति प्रजाः
महता बलयोगेन तदा लोकः प्रसीदति ३६

जब राजा दंडनीतिको भारको धारकर्के प्रजाको रक्षाकरताहै
महाबल योगकर्के प्रजाॅन विषे सावधान होताहै तबलोक
महाप्रसन्नताको प्राप्तहोताहै ३६

तस्यैो वहति भारं सर्वलोक भयावहं ॥
तिष्ठन् प्रियहिते राज्ञ उभौ लोका विमौ जयेत् ३७

हे राजन् उसराजाके आज्ञाभारको जो पुरुष धारणकरताहै और
और राजाके हितमो और प्रियकरणेमो सावधान होकर वर्तमा
न होताहै सो पुरुष उभय लोकको जयकरताहै ३७

यस्य भावेन भूताना मभावःस्या त्समंततः
भावे च भावो नित्यं यः कस्तं न प्रतिपूजयेत् ३८

जिसको प्रभावविषे सर्वत्र सर्वप्रकारसे प्रभावहोताहै जिस
को भावविषे सभकाभाव विधमान होताहै ऐसे राजाको कौन
लोकनहीं पूजानहीकरे ३८

यस्तस्य पुरुषः पापं मनसा प्यनुचिंतयेत्
असंशय मिह क्लिष्टः प्रेत्यापि नरकं व्रजेत् ३९

जो पुरुष राजाके साथ पापकर्मको मनकर्के चिंतनकरता
है सो इसलोकविषे क्लेशदुखभोगताहै और परलोकविषेभी
नरकको जाताहै ३९ ॥

नहि जात्ववमंतव्यो मनुष्य इति भूमिपः
महती देवता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ४०

हे राजन् भूमिपाल जो राजा सो मनुष्यहै ऐसे जानकर कदा
पि अपमान नहीकरणे योग्यहै यह राजा मनुष्यरूपकर्के म
हाप्रभाववाली परम एक देवता जानणेहै ४०

कुरुते पंच रूपाणि कालयुक्तानि यः सदा
भवत्यग्नि स्तथा दित्यो मृत्यु र्वै श्रवणो यमः ४१

जोनसा यह राजा रूप परमेश्वर है सो एकही कालयोगसे पंच
देवताके रूपकार्यकरताहै कोई कालविषे अग्निहोताहै कोई
कालमो सूर्यरूप होताहै कोई कालमो मृत्युदेवता रूपहोताहै
कोई कालमो कुवेररूपहोताहै कोई कालमो यमरूप होताहै ४१

यदा ह्यासीदतः पापान्दहत्युग्रेण तेजसा
मिथ्योपचरितो राजा तदा भवतिपावकः ४२

जब अपने समीपवर्ती पापीजनोको उग्रतेजकरकें मिथ्याभाष
णादि पापदंडकरकें शासना करताहै तब राजा अग्निरूपहोता
है ४२ **यदा पश्यति चारेण सर्वभूतानि भूमिपः**
क्षेमं च कृत्वा व्रजति तदा भवति भास्करः ४३

जब यह राजा अनेकचारोके प्रयोगकरकें महाक्रोधसे शत्रुग
णोकी दुष्टक्रियाको क्षीणकरताहै तब यह सूर्यरूप होताहै ४३

अशुचींश्च यदाक्रुद्धः क्षिणोति शतशो नरान्
सपुत्रपौत्रान् सामात्यांस्तदा भवति सोंतकः ४४

जब यह राजा अपराध करणेहारा पापी जनोकी क्रोधकरकें शूलप्र
कारके दंडभेदोकरकें अंगप्रत्यंगोकरकें छेद भेदादिककरकें सपुत्र पशु
बांधवोको नाशकरताहै तब यह कालमृत्युरूपहोताहै ४४

यदात्वधर्मिका न्सर्वांस्तीक्ष्णैर्दंडै र्नियच्छति
धार्मिकांश्चानुगृह्णाति भवत्यथ यमस्तथा ४५

जब यह राजा अधर्मजनोको क्रोधकरकें तीक्ष्णदंडोकरकें पीडन
करताहै और धर्मकरणेहारे जनोको धनुपानादि अनुग्रह करता
है तब यमधर्म राजरूप होताहै ४५

यदा च धनदाराभि स्तर्पयत्युपकारिणः
आच्छिनत्तिच रत्नानि विविधान्यपकारिणां ४६

जब यह राजा अपने उपकारी जनोको धनसंपदादि अखंडधाराव
र्षीकरताहै और अपकारी जनोकी धनसंपदाको हरलेताहै तबकु
वेर रूपहोताहै ४६ ॥

श्रियं ददाति कस्मैचि त्कस्माच्चिदपिकर्षति
तदा वैश्रवणो राजं लोके भवति भूमिपः ४७

किसीकों संतुष्ट होकर संपदाको देलावे और किसीसे क्रोधकर्के
संपदाको हरलेताहे तब राजा कुवेररूप होताहे ४७

नास्यापवादे स्यातंबद्धेण क्लिष्ट कर्मणा
धर्म्य माकांक्षता लोक मीश्वरस्या न सूयता ४८

हे राजन् जो पुरुष अपनेविषे स्वर्गसंपदाकी वांछाकरताहे
और उदार कर्मकरणे चाहताहे और धर्मकर्मकी फलसिद्धिको
उत्तमलोकप्राप्तीको वांछाकरे उसने राजाके विपरीतभावमो
नहीप्रवृत्तहोता और राजाकी निंदाभी नही करणी तब उत्तम
लोकप्राप्तीहोतीहे ४८ ॥

नहिराज्ञः प्रतीपानि कुर्वन् सुख मवाप्नुयात्
पुत्रो भ्राता वयस्यो वा यद्यप्यात्म समोभवेत् ४९

जो कोई राजाके विपरीतभावको आचरणकरै सो राजाकापुत्रहोय
भ्राताहोयअथवा मित्रसखाहोय कदापि सुखको नहीप्राप्तहोता ४९

कुर्यात् कृष्णगतिः शेषं ज्वलितो निलसारथिः
नतु राजाभि पन्नस्य शेषं क्वचन विद्यते ५०

हे राजन् अग्निपवनकी सहायता पाइकर प्रज्वलित होताहे सो
गृहसंपदाको अथ हलोके बनको दग्धकर्के फेरवी कुछवाकी
शेषकरतासे जो कोई राजाकी क्रोधाग्निकर्के दग्ध होताहे उ
सकी शेषवाकी कुछनहीहोती ५०

तस्य सर्वाणि रक्षाणि दूरतः परिवर्जयेत्
मृत्योरिव जुगुप्सेत राज प्रहरणा न्नरः ५१

राजाके रक्षणीय द्रव्योंके दूरसे त्यागकरे मृत्युके समान राजाके
द्रव्यहरणेसे भयभीतहोवे ५१

पश्चपदभिमृषन्सद्यो मृगः कूट मिवस्पृशन्
प्राप्नस्व मिवरतेन राजस्व मिह बुद्धिमान् ५२

जो पुरुषराजाके द्रव्यको निर्भयहोकर हरलेवे सो मारणकासा
धन भूतकूटयंत्रके स्पर्शकरके जैसे मृगनाशको प्राप्तहोताहे
तैसे राज्यद्रव्यापहारी मनुष्यभी नष्टहोजाताहै ताते बुद्धिवान
पुरुष सोईहे जो राजाके द्रव्यको अपने शरीर प्राणजानक
कें रक्षाकरे ५२ ॥

महांतं नरकं घोर मप्रविष्ट मचेतनम्

पचंति चिर राजाय राजवित्ता पहारिणः ५३
जो पुरुष राजाके द्रव्यको हरलेतेहै सो महाघोर नरकको
चिरकाल भोगतेहै जिसविषे अपने शरीरकी प्रतिष्ठानही
होती और चेतनताभी मनविषे नहीहोती ५३
राजा भोजो विराट् सम्राट् क्षत्रियो भूपति र्नृपः
यएभिः स्तूयते शब्दैः कस्तं नार्चित मर्हति ५४
जो पुरुष राजाकों ऐसी स्तुति करताहै हे राजन तूं भोग सं
पदाका दाता भोजराजाहै और विराजहै सर्व जगतकी पालना
वासते विराट्रूपहै और राजेओकाभी राजाहै और उत्तमक्षत्रीहै
पृथिवीका मालकहै और संपूर्ण मनुष्योंकी पालनाकरणेहारा
नरपतीहै जो पुरुष इसप्रकारके श्रेष्ठवचनोकर्के स्तुतिकरता
है ऐसे मनुष्यको कौनपुरुषनही पूजाकरे राजाकी पूजा इस
प्रकार कर्तव्यहै ५४
तस्मा त्बुभूषु र्नियतो जितात्मा नियतेंद्रियः
मेधावी स्मृतिमान् दक्षः संश्रयेत महीपतिं ५५
ताते जो पुरुष अपना कल्याण चाहताहै सो धर्मकर्मके नियम
वालाहोवे जितचित्तहोकर जितेंद्रियहोकर बुद्धिको दृढकर्के
सेवाकरणेको उपायोको स्मरणकर्के व्यवहारकार्योविषे चतुर
होइ महीपतिजो राजा उसको सर्वप्रकारसे आश्रयकरे ५५
कृतज्ञं प्राज्ञमक्षुद्रं दृढभक्तं जितेंद्रियम्
धर्मनित्यं स्थितं नीत्यां मंत्रिणं पूजयेन्नृपः ५६
हे राजन राजाभी अपने कार्य सहायवास्ते मंत्रीको उत्तम अधिका
री जानकर मानपूजाकरे कैसाहोय मंत्री प्रथमतो राजाके उप
कारका कृतज्ञहोय और लोकोके कार्य व्यवहारका कृतज्ञहोय
और व्यवहार ज्ञानमो प्राज्ञहोय और केवलदोषदृष्टिनहीहोय
गुणदृष्टिहोय और राजकार्यमों दृढभक्तहोय और जितचित्तहो
य और धर्मविचारमों नित्यष्टावान्होय और राजनीतिमो स्थिर
चित्तहोय ऐसी मंत्रीको राजा अपने समान मानजाने ५६
दृढभक्तिं कृतप्रज्ञं धर्मज्ञं संयतेंद्रियम् ।
शूर मक्षुद्र कर्माणं निषिद्ध जनमाश्रयेत ५७

वहोउराजा कैसे पुरुषकों अपने सहायतावासते आश्रयकरे जौनसा स्वामीकार्यविषे दृढभक्तिहोय और संपदाके अभ्यास कर्के कुशलबुद्धिहोय और धर्मनिर्णयका ज्ञाताहोय और काम क्रोध लोभत्यागकर्के जितेंद्रीहोय और सूरमाहोय और अति उदार जिसके कर्महोय तुच्छकार्य खोटेकार्यसे रहितहोय और अभिमानकर्के तुच्छजनोको निषेधकरे ऐसे एकांगभक्तिवीर पुरुषको राजाकार्य सिद्धीवास्ते परीक्षाकरे ५७

प्रज्ञा प्रागल्भं कुरुते मनुष्यं राजा रूपाणि करुते मनुष्यान् राजाभिपन्नस्य कुतः सुखानि राजाभ्युपेतं सुखिनं करोति ५८ ॥

हे राजन् राजा ऐसी दैवी शक्तिसंपन्नहोताहै अपनी प्रभावशक्तिकर्के पुरुषकों बुद्धिज्ञानकर्के प्रगल्भकरदेताहै और कुरूप मनुष्योकों संपदाज्ञान संपन्नकरदेताहै ताते राजाने निषिद्धकिये पुरुषको लोकसुख कहाहोतेहै राजा अपने सेवकजनको सर्वसुखी करदेताहै ५८

राजा प्रजानां हृदयंगरीयो गतिः प्रतिष्ठा सुखमुत्तमं च समाश्रिता लोकमिमं परं च जयंति सम्यक् पुरुषानरेंद्र ५९ ॥

हे राजन् राजा जोहै सो संपूर्ण प्रजारूपी शरीरका हृदयहै राजाही सर्वलोकका सारहै उत्तमगति होजाहै और प्रतिष्ठाराजाहै उत्तमसुखराजाहै जो पुरुष राजाकों समाश्रय करतेहै सो इसलोकको सर्वप्रकारसे जयकरलेतेहै और परलोकको भी सुधारलेतेहै ॥ ५९

नराधिपश्चाप्यनुशिष्य मेदिनीं दमेन सत्येन च सौहृदेन महद्भिरिष्ट्वा क्रतुभिर्महायशा स्त्रिविष्टपेस्थानमुपैति शाश्वतम् ६०

हे वरमन राजन् राजा जोहै सोभी उत्तमअधिकारी जनलोकर्के पृथवीको दंडनीतीकी विधिसे और सत्यधर्मके रक्षासे और प्रजापालनके सुहृदभावकर्के राजनीतिसे शासनाकर्के बडे उयज्ञोकर्के महायशकों स्थापनकर्के स्वर्गविषे उत्तमशाश्वत स्थानकों प्राप्तहोताहै ६० ॥

सएव युक्तो गिरसा कौसल्यो राजसत्तमः
प्रयत्नान् कृतवान्वीरः प्रजानां परिपालने ९।
इतिश्री राजधर्मे ग्रष्टषष्टितमोध्यायः ६८
भीष्मउवाच हे राजन् कौसलदेशका उत्तमराजा वसुमना जोहे
सो अंगिराके पुत्रने बृहस्पतिने इसप्रकार वचनकहा तब ग्रप
ने वीरधर्मकर्के प्रयत्नसे प्रजोंके परिपालनको करताभया ६९
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे ग्रष्टषष्टितमोध्यायः ६८
युधिष्टिरउवाच पार्थिवेण विशेषेण किंकार्य मव
शिष्यते कथं रक्षो जनपदः कथं जेयाश्च शत्रवः १
युधिष्टिरउवाच हे भारत सत्तम पार्थिव जो राजा उसको विशेषकर्के
क्या ग्रवशिष्टकार्यकर्तव्यहे ग्रपना जो जनपद देशसो केसे रक्षणी
यशत्रुजनकेसे जयकरणे योग्यहे १
कथं चारं प्रयुंजीत वर्णान्विश्वासयेत्कथम्
कथं भृत्यान् कथंदारान् कथं पुत्रांश्च भारत २
और चारसमूहको केसे सर्वत्रदेशमें नियोगपकरणेयोग्यहे और
चारवर्णकी केसे विश्वासकरणे योग्यहे और भृत्यको केसे विश्वास
करणा दाराकुटुंबको केसे विश्वासकरणा और पुत्रोको केसे वि
श्वासकरणा यह सभही ग्रापनिर्णयसेकहो ॥२॥
भीष्मउवाच राजवृत्तं महाराज शृणुष्वा वहितो ऽखि
लं यत्कार्यं पार्थिवेनादौ पार्थिव प्रकृतेनवा ३
भीष्मउवाच हे महाराज ग्रापमोसे राजोके वृत्तको संपूर्णसाव
धानतासेश्रवणकरो जोकछुराज वृत्त राजाने ग्रादप्रथमक
र्तव्यहे सो ग्रादकालमो राजा पृथुवंशके राजाने कियाहे
सोईवृत्त राजाने कर्तव्यहे ३ ॥
ग्रात्माजेयः सदाराज्ञा ततो जेयाश्च शत्रवः
ग्रजितात्मा नरपति विजयेत कथं रिपून् ४
प्रथमतो राजाने ग्रपना चित्त जीतनेयोग्यहे चित्तको जीतकर
शत्रुगणजीतने योग्यहे जो राजा प्रथम ग्रपने चित्तको नही
जीतेगा तो कातर चित्तहोवेगा सो शत्रुगणोको केसेजीतेगा ४
एतावानात्म विजयः पंचवर्ग विनिग्रहः

जितेंद्रियो नरपति र्वाधितुं शक्नुया द्दरीन् ५
हे राजन् चित्तका जीतना यतन्मात्रबनाहे अपना जो श्रोत्रा
दि पंचेंद्रिय शत्रुवर्ग इसकाही निग्रह कर्तव्यही जो राजा अप
ने इंद्रियोके वर्गकों जयकरताहे सो संपूर्णशत्रुगणकोजीत
नेमों समर्थहोताहे ५ ॥

न्यसेत गुल्मान् दुर्गेषु संधौच कुरुनंदन
नगरो पवने चैव पुरोद्यानेषु चैवह ६
प्रथमतो दुर्गस्थानोविषे शास्त्रविद्याके चतुर पेदला गणमु
क रक्षाकरणेहारे मुख्य मुख्य योधालोक स्थानपतिकर्के स्था
पनकरणे और हे कुरुनंदन जोनसे ग्रामदेशोंके सीमांके सं
धिस्थानहे तहांभी रक्षावाले स्थापने करणे योग्यहे और बा
ह्यदेशके पुरोविषे उद्यानजोहे तहांभी रक्षावाले स्थापने
करणे योग्यहे और नगरोके वनविषे और उपवनोविषे रक्षा
करणेहारे स्थापनकरणे योग्यहे और बाह्यदेशके पुरोविषे
उद्यानजोहे तहांभी रक्षावाली शस्त्रधारी लोकस्थापन कर
णे योग्यहे ॥ ६ ॥

संस्थानेषुच सर्वेषु पुरेषु नगरेषु च ॥
मध्ये च नरशार्दूल तथा राज निवेशने ७
और जहां जहां कोष्टपालादि अधिकारी जनोके निवासस्थानहे
तहां तहां भी रक्षावाले पेदल लोकस्थापन करणे योग्यहे
और राजनगरके मध्यविषेभी रक्षावाले स्थापन करणे योग्यहे
और जहां जहां राजाके सभास्थान और बेठनेके व्यवहार दर्शी
नके स्थान खान पान भोजनादि स्थानकोश खजानादि स्था
नशस्त्रादिसंग्रहस्थान तहां सर्वत्र रक्षाकरणेहारे स्थापन
करणे योग्यहे ७ ॥

प्रणिधीश्च ततः कुर्या ज्जडांध बधिरा कृतीन् ॥
पुंसः परीक्षितान प्राज्ञा न्क्षुत्पिपासा श्रमक्षमान्
और रक्षाकारी जनोके स्थापनसे अनंतर चारजोहे हलका
रे उन्होंको करे केसे होवें सामान्य लोकोंको जडजेसे अंध
जेसे बेहरेजेसे आकारसे प्रतीतहोवे और पुरुषार्थ प्रयत्न
मो चतुरहोवे और पूर्ववृत्तांतसे परीक्षितहोवे और स्थूल

सूक्ष्म व्यवहार ज्ञानमों प्राप्तहोवे और तथा तर्षादि श्रमके सह
नशीलहोवे ८ ॥

अमात्येषु च सर्वेषु मित्रेषु विविधेषु च
पुत्रेषु च महाराज प्रणिदध्यात्समाहितः ९

और जेते अमात्यमंत्री लोकहै तिन्हके संपूर्णस्थानोविषे और
मित्रोंके नानाप्रकारके स्थानोंविषे और अपने पुत्रादिसंबं
धीजनोके स्थानोंविषे गुप्तरूप चारोकों सावधानहोकर
स्थापनकरे ९ ॥

पुरे जनपदे चैव तथा सामंतराजसु ॥
यथा न विद्युरन्योन्यं प्रणिधेयास्तथाहिते १०

पुरविषे जनोके वैठनेके स्थानोविषे और अपने राज्यके अंत
र्गत राजालोकोके सभास्थानोविषे गुप्तरूप चारोको ऐसे प्र
कारसे स्थापनकरे जिसप्रकारसे चारलोकभी चारलोकोके
भेदको अन्योन्यनही जानेतैसे स्थापनकरे १०

चारांश्च विद्यात्प्रहितान्परेण भरतर्षभ
आपणेषु विहारेषु समाजेषु च भिक्षुषु ११

और हे भरतर्षभ एक अपना और अधिकारी चारोके व्यवहार
का वेत्ताकरे उसके द्वारा चारोकेभी व्यवहार हृत्तको जाने ११

आरामेषु तथोद्याने पंडितानां समागमे
देशेषु चत्वरे चैव सभास्वावसथेषु च १२

आरामजोहै पुरकी वगीची स्थान और उद्यानजोहै नगरसे
बाह्य वगीचा वागस्थान आपणजोहै व्यापारीजनोके
हट्टादिस्थान विहारजोहै मल्लक्रीडादिस्थान और समाज
जोहै महाप्रतिष्ठितजनोके समागमस्थान और पंडितोंके
समागमके सभास्थान आवसथ जहां तहां संत महांत
जनोके निवासस्थान । और भिक्षुलोकोके वासस्थान स
मागमस्थान । और सभास्थान सर्वत्रगूढरूप चारोको
अखिल व्यवहार ज्ञानवाले स्थापनकरे १२

एवं विचिन्वयाद्राजा परचारं विचक्षणः

चारै हि विपने पूर्वं हितं भवति पांडव १३

हे पांडव राजन् इसप्रकार राजा अपने चारोंकर्के अपनेराष्ट्र के व्यवहारको तलास करलेवे तबराजा परायेके चारोंकोभी तलासकरलेवे जो पहिलेंही पराये चारका हत्तांत विदित हो जावे तब सकल परराष्ट्रका हत्तांतविदित हो जाताहे १३

यदा तु हीनं नृपति र्विद्यादात्मान मात्मना
अमात्यै स्सह संमंत्र्य कुर्यात्संधिं बलीयसा १४

जब राजा चारोंके द्वारसे शत्रुबलको अधिकजाने अपने बलको हीनजाने तब अपने पराये मंत्रिजनोंसे मंत्र सलाहकर्के बली शत्रुके साथ संधी करलेवे १४

लिप्सु र्वा किंचिदेवार्थं त्वरमाणो विचक्षणः
अज्ञायमाने हीनत्वे संधिं कुर्यात्परेण वै १५

अपनी हीनताको अज्ञातहीकरे संधि करणेको कालमो कछु अर्थकालोभी होवे तो इसवास्ते अर्थको आदान प्रधान निश्चयकर्के विचक्षण राजा तुरतही संधिकरलेवे १५

गुणवंतो महोत्साहा धर्मज्ञाः साधवश्चये
संदधीत नृपस्तै स्स राष्ट्रं धर्मेण पालयन् १६

संधिकरणे योग्यकौनहे जो गुणवान् अधिकहे और उत्साह उद्यमकर्के बडेहे धर्मज्ञ बहोतहे और धर्मकर्मविषे साधुशीलवानहे इन्हके साथ संधिकरे अपने राष्ट्रके पालना सदाकरे १६ ॥

उच्छिद्यमान मात्मानं ज्ञात्वा राजा महीमतिः
पूर्वापकारिणो हन्या ल्लोकद्विष्टां श्च सर्वशः १७

जो राजा अपने राष्ट्रविषे प्रजालोकको उदासीन होकर अपनेको त्यागकर उच्चाटनहोते देषकरजाने इहा हमारे पुरातन लोकही दुष्टमंत्रकर्के उच्चाटन करावतेहे तो जोनसे प्रथम अपराधसे दंडनकियेहे पश्चात दयाभावकरके दंडसे मुक्तकियेहे ऐसे जोनसे पूर्वापराधीहे उन्होंको तलासकरके उन्हको विद्वेषकारी जानकर मारदेवे १७

योनापकर्तुं शक्नोति नापकर्तुं महीपतिः

न शक्तश्चप योद्धर्तुं उपेक्ष्य स्तादृशो भवेत् १८
हे राजन् जो राजा अपराधीको अपकार दंडनहीकरसके और
उपकारीविषे उपकारनाकरसके किसीको उद्धार आपदासे
करणेमो नहीसमर्थहोता और अपकारीविषे उच्चाटन दंडादि
करणेमो असमर्थही ऐसा राजा सभको उपेक्षायोग्यहोताहै
आज्ञाभंगको प्राप्तहोताहै १८
यात्रायां यदि विज्ञान मनाक्रंद मनंतरम्
आसक्ते च प्रमत्ते च दुर्बले च विचक्षण: १९
जो राजा युद्धयात्रा करणेको इच्छाकरे तव दुर्बलतादिकर्के
जाने हुए शत्रूके प्रतीजावे अथवा शत्रुको दुर्बल जानकर
युद्धयात्राकी आज्ञा शत्रुराजाकोहीकरे १९
यात्रा मात्तापये वीर: कल्प: पुष्टबल: सखी
पूर्वं कृत्वा विधानं च यात्रायां नगरे तथा २०
युद्धयात्राकी आज्ञा तवही देवे जो आपयुद्ध करणेमो वीर
होवे और बलकर्के समर्थहोवे और पुष्टबल होवे और स
ख साधन संयुक्तहोवे प्रथम अपने नगरविषे दुर्गस्थानोवि
षे रक्षाविधान करलेवे तव यात्रा विधिको करे २०
तव वशगा भवे दस्य नृपो यस्याति वीर्यवान्
हीनस्य बलवीर्याभ्यां कर्षयं स्तन्यरो वसेत् २१
जो शत्रुराजा अपनेसे अधिक बलहोवे अपने वशहोवे
तव उस शत्रुराजा केवल सामर्थ्यको आकर्षणकरे २१
राष्ट्रं च पीडयेत्तस्य शस्त्राग्नि विषमूर्छनै:
अमात्य वल्लभानां च विवादां स्तस्य कारयेत् २२
बलके आकर्षण उपायको कहतेहैं उसके राष्ट्रदेशको रात्रि
विषे शस्त्रचोरी और शस्त्रपातकर्के और अग्निदाहके उपाय
करके और विषदानादि मूर्छाकर्के पीडनकरे और शत्रुराजा
के मंत्रीमुख्य और राजाके खिदमतगार ऐहलकार मुसाहब लोको
कोदानप्रदानादि लोभकर्के अन्योन्य विवादकरादेवे २२
वर्जनीयं सदायुद्धं राज्यकामेन धीमता
उपाये स्त्रिभिरादान मर्थस्याह बृहस्पति: २३

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
९

9

जिसराजाने सदाराज्य करणेकी कामनाहोवे उसने युद्ध
सर्वप्रकारसे त्यागकरणे योग्यहे सामदान भेदयह तीनो
ही उपायकर्तव्यही यही बृहस्पतिका प्रमाण वचनहे २३

सांत्वेनत प्रदानेन भेदेन च नराधिप ॥
यमर्थं शक्नुया [illegible] तेन तद्धेत पंडितः २४

सामउपायके सांत्वनाउपायकर्के और दानउपायकर्के
और भेदउपायकर्के जिसउपायकर्के अपने अर्थको
सिद्धकरणेमे शक्यहोवे उसीकर्के आपसंतोषमाने
यही पंडितपुरुषोका मतहे २४

आददीत बलिंचापि प्रजाभ्यः कुरुनन्दन
सषट्भाग मपि प्राज्ञ स्तासा मेवाभि गुप्तये २५

ऐसा राजा अपनी प्रजाको पालनकरे और अपनीप्रजासेष
ष्टभागवलिकरलेवे हेकुरुनंदन प्रजासे षष्टभाग वलिग्रह
ण जोकरणा सो प्रजाकी रक्षावासेही ग्रहण करणाहे २५

दशाधर्म गते भ्याय [illegible] वहुल्प मेव च
तदा ददीत सहसा पौराणां रक्षणाय वै २६

हे राजन् अपने देशमे मत्त प्रमत्त उन्मत्तादि दशाधर्मवर्ती
लोकहे जिन्होसे दंडशासना कर्के जो स्वल्पवहोत द्रव्य आ
वे सोलेलेवे सहसा लेकर्के उसद्रव्यको पुरवासी लोकोकी
रक्षावासे संग्रहकरे २६

यथा पुत्रा स्तथा पौरा द्रष्टव्या स्तेन संशयः
भक्तिश्चैषां न कर्तव्या व्यवहारे प्रदर्शिते २७

पुरवासी लोकोकों अपने पुत्रजैसे द्रष्टव्यहे और मत्त प्रमत्ता
दि लोकोविषे भक्तिस्नेह नहीकर्तव्यहे उन्हको दंडव्यवहा
र दर्शनकर्तव्यहे दंडविना मत्त प्रमत्तादि लोक प्रजाको
पीडाकरतेहे २७

श्रोता चै ऽव व्यसेद्राजा प्राज्ञान् सर्वार्थ दर्शिनः
व्यवहारेषु सततं तत्र राज्यं प्रतिष्ठितम् २८

हे राजन् राजा जोहै सो वादी प्रतिवादीके व्यवहार दर्शन
मों सर्वार्थदर्शी जो पंडितजनहे तिन्हको सदाव्यवहार ज्ञा

नवाले धर्मशास्त्र श्रवणकरणेकों स्थापनकरे अवहारका धर्म
शास्त्र श्रवणकरणेमाही राज्यप्रतिष्ठितभयाहे १८

आकरे लवने शुल्के तरे नागबले तथा ॥
न्यसे दमात्या न्नृपतिः स्वमान्वा पुरुषान्हितान् १९

और जहां स्वर्णादि उत्पत्तिका आकर खनिस्थानहे और ज
हां लवणकी उत्पत्तिकी खानहे और राजाका धान्यादि विक्रय
का कोवास्थानहे और जहानदीके पारतरणेका स्थानहे और
जहां [illegible] घोडादि विक्रयकास्थानहे तहां आमदन खरची
दि विचारवास्ते प्रधान अमात्यमंत्री अधिकारी लोकोको अ
थवा अपने प्रतीतिवाले समीपवर्ति जनोको स्थापनकरे

सम्यक् दंडधरो नित्यं राजाधर्म मवाप्नुयात्
राज्ञां हि सततं दंडः सम्यग्धर्मः प्रशस्यते २०

हे राजन् जो राजा सम्यक विचारकर्के दंडधारी राजाहे
प्रजापालनको धर्मपुण्यको नित्यप्राप्तहोताहे राजाने स
दाही दंडनीतिकर्के दंडशासना करणी यही सनातनधर्महे

वेद वेदांग वित्प्राज्ञः स तपस्वी न्नृपो भवेत्
दानशीलश्च सततं यज्ञशीलश्च भारत २१

जो राजा सम्यक दंडकरजानताहे सो वेदवेदांगतत्वको जानता
हे सोई तपस्वी होताहे सोई दानशीलहोताहे और सोई
यज्ञशील होताहे २१ ॥

एते गुणाः समस्ताः स्यु न्नृपस्य सततं स्थिराः
अवहारलोपे न्नृपतेः कुतः स्वर्गः कुतोयशः २२

हे भारत यहीगुण राजाविषे समस्तहोवे तो अवहार धर्म स
दास्थिर होतेहे जो अवहार धर्म राजाका लोपहोजावे तो रा
जाको स्वर्गकहांहे और यशकहांहोताहे २२

यदात पीडितो राजा भवेद्राज्ञा बलीयसा
तदाभि संश्रये दुर्गं बुद्धिमान् पृथिवीपतिः २३

जबराजाबलवान् राजाकर्के पीडितहोवे तब बुद्धिवान् रा
जा दुर्गस्थानको आश्रयकरे और अपनी पृथिवीकी पालनाकरे २३

विर्धवा क्रम्य मित्राणि विधान मुपकल्पयेत्
सामभेदा न्विरोधार्थं विधान मुपकल्पयेत् २४

विधिकर्के मित्रोकों वशकरलेवे औरभी मैत्रीविधानको उ
पकारको कल्पनकरे सामभेद विधानवास्ते मित्र विधानको
कल्पन करलेवे २४

योधान्यसेत मार्गेषु ग्रामाञ्चाप्यपये यथि
प्रवेशये च तान्सर्वान् शाखा नगरकेषपि २५

राजमार्गविषे वनवासी घोष अहीरादि लोकोको उठायदेवे औ
र राजमार्गके ग्रामवासी लोकोकोंभी ग्रामोसे उठाइदेवे
उन्हको उठायकर्के अपने प्रधान नगरके आस पास जो
नगरहे तिन्होविषे बसाइदेवे २५ ॥

येशमा श्चैव दुर्गाश्च देशास्तेषु प्रवेशयेत्
धनिनो बलमुख्यांश्च सांत्वयित्वा पुनः पुनः २६

जोनसे शुभ दुर्गदेशहे तिन्होंविषे देशवासी जनोकों प्रवेश
करादेवे और धनी लोकोको और बलवान मुख्यलोकोकों
सांत्वनाकर्के वारंवार आदरकर्के प्रवेशकरावे २६

सस्याभिहारं कुर्याच्च स्वय मेव नराधिपः
असंभवे प्रवेशस्य दहे द्दावाग्निना भृशम् २७

और धान्यसंपदांके संग्रहको तहांकरे योधान्यसंपदाकी खे
ती दुर्गदेशमो नहीं प्राप्तहोवे तो प्राप्तहोवे तो आपही दा
वाग्निकर्के जलाइदेवे जो अपने देशकी धान्यकी सस्य सं
पदा शत्रुराजाके बलसेनाको खरचवासते नहीप्राप्तहोवे २७

क्षेत्रस्थेषु च सस्येषु शत्रो रुपजपे न्नरान्
विनाशये द्वातत्सर्वं बले नाथस्व केनवा २८

जोनसी सस्य संपदा खेतोविषे परिपक्व अपरिपक्वबनीहे
शत्रुसेनाके जनोके फेरदेवे जोनहीं सामर्थ्य बनेतो अपने
सेनाबलकर्के नाशकरादेवे २८

नदी मार्गेषु च तथा संक्रमानवसाधयेत्
जलं विस्रावयेत्सर्व मविस्राव्यं च दूषयेत् २९

और नदी तरणकी उपायजोहे सेतु संक्रमादिक उन्हकोभी
उठायदेवे तडागोंके जलतुडायदेवे जहा दुर्गके समीप सम
भूमिहे तहां नदीके जलप्रवाहकर्के पंककीचादिकरादेवे
और जहां शत्रुसेनाका निवासस्थानहे तहांके वापी कूप

तडागोंका जलशोष वाले खनिकादि प्रयोगोंसे निर्जल करदेवे ४६

तदा त्वेना यतीभिश्च निवसेद्दुर्ग नन्तरम्
प्रतीघातं परस्याजौ मित्रकार्यं मुपस्थिते ५०

हे राजन् जो इसकालविषे मित्रकार्य आनबने और इसके अनन्तरकालमें शत्रुविवाद निकट प्राप्तहोवे तो मित्रकार्यको त्यागकरके शत्रुविवादका उपाय प्रथम चिंतनकरे शत्रुजीतनेवासते शत्रुराजाके निकटवर्ती अपने शत्रुराजाके जो शत्रुराजाहे इसको मित्रकरके उसके बलद्वारा शत्रुराजाको अपने देशसे उच्चाटनकरादेवे ५०

दुर्गाणां चाभितो राजा मूलच्छेदं प्रकारयेत्
सर्वेषां क्षुद्रवृक्षाणां चैत्यवृक्षा न्विसर्जयेत् ५१

वहीइ सो राजा अपने देशमें जो छोटे छोटे जो दुर्गहे उन्हको निर्मूलकरदेवे जो क्षुद्रदुर्गोंविषे शत्रुसेना प्रवेशकरके अटकनहीजावे और जेते क्षुद्रवृक्षहे आसपासमें उन्हकाभी समूलछेदही करदेवे ५१

प्रवृद्धाणां च वृक्षाणां शाखाः प्रछेदयेन्नया
चैत्यानां सर्वथा त्याज्य मपिपत्रस्य पातनम् ५२

जोनसे महावृक्ष बडे तथा बडे शाखा वालेहे उन्हकी शाखा सभही छेदनकरावे और जोनसे पिप्पलवटादि पुण्यवृक्षहे देवतास्थानके वृक्षहे उन्हका पत्रपातनभी नाकरे ५२

प्रगंडी कारयेत्सम्यगा काशजननी तदा
आपूरयेच्च परिखां स्थाणु नक्र झषा कुलां ५३

और दुर्गके चारप्रकारमें चारोंदिशाविषे प्रतिउच्च प्रगंडीआं उच्चे बुर्जकरे जिन्हमें स्थितहोकर हरदेशकाभी लोकसंचार दृष्टहोजावे सो प्रगंडीआं दुर्गप्राकारकी भिन्न दिवालके चारोंदिशांविषे सूरमा योधागणोंके बैठनेवासते बनावे सो किसीहे जिन्हका वाह्य दिवालविषे वाह्यअवकाश दर्शनहोवे ऐसे सूक्ष्म सूक्ष्म छिद्रभीकरे जिन्हके द्वारसे आग्नेयास्त्रजो भाषामें बंदूक तोफादिक उन्हके गोलीआं गोले पातमय पाषाणमय वाहिर जाकर शत्रुसेनाको जालमें ऐसेभासो बुरजादिनाम जिन्हमें प्रसिद्धहे तिन्हको बनावे और

दुर्गकी परिखाजोहे खाई आदिक तिन्हको काष्ठमय शूलदी
र्घ कंटकादि युक्त तंदोये मत्स्य मकरादि जीव तिन्होंकरकें पू
रणकरे अथवा मनुष्यादि जीवभक्षक जलचर जीवोंकरकें पूर
णकरे ५३॥

11

संकटद्वारकाणिस्यु रुच्छ्वासार्थं पुरस्यच
तेषां च द्वारवद्गुप्तिः कार्या सर्वात्मना भवेत् ५४
और दुर्गके द्वारसंकटकरकें प्रवेशरूप योगकरे जिन्होंविषे पराये
का अज्ञातपुरुष प्रवेशनही करसके ऐसे सूक्ष्मद्वारकरे उ
द्वारः न्हकी रक्षाभी प्रधानजैसे सर्वप्रयत्नसेकरे ५४

द्वारेषु चापरुन्येव यंत्राणि स्थापयेत्सदा
आरोपयेच्छतघ्नी च स्वाधीनानिच कारयेत् ५५
और जो जो दुर्गके प्रधानद्वारहे तिन्होंविषे आग्नेय अस्त्रके तो
फशवारादि भाषाप्रसिद्ध महायंत्रको स्थापनकरे। और जेते
शतघ्नी आदिक अग्नियंत्रहे तिन्हकोभी अपने अधीनही
अपनी आज्ञासे प्रहत्तकरे ५५

काष्ठानि चाभिहार्याणि तथा कूपांश्च खानयेत्
संशोधयेत्तथा कूपान् कृतपूर्वान्पयोर्थिभिः ५६
और काष्ठसंग्रहको बाहरकरदेवे और कूपभी दुर्गके अंतर्गत
खनावे और जोनसे दुर्गके बाह्यभूमिविषे जलार्थी लोको
ने कूपकियेहे उन्हको शोधदेवे और पूरणभी करदेवे और
दुर्गाभ्यंतरके कूपोको शुद्धकरकें जलकरकें पूर्णकरे रक्षा
करकें शुद्धकरे ५६॥

तृणच्छन्नानि वेश्मानि पंकेनापि विलेपयेत्
निर्हरेच्च तृणं मासि चैत्रे वह्निभयात्तथा ५७
और जहां तहां तृणपडाहे उसको हरकरदेवे अग्निके भय
से रक्षाकरे तृणकाछादित गृहोंको मृत्तिका लेपकरकें
चैत्रमासविषे तृणको छिपायदेवे ५७

नक्तमेव च भक्तानि पाचयेत नराधिपः
यदि वा ज्वालयेदग्निं वर्जयित्वाग्निहोत्रकं ५८
और भोजनपदार्थोंको रात्रिविषे पाककरावे और दिनमो
अग्निको प्रज्वालननहीकरे अग्निहोत्रकी अग्निविना
अग्निको शांतिकरदेवे ५८

कर्मारादिषु शालासु ज्वलेदग्नि सुरक्षितः
गृहाणिव प्रवेशांत विधेयः स्याद्धुताशनः ४९
और कर्मारशाला लोहकारादिशाला अरिष्टशाला सूतिकादि शालामो अग्निजोहै सो सुंदररक्षासे प्रज्वलितहोवे सोभीमृत्तिकादि सजलपात्रसे रक्षितहोवे ४९

महान्दंडश्च तस्य स्या यस्याग्नि वै दिवाभवेत्
अघोषयेदथैवं च रक्षणार्थं पुरस्य च ५०
जोकोई दुर्गमो दिनविषे अग्निप्रज्वलितकरे उसको महाउग्रदंडहोवेगा इसप्रकार सर्वत्र अग्निरक्षावासते ऊचे शब्दको श्रवण करावे ५०॥

भिक्षुकांश्चाक्रिकांश्चैव क्लीबान् मत्तान्कुशी
लवान् बाह्यान्कुर्यान्नरश्रेष्ठ दोषायस्यु हितेमया ५१
और भिक्षुलोकोको और चक्रिका यंत्रवाले और कायरपुरुष और उन्मत्तलोक और मज़ूरी किशानलोकोको इन्हको दुर्गसे बाहिरकरे यह दुर्गसंचारसे दुर्गको दोषकारी होतेहैं ५१

चत्वरेषथ तीर्थेषु सभासावसथेषु च
यथार्थवर्णं प्रणिधिं कुर्यात्सर्वस्य पार्थिवः ५२
और जेते दुर्गके अंतर्गत अथवा बाह्य भूमिमो चौकसभास्थानहै तीर्थस्थान देवालयादिस्थानहै और प्रधानलोकोके सभास्थानहै और शालिजनोके स्थानहै तिन्होविषे यथा योग्य जातिवर्णके वेषकरकै गुप्तजहां तहां सभकी रक्षावासते और वृत्तांतज्ञानवास्ते अपने विश्वासपात्रसेवकजनस्थापन करणे योग्यहै ५२

विशाला राजमार्गांश्च कारयेत नराधिप
प्रपाश्च विपणींश्चैव यथा देशं समादिशेत् ५३
और जेते राजमार्गहै तिन्होको तृणपंक पाषाणादि शोधनकरकै विशालकरे और अन्नजल निवासादियोग्य प्रपार्थ धर्मशालाहै और हट्टादि क्रय विक्रय करणेहारे स्थानजोहै इन्हकोंभी यथा योग्य शोधन सत्कार करावे ५३

भांडागारान्युधागारान्योधागारांश्च सर्वशः
अश्वागारान्नागागारान् बलाधिकरणान्यपि ५ ४

हे राजन् यंत्रादि भांडागारशाला जोहे और शस्त्रागारशाला जोहे और योधाजनोकी शालाजोहे इन्हको सर्वप्रकारसे शोधनकरे और अश्वागारशाला जोहे गजागारशाला जोहे और जलाशय स्थानजोहे ५३ ॥

परिखाश्चैव कौरव्य प्रतोली निष्कुटानि च
न जात्वन्यः प्रपश्येत गुह्य मेतद्युधिष्ठिर ५४

हे कौरव्य परिखा जोहे खाई स्थानजोहे और दुर्गके अंतर्गत जो गु मगलीकुचास्थानहे औरबुरज अटारी आदिक स्थानजोहे इन्हो विषे पराया पुरुष कदापि देषनहीजाये अपना पुरुषभी आज्ञाविना नहीदेषे हे युधिष्ठिरएहा दुर्गका गुह्यसंरक्षणाहे ५५

अर्थसन्निचये कुर्याद्राजापर बलार्दित:
तैलं वसा मधुघृत मौषधानि च सर्वशः ५६

जो राजा परवलको मर्दन करणेहाराहे सो दुर्गविषे अन्नध नादि अर्थसंग्रहको वहोतकरे और तैल चरवी घृत मधुऔर शस्त्रघात निवारणादि औषधी तृषा क्षुधादि जयकारी औषधी समूहका संग्रहकरे ५६

अंगारकुश मुंजानां पलाश शरवर्णिनो
वयसेंधन दिग्धानां कारयेत च संचयान् ५७

और कोले कुशमुंजा और पलाशपत्र और शरजोहे वाणीके साध न और प्रत्नोंके लेखक और यवादि तृषाधान्य और सैंधवल वण और विषलिप्त वाणीका वहोत संग्रहकरे ५७

आयुधानां च सर्वेषां शक्त्यृष्टि प्रास चर्मणा
संचयानेव मादीनां कारयेत नराधिपः ५८

और सर्वप्रकारके शस्त्र शक्ति ऋष्टि चर्मादि कृतकालोका इ त्यादि दुर्गसामग्री साधनोका संग्रहराजा वहोतकरलेवे ५८

औषधानि च सर्वाणि मूलानि च फलानि च
चतुर्विधांश्च वैद्या न्वै संगृह्णीयाद्विशेषतः ५९

औषधी सब प्रकारकी और मूलफल सर्वप्रकारके और चारप्र कारके वैद्य विषनाशी वैद्यशल्यपीडा निवारक वैद्यरोग निवारक वैद्य और यंत्र मंत्र तंत्र हना शकुना यतनकृत्या निवा रक वैद्यकाभी संग्रहवहोतकरे ५९

नटाश्च नर्तकाश्चैव मल्ला मायाविन स्तथा
घोषयेयुः पुरवरे मोहयेयुश्च सर्वशः ९०
हे राजन् नटो नृत्यकारी और मल्लक्रीड़ा करणेहारे और गायक
लोक और पुतली तमासा करणेहारे लोक शत्रुसेनाको खु
सी करे और मोहतभी करे ९०
यतः शंका भवेच्चापि भृत्येभ्यश्चापि मंत्रिनः
पौरेभ्यो नृपतेर्वापि स्वाधीनान्कारयेत तान् ९१
और अपने भृत्यजनोविषे जहां शत्रुपक्षके मंत्रभेद सहाय
की शंकाहोवे मंत्रीसे नगरवासी जनोसे होवे इसको तत्का
लही बंधनमो ग्रहणकरे अपने वशकरलेवे ९१
कृते कर्मणि राजेंद्र पूजयेद्धनसंचयैः
दानेनच यथार्हेण सांत्वेन विविधेन च ९२
हे राजेंद्र जब युद्धकर्म होजावे तब शंकावाले जनोको धनसं
चयकर्के यथा योग्य दानमानकर्के अनेक प्रकारके सांत्वना
वचनोकर्के ९२ ॥
निवेदयित्वा तु परं हत्वा वा कुरुनंदन
ततो ह्यणो भवेद्राजा यथा शास्त्रे निदर्शिते ९३
शत्रुराजाको खबरकर्के मारदोवेके दिखावे हे कुरुनंदन
इस प्रकारसे जो राजा अपने राजधर्मकर्के राजमनुष्योका
स्वामीहोताहे यह नीते शास्त्रका यथार्थ मतहे ९३
राज्ञा सप्तैव रक्ष्याणि तानि चैव निबोधमे
आत्मामात्याश्च कोशश्च दंडो मित्राणि चैवहि ९४
हे कुरुनंदन राजाने सप्तस्थानोकी अवश्यकर्तव्यहे अपने रक्षा
आत्माकी रक्षामंत्री रक्षाकोश रक्षा दंडनीति रक्षा मित्ररक्षा ९४
तथा जनपदाश्चैव पुरंच कुरुनंदन ॥
एतत्सप्तात्मकं राज्यं परिपाल्यं प्रयत्नतः ९५
और अपने जनपदके लोक और नगरदुर्गादिक यह सप्तही
यत्नसे रक्षणीयहो इसप्रकारका सप्तप्रकारका राज्यस
माजबनाहे सोयात्नकर्के पालने योग्यहे ९५
षाड्गुण्यंच त्रिवर्गंच त्रिवर्गं परमं तथा

यो वेत्ति पुरुषव्याघ्र सभुंक्ते पृथिवी मिमां ६६
अपने षड्वर्ग रक्षाकरणी और धर्म अर्थकाम त्रिवर्ग और शरीर मनवाणी यह त्रिवर्गयतनसे संरक्षण करणा इस प्रकार जो राजा रक्षाकर जानताहै सो राजा पृथिवीको चिरभोगताहै ६६

षाड्गुण्य मिति यत्प्रोक्तं तन्निबोध युधिष्ठिर
संधानासन मित्येव यात्रा संधान मेव च
विगृह्यासन मित्येव यात्रासंपरि गृह्य च
द्वैधीभाव स्तथान्येषां संश्रयोथ परस्य च ६८
हे युधिष्ठिर जो षाड्गुण्य तुमको मैने कहाहै उसको तुम सुनो एक संधान अनुसंधान और यात्रासंधान और विगृह्यास और परिगृह्ययात्रा और द्वैधीभाव और शत्रुकेय और मित्रका संश्रय प्रथमसंधीमात्र परस्पर बलदर्शनकर्के संधीयात्राकर्के संधी विग्रहकर्के स्थायीभाव स्थानदेशकार्के ग्रहणकर्के यात्रा अपने बलके दो भागकरणा शत्रुके शत्रुको मित्रता ६८

त्रिवर्ग श्चापि यः प्रोक्तस्त मिहैक मनाः शृणु
क्षयस्थानं च वृद्धिश्च त्रिवर्गः परमस्तथा ६९
और त्रिवर्गजो कहाहै उसकोभी श्रवणकरो क्षय और स्थान और वृद्धि यह परम त्रिवर्गकहाहै अवर त्रिवर्गभी श्रवणकरो

धर्मश्चार्थश्च कामश्च सेवितव्योथ कालतः
धर्मेण च महीपाल चिरं पालयते महीं ७०
धर्म और अर्थ और कामयह त्रिवर्ग अपने कालके अनुसार सेवने योग्यहै हे महीपाल राजा जोहै सो धर्मकर्के चिर काल पृथिवीको पालनकरताहै ७०

अस्मि न्नर्थे श्लोकौ द्वौ गीतौ चांगिरसा स्वयम्
यादवी पुत्र भद्रं ते तौ वपि श्रोतु मर्हसि ७१
इस अर्थविषे दो श्लोक बृहस्पती जीने आपकहेहै हे यादवी पुत्र हे कौंतेय तुमको कल्याणहोय दो श्लोक जो बृहस्पतीन उन्हको श्रवणकरो ७१ ॥

कृत्वा सर्वाणि कार्याणि सम्यक्संपाल्य मेदिनीं
पालयित्वा तथा पौरा न्परत्र सुख मेधते १२
पृथिवीका जो राजा राजधर्मके सर्वकार्योंको करलेवे पृथिवी
को सम्यक् पालनकर्के और पौरजनोंको विशेषकर्के पालन
कर्के परलोकमों परमसुखकों भोगताहै १२
युधिष्ठिरउवाच दंडनीतिश्च राजाच समस्तौ तावु
भावपि कस्य किं कुरुते सिद्धिं तन्मे ब्रूहि पितामह १३
युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी दंडनीति और राजा दोनो सर्व
धर्मकी मूलकहेहै यह दोनोही मिलकर प्रजाको क्षेमकर
तेहै अथवा भिन्न भिन्न प्रजा क्षेमको करतेहै इन्हमो क्याकर
तेहै सो क्या फलसिद्धिहोतीहै इसको आपकहो १३
किंतस्य तपसा राज्ञः किं च तस्याध्वरै रपि
सुपालित प्रजो यः स्यात्सर्वधर्मविदेव सः १४
ऐसे राजा तपकरणेसे क्या अर्थहै जो राजा प्रजाको विधिसे पा
लनकरताहै उसको तपकरणेका यज्ञकरणेका समस्तधर्म
फलहोताहै १४ ॥
भीष्मउवाच महाभाग्यं दंडनीत्याः सिद्धैः शब्दैः स
हेतुकैः शृणुमे शंसतो राजन्यथावदिह भारत १५
भीष्मउवाच हेभारत दंडनीतिसे राजाको महाभाग्य होताहै
जेते इसकेसाधन सामग्रीके नामशब्दहै सो सभही फलसिद्धी
संपन्नहै मे सभही तुमसे कहताहुं आपश्रवणकरो १५ ॥
दंडनीतिःस्वधर्मेभ्य श्चातुर्वर्ण्यंनियच्छति
प्रयुक्ता स्वामिना सम्यगधर्मेभ्यो नियच्छति १६
दंडनीति जोहै सो चारवर्णोंको अपने धर्मोंकर्के संयोग करा
इदेतीहै और अधर्मोंसे दंडभयकर्के निवृत्त करदेतीहै जैसे
पशुयोनि जीवजो दंडप्रहारके भयकर्के खोटेमार्गोंसे फिरा
यकर स्वेन मार्गको जातेहै १६ ॥
चातुर्वर्ण्ये स्वकर्मस्थे मर्यादानामसंकरे दंड
नीति कृते क्षेमे प्रजानाम कुतोभयं १७ ॥

श्री॰ रा॰ ध॰ टी॰ १४

14

जो चारोवर्ण अपने अपने धर्ममो स्थितभये तबलोक धर्मो-की मर्यादा जोहे उन्हका उलट पलट संकर नही होता इस करकै प्रजाको निर्भय सुखहोताहे ७७

स्वास्थ्ये प्रयत्नं कुर्वंति त्रयोवर्णा यथा विधि
तस्माद्देव मनुष्याणां सुखं विधि समाहितं ७८

तीनवर्ण जोहे सो अपने स्वस्थ मर्यादाकी प्रवृत्तिमो यथा विधि यतन करतेहे मर्यादाकी स्वस्थतासेही मनुष्योको सुखको संपूर्ण सिद्धजानो ७८

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा कालकारणम्
इतिते संशयो माभूद्राजा कालस्य कारणम् ७९

कालराजधर्मोका कारणहे अथवा राजधर्म कालके कारण हे ऐसा संशय तुमको नहीहोवे हे राजन् राज्याही कालधर्मोका कारणहे ७९

दंडनीत्यां यदाराजा सम्यक् कात्स्न्र्येन वर्तते
तदा कृतयुगं नाम कालस्सृष्टं प्रवर्तते ८०

जबराजा दंडनीतिको संपूर्ण विधिकरकै सम्यकप्रवृत्तकरताहे तब पृथिवीविषे सत्ययुक्त प्रवृत्तकरताहे तब कृतयुगनामधारी सत्ययुगका कालप्रवृत्तहोताहे ८०

ततः कृतयुगे धर्मो नाधर्मो विद्यते क्वचित्
सर्वेषामेव वर्णानां नाधर्मे रमते मनः ८१

ऐसे तब सत्ययुगको प्रवृत्तिकालमो चारचरण संपन्न धर्मप्रवृत्त होताहे अधर्म कहीभी विद्यमान नहीहोता संपूर्ण वर्णोकामन अधर्मविषे रतनही होता ८१

योगक्षेमाः प्रवर्तंते प्रजानां नात्रसंशयः
वैदिकानि च सर्वाणि भवंत्यधि गुणान्युत ८२

संपूर्ण प्रजालोकोके सुखकारी मनवांछा कालमोही कालमोहे सबसिद्धहोतेहे सभही धर्मकर्मके गुणवेदविधीसेहीहोतेहे ८२ ॥

प्रवृत्तयश्च सर्वाः सर्वे भवंत्युत निरामयाः
प्रसीदंति नराणां च स्वरवर्ण मनांसि च ८३

औेर सभही वसंतादि ऋतुकालके सब निराकुलहोतेहे
मनुष्योंके संपूर्णदेवता और देहके आकारवर्ण और मनय
सभही सदाप्रसन्न होतीहे ८३

व्याधयो न भवंत्यत्र नाल्पायु दृश्यते नरः
विधवा न भवंत्यत्र कृपणो नत्र जायते ८४

व्याधिरोगनही होती अल्पायुषावाला मनुष्यकही दृष्टनही
होता विधवा अंगनाकहीनहीहोती और धनहीन दीनपुरुष
कही दृष्टनहीहोता ८४

अकृष्टपच्या पृथिवी भवंत्योषधय स्तथा
त्वकपत्र फलमूलानि वीर्यवंति भवंति च ८५

और पृथिवी खेतीविनाही आपही अन्नफल संपदाको देती
हे और सभही औषधी जहां तहां आपही उटे होतीहे ८५

नाधर्मो विद्यते तत्र धर्म एवतु केवलम्
इति कार्तयुगानेतान् धर्मान्विद्धि युधिष्ठिर ८६

वृक्षोंके त्वचा पत्र फल मूल सभही बलवान होतेहे अधर्म
तहां कदापि नहीहोता केवल धर्मही प्रवृत्तहोताहे इसप्रका
र तुमसत्ययुगके धर्मोकी प्रवृत्तिकहीहे ८६

दंडनीत्यो यदा राजा त्रीनंशा ननुवर्तते
चतुर्थ मंशमुत्सृज्य तदा त्रेता प्रवर्तते ८७

जब राजा दंडनीति मोतीन अंशोंकर्के प्रवृत्तहोतेहे और पृ
थिवी चतुर्थअंशको त्यागदेताहे तब त्रेतायुग प्रवृत्तहोता
हे ८७ अशुभस्य चतुर्थांश स्त्रीनंशाननुवर्तते
कृष्टपच्यैव पृथिवी भवंत्योषधय स्तथा ८८

अशुभको चतुर्थांश धर्मके तीनो अंशोविषे प्रवृत्तहोतेहे औ
र पृथिवी कृष्ट पच्याही होवेगी और औषधीभी कृष्टपच्याही
होवेगीयां खेती प्रयत्नकर्केही फलीभूत होवेगी ८८

अर्धं त्यक्त्वा यदा राजा नीत्यर्थ मनुवर्तते
ततस्तु द्वापरं नाम सकालः संप्रवर्तते ८९

तब राजा धर्मको त्यागकर्के दंडनीतिके अर्धको प्रवृत्तकरता
हे तब पृथिवी और औषधीभी खेती प्रयत्नकर्केही फलसिद्धी
को देतीहे इसप्रकार द्वापरयुगका कालप्रवृत्त होताहे ८९

अशुभस्य यदा त्वर्धं चांशेन वर्तते
हस्वपच्येव पृथिवी भवत्यर्धफला तदा ४०
अर्थ अधर्मके दो अंश धर्मके दो अंशोको निवृत्त करदेतेहे पृ
थिवीभी खेतेकी फलमूलादिकोके अधर्मफलको देतीहे ४०
दंडनीतिं परित्यज्य यदा कार्त्स्न्येन भूमिपः
प्रजाः क्लिश्यंत्ययोगेन प्रवर्तेत तदा कलिः ४१
तव राजा दंडनीतिको संपूर्ण त्यागकर देताहे और प्रजा अध
र्म अयोगकर्के क्लेशको प्राप्तहोतीहे तब कलियुगका
कालप्रवृत्त होताहे ४१
कलाव धर्मो भूयिष्ठं धर्मो भवति न क्वचित्
सर्वेषामेव वर्णानां स्वधर्माच्च्यवते मनः ४२
कलियुग अधर्म प्रधान जब प्रवृत्त होताहे तदा धर्मकही
भी प्रवृत्त नही होता संपूर्ण वर्णोका स्वधर्मसे चलितहोता
हे ४२ शूद्रा भैक्षेण जीवंति ब्राह्मणाः परिचर्यया
योगक्षेमस्य नाशश्च वर्तते वर्णसंकरः ४३
शूद्रलोक ब्राह्मणोके समान ब्रह्मचारी संन्यासी रूपहोकर
भिक्षावृत्तीकी जीविका करतेहे ब्राह्मण जोहे सो शूद्रोकी
सेवा प्रवृत्तिकर्के जीवका करतेहे योगक्षेम धर्म[illegible]
होताहे वर्णधर्मोका उलट पलटतासे वर्णसंकरताहोती
हे ४३ वैदिकानि च कर्माणि भवंति विगुणान्युत
ऋतवो न सुखाः सर्वे भवंत्यामयिनस्तथा ४४
वैदिक धर्म सभही विपरीत होजातेहैं वसंतादि ऋतुगण सु
खको नहीं करते सभही रागादि कारक होकर मृतहोतेहे ४४
ह्रसंति च मनुष्याणां स्वरवर्णमनांस्युत
व्याधयश्च भवंत्यत्र म्रियंते च गतायुषः ४५
मनुष्योंके स्वरूपवर्ण मन सभही कमहोजातेहे व्याधीरोग
अनेकउठे होतेहे लोकक्षीणायु होकर मृतहोतेहे ४५
विधवाश्च भवंत्यत्र नृशंसा जायते प्रजाः
कचिद्वर्षति पर्जन्यः क्वचित्सस्यं प्ररोहति ४६
कलियुगविषे विधवा बहोत होतीहे प्रजा सभ कठोरवृत्तिहो
तीहे पर्जन्य कचित् वर्षाकरताहे और खेती कही विरली होती
हे ४६ ॥

रसाः सर्वे लयं यांति यदि नेच्छति भूमिपः ॥
प्रजाः संरक्षितुं सम्यक दंडनीतिः समाश्रिताः ९७
और पृथिवीके रस सभही क्षीणहोजातेहे उसकालविषे राजा
प्रजाकी रक्षाकरणेको इच्छानहीकरता जो राजा प्रजाको आप
रक्षा करणेकी इच्छाकरैतो दंडनीति संपूर्ण कहा प्रवृत्तहोतीहे ९०
राजा कृतयुग स्रष्टा त्रेतायां द्वापरस्य च
युगस्य च चतुर्थस्य राजा भवति कारणं ९८
हे राजन् राजाही सत्ययुगके धर्मको सृजताहे और त्रेतायुग
कर्ता राजाहे द्वापरयुगका कर्ता राजाहे और जिसमें अधर्म
ही प्रधानहे ऐसे चतुर्थयुगकानामसे धर्महानि होतीहे
ऐसे चतुर्थयुगका कर्ताभी राजाहीहे ताते सकलयुगधर्मो
का कारण राजाहे ९८
कृतस्य कारणाद्राजा स्वर्गमत्यंत मश्नुते
त्रेतायाः कारणाद्राजा स्वर्गं नात्यंत मश्नुते ९९
हे कुरुनंदन सत्ययुगके धर्मप्रवृत्तिकरणेसे राजा अक्षयस्वर्ग
सुखको भोगताहे और त्रेतायुगकी प्रवृत्तिसे राजभोगकाल
के अंतवाले स्वर्गको प्राप्तहोताहे ९९
प्रवर्तनाद्द्वापरस्य यथाभाग मुपाश्नुते
कलेः प्रवर्तनाद्राजा पाप मत्यंत मश्नुते १००
द्वापरयुगके प्रवृत्तकरणेसे यथोक्तफलसे अर्धफलको भो
गताहे कलियुगके प्रवृत्तकरणेसे केवलपाप फलको भोग
ताहे १०० ॥
दंडनीतिं पुरस्कृत्य विजानन् क्षत्रियः सदा
अनवाप्तं च लिप्सेत लब्धं च परिपालयेत् १०१
हे राजन् ताते क्षत्री राजा होकर दंडनीतिकोकरजानताहे
ऐसा जो राजा सो जोनसा धर्म कर्म धन संपदा यश कीर्ति
देश आपनेको नही प्राप्तहे उसकी लाभकी वांछाकरे जो
प्राप्तहे उसको नीतिमार्गसे पालनकरे १०१
ततो वसति दुष्कर्मा नरके शाश्वतीः समाः
प्रजानां कल्मषे मग्नो कीर्तिं पापं च विंदति १०२
इस प्रकार प्रजाके पापफलसे राजा दुष्टकर्म करणेसे अ संख्या

16

न वर्षाकाल नरकमो वासकरताहे प्रजाके पापकर्म समूह
के पंकमो मग्नहोताहे अपकीर्तिको और पापफलकोप्राप्तहोतेहे १०२

लोकस्य सीमंतकरी मर्यादा लोक भाविनी
सम्यक नीता दंडनीति यथामाता यथापिता १०३

यह दंडनीति लोकधर्मकी व्यवस्थाकरे करतीहे और जातिविवे
ककी मर्यादारूपहे और लोकभावनाको उटेकरतीहे ऐसे नी
ति संयुक्त यह दंडनीति माता जैसी पिताजैसी पालन पोष
णकरतीहे ॥ १०३ ॥

यस्यां भवंति भूतानि तद्विद्धि मनुजर्षभ
एष एव परो धर्मो यद्राजा दंडनीतिमान् ४

हे भरतर्षभ जिसविषे सभही भूत अपनी धर्ममर्यादा सो
स्थितहोतेहो ऐसी दंडनीतिको तुम परमजानो ताते तुम
एही धर्मका स्वरूपजानो जो राजा धर्मकरके दंडनीतिका
विचारकारीहोय सोई राजा साक्षात् धर्मरूपहे १०४

तस्मात्कौरव्य धर्मेण प्रजापालय नीतिमान्
एवं वृत्तः प्रजा रक्ष स्वर्गं जेतासि दुर्जयम् १५

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे एकोन
सप्ततितमोध्यायः ॥ ६९

ताते हे कौरव्य धर्मकरके प्रजापालनकी नीतिवान् राजाहो
वे ऐसी वृत्तिकर्के तुभी प्रजापालनकरे रक्षाकरे तोजोन
सा ब्रह्मचारी वानप्रस्थ संन्यासादि योगकर्के अजेय स्वर्गहे
उसको अनायासही जीतलेवेगा १०५ इति श्री महाभा
रते शांतिपर्वणि राजधर्मे एकोन सप्ततितमोध्यायः ६९

युधिष्ठिरउवाच केन वृत्तेन वृत्तज्ञ वर्तमानो महीप
तिः सुखेनार्थान सुखोदर्कानिह चप्रेत्य चाप्नुयात् १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामह राजा जोहे सो कौन विधिकर्के दं
डनीतिको सम्यक प्रयोगकर्के आपराजा कैसे वृत्तिकर्के
वर्तमानहोवे फलपरिपाकमो आगेउ सुखवाले अर्थोको
इहलोक परलोकमो कैसे प्राप्तहोताहे १ ॥

भीष्मउवाच अयंगुणानां षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशत्
गुणसंयुतः यान्गुणान्गुणोपेतः कुर्वन्गुणान
वाप्नुयात् २

भी[illegible]वाच हे युधिष्ठिर धर्मकर्मादि षट्त्रिंशत संख्याका गुण
गणसंयुक्तहे सो एक एक प्रति एक एक गुणके योगकर्के
षट्त्रिंशतका छतीश गुणवान होताहे १

चरेद्धर्मान कटुको मुंचेत्स्नेहं न नास्तिकः
अनृशंस श्चरेदर्थं चरेत्काम मनुद्धतः ३

अब छतीसगुणोके गणको संख्याक्रमसे कहतेहे धर्मकर्मो
को करेतो अकटुकहोय रागद्वेषहीनहोय और नास्तिक नाहो
वे परलोककी कामनाकर्के स्नेहको उत्तमजनोका साथकरे
लोभार्थस्नेहनकरे और अर्थके संग्रहमो कठोरता त्यागकर्के
करे और धर्मकी अर्थकी पीडाविना कामसुखका भोगकरे २

प्रियं ब्रूया दकृपणः शूरः स्यादविकत्थनः
दाताना पात्रवर्षीस्यात प्रगल्भःस्यादनिष्ठुरः ४

और दीनताको त्यागकर प्रियवचनकहे और शूरताको करे
अपनी स्तुतिको नाकरे और अपात्रविषे दानदाता नहोवे
व्यवहार कार्यमो प्रगलभहोय परंतु दयासहितहोवे ४

संदधीत नचानार्यै विगृह्णीया न्नबंधुभिः
नाभक्त चारयेच्चारं कुर्या त्कार्य मपीडया ५

और अश्रेष्ठ पुरुषके साथ संधीनकरे श्रेष्ठपुरुषोंविषे संधी
कोकरे और बंधु संबंधको जानकर विग्रहको नहीकरे और
अल्पवृत्तिवाले चार हलकारे नकरे अपनी ऊटुबकी पीडा
विना अर्थकार्यकोकरे ५

अर्थं ब्रूया न्नचासत्सु गुणान् ब्रूया न्नचात्मनः
आदद्या न्नचसाधुभ्यो नासत्पुरुष माश्रयेत ६

असाधुजनोविषे अपने कार्यको नहीकहे और अपने गुणो
को प्रापनहीकहे और अपने मंत्रको प्रकाशनहीकरे साधु
जनोमे द्रव्य न लेवे और असतजनोका आश्रयनहीकरे ६

नापरीक्ष्य नयेद्दंडं नचमंत्रं प्रकाशयेत
विसृजे न्नच लुब्धेभ्यो विश्वसेन्नापकारिषु ७

अपराध निर्णयविना दंडविनहीकरे और अपने मंत्रको
प्रकाशनहीकरे और लोभी पुरुषोको द्रव्यनही दानकरणा

श्री रा.५ टी. १७

17

और अपकारी जनोंविषे विश्वासनहीकरे ७

अनीर्षुर्गुप्तदारः स्याच्चोक्षः स्यादघृणी नृपः ।
स्त्रियः सेवेत नात्यंतं मृष्टं भुंजीत नाहितं ८

अनिर्षहोवे और गुप्तदारा संयोगकरे और चोक्षका आपशुद्ध
चित्तहोय और अयाचकहोवे और अतिशायकर्के स्त्रीसेवननही
करे और हितकारीत होवे ऐसे भोजनको त्यागकरके शुद्ध
शुद्ध अन्नभोजनकरे ८

अस्तब्धः पूजयेन्मान्यान् गुरून्सेवेद मायया
अर्चेद्देवानदंभेन श्रियमिच्छेद कुत्सिताम् ९

लोभरहित मान्यलोकोकी पूजाकरे और गुरुसेवनशुद्धचित्त
होकर करे और दंभ पाखंड रहितदेव पूजनकरे और अन्या
यकर्के खोटी संपदाको ग्रहण नहीकरे ९

सेवेत प्रणयं हित्वा दक्षः स्यान्न त्व कालवित
सांत्वये न्न मोक्षाय अनुगृह्णन्न चाक्षिपेत १०

नम्रताके त्यागविना सेवानहीकरे कार्यकरणेको चतुरहो
य दीर्घसूत्री होकर कालक्षेपनहीकरे पुरुष प्रथम त्याग
वासे सांत्ववचन नहीकरे और जिसको अनुग्रहकरे उसका
अनादरनहीकरे १०

प्रहरेन्नत्व विज्ञाय हत्वा शत्रून्नशोचयेत् ॥
क्रोधं कुर्यान्नचाकस्मान् मृदुः स्यान्नापकारिषु ११

शत्रुभावके निश्चयविना प्रहार नहीकरे और शत्रुजनको
मारकर्के पश्चात्तापसे शोचना नहीकरे और अपराधवि
ना अकस्मात् क्रोधनहीकरे और अपराधी अपकारी
जनोंविषे मृदुवृत्ती शीलनहोवे ११

एवं चरस्व राज्यस्थो यदि श्रेय इहेच्छसि
अतोन्यथा नरपति भयमर्छत्य नुत्तमम १२

हे राजन राजधर्मकी वृत्तिमों स्थितहोकर इस प्रकारके
गुणसंयुक्तहो जो उभय लोकमो जिसकी और कीर्त्तिको
चाहेतो इस प्रकार कार्यको करो इसप्रकार जो गुणगणो
को त्यागकरके राज्यकरणेमो राजा असमर्थ होताहै १२

इति सर्वान् गुणानेता न्यथोक्तान्योऽनुवर्तते
अनुभूयेह भद्राणि प्रेत्य स्वर्गे महीयते १३

समभ यह सर्वोंही गुणगण कहेहैं इन्हकोजो राजा अनुदिनदिन प्र
ति यथोक्त विधिमान करताहै सो राजा इहलोकके भोग अ
पनी इच्छासे भोगकर्के स्वर्गविषे प्रत्यय भोगताहै १३

वैशंपायनउवाच इदं वचः शांतनवस्य श्रुत्वा
न्युधिष्ठिरः पांडवमुख्यसंहृतः तदाववंदे च पि
तामहं नृपो यथोक्त मेतच्च चकार बुद्धिमान् १४

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय राजा युधिष्ठिर इसप्रकार
भीष्मजीके वचनकों श्रवणकरताभया तदनंतर पांडव
मुख्य जोहे भीमादिक अपनेभ्राता तिन्हकर्के युक्तभया
है पितामहजीको वदनकरताभया पितामहजीके
यथोक्तवचनोके धर्मकों करताभया १५

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सप्तनितमो
ध्यायः ॥ ७० ॥ युधिष्ठिरउवाच ॥

कथं राजा प्रजा रक्षन्नाधि बंधेन युज्यते
धर्मे च ना पराधीत तन्मे ब्रूहि पितामह १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी राजा जोहे सो बहोतप्रजा
लोकको पालनकरताहै चिंताव्याधिके प्रतिबंधको न
ही प्राप्तहोता यह दोनो गुणकैसे बनतीहै यह मोको
आपकहो १ ॥

भीष्मउवाच समासेनैव ते राजन् धर्मान् वक्ष्यामि
शाश्वतान् विस्तरेणैव धर्माणां नजात्वंतमवाप्नुयात्

भीष्मउवाच हे राजन् तोकों हम संक्षेपकर्के शाश्वतधर्मोंको
कहतेहै विस्तारकर्के कहनेको धर्मोंका अंतको कोई पुरुष
नही प्राप्तहोता ॥ २ ॥

धर्मनिष्ठान् श्रुतवतो देवव्रत समाहितान्
अर्चयित्वा यथान्यायं गृहे गुणवतो द्विजान्

हे राजन् देवव्रतके संक्षेपकर्के धर्मनिष्ठावाले धर्मोको
तूं श्रवणकरलेवेगा तो बहोत अपने गृहमें गुणवान्
पात्रब्राह्मणोंको पूजाकरेगा ३ ॥

श्री रा॰पं॰ टी॰ १८

18

प्रत्युत्थायो पसंगृह्य चरणावभिवाद्य च ॥
अथ सर्वाणि कुर्वीथाः कार्याणि सपुरोहितः ४

तव ब्राह्मणोके दर्शनको पाइकर अपने आसनसे उठकर आगे जाइ मिलकर चरणोके शिरकर्के प्रणामकर ग्रहण करेगा ब्राह्मणोकी आज्ञालेकर पुरोहित संयुक्त नित्यविधिके धर्मकर्मोको करेगा ४

धर्मकार्याणि निर्वर्त्य मंगलानि प्रयुज्य च
ब्राह्मणान्वाचयेथास्त्वमर्थसिद्धिजयाशिषः ५

नित्यविधीके धर्मकर्मोके समाप्तकर्के दर्पणविषे मुख दर्शनादि सकल मंगल वस्तु दर्शन स्पर्शनादिकृत्यकर्के तेने ब्राह्मणोको भोजन वस्त्रादि दानकर्के तेने ब्राह्मणोको भोजनवस्त्रादि बहोउ दक्षिणा दानकर्के प्रसन्नकरणा तद नंतर जयकारी ब्राह्मणोके आशीर्वाद वचन ग्रहणकरणे ५ ॥

आर्जवेन च संपन्नो धृत्या बुद्ध्या च भारत ॥
यथार्थं प्रतिगृह्णीया कामक्रोधौ च वर्जयेत्

तदनंतर भक्तिसंपन्न श्रद्धासंयुक्त आर्जवादि गुणसंपन्न यथार्थ व्यवहार कार्योके दर्शनका विधानकरणा व्यवहार कार्यदर्शनमो कामक्रोधोका त्यागकरणा ६ ॥

कामक्रोधौ पुरस्कृत्य योर्थं राजानुतिष्ठति
नसधर्मं नचाप्यर्थं प्रतिगृह्णाति बालिशः ७

हे राजन् जो राजा काम क्रोधोको आश्रयकर्के व्यवहार कार्योके दर्शनको करताहै सो राजा व्यवहार दर्शनमो मूढबुद्धि होताहै धर्मको नही प्राप्तहोता और अर्थकोभी प्राप्त होतानही ॥ ७ ॥

मास्मलुब्धांश्च मूर्खांश्च कामार्थे च प्रयूयुजः
अलुब्धान बुद्धिसंपन्नान्सर्वकर्मसु योजयेत् ८

हे राजन् तु आपधर्म कर्मज्ञान संपन्नहै धर्मव्यवहार दर्शनमो कार्यमो लोभी जनोको और मूढजनोको और कामाधी जनोको मतयुक्तकरे जोनसे पुरुष लोभ रहितहै कामक्रोध रहितसे और बुद्धिज्ञान संपन्नहै उन्हको व्यवहा

३३.

दर्शनादि समस्त राजकार्योंविषे नियुक्त करेगा तो धर्महानि
को चिंताबंधकों नहीप्राप्तहोवेगा ८
मूर्खो ह्यधिकृतोर्थेषु कार्याणामविशारदः
प्रजाः क्लिश्नाति योगेन कामक्रोध समन्वितः ९
हे राजन् मूर्खजो कार्यदर्शनमो अधिकारी किया तो कार्य
दर्शनमों धर्मज्ञानमों चतुरनही होता उसको इष्टानिष्ट द
र्शन योगका अभावहोता केवल कामक्रोधादि वेगसंयुक्त
होताहे प्रजाको क्लेशकरताहे ९ ॥
बलिषष्ठेन शुल्केन दंडेनाथापराधिनाम्
शास्त्रानीतेन लिप्सेथा वेतनेन धनागमम् १०
राजा जोहै सो व्यवहार दर्शनसे प्रजाकी रक्षासे जो सस्यादि
खेतीका षष्ठभागबलि आवताहे और अपराधी जनोंको
दंडकाकर आवताहे उसको शास्त्रमार्गसे आवतेको मजूरी
रूपसे अपने धनकी प्राप्तीमात्र लोभकरणा १०
दापयित्वा करं धर्म्यं राष्ट्रं नीत्या यथा विधि
तथैव कल्पये द्राजा योगक्षेम मतंद्रितः ११
उसीकरके धर्मरूप जानकर प्रजासे अपने धन संग्रहवास
ते दिलावे इसप्रकारसे राजा धर्मकरके प्रजापालनकरे इसी
प्रकार अपने राजकार्यके योगक्षेमको कल्पनकरे तो अधर्म
प्रसंगके दोषसे रहित होताहे ११
गोप्तारं दातारं धर्मनित्य मतंद्रितम्
अकामद्वेष संयुक्तं मनुरज्यंति मानवाः १२
जोनसा राजा धर्मरक्षा करताहे और दानधर्मसे होताहे ध
र्ममर्यादाकी रक्षामों नित्यनिष्ठावालीहे कामक्रोधद्वेषर
हितहे उसको प्रजा सभही प्रीतिसे रागकरतीहे १२
मास्म धर्मेण लोभेन लिप्सेथास्त्वं धनागमं
धर्मार्थाव ध्रुवौ तस्य योनशास्त्र परो भवेत् १३
हे राजन् तू अधर्मकरके धनप्राप्तीके लोभको मतकरे जो रा
जा धर्मशास्त्र विना धनागमकी वांछा करताहे उसके धर्म
अर्थ दोनो अस्थिर होतेहे १३

अर्थशास्त्रपरो राजा धर्मार्थौ नाधिगच्छति
अस्थाने चास्य तद्वित्तं सर्वमेव विनश्यति १४
जो राजा अर्थलोभको मुख्यकर्के धर्मार्थ ज्ञानमें तत्पर हो
वे सो शास्त्रज्ञानविना उसको अन्यायद्रव्यके लोभक
र्के सभही द्रव्य नष्ट होजाताहै १४

अर्थमूलोऽपि हिंसां च कुरुते स्वयमात्मनः
करैरशास्त्रदृष्टैर्हि मोहात्संमोहयन्प्रजाः १५
अर्थमूलतासे अपने कार्यवास्ते हिंसाको करताहै अशा
स्त्रविहितकर ग्रहणकर्के प्रजाको पीडनसे आत्मघात
कोही करताहै १५ ॥

ऊधश्छिन्द्यात्तु यो धेन्वाः क्षीरार्थी न लभेत्पयः
एवं राष्ट्रमयोगेन पीडितं न विवर्धते १६
जैसे कोई मूढपुरुष दुग्ध लोभकर्के गौके स्तनमंडलको
छेदनकर्के दुग्धको कदापि नहीं प्राप्त होता जैसे राजाभी अ
शास्त्र व्यवहारकर्के अर्थसिद्धिको प्रजापीडनेसे नहीं प्राप्त होता १८

यो हि दोग्ध्रीमुपास्ते च स नित्यं विन्दते पयः
एवं राष्ट्रमुपायेन भुञ्जानो लभते फलं १७
जो पुरुष .... देवनेहारी गौउको पालन करताहै सो नि
त्यही दुग्धको प्राप्त होताहै इसप्रकार राजाभी पालनादि
उपायकर्के राज्यको भोगेतो धर्म अर्थ काम मोक्ष फलको
प्राप्त होताहै १७ ॥

अथ राष्ट्रमुपायेन भुज्यमानं सुरक्षितं
जनयत्यतुलां नित्यं कोशवृद्धिं युधिष्ठिर १८
हे युधिष्ठिर अब इसीहेतुको कहतेहै जो राजा अपने राज्य
को पालनादि उपायकर्के रक्षासंयुक्त भोगताहै सो नित्य
प्रति अतुल कोशवृद्धिको सिद्धकरताहै १८ ।

दोग्ध्री धान्यं हिरण्यं च मही राज्ञा सुरक्षिता
नित्यं स्वेभ्यः परेभ्यश्च तृप्ता माता यथा पयः १९
यह पृथिवी राजाने अपने अधर्मीलोकोसे और शत्रुजनो ।

से उपायकर्के संरक्षणकीतीहै गौके समान अन्न धन संपदा
रूपि दूध क्षीरको देतीहै जैसे माता पुत्रको स्तनपानदेकर्के पा
लनकरतीहै तैसे पृथिवी सब संपदासे पालन करतीहै १९

मालाकारोपमो राजन् भव मांगारिकोपमः
तथा युक्तश्चिरं राज्यं भोक्तुं शक्यसि पालयन् २०

हे राजन् तूं प्रजाकी पालनकरताहै रक्षामें मालाके समान
यत्नवानहो और लोहकारादि समान संताप करता मतहो
ऐसी युक्तीसे राज्यको चिरकाल पालना करेगा २०

परचक्राभियानेन यदि ते स्याद्धनक्षयः
अथ सांत्वैव लिप्सेथा धनमब्राह्मणेषु यत् २१

जोकदाचित् परसेनाके आगमन शंकाकरके तेरे धनका खर
च होवेगा तो प्रजासे सामउपाय कर्केही धनप्राप्तीकी वांछाको
करो सो भी अब्राह्मणोंसे ग्रहणकरो २१

मा स्म ते ब्राह्मणं दृष्ट्वा धनस्थं प्रचलेन्मनः
अंत्यायामप्यवस्थायां किमु स्फीतस्य भारत २२

हे भारत ब्रह्मकर्मवाले ब्राह्मणोंविषे धनवृद्धी देखकर्के तेराम
न विश्वासे धनलोभको चलित नहीं होवो अत्यंत आपदामेंभी
ऐसा मन तेरा नहीं होवे और संपदाकैसे होवेगा २२

धनानि तेभ्यो दद्यास्त्वं यथाशक्ति यथार्हतः
सांत्वयन्परिरक्षंश्च स्वर्गमाप्स्यसि दुर्जयम् २३

ब्रह्मकर्मवाले ब्राह्मणोंको तूं यथापात्र देखकर्के यथाशक्ति
श्रद्धासेयुक्त धनदानकोकर और विप्रोंको सांत्ववचनकर्के प्र
सन्नकर और सर्वदुःखोंसे पालनकरे तो दुर्जय स्वर्गको प्राप्त
होवेगा २३ ॥

एवं वृत्तेन धर्मेण प्रजास्त्वं परिपालय ॥
स्वर्ग्यं पुण्यं यशो नित्यं प्राप्स्यसे कुरुनंदन २४

इस प्रकारके धर्मवृत्तिकर्के प्रजाको तूं पालनकरेगा तो स्व
र्गको और पुण्यको यशको प्राप्त होवेगा २४

धर्मेण व्यवहारेण प्रजाः पालय पांडव युधि
ष्ठिर यथा युक्तो नाधिबंधेन योक्ष्यसे २५

हे युधिष्ठिर हे पांडव धर्मविचारके अवहारकर्के प्रजापालन
तुमकरो ऐसी वृत्तिकी योगयुक्तीकर्के तुमको अधर्मचिंताका
क्लेशबंध नहीहोवेगा २५ ॥

एष एव परोधर्मो यद्राजा रक्षति प्रजाः
भूतानां हि यदाधर्मो रक्षणं परमादया २६

यही परमधर्महे जो राजा प्रजाको धर्मसे रक्षाकरे ओर सर्वभू
तोका धर्मभी यहीहे जो राजा दयाकर्के सर्वभूतोंकी रक्षा
करे तो सर्वभूतोसे धर्म कर्म होताहे २६

तस्मादेवपरं धर्मं मन्यंते धर्मकोविदाः
यो राजा रक्षणे युक्तो भूतेषु कुरुते दयां २७

ताते हे राजन् धर्मवेत्ता महात्मा लोक इसीको परम धर्ममा
नतेहे जो राजा हे सो रक्षाकरनेके यत्नकर्के सर्वभूतोविषे
दयाकरताहे २७ ॥

यदरक्षा कुरुते पाप मरक्षन्भयतः प्रजाः
राजा वर्ष सहस्रेण तस्यांत मधिगच्छति २८

जो राजा प्रजाको अधर्मप्रवृत्तीसे रक्षानहीकरे प्रजासे करद्
पी धनलेवे सो राजा एकदिन जेता पापकरताहे उसपापके
फलको वर्षसहस्र कर्केभी अंतको नहीपावता २८

यदह्ना कुरुते धर्मं प्रजा धर्मेण पालयन्
एवं धर्मं प्रयत्नेन तस्य भुंक्ते फलं दिवि २९

जोनसे प्रजाको पालनकर्के जेते धर्मको एकदिनमो करताहे
उसपुण्यको राजा दशहजार वर्ष स्वर्गमो भोग स्वर्गको
प्राप्तहोताहे २९ ॥

स्विष्टिः स्वधीति सुतपा लोकान् जयति यावतः
तावान तानवाप्नोति प्रजाधर्मेण पालयन् ३०

जो कोई ब्रह्मकर्मवाला ब्राह्मण सुंदर विधिसे वेदोका अध्यय
नकरताहे सुंदर विधीसे यज्ञकरताहे सुंदरविधिसे ब्रह्मचर्य
व्रतकरताहे ओर तीन प्रकारके मौनव्रतकर्के जेते पुण्यको
प्राप्तहोताहे उसपुण्यको राजा एक क्षणकर्के प्रजाको धर्मक
र्के पालनेसे प्राप्तहोताहे ३० ॥

एवं धर्मं प्रयत्नेन कौंतेय परिपालय
ततः पुण्यफलंलब्ध्वा नाधिवंधेन योक्ष्यसे ३१
हे कौंतेय इसप्रकार तुमधर्मको प्रयत्नसे पालनकरो ३
हेकौंतेय इसप्रकार पुण्यफलको पाइकर अधर्मविंजाके बंधको न
सककें महापुण्यफलको पाइकर अधर्मविंजाके बंधको न
हीप्राप्तहोवेगे ३१
स्वर्गलोके महतीं श्रियं प्राप्स्यसि पांडव
असंभवश्च धर्माणा मीदृशाना मराजसु ३२
हे पांडव इसप्रकारके धर्मपालनसे तुमस्वर्गलोकविषे
महाभोगसंपदाकों प्राप्तहोवोगे हे महाबाहो जहा राजा
धर्मपालकनहीहैं ऐसे देशाविषे इसप्रकारके धर्मकर्मो
का संभव कदापि नहीहोता ३२
तस्मा द्राजैव नान्योस्ति योधर्म फल माप्नुयात्
सराज्यं धृतिमान् प्राप्य धर्मेण परिपालय ३३
इंद्रं तर्पय सोमेन कामैश्च सुहृदो जनान् ३४
इति श्री राजधर्मे एकसप्ततितमोध्यायः ७१
हे राजन् १ ताते राजाही दंडनीति आदिक धर्मकर्मकामूल
है जो राजा प्रजाको धर्ममर्यादासो पालनकरताहै सो तूंभी
अधर्मकर्के राज्यकोपाइकर धर्मकरके सभको पालनकर इं
द्रको सोमयागकर्के तृप्तकर ओर सुहृदलोकोको कामपूर्ण
णाकर्के तृप्तकर ३४ ॥ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि
राजधर्मे एकसप्ततितमोध्यायः ७१ ॥
भीष्मउवाच यएवतु सतोरक्षे दसतश्च निवर्तये
त् सएवराज्ञः कर्तव्यो राजराज पुरोहितः १
भीष्मउवाच हेराजन् जो कोई पुरुष इसप्रकार धर्मकर्मवाले
जनोके रक्षाकरे ओर असतमार्गसे सभको निवृत्तकरे सो राजा
कर्तव्यहो ओर राजानेभी ऐसीधर्मपालनेवाला अपनापुरुष १
पुरोहितकर्तव्यहै इसीप्रकारके सभही अधिकारभीकर्तव्यहे
अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनम्
पुरोरव स ऐलस्य संवादं मातरिश्वना २
अब इसीवृत्तांतविषे पुरातन इतिहासको उदाहरणकर

तेहै जैानसा पुरातन इतिहासमो इला राजाका पुत्रपुरूर
वा राजाका ओैर वायुदेवताका संवादभयाहै उसको कहतेहै
पुरूरवाउवाच कुतः स्विद्ब्राह्मणो जातो वर्णाश्चा
पि कुतस्त्रयः कस्माच्च भवति श्रेष्ठ स्तन्मेव्याख्यातु
मर्हसि ॥ ३ पुरूरवाउवाच हेभगवन् ब्राह्मणवर्ण
कहांसे उत्पन्नभयाहै ओैर कर्मचेष्टा जो तीनवर्ण क्षत्री वैश्य
शूद्रसो कहांसे उत्पन्नभयाहै ओैर कर्मचेष्टा सभकी कैसे हो
तीहै यह आपमोको कहने योग्यहो ३ ॥
मातरिश्वाउवाच ब्रह्मणो मुखतः सृष्टो ब्राह्मणो ।
राजसत्तम बाहुभ्यां क्षत्रियः सृष्ट ऊरुभ्यां वैश्य एवच
मातरिश्वाउवाच हे राजन् ब्रह्माजीने मुखसे ब्राह्मणवर्ण
सृजाहै ओैर भुजोंसे क्षत्रियवर्णसृजाहै ओैर ऊरुस्थानसे
वैश्यवर्ण सृजाहै ४ ॥
वर्णानां परिचर्यार्थं त्रयाणां भरतर्षभ ॥
वर्णश्चतुर्थः संभूतः पद्भ्यां शूद्रो विनिर्मितः ५
यह जो तीनवर्णहै इन्हके धर्मकर्मकी सेवावास्ते ब्रह्माजी
ने चरणोंसे चतुर्थवर्ण शूद्रसृजाहै ५ ॥
ब्राह्मणो जायमानो हि पृथिव्यामनुजायते
ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोशस्य गुप्तये ६
ब्राह्मण जिसकालमो उत्पन्नभया उसीकालमों पृथिवी
मो सर्ववर्णोंकी धर्मकर्मका स्वामीभया सर्वभूतोंका
ईश्वर देवताभया धर्मकर्मके कोस खजानेकी रक्षावा
स्ते बनाहै ॥ ६ ॥
अतः पृथिव्यां यन्तारं क्षत्रियं दंडधारणे
द्वितीयं दंड मकरोत् प्रजानामनुगुप्तये ७
उस धर्म कर्मकोशकी रक्षावासते दंडधारी द्वारपालजैसा
मर्यादाकी रक्षावास्ते ओैर दंडधारणकार्यवास्ते क्षत्रियको
ब्रह्माजीने कल्पनकिया उसके सहायवास्ते ब्रह्माजीने
अपने तेजसे द्वितीयरूप दंडधर्मको सृजाहै ७
वैश्यस्तु धन धान्येन त्रीन्वर्णान् बिभृयादिमान्

शूद्रोसेवा त्वरिचवे दिति ब्रह्मानुशासनम् ८

ओर जो वैश्यवर्ण है सो धन धान्यादि व्यापार करके तीन वर्ण की उपजीविका वास्ते प्रवृत्त किया है ओर शूद्र वर्णको तीन वर्णों की सेवा करणे वास्ते तृणकाष्टादि साधन करणे द्वारे को कल्पन किये है यह ब्रह्माजीका वर्णों के धर्मकर्म का शासन है ८॥

ऐलउवाच द्विजस्य क्षत्रबंधो र्वा कस्येयं पृथिवी भवे
त् धर्मतः सह वित्तेन सम्यग्वायो प्रचक्ष्व मे ९

ऐलउवाच हे वासुदेवता जी यह पृथिवी की ब्राह्मणकी के अथवा क्षत्री के धर्म करके पृथिवी वा स्तव किसकी भोग्यवस्तु है यह मोको आप निर्णय करके कहो ९

वायुरुवाच विप्रस्य सर्व मेवैत यत्किंचिज्जगतीगतं
ज्येष्ठेनाभिजनेनेह तद्धर्म कुशला विदुः १०

वायुरुवाच हे राजन् जगत विषे जो कुछ पदार्थ है सो सभही ब्राह्मणका है ब्राह्मण सर्व वर्णों विषे उत्पत्ती करके ज्येष्ट है जा तिसंबंध से भी ज्येष्ट है १०

स्वमेव ब्राह्मणो भुंक्ते स्वं वस्ते स्वं ददाति च
गुरु र्हि सर्ववर्णानां ज्येष्ठः श्रेष्ठश्च वै द्विजः ११

जैसे पति अपनी पालना न करे तो इस्त्री अपने देवरको रक्षा वा स्ते पतिके कनिष्ट भ्राताको पति कर लेती है तैसे पृथिवी भी ब्राह्मण से कनिष्ट वर्णोंके रक्षा वास्ते पति कर लेती है १२

पत्यभावे यथैवस्त्री देवरं कुरुते पतिम्
आनंतर्या तथा क्षत्रं पृथिवी कुरुते पतिम् १२

जैसे पति अपनी पालना न करे तो इस्त्री अपने देवरको रक्षा वास्ते पति कर लेती है पतिके कनिष्ट भ्राताको पति कर लेती है तैसे पृथिवी भी ब्राह्मण से कनिष्ट वर्णोंको रक्षा वास्ते पति कर लेती है १२

एषते प्रथमः कल्पः आपद्यन्यो भवेदतः
यदि स्वर्गं परंस्थानं स्वधर्मं परिमार्गसि १३

ओर पा लाते पुरूरवा राजन् इन्हे वर्णों विषे आपदा विषे

तीको अपेक्षाहोतीहै जो तूंभी स्वर्गकों परमस्थानकों वांछा
करताहै और स्वधर्मकरणे तो वांछाकरताहै तोजो कछु
भूमिभागकों रणकर्के जीते तो प्रथम ब्रह्मणोकों निवेदनकर १३
यत्किंचि द्विजयेभूमिं ब्राह्मणाय निवेदय
श्रुतवृत्तोपपन्नाय धर्मज्ञाय तपस्विने १४
कैसे ब्राह्मणोंकों निवेदनकर जौनसा शास्त्रज्ञान संपन्नहोय
और अपनेचारमो प्रवृत्तहोय धर्मज्ञानतत्त्वज्ञहोय तपस्वीहोय
स्वधर्म निष्ठामो रतहोय और धनका लोभी न होय १४
स्वधर्म परितृप्ताय योन वित्त परो भवेत
योराजानं नयेद्बुद्ध्या सर्वतः परिपूर्णया १५
जौनसा ब्राह्मण राजाको सर्व प्रकारसे परिपूर्णनीतिज्ञानकी बु
द्धिकर्के संपन्नकरे ब्राह्मणोको शुद्धकुलमो उत्पन्नहोय और
कृतज्ञहोय वशीकृत बुद्धिहोय और उत्तमजनोविषे विना
यवानहोवे ॥ १५ ॥
ब्राह्मणोहि कुलेजातः कृतप्रज्ञो विनीतवान्
श्रेयो नयति राजानं ब्रुवंश्चित्रां सरस्वतीम् १६
जौनसा ब्राह्मण राजाको मधुर स्वरवाले विचित्र अर्थ संप
न्नसरस्वतीको मुखसे धर्मनिर्णयवाली उपदेशकरे और रा
जा जोहै सो ब्राह्मणने विचारकरके धर्मनिर्णयकह्याहै १६
राजा चरति यधर्मं ब्राह्मणेन निदर्शितं
शुश्रुषुरनहं वादी क्षत्रधर्म रतेस्थितः १७
उसको श्रवणकरणेकी नित्यही वांछाकरे अहंकारवादी न
होवे अपने क्षत्रधर्मकर्मकी रतीमो स्थितहोवे ऐसाकरा
णेकर्के राजाकृतकृत्यहोताहै चिरकाल अपनी यशकी शो
भामोंस्थितहोताहै १७ ॥
तावता सत्कृतः प्राज्ञ श्चिरंयशसि तिष्ठति
तस्य धर्मस्य सर्वस्य भागीराजपुरोहितः १८
जो राजा धर्मनीतिसे प्रजापालन यज्ञादिकर्मकरताहै उसकी
पुण्यकाभागी राजाको प्रथमही शुभहितउपदेशकरणेहा
रा राजपुरोहितहोताहै इसप्रकार यह सभही प्रजा स्वधर्म

रक्षावासते राजाके आश्रयमों स्थितभयाहे १८

एव मेव प्रजाः सर्वा राजान मभि संश्रिताः
सम्यक वृत्ताः स्वधर्मस्थानक्रत श्चिद्भयान्विताः

राजाके आश्रयकर्कै सभही प्रजा सम्यक धर्माचारवृत्तिमों स्थित
हे जिन्हकों कदाचित् कहीभी स्वधर्महानिका भयनही होवे
जोनसे प्रजा राजाने प्रयत्नकर्कै रक्षाकीनीहे राज्याके राज्य
मो जेता धर्म कर्म करतीहे १९

राष्ट्रे चरंति यंधर्मं राज्ञा साध्वभि रक्षिताः
चतुर्थं तस्य धर्मस्य राजाभागं त विंदति २०

उस धर्म कर्मके पुण्यभागका चतुर्थांशभागी राजाहोताहे
देवता पितर मनुष्य गंधर्व नागराक्षस सभही राजाके रक्षाय
त्तमो उपजीवन करतेहे २०

देवा मनुष्या पितरो गंधर्वो रग राक्षसा
यज्ञ मेवोप जीवंति नास्ति चेष्टम राजके २१

यज्ञकर्मकी सभही भूतउपजीवन करतेहे अराजक राष्ट्रमो
यज्ञनही होता जाते यज्ञमोदिये यज्ञभागकर्कै देवता पितर
सभ उपजीवन करतेहे २१

यतो दत्तेन जीवंति देवताः पितर स्तथा
राज्ञन्येवास्य धर्मस्य योगक्षेमः प्रतिष्ठितः
छायाया मप्सु वायौ च सुखं मुष्णे च गच्छति २२

हे राजन् यज्ञधर्मका योगक्षेम प्रारंभ रक्षासमाप्ति राजाके र
क्षा धर्ममोही हे छायामो जलविषे वायुविषे उष्णता विषे सु
ख जो प्राप्तहोताहे सो राजाके रक्षासे होताहे २२

अग्नौ वा शशि सूर्ये च सुखं शीतेपि गच्छति
शब्दे स्पर्शे रसे रूपे गंधे च रमते मनः २३

अग्निविषे चंद्रमाविषे शीतविषे सुखजोहे सो राजाके रक्षामों
होताहे शब्दमो स्पर्शमो रसमो रूपमो गंधविषे मनजो सु
खको प्राप्तहोताहे सो राजाकी रक्षासे होताहे २३

तेषु भोगेषु सर्वेषु न भीतो लभते सुखं

श्री॰
रा॰ ध॰
टी॰
२३

23

अभयस्य हि यो दाता तस्यैव सुमहत्फले
जो राजाकी रक्षाविना भयभीत जगतकहीभी कदापि सुख
को नही प्राप्तहोता ताते जौनसा सभको सुखके अनुभववास
ते अभयदाताहे उसराजाका अभयदानका महाही फलहोता
हे २४ नहि प्राणसमंदानं त्रिषु लोकेषु विद्यते
इंद्रो राजा यमो राजा धर्मो राजा तथैव च
राजा बिभर्ति रूपाणि राजा सर्वमिदं ततं २५
इति श्री महाभारते शांतौ द्विसप्ततितमः ७२
हे युद्धरव राजा प्राणदानके समानदान उत्तमदान त्रिलोकीविषे
नहीहे राजाजोही सो सभकी प्राणरक्षावास्ते इंद्रहोताहे यमरू
पहोताहे धर्मराजा होताहे राजाही धर्मरूपहे राजा धर्मरक्षावा
स्ते अनेकरूपधारणकरताहे ताते राजाही सर्वजगतरूपहे २५
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे द्विसप्ततितमोध्यायः ७२
भीष्मउवाच राज्ञा पुरोहितः कार्यो भवेद्विद्वान् बहुश्रु
तः उभौ समीक्ष्य धर्मात्मा वप्रमेयावनंतरम् १
भीष्मउवाच हे राजन् अपने धर्मकर्मके सहायवास्ते मुख्य एक
पुरोहितकरणा कैसाहोय धर्मात्माहोय शांतिक पौष्टिक यज्ञा
दि मंत्रवेत्ता विद्याज्ञानका पंडितहोय और बहुश्रुतहोय पुरो
हित करणेका प्रयोजनकहतेहे राजाने धर्मार्थचिंता कर्तव्यहे
धर्म और अर्थ दोनो अप्रमेयहे ऐसेजानकर धर्मार्थविचार
सिद्धिवास्ते विद्यागुणवान् पुरोहित कर्तव्यहे १
धर्मात्मा मंत्रविद्येषां राज्ञां राजन् पुरोहितः
राजा चैव गुणी येषां कुशलं तेषु सर्वशः २
जिनके राजालोकोंका धर्मात्मा और मंत्र तंत्रादिवेत्ता पुरोहित
होय और राजाभी धर्मात्माहोय राजधर्मके मंत्रतंत्रवेत्ताहोय
ऐसे जो प्रजालोकहे उन्हका सर्वप्रकारसे कुशलहोताहे २
उभौ प्रजा वर्धयतो देवान् सर्वान्सुतान्पितॄन्
भवेयातां स्थितौ धर्मे श्रद्धेयौ सुतपस्विनौ ३
राजा और पुरोहित यह दोनो पुरोहित और राजा स्वधर्ममें
स्थितहोवे देवता गणको पुत्रादि कुटुंबको पितरनको वृद्धि
संयुक्त करतेहे परंतु जौनसे यहदोनो पुरोहित और राजा।

स्वधर्ममें स्थितहोवे और श्रद्धायुक्तहोवे तपोनिष्ठहोवे ३

परस्परस्य सुहृदौ विहितौ समचेतसौ
ब्रह्मक्षत्रस्य संमानात्प्रजाः सुखमवाप्नुयुः ४

परस्परके सुहृदहोवे दोनो एक जैसे मिलितहोवे हे राजन् ४
ब्रह्मक्षत्रके परस्पर संमानतासे प्रजासुखको प्राप्तहोतीहै

विमाननात्तयो रेव प्रजानश्येयु रेवहि
ब्रह्मक्षत्रं च सर्वेषां वर्णानां मूलमुच्यते ५

जो ब्रह्मक्षत्र परस्पर अवमानकरे तो सभही प्रजानाशको
प्राप्तहोतीहै ब्रह्मक्षत्र यह दोनो सर्ववर्णोंके धर्ममूलकहेहैं ५

अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनं
ऐलकश्यप संवादं तन्निबोध युधिष्ठिर ६

इहांभी एक पुरातन इतिहासको उदाहरण कहतेहै ऐलरा
जाका कश्यपका संवादभयाहै हे युधिष्ठिर प्रथम तुम इसी
को श्रवणकरो ६ ॥

ऐलउवाच यदाहि ब्रह्म प्रजहाति क्षत्रं क्षत्रं यदा
हि प्रजहाति ब्रह्म अन्वग्बलं कतमेस्मिन्भजंते त
थावर्णाः कतमेस्मिन् ध्रियंते ७ ॥

ऐलउवाच जब क्षत्रजाती ब्राह्मणको त्यागकरताहै जब ब्रा
ह्मण क्षत्रीको त्यागकरताहै प्रकाशमानबल किसकाहै
और किसके विषे आश्रयविषे सभही वर्णधर्म कर्म आश्र
यकरतेहै अपनी मर्यादाको धारणकरतेहै ७ ॥

कश्यपउवाच व्यृद्धं राष्ट्रं भवति क्षत्रियस्य ब्रह्मक्ष
त्रे यत्र विरुध्यतीह अन्वग्बलं दस्यव स्तद्भजंते
तथावर्णं तत्र ध्रियंति सन्तः ८ ॥

कश्यपउवाच जहांक्षत्री ब्राह्मणको विरोधकरताहै सो राष्ट्र
राष्ट्रभोज्यदेशभी छिन्न भिन्नहोताहै उसराष्ट्रको दुर्बलजान
कर चोरलोक प्राप्तहोतेहै ब्राह्मणके अवमानसे राजाको
म्लेच्छजाती मानतेहै क्षत्रीजाती नहीजानते सकलवर्णोको
बांधकर लूटलेतेहै ८ ॥

24

अत्वगवलंदस्यवत्तइजंते यथावर्णमथ्यतेना
जयंते नैषां पुत्रा वेदमधीयते च यदा ब्रह्म क्षत्रि
या संत्यजंति ९ ॥

ऐसे राष्ट्रके लोकोंको देशकें वेदधर्मनही वृद्धिहोता पुत्रसेंता
नभी नहीहोती और गोधनकी हानिसे दधिमथनकी गर्गरीओ
भी मथनशद्बकोनही करतीयां और उहांके लोकोंके पुत्रनही
अध्ययनकरेते जब उसराष्ट्रमो क्षत्रिय ब्राह्मण प्रजाको त्या
गकरदेतेहे ९ ॥

नैषामुक्षा वर्धते जातुगेहे नाधीयंते सप्रजानो
यजंते अपध्वस्ता दस्युभूता भवंति येब्राह्मणान्
क्षत्रिया संत्यजंति १०

ऐसे अब्राह्मण्य देशके लोकोंके अर्थवृद्धिनहीहोती तहां वे
दोंका अध्ययन नहीकरते संदरताहृद्धिवाले यज्ञभी नहीहो
ते सभही प्रजातहां कंसराजाके समान वर्णसंकरजातीकी व
र्णसंकरादिभ्रष्टजातीहोतीहे जोनसे राजा ब्राह्मणोकी प्रजासे
उदासीनहोतेहै १०

एतौ हि नित्यं संयुक्ता वितरे नरधारिणि
तयं वै ब्रह्मणोयोनिः क्षत्रियस्य च वैद्विजाः ११

हे राजन् ब्राह्मणक्षत्री यह दोनो परस्पर माननेसे अन्योन्यध
र्मोके धारणेमो समर्थहोतेहे दंडनीतिकरके क्षत्रीब्राह्मणध
र्मोका उत्पतीकारकहे और ब्राह्मण वेदमंत्रके विधानसे क्ष
त्रीको यज्ञयागादि करानेसे क्षत्रीके धर्मकर्मकी उत्पतीका
कारणहे ११ ॥

उभावेतौ नित्यमभि प्रपन्नौ संप्रापतुर्महतीं प्र
तिष्ठां तयोः संधिर्भिद्यते चेत्पुराणः ततः सर्वं
भवति संप्रमूढं १२

यह दोनो परस्पर मानपना पूर्वकोवेतो महाप्रतिष्ठाको
प्राप्तहोतेहे इनदोनोकी संधी पुरातन बनीहे एही धर्म
मर्यादाकी स्थितिकामूलहे इसीसे संपूर्णजगतका क्षेम
योगबनाहे इसीसे संपूर्णधर्मउदे होताहे १२

नांतं परं लभते पारगामी महागाधे नौरिव
संप्रपन्ना चातुर्वर्ण्यं भवतिहि संप्रमूढं प्र
प्रजास्ततः क्षयसंस्था भवंति १३

ब्रह्मक्षत्रकी संधिविना धर्म कर्मका समुद्रअपार अंतवालाहै
जैसे अगाधजलमों नौका डूबजातीहै तैसे चारवर्णोंके समध
र्मकर्म मूढतासे डूबजावेगे तब सभही प्रजाक्षय समुद्रमों
डूब जावेगे १४ ॥

ब्रह्मवृक्षो रक्ष्यमाणो मधुहेम च वर्षति
अरक्ष्यमाणः सततं मस्त्रुपापं च वर्षति १५

हे राजन् यह ब्रह्मकर्मका वृक्षब्राह्मणहै इसकी रक्षासे यहह
त अनंतसुखरूपी मधुकी सुवर्ण फलजैसी वर्षाको करताहै
जो अरक्ष्यमानहोवे तो अस्त्रुजलको उदेकरणेहारे दुःखकेल
की ओर नरकप्राप्तिरूपी फलवर्षाकोकरतेहै १५

नब्रह्मचारी चरणाद्पेतो यदाब्रह्म ब्रह्मणिरा
ण मिच्छेत आशंसतो वर्षति तत्र देव स्तत्रा
भीक्ष्णं दुस्सहस्त्रा विशंति १५

जहां क्षत्री ब्राह्मणकी रक्षानहीकरता ब्रह्मजो ब्राह्मणजाती सो
अपने ब्रह्मधर्मकी आचारसे वेदोंके अध्ययनसे चलित होजाता
है चोरादि दुष्टजनोंने अपने वेदकी शाखाके अध्ययनसे निवा
रण कियाहै सो अपने धर्मकर्मकी रक्षाचाहताहै उसको अपने
रक्षाकरणेका अभावभया ताते वेदधर्मका सभलोपभया त
हां पर्जन्यकी वर्षा आश्चर्यरूपके दुर्लभहै धर्मकर्मके लोपसे
तहां मारीदुर्भिक्षादिक दुस्सह उपद्रवभी होतेहै १५

स्त्रियं हत्वा ब्राह्मणं वापिपापः सभायां
यत्रलभतेनुवादं राज्ञः सकाशेन बिभेतिचा
पि ततोभयं विद्यते क्षत्रियस्य १८

तहां क्षत्रीहत्याकरके
जहां रक्षाविना अधर्म प्रवृत्त होताहै
और ब्राह्मणहत्याभी करआवे ऐसा पापीजन अपने पापसभा
मो महास्तुतिको प्राप्तहोताहै अपने राजाके पासभी भयको
नही करताहै ताते अभयदानधर्मक्षत्रिकोहै ॥

पापे पापे क्रियमाणे हि चैल ततो रुद्रो जायते
देवपथः पापैः पापाः संजनयंति रुद्रं ततः
सर्वा न्साध साधून् हिनस्ति १७
जब पापी लोकोने पापकर्म किया तब धर्मकर्मकी मर्या
दासमचलितहोतीहे तब यह राजा देवजोहे सो हिंसाकर्म
कारी होताहे यही जगतका नयकारी रुद्ररूप संहारकर्ता
होताहे पापीजनजोहे सो आपकर्मकर्के राजाको रुद्ररूपक
रतेहे तब यह राजा साधुलोकोको असाधुलोकोको विशेषज्ञा
नको त्यागकर्के सभको हत्या करताहे १७
पैलउवाच कुतो रुद्रः कीदृशो वापि रुद्रः सत्वैः
सत्वे दृश्यते वधमानं एतत्सर्वं कश्यपमे प्रब्र
ूहि कुतो रुद्रो जायते देवपथः १८
पैलउवाच हे भगवन् कश्यपजी यह राजा रुद्रकैसे होता
हे और रुद्ररूपी कर्मकैसा होताहे अपने जीवोंको अपने
जीवोकर्के हन्यमानकरावता दृष्टहोताहे यह मेने प्रश्न
कियाहे आप सभही हेतकहो यह आपही केसे रुद्ररूप
होताहे १८ ॥
कश्यपउवाच आत्मारुद्रो हृदये मानवानां
स्वंस्वं देहं परदेहं वदंति वातोत्पातैः सदृशं
रुद्रमाहुः दैवैर्जीमूतैः सदृशं रूपमस्य १९
कश्यपउवाच हे राजन् यह सर्वजीवोके हृदयविषे वर्तमा
न अपना आत्माजीवहे सोई आपसंहारकर्ता रुद्ररूपहो
ताहे जैसे किसे देहधारी जीवात्माकी स्वाधीनता नही
होती उसभूतयहादि प्रवेशवालीकी स्वाधीनताहोतीहे ऐ
सेही अधर्म प्रहतिकर्के राजाशरीरही हिंसावासे रुद्ररूपहो
ताहे जोतम शंकाकरो ऐसा प्रांतरूपआत्मा रुद्ररूपकैसे
होताहे तो उत्तरसुनो जैसे उत्पातपवन आकाशमोही उडे
होताहे आकाशमो स्थितपर्जन्य देवताको उडायदेताहे
महागर्जनाको मेघरूपतासेहीकरताहे और बिजलीपात
गोलादिवर्षादि करताहे तैसेही अपनेहृदयमो स्थितजो

जीवात्मा उसको ह्रदयमोही उदेयभये जो कामक्रोधादिक सो जीवात्मासे हिंसादि पापकर्मको करादेतेहें १९

पेलउवाच नवैवातः परिह्वणोति कश्चि न्नजीमूतो वर्षति नापि देवः तथा युक्तो दृश्यते मात्रयोषु कामद्वेषा दृष्यते युक्तते च २०

पेलउवाच हे कश्यपजी जैसे वातजोहे सो आकाशसे एकरूप नहीहे और मेघवी आकाशसे भिन्नहे मेघोंका प्रेरक देवताभी प्रत्यक्षशास्त्र ज्ञानकर्के दृष्टहोताहे इसीप्रकारका जीवात्मानहीहे और कामक्रोधादिक आत्मासे भिन्ननही हे किंतु आत्मा विषे अग्नीविषे उष्णताकीन्याई कामद्वेषादि वर्तमानहे जो आत्मासे भिन्नहोवे तो आत्माको बंधकारी मोहकारी वास्तवही वनजावे ताते जैसे अग्निकी उष्णता अग्निको दाहनही करती कामक्रोधादिकोकी विषमता आत्माको कैसे विषमता करतीहे जिसकर्के आत्माको रुद्ररूपता मानीहे २० ॥

कश्यपउवाच यथैक गेहे जातवेदाः प्रदीप्तः कृत्स्नं ग्रामं दहते चत्वरं वा विमोहनं कुरुते देव एष ततः सर्वं दृश्यते पुण्यपापैः २१

कश्यपउवाच हे राजन् जैसे अग्निस्वल्पभी एकगृहविषे अधिक काष्ठभारको प्राप्तहोकर संप्रदीप्तहोताहे अग्निसे अधिक काष्ठविषे अधिकदाहशक्ति विशेषनहीहे और संयोगविना अग्निविषे केवलदाहशक्ति विशेषनहीहे किंतु दोनोका संयोगसंबंधही औपाधिक दाहशक्ति विशेषरूपहोताहे तैसेही आत्माको अहंकाररूप अग्निउदेहोकर कामक्रोधादि वासनारूप पवनवेगकर्के उत्कटहोताहे आत्माको हिंसादि औपाधिक धर्मोकर्के हिंसादिधर्मवाले रुद्ररूपताकरदेताहे जैसे अग्निसंबंधकर्के जलको दाहशक्ति मानकर कहतेहे जल पाकक्रियाको करताहे जैसे जलप्रतिबिंबके कंपादिधर्म चंद्रबिंबमो कल्पितहोतेहे तैसे आत्माविषेभी हिंसा

श्री॰
रा॰ ध॰
टी॰
२९

२६

दि अहंकार कल्पितहै वास्तव विवेकसे पुण्यपापादि
कर्म्मोसे असंगहै २०
पैलउवाच यदि दंडः स्पृश्यते पुण्यपापं
पापैः पापे क्रियमाणे विशेषात् कस्यहेतोः
सुकृतं नामकुर्या द्दुष्कृतंवा कस्य हेतोः नकु
र्यात् २१ पैलउवाच हे भगवन् जो आत्मा पुण्यपा
पसे असंगहैतो पापी जनोसे पापभया नहीं गाली
प्रदानदंड ताडनादि दंडपाप करणेहारेको कर्त्तव्यका
होहै सो भी मोहकी मूढताका धर्म उपाधिकल्पना मा
त्रहै पुण्यपापादि विधिनिषेध वाचकाशास्त्रका उपदेश
वृथाहोय आत्माविषे वास्तव दुःखादि भावोका अभाव
स्वतः सिद्धवनाहै ताते जो शुभकर्मोके अहिंसा अक्रोधादि
साधनसंपद्वृथाही होवेगी उसका उपदेशभी वृथाही
होवेगा २१ ॥
कश्यपउवाच असंयोगात्पापकृता मपापा
त्तत्स्यात् दंडः स्पृशति मिश्रभावात् शुष्केणार्द्रं
दह्यते मिश्रभावा दमिश्रः स्यात्पापकृद्भिः का
र्यचित् २२ कश्यपउवाच हे राजपुत्र आत्माका अहं
कारका तादात्म्यताके असंबंधसे पापकर्मोकी असंग
ताबनतीहै जो दोनोका तादात्म्य संबंधमें दंडनीत्यादि
व्यवहारकार्यका संबंधबनताहीहै जैसे शुष्ककाष्ठके
संबंधसे आर्द्रकाष्ठभी दग्धहोताहै इसी प्रकारसे अहं
कारसंबंधसे आत्माकोभी हिंसादि धर्मोकी कर्तृरूपता
बनतीहै और दंडनीतिका संबंधभी बनताहै २२
पैलउवाच साध्वसाधून्धारयतीह भूमिः सा
ध्वसाधूंस्तापयतीह सूर्यः साध्वसाधूंश्चापि वा
तीहवायु रापस्तथा साधु साधून् पुनंति २३
पैलउवाच हे भगवन् कश्यप जैसे पृथिवी साधु असाधु
जीव जनोका अभेद बुद्धीसे धारना करकरतीहै और सू
र्यभी साधु असाधुजनोको निर्विशेषतासे तापकरताहै

और जैसे साधु असाधु जनोको वातभी असंगतासे स्पंदकरता
है और जैसे जलभी साधु असाधु जनोको एकजैसेही पवि
त्रकरतेहै ऐसेही सूर्यपवन जल सभसे असंगहै उसको
अहंकारादि संबंधसे कर्तृत्वपना कही सो युक्तनहीहै २३
कश्यपउवाच एव मस्मिन्वर्तते लोक एव ना
मुत्रैवं वर्तते राजपुत्र प्रेत्य तयो रंतरावा न्वि
शेषो यो वै पुण्यं चरते यश्च पापम् २५
कश्यपउवाच हे राजन् तत्वदृष्टिकर्के आत्मा असंगही है
तोभी शास्त्रव्यवहारमें इहलोक परलोककी शुभ अशुभ
कल्पना बनीहै उसकी व्यवस्थावास्ते पुण्यकरणेहारेको
पुण्यफलका उपदेशबनताहै पापकरणेको पापफल
का निषेधका उपदेशबनताहै २५
पुण्यस्य लोको मधुमान् घृतार्चि हिरण्यज्यो
तिरमृतस्य नाभि तत्र प्रेत्य मोदते ब्रह्मचारी
न तत्र मृत्यु र्नजरा नोत दुःखं २६
पुण्यकर्मका फलभूत आनंदभोगवालाहै महातेजकर्के
प्रकाशमानहै ब्रह्मलोक प्राप्तिका कारणहै अमृत जो मो
क्षसुख उसका मूलभूतहै ब्रह्मचारी तपस्वीलोक तहां
देह त्यागके अनंतर प्राप्तहोकर जन्ममृत्यु जराव्याधिसें
रहितहोतेहै २६

और पापकर्मका फलनरक लोकप्राप्तिहै तहा जाईकर।
चिंता मोहका महा अंधकारहै नित्यहै दुःखभोगहै और
शोकचिंतासे पूर्णहै तहां जाईकर पापकर्मी पुरुष अप
ने आत्माको अनेक वर्षशोचनाकरताहै सुखलेशको क
दापि नहीप्राप्तहोता २७
मिथ्याभेदा ब्राह्मणक्षत्रियाणां प्रजादुःखंदुः
सहं चा विशंति एवं ज्ञात्वा कार्य एवेह नित्यं पु
रोहितो नैक विद्यो रूपेण २८

हे राजन् ब्राह्मणोंकों क्षत्रियको अभिमानकर्के और अव
मानकर्के परस्पर भेदबुद्धि होवे तो प्रजालोक सभही दुः
खोंकर्केभी असह्य महादुःख जालकों प्रवेश करतीहे ऐसे
जानकर राजाने अनेक विद्या निपुण एक श्रेष्ठ ब्राह्मण
पुरोहित अवश्यकर्तव्यहे २८

ते चैवा भ्यभिषिंचेत तथा धर्मो विधीयते
अग्रे हि ब्राह्मणः प्रोक्तः सर्वस्यैवेह धर्मतः २९

ऐसे ब्राह्मणको राजा पुरोहितकर्के अपनेको ब्राह्मणसे वि
धीकर्के अभिषेक करावे ऐसे करणेसे धर्म कर्मका विधान
बनसकताहे इसी हेतुसे कहाहे सर्ववर्णोंका धर्मकर्मवि
षे ब्राह्मणोंको अग्रणीकरे सर्वप्रकारके धर्मकर्मका मूल
वेदविद्या संपन्नब्राह्मणहीहे २९

पूर्वं हि ब्राह्मणः सृष्टि रितिब्रह्म विदो विदुः
ज्येष्ठेनाभिजनेनास्य प्राप्तं पूर्वं यदुत्तरम् ३०

पूर्वसृष्टिप्रारंभमो ब्राह्मणमात्रही सृष्टिभईहे धर्मवेत्ता लोक
ऐसे कहतेहे संपूर्ण जगतके स्वामी ब्राह्मणहीहे उत्पत्तिसे
श्रेष्ठहे और धर्म संबंधकर्केभी श्रेष्ठहे प्रथमजगतकेस्वामी
ब्राह्मणहे इसके अनंतरक्षत्री स्वामीहे क्षत्रीधर्मके अभाव
मों वैश्यादि हे परंतु अधर्म बहती अधिक होतीहे ३०

तस्मा न्मान्य श्च पूज्यश्च ब्राह्मणः प्रसृताग्रभुक
सर्व श्रेष्ठं विशिष्टं च निवेद्यं तस्य धर्मतः ३१

हे राजन् ताते वेदविधि संपन्न ब्राह्मण सभकामान्यहे पूज्य
हे धर्म कर्म विषे भोक्ताहे जो सर्वश्रेष्ठ पदार्थहे और उत्तम
हे भोक्तव्यहे प्रथम ब्राह्मणको निवेदनीयहे यही धर्मम
र्यादासे प्रथम बनाहे ३०

अवश्य मेव कर्तव्यं राजा बलवता पि हि
बलंवर्धयति तस्य तस्येतो ब्रह्म वर्तते ३२

जो राजा बलवानहोवे उसनेभी ब्राह्मण धर्म कर्ममो श्रेष्ठक
र्तव्यहे ब्राह्मण अपने ब्रह्मकर्मकर्के क्षत्रीकी वृद्धिकरतेहे
और क्षत्रीजोहे सो अपने राजधर्मकर्के ब्राह्मणोंकी वृद्धिक

है इसकारणसे राजाने ब्राह्मण सदा पूजनीयहै ७२ ॥
इति श्री महाभारते शतसहस्र संहितायां शांतिपर्वणि
राजधर्मे त्रिसप्ततितमोध्यायः ७३ ॥ ॥
भीष्मउवाच योगक्षेमो हि राष्ट्रस्य राजन्यायत
उच्यते योगक्षेमो हि राज्ञो हि समायत्तो पुरोहिते १
भीष्मउवाच हे राजन् राज्यकी उदय और रक्षा यह योगक्षे
मदोनो कहेहैं सो राजाके अधीनकहेहैं सो दोनो योगक्षे
मकहेहै राजाके पुरोहितविषे प्रतिष्ठित भयेहै १
यत्रादृष्टं भयं ब्रह्म प्रजानां शमयत्युत
दृष्टं च राजा बाहुभ्यां यद्राज्यं सुखमेधते २
जिस राज्याके राज्यमो प्रजालोकको अनावृष्टि इत्यादि अदृष्ट
भय प्राप्तहोताहै उसको शांतिक मंत्रजप यागादिकोकर्के
ब्राह्मण शांतकरदेतेहै और परचक्र शत्रुसेनादि समागम
दृष्टभयजोहै उसको राजा अपने भुजबलकर्के शांतकरदे
ताहै ॥ २ ॥
अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनम्
मुचुकुंदस्य संवादं राज्ञो वैश्रवणस्य च ३
इस अर्थमोभी पुरातन इतिहासको उदाहरणकरतेहै
राजा मुचुकुंदका और धनपतिकुबेरकासंवादभयाहै उस
को कहतेहै ३ ॥
मुचुकुंदो विजित्येमां पृथिवीं पृथिवीपतिः
जिज्ञासमानः स्वबलमुपेयादलकाधिपं ४
हे राजन् मुचुकुंद राजाजोहै सो अपने भुजबलकर्के पृथिवी
मो दिग्विजयकरताभया संपूर्णपृथिवीकोजीयकर्के अ
पने पराक्रमकी अधिकता ज्ञानवासने अलकास्वामी
जो कुबेर उसको जयकरणेवासने उत्तरदिशाकोप्रस्था
नयात्राको करताभया ४
ततो वैश्रवणो राजा राक्षसान् सृजत्तदा ॥
तेबलान्यवमृद्गंत मुचुकुंदस्य नैरृताः ५

तव राजा कुवेर राक्षसोकों राजाके जयवास्ते आज्ञा देता
भया सोराक्षसोके वीरयोधा जोहै सो मुचुकुंदकी सेना
कों बलकर्के मारदेतेभये ५

सहन्यमाने सैन्ये स्वे मुचुकुंदो नराधिपः
गर्हयामास विद्वांसं पुरोहित मरिंदम ६

तव राजाकीसेना राक्षसोने मारी तव मुचुकुंदराजा अपनेवि
द्या संपन्न अपने पुरोहितको बहोतनिंदा अनादरकरता
भया ॥ ६ ॥

ततउग्रं तप स्तप्त्वा वसिष्ठो धर्म वित्तमः
रक्षांस्यपावधी त्तस्य पंथानं चाप्य विंदत ७

तव वसिष्ठजी राजा मुचुकुंदका पुरोहित उग्रतपकर्के अक
सहा धर्मवेत्ताहै सो अपने तपोबलकर्के राक्षसोंको विना
शकरताभया और राजा मुचकुंदके अलका पुरीके जयमा
र्गकोभी जानताभया ७

ततो वै श्रवणो राजा मुचुकुंद मदर्शयत्
वध्यमानेषु सैन्येषु वचनंचेद मब्रवीत् ८

तव राजा कुवेर मुचुकुंदको आप आइकर देषताभया राजा मु
चुकुंदसेनां मारतांहै उसको कुवेर राजावचन कहता भया
धनदरुवाच बलवंत स्त्वया पूर्वे राजानः सपुरो ८
हिताः नैवं समवर्तंत यथा त्व मिह वर्तसे ९

धनदउवाच हे राजन् तुम्हारे वंशके सभही पूर्वले राजे
जेते भयेहै सो सभही अपने पुरोहित संयुक्त इसप्रकार मे
रे साथ कोई वेर बंधकर्के नही वर्तमान जैसे तूं अववर्त
मानभयाहै ९ ॥

ते त्वल्वपि कृतास्त्राश्च बलवंतश्च भूमिपाः
आगम्य पर्युपासंते मामीशं सुख दुःखयोः

सो तुम्हारे पूर्वले राजा लोक बलवानभी भयेहै और अ
स्त्रविद्याके परमश्रेष्ट अभ्यासकरीहै सुखदुःखदशाकी
प्राप्तिका ईश्वरमोको जानकर आपही सेवाकरनेभये १०

यच्चास्ति बाहुवीर्यं ते दर्शयितुमर्हसि
किं ब्राह्मणबलेनत्व मतिमात्रं प्रवर्तसे ११
जो ताके विषे अपने भुजबलका वीर्यपराक्रमहै तोमाको
दिषावदे क्या तूं ब्राह्मण केवलकर्के अधिकतासे वर्तमा
नभयाहै ११
मुचुकुंदस्ततः क्रुद्धः प्रत्युवाच धनेश्वरम्
न्यायपूर्व मसंरब्ध मसंभ्रांत मिदं वचः १२
हे राजन् तब मुचुकुंद कुवेरके वचनको सुनकर क्रुद्धहो
कर कुवेरको न्यायपूर्वक भ्रांतिके मदके वेगरहित वच
नको कहताभया १२
ब्रह्मक्षत्र मिदं सृष्ट मेकयोनि स्वयंभुवा
पृथग्बल विधानं तु न लोकं परिपालयेत् १३
हे लोकपाल ब्राह्मणऔर क्षत्री ब्रह्माजीने एकदेहसे प
कहूप प्रथमसृजेहैं इन्होंविषे बलविधान पृथगहै तो
भी इन्होंका बलएक संमतिकर्के लोकको क्यों नहीं पाल
नकरे १३ ॥
तपो मंत्र बलं नित्यं ब्राह्मणेषु प्रतिष्ठितं
अस्त्रबाहुबलं नित्यं क्षत्रियेषु प्रतिष्ठितम् १४
तपोबल मंत्रबल ब्राह्मणोविषे नित्यही प्रतिष्ठितहै और
अस्त्रबल बाहुबल क्षत्रियोविषे नित्यही प्रतिष्ठितहै १४
ताभ्यां संभूय कर्तव्यं प्रजानां परिपालनं
तथा च मां प्रवर्तंते किं गर्हस्यलकाधिप १५
ब्राह्मणोने और क्षत्रियोने अपने बलको एकत्रकर्के प्र
जापालनकर्तव्यहै यही प्रजापति भगवानकी आज्ञाहै
मे तो उसी आज्ञामों प्रवृत्तभयाहूं अब तू मोको ऐसी निं
दाक्यों करताहै १५ ॥
ततोऽब्रवी द्वैश्रवणो राजानं सपुरोहितं
नाहं राज्य मनिर्दिष्टं कस्मैचि द्विदधाम्युत १६
तदनंतर वैश्रवण राजा कुवेर मुचुकुंद राजाको वचन
कहताभया मेभी ब्रह्माकी आज्ञाविना अपने राज्य

को किसीकोभी नहीदेता १६

नाक्किंदे वाप्य निर्दिष्ट मिति जानीहि पार्थिव
प्रशाधि पृथिवीं कृत्स्नां समंताद् खिला मिमां

ओर ब्रह्माकी आज्ञाविना किसीके राज्यको लेताभी नही
हूं अपने पृथिवीको मैने देणेहे अखिल प्रामभईको प्रास
नाकर हे राजन् ऐसा कुवेरनेकहा तव मुचुकुंद कुवेर
को वचनकहताभया १७

एव मुक्तःप्रत्युवाच मुचुकुंदो महीपतिः १७
मुचुकुंदउवाच नाहं राज्यं भवद्दत्तं भोक्तुमिच्छा
मि पार्थिव बाहुवीर्यार्जितं राज्य मश्नीया मितिका
मये १८ ॥ मुचुकुंदउवाच हे लोकपालमेंभी अप
ने तुह्मारे दियेसे नही भोगना चाहताहूं अपने भुजावी
र्यकर्के जीतेहुये राज्यभोगनेकी वांछाकरताहूं १८

भीष्मउवाच ततो वैश्रवणो राजा विस्मयं परमं
ययौ क्षत्रधर्म मिति दृष्ट्वा मुचुकुंद मसंभ्रमं १९
भीष्मउवाच हे राजन् तदनंतर कुवेर राजा जोहै सो मुचु
कुंदके वचनको सुनकर राजाको क्षत्रधर्ममों स्थितभया
को देखकर परम विस्मयको प्राप्तहोताभया १९

ततो राजा मुचुकुंदः सोन्वशासद् वसुंधरां
बाहुवीर्यार्जितं सम्यक क्षत्रधर्म मनुव्रतः २०
तवसे राजा मुचुकुंद अपने बहुवीर्यसे उपार्जित पृथिवी
को क्षत्रधर्मके अनुशासनकरता भया २०

एवं यो धर्मविद्राजा ब्रह्मपूर्वं प्रवर्तते
जयत्य विजितामुर्वी यशश्च महदश्नुते २१
मं.३ हे राजन् इसप्रकार जो क्षत्रिराजाहै सो ब्राह्मणोंको यज्ञ
यागादि विधिसे प्रथम मनाइकर राजा धर्ममों प्रवृत्तहो
ताहै पृथिवीको जीतकर चिरकाल पालन करताहै
महायशको प्राप्तहोताहै २१

नित्योदकी ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियशस्त्रस्तु क्षत्रियः
नयो रिंसर्व मायत्तं यत्किंचि ज्जगती गतं २१

इति श्री राजधर्मे युद्धंकोपाख्याने चतुसप्तति.
ताते ब्राह्मणनित्यं प्रति त्रिकालसंध्या स्नानादि अभिषेका
दिजलकार्यको करे और क्षत्री राज्याके नित्यं प्रति अस्त्रविद्याक
कें क्षत्रधर्मकी निष्ठाकोकरे जेता जगतहे सो सभही ब्राह्म
णके क्षत्री राजाके धर्मके अधीनहीं सुखको प्राप्तहोताहे २२
इति श्री महाभारते शतसहस्र संहितायां राजधर्मे चतुस
प्ततितमोध्यायः ॥ ७४ ॥
युधिष्ठिरउवाच यथा हत्वा महीपालो विवर्धय
ति मानवान् पुण्यांश्च लोकान् जयति तन्मे ब्रूहि
पितामह १ ॥ युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी मही
पाल जो राजा सो जिसप्रकारकी हतिकर्के मनुष्योकी वृ
द्धिको करताहे और पुण्यफलवाले लोकोकों जयकरताहे
उसहत्तीको आपमोको कहो १ ॥
भीष्मउवाच दानशीलो भवे द्राजा यज्ञशीलश्चभा
रत उपवास तपः शीलः प्रजानां पालने रतः २
भीष्मउवाच हे भारत राजा सदा दानशील होवे यज्ञशीलभी
होवे उपवासादि तपाशीलभीहोवे और प्रजालोकोके पाल
न मेरतहोवे २
सर्वा श्चैव प्रजानित्यं राजा धर्मेण पालयन्
उत्थानेन प्रदानेन पूजये च्चापि धार्मिकान् ३
संपूर्णप्रजालोकोको राजधर्मकर्के पालनकरे राजाके उद्य
मकर्के और दानकर्के धर्मीजनोको पूजनकरे ३
राज्ञा हि पूजितोधर्म स्ततः सर्वत्र पूज्यते
यद्यदा चरति राजा तत्प्रजानां स्मरोचते ४
जो राजा धर्मकर्मवालेको पूजनकरे तो सभही लोकपूजन
करताहे जो जो आचरण राजा करताहे प्रजाको सोई धर्म
कर्म रुचि करताहे ४
नित्य मुद्यत दंडश्च भवेन्मृत्यु रिवारिषु ॥
निहन्या त्सर्वतो दस्यू नकामात्कस्यचित्क्षमेत
राजा पापी जनोविषे नित्य दंडनीतिको उद्यमकरे और

श्री. रा. प. टी. ३.

शत्रुपक्षको सदा मूलसे उपाड़ने और चोरलोकोंको सदा
दंडकरके मारे और हठ्या किसीका भोगपदार्थको नहीहरे ५

यदि धर्मं चरंतीह प्रजा राज्ञा सुरक्षिताः
चतुर्थं तस्य धर्मस्य राजा भारत विंदति ६

राजाने प्रजालोकोंकी रक्षामे जेताधर्म कर्म प्रजालोक कर
तेहे उसधर्म कर्मके चतुर्थभागको राजा प्राप्तहोताहे ६

यदधीते यद्ददाति यज्जुहोति यदर्चति
राजा चतुर्थ भाक्तस्य प्रजा धर्मेण पालयन् ७

प्रजाजो वेदका अध्ययन करतेहे जो दानकरतेहे जो होम
करतेहे जो पूजा करतेहे उस धर्म कर्मका चतुर्थांश पु
ण्यभागी राजा प्रजापालनेके धर्म करके प्राप्तहोताहै ७

यद्राष्ट्रे कुशले किंचित् राज्ञो रक्षयतः प्रजाः
चतुर्थं तस्य पापस्य राजा भारत विंदति ८

हे भारत जो कुशल राजा कर्म राजाके राज्यमों होताहे उस
का अंश राजाको रक्षाकरनेसे होताहे और जो कछुक अकुशल
कर्म होताहे उसका चतुर्थांश अधर्मफलभी अरक्षणसे
होताहे ८ ॥ ॥

अप्याहुः सर्व मेवेति भूयोर्द्ध मिति निश्चयः
कर्मणः पृथिवीपाल नृशंसो नृतवागपि ९

कोई धर्मवेत्ता संपूर्ण पापका भागीराजा होताहे जो केव
लबलिभाग लेताहे कोई अर्धभाग फलभागी कहतेहे
जो रक्षानहीकरे सर्वपापभागी होताहे सो रक्षाकरणेमो
असत्यवादी होयसो अर्धपापभागी होताहे जो रक्षाकरणे
को समर्थनहीहोवे सो चतुर्थांशभागीहोताहे जो केवल
बलसे द्रव्यही द्रव्यलेवे सो संपूर्णपापका समलफलले
ताहे यह निश्चयकरके प्रसिद्धहे ९

तादृशात्किल्बिषाद्राजा शृणुयेन प्रमुच्यते
प्रत्याहर्तुमशक्यंस्याद्धनं चौरैर्हृतं यदि १०

हे राजन् जिसउपायकरके उसपापसे राजा मुक्तहोवे उस
को आपसुनो जो राजा चोरोंका हरे द्रव्यको पुनफेर दे
नेकों नही समर्थहोय निर्बल होवेतो १०

नत्वकोशात्प्रदेयं स्या दशक्ते नोपजीवतः
सर्ववर्णैः सदा रक्षं ब्रह्मस्वं ब्राह्मणा यथा ११
और आपप्रजासे द्रव्यलेकर उपजीवन करे तो अपने खजा
नेसे चोरीके समान द्रव्यदेवे और ब्राह्मणोका सर्ववर्णोने
सर्वप्रकारसे रक्षाकरणे योग्यहे धनके व्यापारीको सार्थकर दे
ना डेडादेना ११
न स्वयं विषये तेन योपकुर्यात् द्विजातिषु
ब्रह्मस्वे रक्षमाणे तु सर्वं भवति रक्षितम् १२
जोकोई ब्राह्मणोकी रक्षानहीकरे उसने राजाके देशमो नि
वासनहीकरणा ताते सर्ववर्णोने सर्वप्रयत्नोकर्के ब्राह्मणो
के प्रसादकरके द्रव्यकी अवश्य रक्षाकर्नेयहे उसकी रक्षा
कर्के सर्वजगतकी रक्षा फलहोताहे १२
तस्मात्तेषां प्रसादेन कृतकृत्यो भवेन्नृपः
पर्जन्य मिवभूतानि महाद्रुम मिवद्विजाः १३
तातेब्राह्मणोके प्रसादकरके राजाकृतकृत्य होताहे जैसे
सभही भूत अन्नजलकी समृद्धिवासते पर्जन्यभगवानको
सेवाकरतेहे आशाकरतेहे जैसा महाद्रुमको नित्यप्रति
पंछी सभही निशादि स्वखकी आशाकर्के आश्रय करतेहे १३
नरास्तमुपजीवंति नृपं सर्वार्थ साधकं
नहि कामात्मना राज्ञा सततं कामबुद्धिना १४
तैसे सभही मनुष्य सर्वार्थ साधक राजाको आश्रयकरतेहे
ताते कामार्थ बुद्धिवाला जो राजाहे स्वेछाचारी ११
नृशंसेनातिलुब्धेन शक्यं पालयितुं प्रजाः
और दयारहित और महालोभी उसको प्रजापालन करणा
परम धर्म अशाक्यहे १४
युधिष्ठिरउवाच नाहं राज्य सुखान्वेषी राज्य
मिच्छाम्यपिक्षणं धर्मार्थं रोचये राज्यं धर्मस्वात्र
न विद्यते १५ युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी मैं जो
राज्यसखकी वांछासे राज्यकरणा एक क्षणमात्रभी इछान

31

ही करता धर्मकरणेवास्ते चाहताहूं सो धर्म तो राज्यकरणे
मे विद्यमान नहीहै १५
तदलं मम राज्येन यत्र धर्मो न विद्यते ॥
वनमेव गमिष्यामि तस्माद्धर्मचिकीर्षया १६
ताते इस राज्य सार्थमोको नहीहै तो ताते में धर्मकरणेकी
वांछाकर्के वनकोही जानताहूं १६
तत्र मेध्येष्वरण्येषु न्यस्तदंडो जितेंद्रियः
धर्ममाराधयिष्यामि मुनिर्मूलफलाशनः १७
तहां जाइकर पवित्र अरण्यस्थानोविषे अभिमान दंडको
त्यागकर मुनिहोकर फलमूल आहार हत्तिकर्के धर्मक
र्मको आराधन करताहूं १७
भीष्म उवाच वेदाहं तव या बुद्धिरानृशंस्या गु
णैव सा न च शुद्धानृशंस्येन शक्यं राज्यमुपासि
तुं १८ भीष्म उवाच हे तात तेरीबुद्धिको मे जानताहूं तेरी
बुद्धि दयादि गुणसंपन्नहीहै परंतु राज्यपालना केवल
शुद्धदया धर्मकर्के पालनेको अशक्यहै १८
अपि तु त्वां मृदुप्रज्ञमत्यार्यमतिधार्मिकं
क्लीवं धर्मघृणायुक्तं न लोको बहुमन्यते १९
जो तूं एकदया होवे अति मृदु हत्तिहोवे अति आर्यकेवल
त्यागीहोवे केवल हिंसा रहित धर्महत्ति होवे तो कायर ध
र्महोवेगा और केवलदयाही करेगा तो तोको लोकवहोत
मान वनमोभी नहीकरेगे ॥ १९
वृत्तिं तु त्वमपेक्षस्व पितृपैतामहीं वितं
नैव राज्ञां तथा वृत्तं यथा त्वं स्थातुमिच्छसि २०
हे राजन् तो अपने पितृपितामहादि सेवित हत्तिको तो देष
सो कैसीहत्तिहै जैसे आपतूं करा चाहताहै ऐसी सो हत्ति
नहीहै २० ॥
नहि वैक्लव्यसंसृष्टमानृशंस्यमिहास्थितः
प्रजापालनसंभूतं प्राप्ता धर्मफलं ह्यसि २१

हे राजन् तुम्हारे पिता पितामहजोहे सो ऐसी कायरताकी
व्याकुलता संयुक्त दयाभावकी त्यागबुद्धिको नहीधारण कर
तेभये सो सभही प्रजापालनरूपी दयाधर्मकी नित्यमो स्थि
तभये तोकोभी दयाधर्मकी प्रजापालनेसे दयाधर्मके फल
कों अपने क्षत्रधर्मके स्वभावसे आपही प्राप्तहोवेगा २१

नहिता माभिषं पांडु नैच कुंती त्वया चत
तद्वै तत्प्रज्ञया तात यथा चरसि मेधया २२

जैसे त्यागबुद्धी वाली दयाधर्मकी बुद्धि तुमने अपनी बुद्धि
करके शुभ आचारसे मानीहे ऐसी बुद्धिवाली पुत्रभावकी
आशा तुह्मारे पिता पांडुराजाभी नहीयाचनाकरताभया
और कुंती तुह्मारी माता सोभी ऐसी आशाकरके पुत्रोकी
याचना नही करती भई २२

शौर्यं बलं च सत्यं च पिता तव सदा ब्रवीत
माहात्म्यं च महौदार्यं भवतः कुंत्ययाचत २३

सूरवीरताकों और क्षत्रधर्मके बलको रागादि यज्ञयागोंदि
कोंविषे सत्यप्रतिज्ञावाले सत्यधर्मको और लोकमों महा
महात्म्यको और उदारताको तुह्मारे जैसे पुत्रोंविषे दृढहोवे
ऐसी आशाफल सिद्धीको कुंतीमाता देवब्राह्मणोंसे याच
न करतीभई २३

नित्यं स्वाहा स्वधा नित्यं चादो मानुष देवते
पुत्रेष्वाशासते नित्यं पितरो देवता नि च २४

हे राजन् और भी गृहस्थ लोकजोहोतेहे सो नित्यं प्रति
स्वाहा स्वधादि मानुष यज्ञोविषे पितरोको देवता ब्रा
ह्मणोको पूजा तर्पणकरके यही वरयाचना पुत्रोविषे
करतेहे २४ ॥

दान मध्ययनं यज्ञं प्रजानां परि पालनं
धर्म मेत दधर्मं वा जन्मनै वाभ्यजायथाः २५

हमारे पुत्र लोकों विषे यज्ञ यागादि करणेहारे होवे दान
करणेहारे होवे वेदाध्ययन करणेहारे होवे प्रजापालन
अपने भुजपराक्रमसे करे यही तुह्मारा जन्मकरके परम

श्री. रा. प. टी. ३२

धर्मवनाहे इसमो धर्महोय अधर्महोय ऐसा विचार त्याग
के तुमको पराक्रमकरके प्रजापालनही धर्मकर्म कर्तव्यहे २५

कालेधृतिश्च शुक्रानां वहतां भारमाहितं
सीदतामपि कौंतेय नकीर्ति रवसीदति २६

हे राजन जैनसे प्राणी जैसा कैसा कार्यभारधारणेको जन्म
स्वभावसेवनेहे सो अपने कार्यभार धारण कालविषे अपना
भारधारण कार्यमो शुक्रहोतेहे अपने धर्मकार्यको सावधा
नतासेकरतेहे उसकार्यकरणेमो खिदकोभी प्राप्तहोतेहें तो
भी उन्होकी कीर्तियश खंडितनहीहोता २६

समंततो विनियतो वहती स्वलती ह्ययः
निर्दोषः कर्मवचनात् सिद्धिः कर्मण एव च

जो अश्वादि पशुजातीभीहै सोभी अपने शिक्षासे अपने
असवारको वचनमात्रसीही संदरगतीको देताहे तुमतो
राजवंसी क्षत्री जातीके श्रेष्ठ मनुष्यहो अपने प्रजापालन
धर्मको कैसा त्यागकरतेहे २७॥

न कैवल विनिपातेन विचवारेह कश्चन
धर्मो गृहीवा राजावा ब्रह्मचारी यथापुनः २८

हे राजन [illegible] केवलधर्म विचारकरके अथवा केवल अध
र्मत्यागके विचारकरके कोईभी वर्णाश्रम धर्मवाला प्रवृत्ति
ही आचरण करसकता गृहस्थहोय ब्रह्मचारीहोय यतीहो
य वानप्रस्थहोय सत्यमृष अधर्मसर्वत्र वनाहे उसका त्या
गनहीहोता २८

अल्पो हि सारभूयिष्ठं यत्कर्मोदार मेव तत्
कृतमेवाकृता च्छ्रेयो न पापीयोस्त्यकर्मणः २५

हे राजन तोभी जैनसा अपने वर्णाश्रमका धर्म कर्म हिंसा
दि अल्प दोषवालाहे और जिसकाफल परिपाक धर्मसारा
वालाहोवे सभभूतोको सुखकारी होवे उसको त्यागक
रनेसे अवश्यकरणाही योग्यहे अकरणेसे कर्मकरणाही
उत्तमधर्महे अकर्महोनेसे अधिकपापी कोई नहीहे २९

यदा कुलीनो धर्मज्ञः प्राप्नो त्यैस्वर्य मुत्तमं

योगक्षेमस्तदा राज्ञः कुशलायैव कल्पते ३०
जो और भी कोई कुलीन धर्मज्ञ पुरुष होता है सो राजाके अधि
कारके ऐश्वर्यको प्राप्त होता है मंत्री होता है सोभी राजाके योग
क्षेमवास्ते कुशलकर्मकोही करता है जैसे राजाकी राज्यवृद्धि
होवे और राज्यकी रक्षाहोवे ऐसे कुशलकर्म करताहै ३०
दानेनान्ये बलेनान्ये मन्ये सूनृतया गिरा
सर्वतः प्रतिगृह्णीयाद् राज्यं प्राप्येह धार्मिकः ३१
किसीको दानकर्के वशकरताहै किसी दंडबलकर्के वशकर
ताहै किसीको मधुरवाणी कर्के सत्यवचनकर्के वशकरलेता
है जो धार्मिक पुरुषहै सो राज्यको पाइकर सर्वप्रयत्नसे सभ
को वशकरे और सभभूतोका पालनकरे ३१
ये हि वैद्याः कुले जाता ह्यवृत्तिभयपीडिताः
प्राप्य तृप्ताः प्रतिष्ठंति धर्मः को ऽभ्यधिकस्ततः ३२
हे राजन् जोनसे ब्राह्मण वेदविद्या संपन्न है और वेदविद्या संप
न्न उत्तम कुलविषे जन्मवाले है और अपने कुटुंब पोषणकी
वृत्तिके अभावसे दारिद्र्यभयकर्के पीडित भयेहै उन्हको पो
षण पालनेसे तृप्तकरणा और धर्म कर्मविषे निर्भयकरणा
इससे अधिक और काम उत्तम धर्म है ३२
युधिष्ठिर उवाच किं तात परमं स्वर्ग्यं कातत: प्री
तिरुत्तमा किं ततः परमैश्वर्यं ब्रूहि मे यदि पश्यसि
युधिष्ठिर उवाच हे तात स्वर्गको देवनेद्वारा कौन परमधर्म
है ऐसे परमधर्मसे क्या परमप्रीति सभको होतीहै और परम
ऐश्वर्य उसधर्मकर्मसे क्या प्राप्त होता है जो कुछ ऐसा धर्म
कर्म आपजानतेहो उसको कहो ३३
भीष्म उवाच यस्मिन् भयार्दितः सम्यक् क्षेमं विंद
त्यपि क्षणं स स्वर्गजित्तमोऽस्माकं सत्यमेतद् ब्रवी
मि ते ३४ भीष्म उवाच हे राजन् जिसधर्मके करणेसे
भयभीत प्राणी सम्यक् आनंद सुखको क्षणमात्रभी प्राप्त हो
ताहै ऐसा शरणागत रक्षारूपजो धर्म है सो स्वर्गजीतने
हारे यज्ञतपादि धर्मोसे अधिक स्वर्गजयको करताहै ३४
त्वमेव प्रीतिमांस्तस्मात् कुरूणां कुरुसत्तम

भवराजा जयस्वर्गं सखो रक्ष सखो जहि ३५
हे कुरुसत्तम ऐसा प्रजापालन धर्मकरनेसे तुंही कुरुवंशी
राजालोकोके स्वर्गमोभी अधिकप्रीतिकरेगा याते तव कुरु
देशके राजाप्रजापालनवास्ते आपबने संतधर्मनिष्ठावाले
हे तिन्हकी रक्षाकरो अधर्मकारी असंत दुष्टजनो दंडनीतिसे
मारो ३५ ॥
अत्वां तात जीवंतु सुहृदः साधुभिः सह
पर्जन्य मिव भूतानि स्वादुद्रुम मिव द्विजाः ३६
जोनसे तुम्हारे सुहृदजनहै से तुम्हारी आज्ञासे सुखसंपदा
को पाइकर आनंदसे जीवे जैसे पर्जन्य भगवानको वर्षाकी
आशाकर्के उपासनाकरतेहै जैसे सब विश्रामकीवांछाकर्के
पंछीगण महावृक्षको सेवाकरतेहै तैसे तुम्हारे संबंधी लो
क तुमको सेवाकरे ३६ ॥
दक्षं शूरं प्रहर्तार मशठं स जितेंद्रियं
वत्सलं संविभक्तार मुपजीवंति ते नराः ३७
इति श्री राजधर्मे पंचसप्ततितमोध्यायः ७५
हे राजन् सभही मनुष्यलोक आपदामें धीरपुरुषको रक्षावि
षे तत्पराको शास्त्रविद्याविषे प्रहारकरणोहारेको और सोम्यप्र
ति जितेंद्रियपुरुषको सर्वभूतोविषे दयावान पुरुषको और
दानधर्मके विभागकरणेको उपजीविकावास्ते सभही
सेवाकरतेहै ३७ इति श्री महाभारते शतसहस्र संहिता
यां शांतिपर्वणि राजधर्मे पंचसप्ततितमोध्यायः ॥ ७५
युधिष्ठिरउवाच स्वकर्मण्यपरे युक्ताः तथैवान्ये
विकर्मणि तेषां विशेष माचक्ष्व ब्राह्मणानां पि
तामह १ ॥
युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी जोनसे ब्राह्मणलोक अपने
धर्म कर्म विषे युक्तहै और जोनसे पराये धर्म कर्ममो युक्तहै
और जोनसे विरुद्धकर्मविषे युक्तहै उन्हके विशेष लक्षण वि
चारको कहो १
भीष्मउवाच विद्यालक्षण संपन्नाः सर्वत्र कर्मस्व
वस्थिताः एते ब्रह्म समाराजन् ब्राह्मणाः परिकीर्ति
ताः २

भीष्मउवाच जो ब्राह्मण विद्यालक्षण संपन्नहे शमदम तप
शौच संयुक्तहे सर्वत्र समदर्शीहे ऐसेब्राह्मण ब्रह्माके समा
न पवित्ररूपहे २ ॥

ऋग्यजुः साम संपन्नाः षेषुकर्मस्ववस्थि
ताः एतेदेव समाराजन् ब्राह्मणानोभवे
और ऋग्यजु साम स्सुत ३ ॥ वेदके अध्ययन संपन्न
हे अपने वर्ण धर्म मे स्थितहे ऐसे ब्राह्मण ब्राह्मणोविषे
देवता ब्राह्मणकहे हें ३ ॥

जन्मकर्म विहीनाये कदर्याब्रह्मबंधवः
एते शूद्र समाराजन् ब्राह्मणानो भवंत्युत
जो ब्राह्मण अपने जन्मकर्मके धर्मही नहे और दा ४ ॥
नधर्मसे रहितहे कंदर्यहे कृपणहे ऐसे ब्राह्मणविषे शू
द्रसमानहो तेहे ४ ॥

अश्रोत्रियाः सर्वएव सर्वेचानाहिताग्नयः
तान् सर्वान्धार्मिको राजा बलिविष्टिं च का
रयेत ५ ॥ जोनसे वेदविधीके संस्काररहीनहे और वे
दोके अध्ययनसे रहितहे और अग्निहोत्रादि नित्यविधिसे
रहितहे ऐसे ब्राह्मणोको धार्मिक राजा करग्रहणवीकरो
और मज़ूरी आदिक राजसेवाको करावे ५ ॥

आह्वायका देवलका नक्षत्र ग्राम याजकाः
एतेब्राह्मण चांडाला महापथिक पंचमाः ६
जोनसे धर्मनिर्णयके अधिकारीहे और मज़ूरी लेकर्के देव
पूजा करणेहारेहे और ग्राम ग्राम विषे नक्षत्र कहनेवाले
नक्षत्र सूचीहे और ग्रामयाजकहे ऐसे ब्राह्मण ब्राह्मणो
विषे चंडालहोतेहे और समुद्रविषे जहाजादि यात्राकरणेहा
रे अथवा महापथ जोहे श्मशानादि स्मशानादि डसकाकर
लेणेहारे यहपांचब्राह्मण चंडाल समान होतेहे ६ ॥

ऋत्विक पुरोहितोमंत्री हूतोवार्तानुकर्षकः
एते क्षत्र समाराजन्ब्राह्मणानो भवंत्युत ७
और चारोवर्णोके ऋत्विक कर्मकरणे हारे और पुरोहित क
र्मकरणेहारे और मंत्री कर्मकरणेहारे और हूतकर्मकरणेहा

रे और लोकवृत्तांतको करनेहारे चारहलाकारे कर्मकरणेहारे यह
ब्राह्मणोविषे क्षत्री ब्राह्मणहोतीहै ७ ॥

अश्वारोहागजारोहा रथिनोथ पदातयः ए
ते वैश्यसमाराजन् ब्राह्मणानां भवंत्युत ८

और अश्वविद्यावाले और गजविद्यावाले और रथविद्यावाले औ
र पैदल कर्मकरणेहारे ब्राह्मण जोहैं सो ब्राह्मणोविषेवैश्य
ब्राह्मणहैं ८ ॥

एतेभ्यो बलिमादद्या हीनकोशोमहीपतिः
ऋतेब्रह्म समेभ्यश्च देवकल्पेभ्य एवच ९

जोराजा हीणकोशहोय तोआपदानिहृत्तिवास्ते ऐसेब्राह्मण
से द्रव्यलेवे ब्रह्मसम ब्राह्मणोसे देवसम ब्राह्मणोसे द्रव्य
ग्रहण नहीकरे ९ ॥

अब्राह्मणानां वित्तस्य स्वामीराजेतिवैदिकं
ब्राह्मणानां चयेकेचि द्विकर्मस्थाभवंत्युत १०

जौनसे ब्रह्मकर्मरहित ब्राह्मणोहैं सो अब्राह्मणहैं उन्हके द्रव्य
का स्वामी राजाहै यहवेदविधीकानिश्चयहै जो जो ब्राह्मणो
विषेविकर्मस्थ ब्राह्मणहैं सो अब्राह्मणहैं १० ॥

विकर्मस्थाश्चनोपेक्ष्या विप्राराज्ञाकथंचन नि
यम्याः संविभज्याश्च धर्मानुग्रहकारणात् ११

विकर्मस्थ जो ब्राह्मणहैं सो राजाने दंडनीतिसे कदापिरहित
नहीकरणे उन्हको विकर्मको दंडकर्नाचाहै ब्राह्मणोसे भिन्नवि
भागकरदेने उन्हको ब्रह्मकर्मका संस्कार करदेना धर्म कर्मका
अनुग्रह उन्होविषे करकराइदेना ११ ॥

यस्यस्म विषयेराजन् स्तेनोभवति वैद्विजः
राज्ञएवापराधंतं मन्यंते तद्विदो जनाः १२

जिसराजाके देशमें ब्राह्मण चोरी कर्मकरे तहां राजाकोही य
मेंहानिका अपराध होताहै यह निश्चय धर्मवेत्ता जनकहतेहैं

अवृत्यायो भवेत्स्तेनो वेदवित्स्नातकस्तथा ॥ १२
राजन्सराज्ञाभर्तव्य इतिवेदविदोविदुः १३

जौनसा वेदवेत्ता ब्रह्मसंस्कारके व्रतवाला अवृत्तिकर्के उपजीवि
का विना चोरीकरे सोब्राह्मण राजाने वृत्ती देकर पोषणकर्तव्य
है यह वेद वेत्ता जनोका प्रमाण वाक्यहै १३ ॥

सचेन्नोप निवर्तेत कृतवृत्तिः परंतप ततोनि
र्वासनीयः स्यात्तस्माद्देशात्सबांधवः १४ इति
श्री महाभारते शांतिपर्वणि षट्सप्ततितमो
ध्यायः ७६॥ राजाने अवृत्तिचौर ब्राह्मणोंकोभी वृत्तीकरदे
नीहै उसकर्के भी वहोउचौरी कर्मकरे तबऐसा ब्राह्मण राजाने
अपने देशसे सकुटुंबपरिवार संपदायुक्त वाहिरनिकासदेना
१४ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे षट्सप्ततितमो
युधिष्ठिर उवाच केषां प्रभवते रा ध्यायः ७६
जा वित्तस्य भरतर्षभ कयाच वृत्त्या वर्ते
त तन्मेब्रूहि पितामह १॥
युधिष्ठिर उवाच हे पितामहजी राजा कैसे लोकोंके वित्तका स्वा
मीहोताहै विकर्मलोकोंविषे कैसी वृत्ती कर्के वर्तमानहोवे
इसप्रकारकी प्रवृत्तिको आपमेरे प्रतिकहो १॥
भीष्मउवाच अब्राह्मणानां वित्तस्य स्वामी राजेति
वैदिकं ब्राह्मणानांचयेकेचि द्विकर्मस्था भवंत्युत
भीष्मउवाच अब्राह्मण वृत्तिवाले विप्रोंके वित्तका मालक राजाहो
ताहै यहवेदविधीका निश्चयहै ब्राह्मणोंविषे जो विकर्मस्थ वि
प्रजानीहै सो अब्राह्मणहै २॥
विकर्मस्था स्तु नोपेक्ष्या विप्रा राज्ञा कथंचन
इतिराज्ञः पुरावृत्तमपि जल्पंति साधवः ३
ऐसे विकर्मस्थ राजाने शासनविना नहीं त्यागने ऐसा राजा
लोकोंको व्यवहारको साधुजन कहतेहैं ३॥
यस्यस्म विषयेराज्ञः स्तेनोभवति वैद्विजः रा
ज्ञएवापराधंतं मन्यंते किल्बिषं नृपम् ४
जिसराजाके देशमें चोरी करणेहारा विकर्मस्थ विप्रहोवे त
हां राजाकोही पापदोष प्राप्तहोताहै ४॥
अभिशस्तमिवात्मानं मन्यंते तेन कर्मणा त
स्माद्राजर्षयः सर्वे ब्राह्मणानन्वपालयन् ५
राजालोक ब्राह्मणके विपरीतकर्मकर्के अपनेविषेही महापा
तक दोषसी हेतुसे ५॥
अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनम् गी

२

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
३५

35

तेकैकयराजेन ह्रियमाणेनरक्षसा ६ ॥
राजालोके ब्रह्मकर्मकी हानिवाले ब्राह्मणोको दानधर्मसे पालन करतेहै ६ ॥
कैकेयानामधिपतिं रक्षोजग्राह दारुणं स्वाध्या
येनान्वितेराज ब्ररण्ये शंसितव्रतम् ७ ॥
ऐसे प्रसंगमो एकपुरातन इतिहासको उदाहरण कहतेहै कैकय देशके राजाको राक्षस हरले गयाहै तब कैकयराजाने आपही अप ना दोषविचारसे कहाहै ७ ॥
राजोवाच नमेस्तेनो जनपदे नकदर्योनमद्यप
नानाहिताग्निर्नायज्वा मामकांतरमाविशः ८
राजोवाच मेरेदेशमोचोरी करणे हारा नहीहै धर्म कर्मसेहीन कंदर्थी पुरुष नहीहै मद्यपान कर्तानहीहै अग्निहोत्रत्यागवाला नहीहै यज्ञक र्महीनभी नहीहै ताते हे राक्षस मेरे देशविषे प्रवेश मतकरे ८ ॥
नचमे ब्राह्मणो विद्वान् नाव्रती नाप्यसोमपः
नानाहितानाग्निर्नायज्वा मामकांतर माविशः ९
मेरे देशमो वेदविद्या हीन ब्राह्मण नहीहै और व्रतत्यागीभी नाःहीहै सोमयागरहितभी नहीहै मेरे देशमों तू प्रवेश मतकरे ९
नानामदक्षिणैर्यज्ञै र्यजन्ते विषये मम ना
धीते नाव्रती कश्चि न्मामकांतर माविशः १०
और मेरे देशविषे समाप्त दक्षिणा हीनयज्ञोको नही करतेहै वेदविद्याके अध्ययन हीनभी मेरेदेशमों नहीहै और अव्रतीभी नहीहै मेरे देशमो प्रवेशातू मतकरे १० ॥
अध्यापयंत्यधीयंते यजंते याजयंतिच दद
ति प्रतिगृह्णंति षट्कर्मस्ववस्थिताः ११ ॥
मेरे देशमों वेदोका अध्ययन करतीहै अध्यापनभीकरावतेहै यज्ञोको आपकरतेहै याजनभीकरावतेहै विधिसे दानधर्मको करतेहै और विधिसे दानप्रतिग्रहभी करते ब्राह्मण समही षट्कर्मस्थहै ताते मेरे देशमो प्रवेशमतकरे ११ ॥
पूजिताः संविभक्ताश्च मृदवः सत्यवादिनः ब्रा
ह्मणाःमे स्वकर्मस्था मामकांतर माविशः १२
और मेरेदेशविषे ब्राह्मण सदापूजितहै और देवता पितरमनुष्यो को अक्षीनतासे विभागकरतेहै और मृदुभाषीहै सत्यवादीहै मेरे

देशके ब्राह्मण स्वकर्मस्थहे न मेरे देशविषे प्रवेश मतकरे १२

नयाचंति प्रयच्छंति सत्यधर्म विशारदाः ना
ध्यापयंत्यधीयंते यजंतेयाजयंतिन १३

और ब्राह्मण मेरे देशविषे जीविकावृत्तिवाले याचना नही करते
आप यथाशक्तिदानकरतीहे और सत्यधर्मविषे परायणहे उपजी
विका अध्यापन नहीकरते आप अध्ययन करतेहे इसीप्रकार आ
पयज्ञ करतेहे वेदविधीसे याजनभी करावनेहे १३ ॥

ब्राह्मणान्परिरक्षंति संग्रामेष्वपलायिनः क्ष
त्रियामेस्वकर्मस्था मामकांनरमाविशः १४

और मेरे देशके क्षत्रीलोक ब्राह्मणोको सर्वप्रयत्नसे रक्षाकरते
हे और संग्रामविषे पलायन नही करते ऐसे क्षत्री मेरे देशविषे
स्वधर्मस्थहे न मेरे देशविषे प्रवेशमतकरे १४ ॥

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्य मुपजीवंत्य मायया अ
प्रमत्ताः क्रियावंतः सुव्रताः सत्यवादिनः १५

और मेरे देशके वैश्यलोक कृषिकरतेहे गो रक्षा करतेहे वाणिज्य
वृत्तिको कपटछलत्याग करके करतेहे और धनमदसे रहितहे
वेदोक्तधर्म कर्म विषे स्थितहें और सुंदर व्रतधारीहे और सत्यवादी
[illegible] हे १५

[illegible]

संविभागंदमशौचं सौहृदंच व्यपाश्रिताः म
मवैश्याः स्वकर्मस्था मामकांनर माविशः १६

देवता पितर मनुष्यको अन्नविभाग करणेहारेहे इंद्रियोका दमन
और शौचसंयुक्तहे और सुहृदभावको आश्रितहे ऐसे वैश्यमेरे देश
विषे स्वधर्मस्थ हे ताते इहां प्रवेश मतकरे १६ ॥

त्रीन्वर्णानुपजीवंति यथावदनसूयकाः म
मशूद्राःस्वकर्मस्था मामकांनर माविशः १७

और हे राक्षस मेरे देशके शूद्र जोहे सो ब्राह्मणादि तीनवर्णोकी
सेवाकरके उपजीवन करतेहे निंदावेषनही करते ऐसे शूद्रभी
स्वधर्मस्थहे मेरे देशविषे प्रवेशमतकरे १७ ॥

कृपणानाथवृद्धानां दुर्बलातुरयोषितां
संविभक्तास्मि सर्वेषां मामकांनर माविशः १८

और मे आपभी कृपण जनोकी अनाथ जनोकी दुर्बल जनोकी
और रोगातुर लोकोकी और स्त्री पुत्रादि कुटुंबकी यथा योग्य वि

भागकर्के भोगभोक्ताहूं सभको पालन पोषण रक्षाकरताहूं तूं मेरे
देशमें प्रवेश मतकरे १८ ॥

कृपणानाथवृद्धानां दुर्बलातुरयोषितां संवि
भक्तास्मि सर्वेषां मामकांतर माविशः १९

जैसे जगतमें प्रसिद्ध कुलधर्महैं देशधर्महैं वर्ण आश्रमोंके धर्म
और जाति धर्म जैसे धर्महैं तिन्हके उच्छेदको मैं नहीं करता तूं मेरे
देशके अंतर्गत प्रवेश मतकरे १९ ॥

तपस्विनो मे विषये पूजिताः परिपालिताः सं
विभक्ताश्च सत्कृत्य मामकांतरमाविशः २० ॥

हे राक्षस तपस्वीलोक मेरे देशविषे सदा पूजितभयेहैं और धर्मपा
लनसे प्रसन्नहैं सभको मैं विभागकर्के सत्कारकरताहूं मेरे देश
के अंतर्गत तूं प्रवेश मतकरे २० ॥

नासंविभज्य भोक्तास्मि नाविशामि परस्त्रियं स्व
तंत्रो जातन क्रीडे मामकांतरमाविशः २१ ॥

मैं आपभृत्य कुटंब अतिथि अभ्यागतको अन्नभागदिये विना भोज
न नहीं करता और परस्त्री स्पर्शभी नहीं करता और स्वतंत्र मृगया द्यू
तादि क्रीडाभी नहीं करता तूं मेरे देशके अंतर्गत प्रवेश मतकरे २१

नाब्रह्मचारी भिक्षावान् भिक्षुर्वा ब्रह्मचर्यवान्
अनृत्विजा हुतंनास्ति मामकांतर माविशः २२

मेरे देशमें ब्रह्मचारी व्रतविना भिक्षु संन्यासी नहीं है और भिक्षाच
र्या वाला ब्रह्मचारी नहीं है और ऋत्विजवरणविना होम नहीं होता
तातें मेरे देशके अंतर्गत प्रवेश मतकरे २२ ॥

नावजानाम्यहं वैद्यान्न वृद्धान्न तपस्विनः राष्ट्रे
स्वपति जागर्मि मामकांतार माविशः २३ ॥

मैं आयुर्वेद विद्या संपन्न ब्राह्मणोंको और वृद्धोंको और तपस्वी जनो
को राज्यमदसे अवमान नहीं करता और लोक रक्षावास्ते रात्रिविषे जा
गरण करताहूं तूं मेरे देशके अंदर प्रवेश मतकरे २३ ॥

आत्मविज्ञान संपन्न स्तपस्वी सर्व धर्मवित्
स्वामी सर्वस्य राष्ट्रस्य धीमान्मम पुरोहितः २४

और मेरा पुरोहित आत्मविद्या संपन्न है तपस्वी है सर्व धर्म वेत्ता है स
र्व राज्यका मेरा स्वामी है जोभी शास्त्रविचार बुद्धिवाला है २४ ॥

दानेन विद्यामभिवाञ्छामि लोकान्सत्येनाथो ब्रा
ह्मणानां च गोप्ता शुश्रूषया चापि गुरूनुपैमि ना
मे भयं विद्यते राक्षसेभ्यः २५ ॥

हे राक्षस मे दान धर्मकरके वेदविद्याकी विधी चाहताहुं और सत्य
धर्मसे लोकपालना करताहुं और ब्राह्मणोंकी रक्षा सावधानता
से करताहुं और गुरोंको शुश्रूषाकरके सेवाकरताहुं मोको तुम्हा
रे जैसे राक्षसोंका भयनहीहे २५ ॥

नमेराष्ट्रे विधवा ब्रह्मबंधुर्नब्राह्मणः किन
वोनोनचोरः प्रयाज्ययाजीनचपापकर्मा
नमेभयंविद्यतेराक्षसेभ्यः २८ ॥

मेरे राज्यमों विधवाही नहीहे ब्रह्मधर्म रहितकेवल जातिमा
त्रसे ब्रह्मबंधु ब्राह्मण पुत्रनामधारीऐसा ब्राह्मणनहीहे और
वंचक और चोरभी ब्राह्मणमेरे राज्यमों नहीहे ताते मोको राक्ष
सोका भयनहीहे २८ ॥

नमेशास्त्रैरतिर्भिन्नंगात्रेह्यंगुलमंतरं धर्मा
र्थेयुध्यमानस्य मामकांतरमाविशः २७॥

यह देखमेरे शरीरका एक अंगभी अंगुलमात्रधर्म युद्धकरके
शास्त्रभेदविना खालीनहीहे ताते मेरेदेशमों प्रवेशमतकरे २७

गो ब्राह्मणेभ्यो यज्ञेभ्यो नित्यंस्वस्त्ययनं मम
आशासतेजनाराष्ट्रे मामकांतरमाविशः २८

मेरे देशके लोक जोहे मेरी पालना धर्मसे मोपर प्रसन्नभयेहे
सो गो ब्राह्मणोंकी पूजासे और यज्ञयागादि विधिकरणोसे मेरा
सदा स्वस्त्यकल्याण सोचाहतेहे तू मेरे देशके अंतर्गत मतप्र
वेशकरे २८ ॥

राक्षसउवाच यस्मात्सर्वास्ववस्थासु धर्ममेवान्ववे
क्षसे तस्मात्प्राप्नुहिकैकेय गच्छस्वस्तिव्रजाम्यहं २९

राक्षस उवाच हे कैकेय देशकेराजा जिसहेतुसे तुम सर्व अव
स्थाविषे धर्मरक्षा कोहि देखताहे ताते तू अपनी वांछाके क
ल्याण सबको प्राप्तहो मैं अबचला जाताहुं २९ ॥

येषांगो ब्राह्मणा रक्ष्या प्रजारक्ष्याश्च कैकय न
रक्षोभ्योभयंतेषां कुतएवतु पापकात् ३०

जिन्हराजालोकोंको गो ब्राह्मण रक्षाकी निष्ठाहे और सकल
प्रजाकी रक्षामो निष्ठाहे ऐसे राजालोकोंको राक्षसोंका भयन
ही होता पापकर्मसे कहां भय होवेगा उन्हके देशमो पापमा
त्रकाभी प्रवेशनहीहे ३० ॥

येषां पुरोगमा विप्रा येषांब्रह्म परंबलम्
प्रतिप्रियातिथ्यास्तथापौरा स्तेवैस्वर्गजितोनृपाः ३१

जिन्हो राजाके धर्म कर्मकी निष्टामो वेदवेत्ता ब्राह्मणमुख्य अग्रणी
बनेहै और अतिथि अभ्यागतभी अतिप्रियहै और पुरवासी लोक
जिन्हकोप्राणोसेभी प्रियहै ऐसे राजालोकस्वर्गको जीतलेतेहै ३१

भीष्म उवाच तस्मात्‌द्विजातीन्रक्षेत ते हि रक्षन्ति रक्षिताः आशीरेषां भवेद्राजन् राज्ञो सम्यक् प्रवर्तताम् ३२ ॥

भीष्म उवाच हे युधिष्ठिर ताते ब्राह्मणोको रक्षाकरणेमो और ध
र्म कर्म पालनेमो उपेक्षा राजा नहीकरे जौनसेअपनेरक्षासे
राजाके संपूर्ण राज्यको रक्षाकरतेहै हे राजन् ऐसे ब्राह्मणोकी
राजाने आशीर्वादकी वाणी सर्वयत्नसे ग्रहण करणे योग्यहै
सो आशीर्वादकी वाणी ब्राह्मणोसे सम्यक धर्मकर्म पालनेसे
केवल प्राप्तहोतीहै ३२ ॥

तस्माद्राज्ञा विशेषेण विकर्मस्था द्विजातयः नियम्याः संविभज्याश्च तदनुग्रह कारणात् ३३

ताते हे राजन् राजाने विकर्मस्थ जो ब्राह्मण है सोदंडनीतिसे शा
सन करणेयोग्यही शासना नही बनेतो उन्हविषे यही अनुग्रह
करणा अपनेदेशसेबाहिरकरदेने ३३ ॥

एवं योवर्ततेराजा पौरजानपदेष्विह अनुभूये ह भद्राणि प्राप्नोतीन्द्रसलोकताम् ३४ इतिश्रीमहाभारते राजधर्मेष्वैकेयोपाख्यानम् ७८

हे राजन् इसप्रकारजो राजा अपने नगरविषे और देशविषे ध
र्म मर्यादाको पालनकरताहै सो राजा इसलोकमो यशकीर्ति
संयुक्त सुख भोगकर्के इंद्रलोकको इंद्रसमान स्वर्गसुखकोभो
गताहै ३४ इति श्री महाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्म षट्सप्त
तितमोध्यायः ७८ ॥

युधिष्ठिरउवाच व्याख्याता राजधर्मेण वृत्तिरापत्सु भारत कथं स्विद्वैश्य धर्मेण संजीवेद्ब्राह्मणो नवा १ ॥

युधिष्ठिर उवाच हे भारत अप
ने ब्राह्मणको आपदा कालमो राजधर्मकर्के वृत्तिकहीहै ऐसी
वृत्तिकर्के आपदामों ब्राह्मणजीवे तो राजाको ब्राह्मणकी ऐसी
विकर्मस्थता कर्के पापनही होता जो क्षत्री वृत्तिसे शस्त्रादिधार
णक्षत्रीवृत्तिसेभी अधिक आपदा प्राप्तहोयतो ब्राह्मणवाणिज्या
दि वैश्यवृत्तिसेभी जीविका करे अथवा नकरे ऐसा संशयमेरा
आपनिवृत्तकरो १ ॥

भीष्म उवाच अशक्तः क्षत्रधर्मेण वैश्यधर्मेण व
र्तयेत् कृषिगोरक्षमास्थाय व्यसने वृत्तिसंक्षये २
भीष्म उवाच हे राजन् जो ब्राह्मण अति आपदामें शस्त्रादिधा
रणकर्के क्षत्री वृत्तिसे जीविका नही करसकेतो कृषिगोरक्षा
वाणिज्य वृत्तीरूप वैश्यधर्म कर्के भी जीविकाकरे २ ॥
युधिष्ठिर उवाच कानि पण्यानि विक्रीय स्वर्गलोका
न्न हीयते ब्राह्मणो वैश्यधर्मेण वर्तयन्भरतर्षभ ३
युधिष्ठिर उवाच हे भरतर्षभ ब्राह्मण जोहै सो आपदाकालमें
वैश्यवृत्तिकर्के जीविका करेतो विक्रयकरणेयोग्य कौनको
न पदार्थोंको विक्रयकर्के स्वर्गलोककी प्राप्तीसे हीन नही
होतायह मेरी शंका मेरीआप निवृत्तकरो ३ ॥
भीष्म उवाच सुरां लवणमित्येव तिलान्केसरिण
पशून् ऋषभान्मधुमांसंच कृतान्नंच युधिष्ठिर ४
भीष्म उवाच हे युधिष्ठिर मद्यको लवणको ब्राह्मण अवश्य
विक्रयनहीकरे तिलोंको और केशरी जो ग्रीवा गतवालधारी
अश्वादि पशु और ऋषभ जोहै वृषभ और मधुको मांसको
और पक्वान्नको ४ ॥
सर्वास्ववस्थास्वेतानि ब्राह्मणः परिवर्जयेत्
एतेषां विक्रयात्तात ब्राह्मणो नरकं व्रजेत् ५
अति संकटवाली सर्वप्रकारकी आपदामें भी विक्रयकरणा
अवश्य वर्जनकरे जो इनको विक्रयकरे तो इनके विक्रयसे
ब्राह्मण नरकको जाताहै ५ ॥
अजोऽग्निर्वरुणो मेषः सूर्योऽश्वः पृथिवी विराट्
धेनुर्यज्ञश्च सोमश्च न विक्रेयाः कथंचन ६
अजापशु विक्रयके निषेध हेतु कहते है अजाजोहै सो अग्नि
देवताहै मेषजो है सो वरुणदेवताहै अश्वजोहै सूर्यदेवता
है और पृथिवी जोहै विराट् प्रजापतिदेवताहै धेनुजोहै गो
उसोयज्ञपुरुष और सोमदेवताहै यह पशुब्राह्मणने कदापि
विक्रयनहीकरणे ६ ॥
पक्वेनामस्य नियमं न प्रशंसंति साधवः नि
यमेत्पक्वमांसेन भोजनार्थाय भारत ७ ॥
पक्वअन्नका विक्रयनिषेधसेआमजो अपक्वजो अन्नहै उसके
विक्रयका निषेधनहीहै पक्व अन्नके विक्रयकर्के आमअन्न

श्री·
रा·ध·
टी·
३८

का खरीदनेसे पक्वअन्नको विक्रयकरणेसे पक्वान्न विक्रय कर
णेहारा दोषको प्राप्तहोताहै आम अन्नदेकर्के पक्वअन्नको भोज
नार्थ खरीदे तो दोषनहीहै लाभवास्ते नही विक्रयकरे ७ ॥
वयंसिद्धमशिष्यामो भवान्साधयितामिमं
एवं समीक्ष्यनियमं नाधर्मोस्ति कथंचन ८
हेराजन् भोजनार्थयहव्यवहार प्रसिद्धहै अति क्षुधाकालमे
मो एसाबनताहै हे भाई हमसिद्ध अन्नभोजनकरेंगे तो हमा
रेको इस आम अन्नको सिद्धकरदे पक्वकरदे एसेव्यवहार
विषे पक्वअन्नका दोषकदापि नहीहोता ८ ॥
अत्रते वर्नयिष्यामि पुराधर्मः सनातनः व्य
वहारप्रवृत्तानां तन्निबोध युधिष्ठिर ९ ॥
हेयुधिष्ठिर एसेव्यवहारविषे जो पुरातन धर्मबनाहै इसका
उदाहरण दृष्टांत मै कहताहूं इसको आपजानलेवो ९ ॥
भवतेहं ददानीदं भवानेतत्प्रयच्छतु रुचि
तो वर्ततेधर्मो नबलात्संप्रवर्तते १० ॥
व्यवहार मार्गके दानग्रहणमो एसीमर्यादा बनीहै मे तुम
को यह अन्नादिदान देताहूं एसा दानकालमो प्रथमनिवे
दनवचन होताहै इसको अंगीकारके वचनको उत्तर वचनहो
आप इस अन्नादि दानको देवो व्यवहारधर्म रुचिसे प्रमाणहो
ताहै बलसे नही प्रवृत्त होता १० ॥
इत्येव संप्रवर्तंते व्यवहाराः पुरातनाः ऋषी
णामितरेषांच साधुवैतद संशयम् ११ ॥
इसीप्रकार पुरातन व्यवहारधर्म प्रवृत्तभये चले आवतेहै
ऋषी जनोंके और व्यवहारी संतजनोंकेभी व्यवहार धर्मसा
धुभावसे बनेहै ११ ॥
युधिष्ठिर उवाच अथतात यदासर्वाः शस्त्रमाददी
ते प्रजाः व्युत्क्रामंति स्वधर्मेभ्यः क्षत्रस्यक्षीयते बलं
युधिष्ठिर उवाच हे नराधिप धर्म कर्मकी ग्लानि ॥ १२
शास्त्र ग्रहणकरे सभही अपने धर्मो से उल्लंघित हो जावेगे क्ष
त्रीका तेजो बल क्षीण होजावेगा १२ ॥
राजात्राता तलोकस्य कथंचस्यात्परायणम्
एतन्मे संशयंब्रूहि विस्तरेणनराधिप १३

राजा प्रजा लोकका त्राताहे ऐसेधर्मवचनका पात्रक्षत्री कैसे
होवेगा ऐसे मेरे संशयको आपविस्तारसे उत्तरवचनकहो १३
भीष्मउवाच दानेन तपसायज्ञै रद्रोहेण दमेनच
ब्राह्मण प्रमुखावर्णाः क्षेममिछेयु रात्मनः १४
भीष्म उवाच हे राजन् ब्राह्मणादिक सभही वर्णदानकर्कै त
पकर्कै यज्ञोकर्कै और द्रोह हिंसाकी परित्यागकर्कै और इंद्रियो
के दमकर्कै सभही राजासे अपने क्षेमकी वांछासदाकरे १४
तेषांयेवद वलिनस्तेभ्युस्यायसमंततः रा
ज्ञोबले वर्द्धयेयु र्महेंद्रस्येवदेवताः १५ रा
ज्ञोपिक्षीयमाणस्य ब्रह्मैवाङ्गःपरायणं तस्
माद्ब्रह्मबलेनैव समुत्थेयं विजानता १६
जो राजाको कछु अरिष्टआपदाका संभवहोवनेतो ब्राह्मणही
शांतिविधान कर्कै रक्षाकरणेहारेहे ताते राजाने विचारक
कै ब्रह्मबलकर्कैही अपना उदयकर्तव्यहे १६ ॥
यदाभुवि नयीराजा क्षेमंराष्ट्रेभि संदधेत् त
दावर्णायथाधर्मं निविशेयुःकथंचन १७
जवराजा पृथिवी विषे मंत्रयज्ञादि ब्रह्मोपायकर्कै और दंड
नीत्यादि क्षत्रधर्मकर्कै जयको प्राप्तहोताहे तब सभही वर्ण
अपनी धर्ममर्यादाविषे स्थिर होतेहे राजा विना कदापि म
र्यादा नही होती १७ ॥
उन्मर्यादे प्रहत्तेत दस्युभिः संकरेकृते सर्वे
वर्णानदुष्येयुः शास्त्रवंतो युधिष्ठिर १८ ॥
जवराजाकी रक्षाविना लोकमर्यादाके उन्मादको प्राप्तभये १८
तवशास्त्र ज्ञानवाले वर्णभी अधर्म दोषयुक्तक्यों नही होवेगे
युधिष्ठिरउवाच अथचेत्सर्वतःक्षत्रं प्रदुष्येद्ब्राह्म
णंप्रति कस्तस्यब्राह्मणस्त्राता कोधर्मःकिंपरायणं १९
युधिष्ठिर उवाच हे तात जो सर्वप्रकारसे क्षत्रीब्राह्मणको दो
षारोपकर्कै अनादरकरे तो ब्राह्मणको रक्षाकरता कोनहो
वे और ब्राह्मणको क्या धर्महोवेगा रक्षाकैसेहोवेगी १९ ॥
भीष्मउवाच तपसाब्रह्मचर्येण शस्त्रेनच वलेन
च अमायया माययाच नियंतव्यं तदाभवेत् २०
भीष्म उवाच हे राजन् तव ब्राह्मणोने अपने रक्षानपकर्कै
करणी ब्रह्मचर्यके शास्त्रविद्या केवलकर्कै रक्षाकरणी कदावि

न् माया त्यागकर्के सत्यधर्मसे रक्षा करणी कदाचित् मायाछल कर्के भी करणी २॰ ॥

क्षत्रियस्याभिद्रुतस्य ब्राह्मणेषु विशेषतः ब्रह्मैव सन्नियंतृस्यात्क्षत्रंहि ब्रह्मसंभवे २१ ॥

जो कदाचित् क्षत्री दुर्जनहोवे ब्राह्मणोके प्रतिविशेषकर्के दुष्टहत्ति होवे तोभी ब्राह्मणकर्केही उसकी दुष्टहत्ति निवृत्तहोतीहे जैसे वेणराजाकोभी ब्राह्मणोनेउद्धार कियाहे क्षत्री ब्रह्म धर्म तो ही उत्पन्न भयाहे २१ ॥

अद्भ्योग्निर्ब्रह्मतः क्षत्र मश्मनोलोहमुत्थितं तेषां सर्वत्रगंतेजः स्वासुयोनिषुशाम्यति २२

जलोंसे अग्निउत्पन्नभयाहे ब्रह्मधर्मसे क्षत्रधर्म उत्पन्नभयाहे पाषाणसे लोहा उत्पन्न भयाहे इन्होंनेको बलतेज सर्वगतही तोभी अपनी उत्पत्ती स्थानमों प्राप्तहोकरशांत होजाताहे २२ ॥

यदाछिनत्त्ययोश्मान मग्निश्चापोभि मर्षति क्षत्रंच ब्राह्मणंद्वेष्टि तदानश्यंति तेत्रयः २३

जबलोहा पाषाणको छेदन करताहे अग्निजलको जबदाहकरताहे और क्षत्री ब्राह्मणको द्वेषकरताहे तबलोहा अग्नि क्षत्री अपनी योनिके विरोधसे तीनो शांतहो जातेहे २३ ॥

तस्माद्ब्रह्मणि शाम्यंति क्षत्रियाणां युधिष्ठिर समुदीर्णान्यजेयानि तेजांसिच बलानिच २४

ताते हे राजन् क्षत्रियोके तेजो बल अति उग्रहहे और अजितभी सो सभही ब्रह्मतेजविषे शांतहोजातेहे २४ ॥

ब्रह्मवीर्येमृदूभूते क्षत्रवीर्येचदुर्बले दुष्टेषु सर्ववर्णेषु ब्राह्मणान्प्रतिसर्वशः २५ ॥

हे राजन् ब्राह्मणोके अवमानसे ब्रह्मतेज शांतहोगया और उसीदोषसे क्षत्रीयोका तेजोबलभी शांतहोगया तो सभही वर्ण ब्राह्मणोविषे दुष्टबुद्धि होजातेहे २५ ॥

येतत्रयुद्धंकुर्वंति त्यक्त्वाजीवितमात्मनः ब्राह्मणान्परिरक्षंतो धर्म मात्मान मेवच २६ ॥

हे राजन् क्षत्री विनाभी और वर्ण जो युद्धविषे ब्राह्मणोकी रक्षा लिये अपनेजीवितकोभी त्यागकरतेहे सोवर्ण धर्मको भी रक्षण करतेहे और अपने आत्माको नरकभयसेरक्षाकरतेहे २६ ॥

मनस्विनो मन्युमंतः पुण्यलोका भवंतिते ब्राह्मणार्थेहि सर्वेषां शस्त्रग्रहण मिष्यते २७ ॥

ऐसी मनस्वी लोकधर्म रक्षावास्ते अधर्मीजनोविषेक्रोधकरते
हेब्राह्मणोंकी रक्षावास्ते सर्ववर्णोंको शस्त्रग्रहण धर्मशास्त्रोवि
षे कहाहे २७ ॥

अतिस्विष्टमधीतानां लोकानति तपस्विनां
अनाशकाग्नौ विशतां शूरायांति परांगतिं २८

जोनसी अतियज्ञोकके अतिवेदाध्ययनसे अतितपकर्केभी जो
उत्तमलोकप्राप्तिसेहोतीहे और मासोपवासादि अन्नत्यागव्रतक
र्के और अग्निविषे स्वशरीर होमसे होतीहे ऐसी उत्तम ब्राह्मणध
र्मकी रक्षावास्ते शूरमालोकजो रणविषे शरीरत्यागकरणे हारे
हें उन्हको सोगतिप्राप्तिहोतीहे २८ ॥

ब्राह्मण स्त्रिषु वर्णेषु शस्त्रं गृह्णन्न दुष्यति
एवमेवात्मनस्त्यागा नान्यं धर्मं विदुर्जनाः २९

जो क्षत्रियादि तीनोवर्ण धर्मलोपकरे तो ब्राह्मण तीनोवर्णों
को दंडकरणेवाले शस्त्रग्रहणकरेतो उसको हिंसादोषरूपी वि
कर्ण धर्मकरणादोषनहीहोता इसप्रकारसे जो आत्मदेहत्याग
करेतो इससे परे और धर्म कर्म नहीहे २९ ॥

तेभ्योनमश्च भद्रंच येशरीराणि जुह्वते ब्रह्म
द्विषो नियच्छंतस्तेषांनोस्तु सलोकता ३० ॥

हे राजन् ऐसे उत्तम धर्मवाले जनोको सदानमस्कारपूजाकरते
यहे जोपुरुष धर्मरक्षावास्ते अपने शरीरके आहुती रणयज्ञमो
करतेहे और ब्रह्मधर्मकीद्वेषी अधर्मी जनोंके धर्म दंडसे वधक
रतेहे उन्हको जो उत्तमलोक प्राप्तिहोतीहे सोईहमलोकोको
भी प्राप्तहोवे ऐसी परमगति अति दुर्लभहे ३० ॥

ब्रह्मलोकजितःस्वर्ग्यान्वीरांस्तान्मनुरब्रवीत्
यथाश्वमेधावभृथे स्नाताःस्नताभवेन्नृप ३१

ब्रह्मलोककोजीतनीहारे स्वर्गलोक सभही रणधर्मके वीरो
को मनुप्रजापतीने कहीहे जैसे अश्वमेधके अभिषेक स्नान
मो सभही पापकारी पवित्रहोतेहे और पापकर्मके फलकाभी
नाशहोताहे तैसेरणयज्ञविषेभी सन्मुखयुद्धकरणेहारे सूरमा
लोकभी शस्त्र प्रहारसे अपने शरीरके रुधिर धाराके अभिषे
ककर्के सकलतीर्थोके स्नान जैसे पवित्रहोतेहे हिंसादिपाप
कर्मका नाशहोताहे और देहांतकालमो सूर्यमंडलकोभेदकर
ब्रह्मलोकसे ऊर्ध्वगतीको प्राप्तहोतेहे ३१ ॥

भवत्यधर्मो धर्मोहि धर्माधर्मावुभावपि कारणा
द्देशकालस्य देशकालः स तादृशः

देशकालस्य देशकालः स तादृशः ३२ ॥
रणविषे हिंसारूपी अधर्म परमधर्मके फलको देताहै हेराज
न् धर्म और अधर्म देशकालकी अवस्थासे अधर्म धर्मरूप हो
तेहै अधर्म धर्मफलको करताहै और धर्मफलको करताहै ३२
मैत्राः क्रूराणि कुर्वन्तो जयन्ति स्वर्गमुत्तमम् ध
र्म्याः पापानि कुर्वाणा गच्छन्ति परमां गतिम् ३३
यहत्तम धर्म अधर्मकी फलविपरीतताहैषो मैं अजोहै धर्महामि
वाले अनेक पराशरादिकसो क्रूरकर्मोको सर्पराक्षसादिविनाश
के यज्ञको करतेभये सोधर्म फलको प्राप्तहोतेभये और धर्मसे
विपरीत हनिवाले क्षत्रियादि सो रणविषे शत्रुवधादिपापकोंक
रतेहै सो पृथिवीकी रक्षाकरणेसे पुण्यफलको प्राप्तहोतेहै ३३ ॥
ब्राह्मणस्त्रिषु कालेषु शस्त्रं गृह्णन्न दुष्यति आ
त्मत्राणे वर्णदोषे दुर्गस्य नियमेषु च ३४ ॥
भी तीनकालो विषे शस्त्रग्रहणकरताहै सोभी हिंसादोषको नही
प्राप्तहोताहै अपने शरीरके रक्षाकालमो और वर्णधर्मके रक्षाकाल
मो और दुष्टपुरुषके मारणकालमो पापकर्मके दोषको नही प्रा
प्तहोताहै ३४ ॥
युधिष्ठिर उवाच अभ्युत्थिते दस्युबले क्षत्रार्थे वर्णसं
करे संप्रमूढेषु वर्णेषु यद्यन्योऽभिभवेद्बली ३५
युधिष्ठिर उवाच हे महाराज जो चोरबलउदेहोवे और क्षत्री धर्मकेवा
स्ते प्रजापालनवास्ते और धर्ममार्गकी विपरीततासे वर्णसंकरहो
वष्टहतहोवे और क्षत्री लोकप्रजापालनमो समर्थनही होवे तव
जो और वर्णवाला धर्मरक्षावास्ते शस्त्रग्रहणकरे ३५ ॥
ब्राह्मणो यदि वा वैश्यः शूद्रो वा राजसत्तम दस्यु
भ्यो ऽथ प्रजा रक्षेद् दण्डं धर्मेण धारयन् ३६ ॥
ब्राह्मणवैश्य अथवा शूद्रचोरादिकोंसे प्रजाको रक्षणकरे और शा
स्त्रविधिसे दंडधारणभीकरे ३६ ॥
कार्यं कुर्यान्न वा कुर्यात् संवार्यो वा भवेन्न वा तस्मा
च्छस्त्रं गृहीतव्यमन्यत्र क्षत्रबन्धुतः ३७ ॥
और राजधर्मकरे अथवानकरे इसको मान्यजानकर पूजाकर्तव्य
है अथवानहीकर्तव्यहै और वर्णोंकी धर्मसंकरताविषे क्षत्रीबंधु
विना इतरजाती कोभी शस्त्रग्रहणकरणा अपनेकहाहै ३७
भीष्म उवाच अपारे यो भवेत्पारमप्लवे यः प्लवो भ
वेत् शूद्रो वा यदि वाप्यन्यः सर्वथा मानमर्हति ३८

भीष्म उवाच अपारजो अप्लवः समुद्र इसविषे जो रत्नाकर्के पार
करदेवे अगाधजोजलस्थान उसविषे नरोंका उपाय नौका जे
सा तारणेहारा होवे इसीप्रकार धर्मरत्नाकरणेहारा शूद्रहोय
म्लेच्छचंडालादिभी होय सर्वप्रकारसे मानपूजा योग्यहोताहे ३८

यमाश्रित्य नरा राजन् वर्तयेयुर्यथासुखं अ
नाथाः परिकाल्यन्तो दस्युभिः परिपीडिताः ३९

हेराजन् जिसकोआश्रयकर्के सभही प्रजाके मनुष्ययथा सु
ख अपने धर्मकर्मविषे प्रवृत्तहोवे अनाथहोकर चौरादिको
की पीडापाइकर पीडा निवृत्तिकी आशाको जिसकेवलकर्के
प्राप्तहोवे ३९ ॥

तमेव पूजयेयुस्ते प्रीत्या स्वमिव बांधवं अभी
रभीक्ष्णं कौरव्य कर्तासन्मान मर्हति ४०

सो सभही अनाथलोक अपनी पालना करणेहारेको जैसे
अपने रहस्वामी कर्तव्यहे तैसे अपने पालककी मानपूजा
करे हेकौरव्य अत्यंत अभयसे रक्षाकरणे हारा महापूजा स
न्मानकरणेयोग्यहोताहे ४० ॥

किं तैर्येनडुहो नोह्याः किं धेन्वा वाप्यदुग्धया
वंध्यया भार्यया कोर्थः कोर्थो राज्ञाप्यरक्षता ४१

ऐसे हृषभोकर्के क्या सिद्धहोताहे जोनसे भारवाह नेमो अयो
ग्यहोवे ऐसी धेनूकर्के क्या अर्थहोताहे जो धेनुअदुग्धाहोवे औ
र वंध्याभार्याकर्के क्याअर्थहोताहे तैसे जोराजा अरक्षकहै उ
सराजाकर्के क्या सुखहोताहे ४१ ॥

यथा दारुमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः यथा
ह्यनर्थः षंढोवा पार्थक्षेत्रं यथोषरं ४२ ॥

जैसे काष्टमय हस्ती अर्थकारी नहीहे जैसे चर्म मय सिंहादि
मृग हथाहे जैसे नपुंसकपति हथाहे जैसे ऊषर क्षेत्रनिष्फ
लहे ४२ ॥

एवं विप्रोनधीयानो राजायश्च नरक्षिता मे
घो नवर्षतेयश्च सर्वथाते निरर्थकाः ४३

इसी प्रकार वेदाध्ययन विनाविप्र निष्फलहे तैसेअरक्षक रा
जा निष्फल हे और वर्षारहित मेघनिष्फल यह सभही सर्वप्र
कारसे निष्फलहे ४३ ॥

नित्यं यस्तु सतो रक्षेदसतश्च निवर्तयेत् सप

व राजा कर्तव्य स्तेन सर्वमिदंधृतम् ५४ इतिश्री म
हाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सप्त सप्ततितमो
जोतस्या सूरमा होकर संतजनोकी धर्मकी रक्षाक ध्यायः ७७
रे अधर्मी असंतजनोको दंडशासनाकरे सोई बलवान राजाकर्ते
व्यहै इसीविषे जगतकी मर्यादाका सर्वविद्यमानहै इसीने अपने
बलकर्के जगत संहरण धारण कियाहै ५४ इति श्री महाभार
ते शांतिपर्वणि राजधर्मे सप्तसप्तति तमोध्यायः ७७ ॥
युधिष्ठिरउवाच कसमुत्थाःकमंशीला ऋत्विजःस्युः
पितामह कथंविधाश्च राजेंद्र तद्ब्रूहि वदतांवर १
युधिष्ठिर उवाच हे पितामहजी राज्यके स्वामी अमात्य सुहृदकोश
राष्ट्र दुर्गबल इसप्रकारके सप्त अंग अपने कहेहै यहसातोही
राजप्रकृतिहै तिन्होविषे स्वामीरूपाप्रकृति तीन भेदकीहै ति
न्होविषे प्रथम मुख्य पुरोहित रूपा स्वामी प्रकृतिहै निरूपण
कीतीहै इसके अनंतर प्रधानरूपास्वामी प्रकृति राजाहै सो
भी निरूपण कियाहै और तीसरी स्वामी रूपा प्रकृति ऋत्विज
है सो ऋत्विक कौन निमित्तसे कहेहै उन्हकाकौन कर्म करने
का शीलवालेहै संख्यामे केतेहोवे उन्हके स्वरूप लक्षण कैसे
होवे हे वदतांवर आपनिर्णय करकहो १॥
भीष्म उवाच प्रतिकर्म पराचार ऋत्विजांस्मविधीय
ते छंदःसामादिविज्ञाय द्विजानां श्रुतमेवच २
भीष्म उवाच हे राजन् ऋत्विगकैसे होवे एक एककर्मके प्रति
परम आचरण परायण होवे जैसे योगशास्त्रमो मैत्री मुदिता क
रुणा उपेक्षा शांति आदिक वृत्तियोका प्रत्येकसाधन क्रमकहा
है तैसे राजालोकोके शांतिक पौष्टिकादि कर्मकी प्रयोगशुद्धि
निमित्त एक एक कर्मप्रति ऋत्विज कर्तव्यहै इसविषे अपने
दृढनिश्चय आचार शीलहोवे वहोऊकैसे होवे छंदजोहै ऋ
ग्वेदकी सामकी मंत्रसंहिताकेवेत्ता होवे वहोउ ब्राह्मणोमश्रुत
जो यज्ञमंत्र और मीमांसाशास्त्रके कर्मनिष्ठाके ज्ञानवाले होवे
ये त्वेकायनयो नित्यं वीराणां प्रियवादिनः परस्प
रस्य सुहृदः सर्वेतास्समदर्शिनः ३ ॥ २
वहोऊकैसे ऋत्विजहोवे एकयजमानके कार्यसिद्धिमो एकप्री
तिवाले होवे और कर्म निष्ठावाले वीरलोकोके प्रियवादी होवे
क्रोध अमर्षरहितहोवे परस्परविषेभी सुहृदहोवे सर्वप्रकार
से समदर्शीहोवे ३ ॥
अनृशंसा सत्यवाक्या अकुसीदाअपर्जवः अद्रो

ह्रोनभिमानश्च ह्रीःतितिक्षा दमः शमः ४ ॥
वहोइ केसेहोवे दोषारोपरहितहोवे सत्यवादी दस्माहद्विरहित
होवे और शुद्ध आचारहोवे द्रोहे अभिमानसे रहितहोवे वहोउ
क्रूर शीलके लज्जायुक्तहोवे और क्षमाशीलहोवे इंद्रिय भोगवा
सनाके दमनशीलहोवे और मनकी चंचलता रहितहोवे ४ ॥
धीमान्सत्यव्रतोदान्तो भूतानामविहिंसकः अ
काम द्वेष संयुक्त स्त्रिभिः शुक्लैः समन्वितः ५
हे राजन् ब्रह्म ऋत्विज ब्रह्माहोताहे सो केसाहोयधीमान् शास्त्र
ज्ञान संपन्न कर्मनिष्ठाके ज्ञानवालाहोय व्रतनिष्ठाकी सत्यनिष्ठा
वान होवे इंद्रियोकी चपलता रहितहोवे दांतहोवे और भूतोंकी
हिंसाहनि रहित होवे और द्वेष रहितहोवे त्रिशुक्लशुद्धिवाला
होवे जिसको शास्त्रश्रवण ज्ञानशुद्धहोवे और जिसका आचार
हतिशुद्धहोवे जिसकावंशाभीशुद्धहोवे ५ ॥
अहिंसको ज्ञानतृप्तः सब्रह्मासन महति यते
महर्त्विजस्तान सर्वेमान्या यथार्हतः ६ ॥
और हिंसा रहितहोवे और शास्त्र ज्ञानके आनंदसे तृप्तहोवे सो
यज्ञविषे ब्रह्मासनवरणके योग्यहोता हे राजन् यह ऋक साम
अथर्वकेब्रह्मादिक ऋत्विज हे सो यज्ञकर्मके सहचारी ऋत्वि
जहे सो सामान्य यज्ञविषे अवश्यहोतेहे और सहायज्ञविषे स
दस्यादिक उपऋत्विजभी होतेहे सो सभही पूर्वोक्तलक्षण संप
न्नहोवे यथायोग्यसभही मान पूजा योग्यहे ६ ॥
युधिष्ठिरउवाच यदिदं वेदवचनं दक्षिणास्त्रविधीयते
इदंदेयमिदंदेयं नक्वचिद्व्यवतिष्ठते ७ ॥
युधिष्ठिरउवाच हे महाराज जोनसा यहयज्ञादि वेदवचनहे द
क्षिणा दान निमित्तसे सफल संपूर्णकहाहे इसकी यहद्रव्यद
क्षिणादेयहे इसकर्मे यहएद्रव्यदक्षिणा दानव्यहे ऐसीनियम
व्यवस्था कही नहि बनती ७ ॥
नेदंप्रतिधनंशास्त्र मापद्धर्मानुशासनः आ
ज्ञाशास्त्रस्य घोरेयं नशक्तिं समवीक्षते ८ ॥
यहदक्षिणादानशास्त्र शक्त अशक्त धनप्रति आपदा धर्मके अ
नुसार धर्मशास्त्रमे दृष्टनहीहोता और वेदकी आज्ञाऐसे हेजो
एक एक ऋत्विजप्रति दश दश शत शत सहस्त्र सहस्त्र गौद
क्षिणाप्रति गोदान प्रति वस्त्रदान सुवर्णादि दानबहोतसंख्या
के कहेहे तोऐसी वेदकी आज्ञाशक्त अशक्त धनकी व्यवस्थान

नही कही जो वेदकी दक्षिणा दान आज्ञा प्रतिबोधहै ८ ॥
श्रद्धावतश्च यष्टव्यं मित्येषा वैदिकी श्रुतिः मि
थ्या येनस्य यज्ञस्य किन्नु श्रद्धा करिष्यति ९
और यहभी वेदवाक्यहै जो श्रद्धा वालेने यज्ञकर्तव्यहै सो श्रद्धा पू
र्णा दक्षिणादानसे सिद्धहोतीहै जो ऐसी कल्पना दरिद्र पुरुषोंहोवे
गो दक्षिणाके स्थानमे दरिद्रोंने चरुमात्रदेनातो ऐसी मिथ्या क
ल्पनासे यज्ञ संपूर्ण फलनही करना ऐसे मिथ्याचारसे श्रद्धाका
करेगी इसको आपनिर्णयकरके कहो ९ ॥
भीष्मउवाच नवेदानां परिभवा न्नशाठ्येनन माय
या कश्चिन्महदवाप्नोति मानेभूद्बुद्धिरीदृशी १०
भीष्मउवाच हे राजन् जोतेने प्रश्नकियाहै इसको अवस्थासे उत्तर
कहेतेहै ऐसी कष्टकल्पनाकी बुद्धिविचारणा मतहोवेजो वेदवा
क्यको अनादरसे महापदको कोई प्राप्तनही होता वित्तशाठ्य क
के नही प्राप्तहोता छलकर्के मायाकर्के महापदको कोईभी महा
पदको नही प्राप्त होता ऐसी बुद्धितर्क वितर्क वाली मतहोये १०
यज्ञांगंदक्षिणातात वेदानां परिबृंहणम् न
यज्ञा दक्षिणाहीना स्तारयंति कथंचन ११ ॥
यज्ञका अंगदक्षिणा दानकरणा यहवेदवाक्य प्रमाणहै यज्ञयागा
दिककर्म दक्षिणा दानहीनहोवेजो यज्ञकर्ताके तारकनहीहोते ११
शक्तिस्तु पूर्णपात्रेण संमिता नसमाभवेत् अ
थपतानयष्टव्यं त्रिभिर्वर्णैः यथाविधि १२ ॥
जो शक्ति होवेतो दक्षिणायथाविधि दानव्यहै नही शक्ति होवेतो
पूर्णपात्रदानकर्के दक्षिणापूर्णहोतीहै जैसे आपदाकालमे अ
शक्त पुरुषको एक अश्वमात्र सकृदान अश्वमेध यज्ञसेभी अधि
कपुण्यदेताहै तैसे दरिद्र पुरुषको पूर्णपात्र दान द्वादश गोश
तदान समान होताहै १२ ॥
सोमोराजाब्राह्मणानामित्येषा वैदिकी स्थितिः
तंचविक्रेतु मिच्छंति नवृथावृत्तिरिष्यते १३ ॥
अबसोमलताके विक्रयदोषकापरिहार विचार कहतेहै हे राजन्
सोमजो चंद्रमा देवता सो ब्राह्मणोका राजाहै उसको विक्रय कर
णे ब्राह्मण इच्छा करतेहो सोवृथा सोमविक्रयनहीकरे यज्ञवालेसो
मकाविक्रयकहाहै उपजीवकावास्तेसोमविक्रयनहीकहा १३
तेन क्रीतेन यज्ञेन ततोयज्ञः प्रतायते इत्येवं
धर्मतो ध्यात ऋषिभिः धर्मवादिभिः १४ ॥
सोमखरीदनेसे सोमयागकहाहै उसीकर्के सोमयागहोताहै ऐ

से सोम विक्रयका निर्णय धर्मवादि ऋषिजनोने कहाहे १४ ॥

प्रमान्यात्तस्य सोमस्य न्यायहृतो पराभवेत् अ
न्यायहृतः पुरुषो नपरस्य नचात्मनः १५ ॥

हे राजन् यज्ञकर्ता पुरुष और सोमयागादियज्ञ और सोमलता
यह न्यायहृतिसे होवेतो यज्ञका फलहोताहै अन्यायहृतिहोवे
पुरुषतो अपने को फलनही करता यज्ञकरावणे हारे कोफल
नही करता १५ ॥

शरीरहृत्तमास्थाय इत्येषाश्रूयतेश्रुतिः ना
स्तिसम्यक्प्रणीतानि ब्राह्मणानांमहात्मनां

जोदेहपोषण मात्रसे प्रवृत्तभये जो ब्राह्मण तिन्होने १६ ॥
प्रवृत्त किये जो प्रणीतापात्रा सादानादि स्रुवक अग्निस्थापनादि
होमविधीके यज्ञादिकर्म सोसम्यक् हिंसा प्रधानतासे शुभफ
लको नही करते १६ ॥

तपोयज्ञादपिश्रेष्ठं इत्येषापरमाश्रुतिः तत्ते
तपः प्रवक्ष्यामि विद्वंस्तदपिमेशृणु १७ ॥

ब्राह्मणोको यज्ञादि कर्मसे तपकरणाही परमश्रेष्ठहे ऐही
परम श्रेष्ठश्रुती प्रमाणहे ताते तुमको तपकर्तव्यताकी निष्ठा
कों कहतेहे तुमभीधर्मतत्वके वेत्ताहोकर तपोयज्ञकी कर्तव्य
ताको श्रवणकरो १७ ॥

अहिंसा सत्यवचन मानृशंस्यंदमोघृणा एत
त्तपोविदुर्धीरा नशरीरस्य शोषणं १८ ॥

ब्राह्मणोको अहिंसा धर्महे सत्यवचन धर्महे और अकठोरताध
र्महे और इंद्रियोका दमन धर्महे सर्वभूतदया धर्महे यही
ब्राह्मणोका सौम्यतपहे सो यज्ञकर्मसे श्रेष्ठहे केवल उपवासा
दिकर्के देहका वृथा शोषण तपोभी धर्मनहीहे १८ ॥

अप्रमाणंच वेदानां शास्त्राणां चाभिलंघनं
अव्यवस्थाच सर्वत्र तद्वैनाशन मात्मनः १९

हे राजन् वेदवाक्योका अप्रमाणकहना शास्त्रोक्तधर्ममर्यादाका
लंघनकरणा और सर्वप्रकारके आचार विचारमो अव्यवस्था नही
माननी एतेलक्षण आत्मनाशकारीहे १९ ॥

त्रिदोषदशाहोतृणां विधानेपार्थ्यपादशाम
विदिःस्रुकचितिमाश्च पवित्रज्ञान मुत्तमम

हे राजन् शास्त्रज्ञानवालेको यज्ञादिकर्मभी ज्ञानके ॥ २० ॥
साधनकहे हे दशहोता यागवालेको विति तत्व स्रुक रूपहे चि
त्तरूप आज्यरूपहे पवित्रधारणरूप उत्तम मंत्रार्थ ज्ञानरूपहे २०

श्री॰
रा॰ ध॰
टी॰
५३

सर्वं जिह्मं मृत्युपदमार्जवं ब्रह्मणः पदम् एता
वान् ज्ञानविषयः किं प्रलापः करिष्यति २१
सर्वत्र कपटता मृत्युरूपहै और शुद्धासंपन्न आर्जवहीतो ब्रह्मपदहै
एतन्मात्र ज्ञानविषयहै यज्ञविधिके ज्ञानविषयविना केवलना
म कल्पनावाला यज्ञधर्म फल क्या करेगा हथ्या वाचारंभणाजै
साहै २१
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राज
धर्मे अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ७८ ॥
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे अष्टसप्ततितमोध्यायः ७८
युधिष्ठिरउवाच यदप्यल्पतरं कर्म तदप्येकेन दुष्करं
पुरुषेणासहायेन किमु राज्यं पितामह १ ॥
इसप्रकार पुरोहित राजा ऋत्विक तीनप्रकारसे स्वामीरूप त्रिप्रका
र स्वामी भावके प्रकृतिका निरूपणभया अब अमात्यरूप प्रकृति
ज्ञानवास्ते राजाका प्रश्नहै युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी जो स्व
ल्पमात्र उद्यमकाभी व्यवहारकार्यहै सोभी एकाकी पुरुषको
दूसरे सहायविना करणाकठिनहै ऐसा महाप्रयत्न संपदावा
ला राज्यशासनारूपी महाकर्म सो सहाय संपदाविना एकाकी
पुरुषसे कैसेबननाहै १ ॥
किंशीलः किं समाचारो राज्ञोथ सचिवो भवेत्
कीदृशे विश्वसेद्राजा कीदृशे नच विश्वसेत् २
तातें अबमोको अमात्यके अधिकारी पुरुषके लक्षणकहो रा
जाको मंत्री अमात्य कैसे शीलवालाहोवे कैसे आचारविचारवा
लाहोवे कैसे शीलवाले मंत्री विषे राजा विश्वासकरे और कैसे
दोषजानकर्के मंत्री विषे विश्वासनहीकरे २ ॥
भीष्मउवाच चतुर्विधानि मित्राणि राज्ञां राजन्भ
वंत्युत सहार्थो भजमानश्च सहजः कृत्रिमस्तथा
भीष्मउवाच हे राजन् चारप्रकारके राजालोकोके सहा
यकारी मित्रहोतीहै ॥ ३ उन्हके लक्षणभेदवास्ते नामभेदभीकहते
है एकतो सहार्थहोताहै इसका अर्थप्रयोजन अपनेसाथ बरा
बरहोताहै अपनेमातापिताके भ्राताभगिनीका पुत्रादिकहै और
एक मित्रभजमान होताहै सो पितृ पितामहादि क्रमसे सेवा
कालमेसखा मित्र होताहै और एक सहज होताहै शत्रुकोजी
तने वाले शत्रुराज्यको अर्धार्धभाग ग्रहण वास्ते कियाहै उस
की तुल्यहीभी अपने साथ एक प्रयोजनकालमेही दानमा
नकर्के कल्पन कियाहै ३ ॥
धर्मात्मा पंचमस्त्वापि मित्रं नैकस्य नद्वयोः
यतो धर्मस्ततो वा स्याद् मध्यस्थो वा ततो भवेत् ४

औेर धर्मात्मा मित्र पंचम होताहै सोजहां धर्म प्रवृत्ति विद्यमानहै
तहां मित्रताकों करताहै न एकपत्तका हितकारीहै न उभयप
त्तका हितकारीहै जहां धर्महोय तहां हितकारीहै सो ग्रधर्म
प्रवृत्तिको मित्रताको त्यागकरजाताहै ४ ॥

यत्स्यार्थोनरोचेत तत्तस्य प्रकाशयेत्
धर्माधर्मेण राजान ग्रंतिविजिगीषवः ५

ऐसी शंका मतकरो जोनसा ग्रर्थ धर्म प्रसंगसे रहितहै
उस ग्रर्थको ग्रापभी त्यागकर्तव्यहै हे राजन् जौनसे राजा लो
क विजयकी वांछावालेहै सो विजयवास्ते धर्ममार्ग करके ग्र
धर्ममार्गकर्के जैसे ग्राचारकर्के विजयहोवे उसी ग्राचारण
सेयत्ननकरतेहै ५ ॥

वत्तुर्णां मध्यमा श्रेष्ठा नित्यशंक्या तथापरौ
सर्वेनित्य शंकितव्याः प्रत्यन्ते कार्य मात्मनः ६

हे राजन् जो प्रथमचार मित्रहै जोनसा ग्रपनेपित्रमहादि क्रमसे से
वा करताहै सो भजमानहै ग्रेर जोनसा ग्रपना सहजहै ग्रपने माता
पिताके संबंधवाला भानजा भतीजादिक यह दोनों पांचोमित्रोवि
षे श्रेष्ठहै ग्रेर सहार्थ्य जोहै सो शत्रुजयवास्ते शत्रुके राज्यके ग्रर्थ
भागको ग्रहण करण प्रमाणसे कियाहै जो ग्रापबलवान हो
वेगा संपूर्ण शत्रुराज्यको ग्रापही ग्रहण करलेवेगा ग्रेर धनदा
नादिसे मित्रकियाहै सो जहां धनलाभ ग्रधिकहोवेगा तहांमि
त्राई करेगा यह पांचो प्रकारके मित्रोंका ग्रपने गूढमंत्र कार्य
कालमों विश्वासनही कर्तव्यहै ६ ॥

नहिराज्ञा प्रमादोवै कर्तव्यो मित्ररक्षणे प्र
मादेनहिराजानंलोकाःपरिभवंत्युत ७ ॥

राजाने मित्राई करणेमो प्रमाद विश्वासका कदापि कदापि नही
करणा जो राजा विश्वासकरके प्रमादी होताहै उसको ग्रपने परा
ये सभही लोक ग्रवज्ञाकरतेहै ७ ॥

ग्रसाधुःसाधुतामेति साधुर्भवतिदारुणः ग्र
रिश्चमित्रं भवति मित्रंचापि प्रदुष्यति ८ ॥

राजाके विश्वासकर्के सभही लोभ मनकी चंचलतासे मित्रताकों
त्यागकर देतेहै कोई ग्रसाधुहै सो साधुहोकर ग्रतिदारुण शत्रु
विश्वाससे होताहै जो तसा ग्ररि विश्वासकर्के मित्रहोताहै सोभी
विश्वासपा इकरपरमशत्रुहोताहै ८ ॥

ग्रनित्यचित्तः पुरुषः तस्मिन्कोजातुविश्वसेत्
तस्मात्प्रधानंयत्कार्यं प्रत्यक्षंतत्समाचरेत् ९

पुरुषकी प्रकृति ग्रनेक चित्तवृत्तिवालीहै ऐसा कौनमूढ जने

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
४४

हे अपने विश्वासकों परवशकरदेवेताते जो प्रत्यक्षदृश्यमान प्रधानका यहे इसकेवास्ते सभसे प्रयत्नविश्वास दानमानादि द्वाराकरे ९ ॥

एकान्तेन हि विश्वासः कृत्स्नो धर्मार्थनाशकः
अविश्वासश्च सर्वत्र मृत्युनाच विशिष्यते १०

जौनसा एकांत संपूर्ण विश्वासहे सोराजाके संपूर्ण धर्मार्थकों नाशकरताहे और जौनसा साधुजनोका अविश्वासहे सोभी मृत्युके समानहे विशेष कार्यका विनाशकारीहे १० ॥

अकालमृत्युर्विश्वासो विश्वसन्हि प्रपद्यते य
स्मिन्करोति विश्वास मिच्छतस्तस्य जीवति ११

हे राजन् विश्वासभी अकालमृत्यु जैसाहेजिस अकाल मृत्युको यह पुरुष विश्वासकर्केही प्राप्तहोताहे जोपुरुष किसीके विश्वासको करताहे सो आपइसके अधीन जीवताहे ११ ॥

तस्माद्विश्वसितव्यंच शङ्कितव्यंच केषुचित्
एषानीति गतिस्तात लक्ष्याचैव सनातनी १२

ताते हेराजन् कही विश्वासकर्तव्यहे कदाचित् अपने जनोंकाभी अविश्वासकदाचित् परायेका विश्वास कदाचित् प्रथमकदाचित् पश्चात् कदाचित् वर्तमानकालविषे एहीनीतिकीगतीहे सो सनातन एसीही इलेख्यवनीहे इसको विचारयत्नसे लक्षितकर्तव्यहे १२

यंमन्येत ममाभावा दिममर्थागमंस्पृशेत्
नित्यंतस्माच्छङ्कितव्य ममित्रं तद्विदु र्बुधाः १३

जिसको राजा जाने मेरेविना यह राजा होवेगा ऐसे पुत्रभ्रातादिको सोभी विश्वास शंकाकर्तव्यहे उसकोभी अपने शरीरजीवनेका शत्रुमानतेहे १३ ॥

यस्य क्षेत्रादप्युदकं क्षेत्रमन्यस्य गच्छति न
तत्रा निच्छतस्तस्य भियेरन्सर्वसेतवः १४

हे राजन् और भी अमित्रलक्षण तोको दृष्टांतगाथा द्वारसे कहतेहैं जिसका महानद्वारा केवल बंधसमीपक्षेत्रसे सोनहो जलबंधके सतको रक्षाकरतीहे तोइसके आसपासके क्षेत्रविषे मर्यादासे जलप्राप्तिहोतीहे इसकर्के सो सभही क्षेत्रसम्यक् फलसंपदावाले होतेहे जोनद्वारा समीप क्षेत्रपति नडागसेतूंको तो डदेवेतो सभहीसेतजलप्रवाहसे नष्टहोतेहैं १४ ॥

तथैवात्यदकाद्भीत स्तस्यभेदनमिच्छति य
मेवंलक्षणं विद्या त्तममित्रं विनिर्दिशेत् १५

तैसे महाशत्रुकी सीमापालराजा जोहे सो जबसीमाकोंयत्नसे रक्षाकरतेहे तो महानगरसे उत्तम उत्तम क्रय विक्रयके धन पदार्थ अपने राज्यमो चले आवतेहे जो सीमाकी रक्षाको यत्नसे नही रक्षण

करेतो शत्रुसेना उसके द्वारा प्रवेशकर्के राज्यकेदेशको लूटकराले
तीहे ताते शत्रुके कोपप्रसादज्ञानवास्ते सीमा पालकाभी अतिविश्वा
स विचारसे करणा १५ ॥

यैंस्वल्पमात्रेण त्यजेद्दीनतरोभवेत् एत
उत्तम मित्रस्य निमित्त मिति वर्त्तते १६ ॥

अबमित्रके लक्षणोकों कहतेहें जोनसा पुरुष अपनी दिनो दिन
वृद्धीसे संतोषसे तृप्तनहीहोवे नित्यप्रति अतिसंपदा वृद्धिचाहे
और स्वल्पमात्रभी संपदाक्षयकर्के अति दीनतासे क्षीणहोताहे यह
उत्तम मित्रके निमित्तलक्षणहे १६ ॥

यन्मन्येत ममाभावा दस्याभावो भवेदिति त
स्मिन् कुर्वीत विश्वासं यथापितरि वैतथा १७

जो मित्रजाने मेरे मित्रके अभावसे मेराभी अभावहो जावे ऐसा जि
सकों दृढप्रीतिभावहे उसको विषे पितासेभी अधिक विश्वासमाने १७

नेशक्त्या वर्धमानस्य सर्वतः परिहर्षयेत् नित्य
त्वमाहारयति योधर्मेष्वपि कर्मस १८ ॥

ऐसे मित्रको आपसो धनशक्ति सामर्थ्यकर्के वर्धमान होवे तो मित्र
कोंभी अपनी संपदासेभी अधिवर्धमानकरे मित्रको जो नित्य प्रति
दुखदानसे धर्म कर्मो विषेभी वारणकरताहे १८ ॥

व्रताद्दीनंविजानीया दुत्तमं मित्रलक्षणं येन
स्य त्यक्तुमिच्छंति तेनस्यारिपवः स्मृताः १९ ॥

और मित्रकों दुःखक्लेशसेभयभीतजानकर आपप्राणोंसे यत्नकर
केभी दुखक्लेशनिवृत्तिकरणे चाहताहे सो उत्तम मित्रका लक्षणहे
जोनसे मित्रहोकर मित्रके खेदमो प्रसन्नहोतेहें सो उसके शत्रुकहेहे १९

व्यसनान्नित्यभीतोयः समृद्ध्यायोन दुष्यति य
स्मादेवंविधंमित्रं तदात्मसममुच्यते २० ॥

और जोनसा मित्रके आपदा व्यसनसे भयभीत होताहे और संपदा
प्राप्तीमों दुःखदूषणनही मानता ऐसाजो मित्रउसको अपनी समा
नही प्रियजाने २० ॥

रूपवर्णस्वरोपेत स्तितिक्षरनसूयकः कुली
नः कुलसंपन्नः सतस्मात्प्रत्यनंतरः २१ ॥

जोनसा मित्रअपनी सुखसंपदाको देषकर सुंदररूप वर्णविकास
वालाहोताहे और स्वरकर्के हर्षसंपन्नहोवे दिनोदिनो दिनवृद्धीको
सहारे अपराध होजावे उसविषे क्षमाकरे कदापि किसीप्रकारसे
अपनेविषे दोषदृष्टिनहीकरे उत्तमकुलकाहोय और कुलीन भा

भी॰
रा॰ ध॰
टी॰
४५

45

चारहत्तसंपन्नहोवे सो केवलनामरूपमात्रसे किंचितमात्र भेदरूप
होताहै २१ ॥

मेधावी स्मृतिमान्दक्षः प्रकृत्याचानृशंस्यवान्
योमानितोमानितोवा नच दुष्येत्कदाचन २२

व्यवहारज्ञानमों महाबुद्धि संपन्नहोय और पूर्वापरज्ञानकी स्मृतिवाला
होवे स्वभावकरकेही क्रूरतादोषदृष्टि रहितहोवे मान अपमान दशा
मो कदापिदोषनही मानता २२ ॥

ऋत्विग्वा यदिवाचार्यः सखावात्यंत संमतः ग
हेवसेदमात्यस्ते सःस्यात्परम पूजितः २३ ॥

ऐसा ऋत्विगहोय अथवा आचार्य होय अथवा मित्रसखाहोय अथ
वा मंत्री पुरोहितादिक कोई ऐसा अधिकारी होवे सो अपने विशेषग
हविषे निवासकरे और परम उत्तम मानपूजाको यथायोग्य जाति
वर्ण गुणबल पराक्रमसे पावे २३ ॥

सतेविद्यात्परं मित्रं प्रकृतिं चार्थ धर्मयोः वि
श्वासस्ते भवेत्तत्र यथापितरि वैतथा २४ ॥

हे राजन् ऐसा उत्तम कुल आचारके अभिमानवाला पुरुषहोवे सो
तेरे मंत्रके स्वभावके और अर्थ धर्मके विश्वासको पावे पिताके स
मान मानपूजाकोपावे २४ ॥

नैव द्वौ नत्रयःकार्या नमृष्येरन्परस्परम् एका
र्थेष्वेवभूतानां भेदो भवति सर्वदा २५ ॥

परंतु हे राजन् ऐसे परम प्रीति धर्म विद्या सत्पात्रभी होवे तोभी
एकअधिकारस्थानमों दो अधिकारी कदापि नहीकरणे और तीनभी
नहीकरणे दो तीनहोवे तो अपने अपने पृथक् पृथक् प्रीतिपात्र वि
श्वासके अधिक अभिमानसे परस्पर विगड़नही जावे हे भारत एक
अर्थ सिद्धकरणेमों सभकी भेदबुद्धि सदाहोतीहै २५ ॥

कीर्तिप्रधानोयस्तुस्यात् यश्चस्यात्समयेस्थितः
समर्थान्यश्चनद्वेष्टि नानर्थान्कुरुते चयः २६

हे भारत जोपुरुष अपनी स्वामीकी कीर्तिकोप्रधानकरे उसीहारे अ
पनी कीर्ति भी प्रधानकरे और कार्यके अधिकारके अनुसार धर्म कर्म
की मर्यादामो स्थितहै जो दूसरा उसकार्यके साधनमो समर्थहै उस
का द्वेषनहीकरे आपभी अभिमानसे अथवा उदासीनतासे कार्यको
सिद्धीमों अनर्थ कल्पनाको नहीकरता २६ ॥

योनकामाद्भयाल्लोभा त्क्रोधाद्वाधर्ममुत्सृजेत
दक्षः पर्याप्तवचनः सतेस्यादग्रणीर्नरः २७

और जौनसाकामसे भयसे लोभसे अथवा क्रोधसे स्वामीके आज्ञाधर्मको
त्यागनहीकरे और कार्यकी सिद्धि असिद्धीके गुणदोषज्ञानसंपन्नही
जिसको पुरुषार्थके अनुसार सत्य प्रतिज्ञा वचनहे हे राजन् ऐसापु
रुष तेरा प्रतिनिधी होकर राजधर्मके अधिकारको करे २७ ॥
कुलीनःशीलसंपन्न स्तितिक्षुरविकत्थनः शू
रश्चार्यश्च विद्वांश्च प्रतिपत्ति विशारदः २८ ॥
जो कोई पुरुष कुलीनहोवेकार्यके यश अपयशमो कुलका अभि
मानी होवेकार्यसाधनेमो शीलसंपन्नहोवे कार्यप्रयत्नके खेदभार
को सहारणेहाराहोवे और अपनीमहत्वको वृथानही कहे और शूर
माहोवे धीरहोवे और मनकी उदारता संपन्नहोवे और कार्यज्ञानके
भेदकावेत्ताहोवे और कार्यसिद्धीकी सफलता करणेहाराहोवे २८
एते ह्यमात्याः कर्तव्याः सर्वकर्मसु दक्षिताः
पूजिताः संविभक्ताश्च सुसहायाः स्वनुष्ठिताः २९
हे राजन् ऐसेराज्यकार्यसिद्धीको करणे हारे तमने मंत्री कर्तव्यहे
सर्व कर्मोविषे दृढस्थितकरणे योग्यहे मान प्रतिष्ठासे पूजितहो
वे और धन संपदासे संपन्नाकयेहोवे ऐसे अधिकारी सुंदर सहा २५
य सामग्री संपन्नकर्तव्यहे जिन्हका कर्मसुंदर अनुष्ठान संयुक्तहोवे
कृत्स्नमेते विनिक्षिप्ताः प्रतिरूपेषु कर्मसु यु
क्ता महत्सु कार्येषु श्रेयांस्युत्पादयंत्युत ३०
संहरणी विधिसंपन्न करके अपने यथोचित कर्मो विषेस्थापनकिये
हे और बी जो महाकार्यहे धनकी आमदन खरचादि विचारकार्य
और शत्रुजयादि कार्यतिन्होविषे मुख्यअधिकारी जानमहात्मा कि
येहे स्वामीके कल्याणकार्योका उदय करदेनेहे ३० ॥
एते कर्माणि कुर्वंति स्पर्द्धमाना मिथः सदा अ
नुतिष्ठंति चैवार्थं माचक्षाणाः परस्परम् ३१
हे राजन् ऐसे यह अधिकारी उत्तमपुरुषजोहे सो अपने अपने
यत्नकी अधिकतासे अन्योन्यस्पर्धाकरनेहे स्वामीकार्यकोही दिनरा
त्र सिद्धकरनेहे परस्पर अपनी अधिकताको नहीकरनेहे ३१ ॥
ज्ञातिभ्यश्चैव बुद्ध्येथा मृत्योरिव भयं सदा उप
राजेव राजर्द्धिं ज्ञातिर्न सहते सदा ३२ ॥
और अपनेजाती संबंधीजोहे उन्हसेभी तमने मृत्युके भयसमान
सदाचित्तमो शंकाकर्तव्यहे अपनी जातिका जोउदितभया है सो
अपनेको समीपवर्ती उपराजोके समान मानताहे मुख्यस्वामी
कर नही मानता अहो यह राजा कहासेबडाहे हम इसकेस्थान
और किसीभाई बंधकोराजाकारस्थानलेवेगे इसमो हमसे जयप

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
५८

46

द् मात्रही अधिकहे हम और कोही जयशब्दका अधिकारलेवेगे ३२
अक्रोधनो वदान्यस्य ह्रीमतः सत्यवादिनः ना
सौज्ञाते महाबाहो विनाशमभिनंदति ३३
जो राजाजाति विश्वासकर्कै सुखी हतिवाला होताहे और क्षमाशील
होताहे और संपदादेनेमों उदार होताहे और जातीके अनादरमो ल
ज्जाकरताहे जो किसीको दानप्रदानवचनकहा उसको तत्कालही
विचारविना सत्यकरदेताहे उसके विनाशको अपनी जातिके पुरु
षविना कोई शुभनही मानता ३३ ॥
अज्ञातिनोपि न सुखं नावज्ञेयास्ततः परे अ
ज्ञातिमंतं प्रकुर्वं परेवाभिभवंत्युत ३४ ॥
हे राजन् जो अपनी जातिवालेको और जातीवाला अनादरकरे तो
दोनोसे अपनेको सुखनही होता जिसराजाको अपनी जातिका ब
लनहीहे उसको अवर जातिके सुखेनजीत लेतेहे ३४ ॥
निकृतस्य नरेंद्रस्य ज्ञाति रेवपरायणं नान्ये
निकारं सहते ज्ञातिःज्ञातेः कथंचन ३५ ॥
जौनसा और जातिवालेसे अनादरको प्राप्तभयाहे उसको अपनी जा
तीवालाही उद्धारक रावाहताहे जैसे तुमने गंधर्वोसे दुर्योधनको
उद्धार कियाहे अपनी जातिवाला अपनी वालेके अनादरको नही
सहासकताहे ३५ ॥
आत्मानमेवजानाति निकृतंबांधवैरपि ते
षुसंतिगुणाश्चैव नैर्गुण्यं चैवलक्ष्यते ३६ ॥
जो अपने जातिसाथ विरोधभी होवे तोभी जातीवाला अपने जाती
के अवमानसे अपनेही अवमानको मानताहे ३६ ॥
नाज्ञातिरनुगृह्णाति नेवाज्ञातिर्नमस्यति
उभयंज्ञातिवर्गेषु दृश्यते साध्वसाधुच ३७
ताते जातिवालेके उदयमों गुणभीहे अवगुणभी लक्षणीयहे
और जातीका अपनी जातिवालेको आपदासे निकासतानहीहे
और अज्ञातिको माननाभी नहीहे हे राजन अपनी जातिवर्गमों
साधुगुणभीहे असाधुगुणभीहे ३७ ॥
संमानयेत्पूजयेच्च वाचा नित्यंच कर्मणा कु
र्याच्च प्रियमेतेभ्यो नाप्रियं किंचिदाचरेत ३८
ताते जातिवर्गका संग्रहभीकरणा और विश्वासभी नही करणा
दोनोभावयत्नसे कर्तव्यहे अपने जातिवालेको मानभीकरे वा
णीकर्कै सदामानकरे और कर्म कर्कैभी मानकरे जो प्रियकार्यक

हे सोकरदेवे उन्हका कहा अप्रियकछुभी कदानहीकरे ३८ ॥
विश्वस्त वदविश्वस्तस्ते ष्ववेतैन सर्वदा न
ह्रिदोषोगुणोवेति नित्र्युष्मस्तेषु दृश्यते ३९
विश्वासवान् जैसा अविश्वासकरणोहारा सदावर्तमा नहोवे उन्हो
विषे अविश्वासके दोष गुण प्रगटनही दर्शनकरावे ३९ ॥
अथैवे वर्तमानस्य पुरुषस्याप्रमादिनः
अमित्राःसंप्रसीदंति तथामित्री भवंत्यपि ४०
हे राजन् इसप्रकार विश्वासके गुणदोषोके बुद्धिज्ञान संपन्नजो
राजाहे अेर अभिमान क्रोधादिप्रमादसेरहितवर्तमानहे उसवि
षे अमित्रलोकभी प्रसन्नहोतेहे मित्रभी होजातेहें ४० ॥
यएवं वर्तते नित्यं ज्ञातिसंबंधि मंडले मि
त्रेष्वमित्रे मध्यस्थे चिरं यशासि तिष्ठति ४१
इति श्री महाभारते शतसहस्त्र संहितायां
शांतिपर्वणि राजधर्मे एकोनाशीतितमोध्या
जो राजा अपनी जा यः ७९ ॥ ती अज्ञाती मंडलमो भाव
यानतासे वर्तमान होताहे मित्रोविषे अमित्रोविषे अेर उदासी
न मध्याके मंडलविषे चिरकाल यशोभागी स्थितहोताहे ४१ ८१
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे एकोनाशीतितमोध्यायः
युधिष्ठिरउवाच एवमप्यात्केनस्मिन् ज्ञातिसं
बंधि मंडले मित्रेष्व मित्रेष्वपि चकथंभावो वि
भाव्यते १ ॥ युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी इसप्रकार
ज्ञातिमंडलभी वशावर्ती नही होता अेर मित्रोविषे अमित्रोविषे
एकको मानता एकको कोपहोजाता एकको नहीमाना तो सभ
एकको मानता एकको कोपहोजाता एकको नहीमाना तो सभ
काकोपहोजाताहे इसप्रकारकोई मित्रभी अमित्रहोजातेहे स
भका चित्तवशीकारभाव कैसे वनताहे ऐसेभावको आपकहो १
भीष्मउवाच अत्राप्युदा हरंतीम मितिहासं पु
रातनं संवादं वासुदेवस्य सुरर्षे र्नारदस्य च २
भीष्मउवाच हे राजन् तुम्हारेप्रश्नमो एकपुरातन इतिहासको
उदाहरण कहतेहें वसुदेवजीका नारदजीका संवादभयाहे
उसको आपश्रवणकरो २ ॥
वासुदेवउवाच नासुहृत्परमंमंत्रं नारदार्हतिवे
दितुं अपंडितो वापिसुहृत्पंडितोवाप्यनात्मवा
न् ३ ॥

वासुदेवउवाच हे नारदजी जो सुहृदनहीहे सो मंत्र विश्वासस्था नको जानने योग्यनहीहे जोगुरुषसुहृदहे सो मंत्रभेद विज्ञान का पंडितनहीहे ताते सोभी विश्वासका पात्रनही हे और जो मंत्र विज्ञान भेदका ज्ञाता पंडितहे सो स्थिर बुद्धिनहीहे ताते सोभी विश्वास पात्रनहीहे ३ ॥

सते सौहृदमास्थाय किंचिद्वक्ष्यामिनारद कृत्स्नबुद्धिबलंप्रेक्ष्य संपृछेत्रिदिवंगम ४ ॥

ताते मे आपको अपना विश्वास पात्रसुहृदज्ञानी जानकर्के जानकर्के अपने बुद्धीका संपूर्ण विचारबल देखकरके अपने चित्तका संदेह मंत्रकहताऊं आपस्वर्गलोककी गतिवालेहे पृथिवीके ज्ञानविचारवाले पुरुषोसेभी अधिकज्ञानवालेहो आप के प्रति अपने कर्तव्यताके विचारको मे पूछकरताऊं ४ ॥

दास्यमैश्वर्यवादेन ज्ञातीनां नकरोम्यहं अर्धंभोक्तास्मिभोगानांवाग्दुरुक्तानि चक्षमे ५

मे अपने ऐश्वर्यवादकर्के अपने ज्ञाती वालेका दास्यभावकरताऊं जो मेधनार्जना करताऊं इसका अर्धभाग ज्ञाती वाले संबंधी जनोको विभाग बांटकर इसका अर्धआपभोगताऊं और ज्ञाती वालेको दुष्टकूरवचनभी सहारताऊं इसप्रकार दासभाव सभ ज्ञातीके संबंधिजनोका करताऊं ५ ॥

अरणी मग्निकामोवा मथ्नातिहृदयंमम वाचादुरुक्तंदेवर्षे तन्मे दहति नित्यदा ६ ॥

यहदासभाव मेरेहृदेको अग्निके मथन कामनावाले अरणी काष्ठ समानदग्ध करताहे इसी कर्के वाणी कर्के कहे दुष्टकठोर वचनको सहारताऊं बंधजनोका त्याग और विश्वासदोनो कार्य महा कठिनहे मेरे मनका विश्वासपात्र ज्ञाती संबंधी कोई नहीहे ६ ॥

बलं संकर्षणे नित्यं सौकुमार्यं पुनर्गदे रूपेणमत्तः प्रद्युम्नः सो सहायोस्मि नारद ७

हमारे ज्येष्ठभ्राता बल देवहे इसको अपने बलका अभिमान हे और हमारे गदनामवाले भाईविषे अपने शरीरकी सुकुमारताका अभिमानहे और प्रद्युम्ननामक पुत्रविषे अतिसुंदरतापनाका मदहे ऐसाम आहुक अक्रूर नामवाले यादवकेसराजाके मंत्रकरता प्रथमबनेरहे इन्हके सांत्ववचनकर्के वशकरणेविषे असहाय भयाऊं ७ ॥

अन्येहि सुमहाभागा बलवंतो दुरुत्सहाः

निग्रोमयानेनसंपन्ना नारदांधकवृष्णयः ८
हे नारदजी ओरभी यादवमुख्यहमारे बंधुजन महाभाग्यवाले हे बल
वानहे किसी के अभिमानको सहारते नहीहे नित्यही अपने पराये
साध्यप्रवृत्यात्रामो उद्यमवालेहे ८ ॥
यस्यनस्युर्नचस्युःस्या यस्यस्युःकृत्स्नमेवतत्
द्वाभ्यां निवारितोनित्यं वृणोम्येकतरंनच ९
जिसको सभही खोटे होवेतो उसको सभका त्याग हितबनताहे जि
सको सभही उत्तम स्नेहकारी होवे उसको सभका विश्वास मान कर
णा बनताहे यह आहुक अक्रूरदोनो यादव मुख्यहे इन्हके विश्वास
अविश्वासकर्के दोनो नेमोको रोकाहे एकके वारणेमो दूसरेका को
पहोताताहे एसे भयकर्के मेव्याकुल चित्तभयाहुं ९ ॥
स्यातां यस्याहुकाक्रूरौ किंनुदुःखतरं ततः य
स्यवापिनतौस्यातां किंनुदुःखतरंततः १० ॥
जैसे दोमदमत्त महेसे परस्पर युद्धकरतेहे इन्हके मध्यस्थ पुरुष
को इन्हकेवारणकरणेमो दुखहोताहे तेसे आहुक अक्रूर दोनोहमा
रे ज्ञाति संबंधवालेहे इन्हके परस्पर अभिमानकी अधिकताका वि
रोधहे उसको मे निवारण शंकासे व्याकुलभयाहुं यहदोनो परस्पर
विरोध त्यागकर्के मेरे वशनही होते इससे परेमोको अधिकचिंताउ
त्पन्नहीहे जो इन्हको त्यागकरें तो जिसके पास एसे बुद्धिसंपन्न
पुरुषार्थी ज्ञानवाले यह दोपुरुषवीर नही होवे उसको अधिक दुख
चिंता ओर क्याहे १० ॥
सोहं कितवमातेव द्वयोरपि महामुने एक
स्य जयमाशासेन द्वितीयस्य पराजयं ११ ॥
हे नारद सोमे जैसे दो जो द्यूतक्रीडाकरणेहारे पुरुष इन्होदोनोकी ए
कमाता जोहे सो दोनोके जयकोके जयको नही चाहते ओर दोनो पुत्रो
को पराजयकोभी नही चाहती तेसे आहुकके अक्रूरके दोनोके जयप
राजयकी संदेह चक्रमों आरूढभयाहुं दोनो अपनी ज्ञातिके प्रियसं
बंधी हे ११ ॥
ममैवंक्लिश्यमानस्य नारदोभयतःसदा वक्
महसियच्छ्रेयो ज्ञातीनामात्मनस्तथा १२ ॥
हे नारद इसप्रकार इन्होके जयपराजयकी संदेह चक्रमों दुखी भ
योको जैसे मोकों सब कल्याणहोवे एसी बुद्धिके उपायको तमकहो
जैसे मेरे जीतीवाले जनोको ओर मोकोभी शुभकर्तव्य उपायको उप
देशकहो १२ ॥
नारदउवाच आपदो द्विविधाकृष्णबाह्याश्चाभ्यंतरा
श्चह प्रादुर्भवंतिवार्ष्णेय स्वभावाद्यदिवान्यतः १३

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
५८

नारदउवाच हेकृस्नजी समही चेतनपुरुषोकोदो प्रकारकी आपदा प्रा
महोतीहे एकवाह्यआपदाहे सोप्रत्यक्ष सभको दृष्टहोतीहे ओर एक
मानसीचिंताकी आपदाहे सोआंतरीयहे बाह्यदृष्टनहीहोती १३ ॥

सोयमाभ्यंतरस्तुभ्यमापत्कृछ्रात्स्वकर्मजा
अक्रूरभोजप्रभवाः सर्वेह्येते तदन्वयाः १४

हे कृस्न सो यहतुमको आपदा आंतरीय प्राप्तभईहे अपने अवि
चारकर्मजन्यहे अक्रूरयादव भोजयादवसोतो तुम्हारी जातीकेहे १४

अर्थहेतोर्हि कामाद्वा वाचाबीभत्सयापिवा
आत्मनाप्राप्तमैश्वर्य मन्यत्र प्रतिपादितम् कृ
तमूलमिदानींत ज्ञातिशब्दं सहायवान् १५
नशक्यंपुनरादातुंवांतमन्नमिवत्वया १६

उन्होको तुमने उग्रसेनकी राज्यसंपदादीनीहे सोअपने अर्थहे तुसे
दीनीहे किसीकार्यकी कामनासे दीनीसे अथवा अपनी वाणीकी प्रति
ज्ञासे अथवा लोकनिंदाके भयसेदीनीहे यहसर्व तुमने अविचा रि
तही कार्यकियाहे अवपश्चात्तापचिंताकर्तव्यनहीहे १५ प्रथम जो
ज्ञातिशब्दसे राज्यदियाहे आपज्ञातिशब्दके सहायवान् भयेहे अवव
होइ उन्हसे राज्यसंपदा पलटनेको शक्यनहीहे ज्ञातिशब्दका राज्य
पद दृढमूल होगयाहे पलटलेनेको अयोग्यहे जैसे वमनकिया
अन्नवहो पलट लेनेको अयोग्यहोताहे १६ ॥

बभ्रूग्रसेन योराज्यं नाप्तंशक्यं कथंचन ज्ञा
तिभेदभयात्कृस्न त्वयाचापिविशेषतः १६

हेकृस्न बभ्रूयादवको उग्रसेनको तेने राज्यदियाहे सो अवतोको व
होउ फलटनेको तुमको अशक्यहोगयाहे ज्ञातिजनोको भेदभयसे
तुमनेभी विशेषकर्के अप्राप्त होगयाहे १७ ॥

तच्चेत्सिध्येप्रयत्नेन कृत्वाकर्मसु दुष्करम्
महाक्षयंव्ययोवास्या द्विनाशो वापुनर्भवेत् १८

जो तुमको अवपलटनेकी वांछाहोवेतो अव महादुस्कर कर्मकर
णेकर्के होताहे मनुष्योकामहाक्षय रणमो होताहे ओर द्रव्यकाभी
क्षयवहोत होताहे फेर अपनेवंशका नाशवहोतहोताहे १८ ॥

अनायसेन शस्त्रेण मृदुनाहृदयछिदा जि
ह्वामुद्धरसर्वेषां परिमृज्यानुमृज्यच १९ ॥

अव इसकाप्रयत्न अलोहरूपी शस्त्रकर्के होताहे अलोहशस्त्रके
साहे समाकर्के मृदुही कठोर नहीहे ओर हृदयके मानको ओर चिं
ताको छेदकारीहे अवसभको सांत्ववचने सभकी दोष दृष्टिको नि

हन्नकर्के और विचारकर्के सभकी निंदा दोषकरणेहारी जिह्वाको अपने
कर्णोके श्रवणत्यागकरके और वाणीकीवाच्यताको मोनकर्के प्रतिबंध
करो १९ ॥

वासुदेवउवाच अनायसं मृदुशस्त्रं मृदुर्विद्यामहं क
थं येनैषामुद्धरे जिह्वां परिमृज्यानुमृज्य चः २०

वासुदेवउवाच हे नारदजी अलोहमय शस्त्रकहाहे उसको हमकैसे
जाने जिसको मार्जन प्रक्षालनसे शुद्धकर्के ऐसे कोमल शस्त्रकर्के सभ
की जिह्वाका छेदन कैसेबनेगा उसका स्वरूप साधन कहो २० ॥

नारदउवाच शक्त्यान्नदानं सततं तितिक्षार्जवमा
र्दवैः यथार्हप्रतिपूजा च शस्त्रमेतदनायसं २१

नारदउवाच हे कृष्णजी जोनसा अलोहमयकोमलशस्त्र सभकीजि॰
ह्वाछेदकारी है उसका तो यथाशक्ति सभको अन्नदान करणा और त
माकरणी मृदुवचनकहना मायाकपटत्यागकरणा यथाधिकार स
भकी मानपूजा करणी यहअलोमय कोमल शस्त्रहे २१ ॥

ज्ञातीनां वक्तुकामानां कटुकानि लघूनि च गि
रां च हृदयं वाचं शमयस्व मनांसि च २२ ॥

अपनी जातीके पुरुष कटुवचनोको कहने हारेहे उन्हकी कटुवाक्य
वाणी वाणीको और मनकी कटुहानिको क्षमाकर्के शांतवचनोकर्के
शांतकरोगे तो तुम्हारा अलोहमयशस्त्र अपनी शुद्ध मृदुता कर्के श
मनकरेगा २२ ॥

नामहापुरुषःकश्चिन्नानात्मानासहायवान्
महतीधुरमादत्ते तामुद्यम्योरसावह २३ ॥

हे कृष्णजी जिसमहात्मा जनोके उत्तम शीलरूपी भारको लघुचित्तवा
ला कोई पुरुष अजितेंद्रियपुरुष और असहाय पुरुष नही धार श
कताऐसे उत्तम उदार शीलताके भारको तुमहृदय विचारके प्रयत्न
कर्के धारणकरो २३ ॥

सर्वएवगुरुंभारं मनड्वान्वहते समे दुर्गे
प्रत्येकःसुगवो भारं वहति दुर्वहं २४ ॥

हे महाराज मदानकी समभूमि विषे सभही वृषभ महाभारी भार
को उठायसकतेहे पर्वतके दुर्गम मार्गमो उत्तम शिक्षाशील संपन्न
सुंदर बलवान् वृषभही अपने बलकर्के अतिभारी बोझाको ओही
वृषभ उठाइसकताहे २४ ॥

भेदाद्विनाशः संघानां संघमुख्योसि केशव
यथात्वांप्राप्यनोत्सीदेदयंसंघस्तथाकुरु २५

भेदबुद्धिकर्के उत्तम पुरुषोकासमानबिगडजाताहे और तुम उत्तम

शां॰
रा॰ ध॰
टी॰
४९

49

जनोके समाजके मुख्यहो ताते जैसे समाजका भेदनही होवे सभकी प्र कमती समकार्यमोहोवे यही दो कार्यतुम तत्कालही करो २५ ॥

नान्यत्र बुद्धिक्षांतिभ्यां नान्यत्रेंद्रियनिग्रहात् ना न्यत्र धनसंत्यागाद् गणः प्राज्ञेवतिष्ठते २६ ॥

हे महाराज बुद्धि विचार और क्षमा इन्हसे विना और अपने इंद्रियोके म नकी चंचलताके जयविना और धनसंपदाके त्यागविना और उत्तमज नोके ज्ञानी जनोके सन्मानविना प्राज्ञज नविषें और क्या उत्तम गुणहो ने प्राज्ञजनोविषे ऐसे गुणसदा विद्यमानहोतेहे २६ ॥

धन्यंयशस्यमायुष्यंस्वपक्षोद्भावनं सदा ज्ञा तीनामविनाशःस्यात् यथाकृष्ण तथाकुरु २७

हेकृष्ण अपने जातीवालीका पक्ष अपना पक्षहोताहे उसको जो धन संपदामानप्रजासे प्रसिद्धकरणा ऐसागुणय जगतविषे धन्यहे जश हद्धिको करताहे आयुषाकी स्थिरता सफल ताको करताहे ताते जै से अपनी जातिवालेका हथानाशनहीहोय तैसा यत्नतुमकरो २७

आयत्यांचतदात्वेच नतेस्त्यविदितंप्रभो षाड्गु ण्यस्य विधानेन यात्रायां नविधौतथा २८

राज्यके षड्गुण विधानविषे यात्राप्रयाणकी विधीविषे अंतकेपरि णामकालविषे और वर्तमान कालकी कर्तव्यताविषे जो हानिहद्धि आदिक दोषगुणहे सो तुमको सभही विदितहे जैसे सभही तुम्हारी वशावर्ती होवे तैसेही तुमविचारसे करो २८ ॥

यादवाः कुकुराःभोजाःसर्वेचांधकवृष्णयः त्वय्यासक्ता महाबाहो लोकालोकेश्वराश्चये २९

हे महाबाहो कुकुरभोज अंधक वृष्णियहजेते यादवहे सो सभही और लोकोके ईश्वरभी तोको सेवाकरतेहे २९ ॥

उपासंतेहितद्बुद्धि मृषयश्चापि माधव त्वंगु रुःसर्वभूतानां जानासित्वंगतागतम् ३०

हे माधव संहरी ऋषिगणभी तुम्हारी बुद्धिके ज्ञानके सदा उपास न करतेहें तुमसर्वभूतोंके गुरुहो त्रैकालका सर्वभूतोकागम आगम आपही जानतेहो ३० ॥

त्वामासाद्ययदुश्रेष्ठ मेधंतेयादवाः सुखम् ३१

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे॰ वासुदेव नारद संवादे अशीतितमः ८१ ॥

सर्वभूतोकी वशीकारवृत्ति जोहे उसको दानमान सत्कारसे जैसे जैसी बने उसकोही आप अपनी बुद्धिके विचारसे करो ३१ इतिश्री

महाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्मे वासुदेव नारदसंवादे अशीतित
मोध्यायः ८० ॥

भीष्मउवाच एषा प्रथमतो वृत्तिर्द्वितीयां शृणु भा
रत यः कश्चिज्जनयेदर्थं राज्ञा रक्ष्यः सदा नरः १

भीष्मउवाच हे भारत जो राजाको प्रथम वृत्तिकर्ने वह वृत्ति बंधुजनो
के वशीकारवृत्ती सो कहीहै अब अमात्य जनजोहै अधिकारीलोक
उन्हके वशीकारवृत्तिको कहतेहै उसको श्रवणकरो हे युधिष्ठिर
जैसे बंधुवर्गको मिष्टानदानक्षमा अकपटता अक्रूरता सन्मान
करके मंत्री अधीकारी लोकोकोभी वशीकारकरणा योग्यहै और
कोशखजानेकी वृद्धिकरणेहारेको सभसे अधिक माननेयोग्यहै १ ॥

ह्रियमाणममात्येन भृत्यो वा यदि वा स्वतः
यो राजकोशंनश्यन्त माचक्षीत युधिष्ठिर २

जोनसा पुरुष राजाके कोशखजाना हरणेहारे मंत्री अधिकारीको रा
जाके प्रतिकहै सोभी राजाने वृत्तिदानकर्के पोषणकियाहोवे अथ
वानही पोषण कियाहै २ ॥

श्रोतव्यमस्य च रहो रक्ष्यश्चामात्यतो भवेत् अ
मात्या ह्युपहन्तारो भूयिष्ठं घ्नन्ति भारत ३ ॥

हे भारत उसका वचन राजाने सभसे रहस्य एकांतविषे श्रोतव्य
है और उस पुरुषको मंत्री अधिकारी जनोसे यत्नसे रक्षणीयहै जो मं
त्रीलोक राजधनको हरणकरनेहै सो अनेक यत्नोकर्के उस पुरुष
को मारदेनेहै ३ ॥

राजकोशस्य गोप्तारं राजकोशविलोपकाः स
मेत्य सर्वे बाधन्ते स विनश्यत्यरक्षितः ४ ॥

जोनसा पुरुष राजाके कोशखजानेकी रक्षाकरताहै उसको राज
कोशकोलूटनेहारे सभही लोकसंमतिकर्के बाधाकरतेहै जो राजा
से उसकी रक्षानही बनेतो राजकोशका रक्षाकारी जन विनष्टहोजा
ताहै ४ ॥

अत्राप्युदाहरन्तीम मितिहासं पुरातनम् मु
निःकालकवृक्षीयः कौशल्यं यदुवाच ह ५

अब इहां एक पुरातन इतिहासको उदाहरणकहतेहो एककाल
कवृक्षीय मुनिभयासो कौशल्य राजाको जोवृत्तांतको कहताभया उ
सको सावधानतासे सुनो ५ ॥

कोशलानामाधिपत्यं संप्राप्ते क्षेमदर्शिने
मुनिःकालकवृक्षीयः आजगामेति नः श्रुतं ६

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
प॰

50

हे भारत कोशल्यराजा अपनेराज्यव्यवहारके क्षेमकल्याणको दर्शन
वांछा इसको कालकहती यमुनि आइप्राप्तहोताभया यहहज्ञान
हमने सर्वसुनाहै ६ ॥

सकाकंपंजरेबद्धा विषयंक्षेमदर्शिनः सर्वं
पर्यचरद्युक्तव्यवहारार्थे पुनःपुनः ७ ॥

सो मुनि एक काकको पंजरेमो वंधककें क्षेमदर्शीना मवाली
कौशल्य राजाके संपूर्ण देशकी व्यवहारहत्विज्ञानवास्तेवारंवार
विचरताभया ७ ॥

अधीधंवायसीविद्यांशंसंतिममवायसाः
अनागतमतीतंच यच्चसंप्रतिवर्तते ८ ॥

सो मुनि काकसंयुक्त पंजराको साथ लेकर सर्वत्र सर्वलोकोंको
कहताभया जिसको त्रिकाल ज्ञानकी इच्छाहोवे सो सभही काक
भाषकी विद्याको अध्ययनकरो यह मेरा काकजोहै सो भूत भवि
ष्यत वर्तमानके संपूर्णज्ञानको कहदेताहै ८ ॥

इतिराष्ट्रेपरिपतन् बहुभिःपुरुषैःसह सर्वे
षां राजयुक्तानां दुष्कर्म परिदृष्टवान् ९

इस प्रकारसो मुनि कहताहै सर्वत्र विचरताहै कौतुकदर्शी बहुत
जनसे युक्तहोताहै जेते राजकार्य नियोगवाले अधिकारीलोक है
उन्हकेराजद्रव्यहरणा दुष्टकार्यको सर्वप्रकार से सर्वत्रजानताभया ९

स बुद्धानस्य राष्ट्रस्य व्यवसायांहि सर्वशः रा
जयुक्तापचारांश्च सर्वान्बुद्धानन्ततः १०

संपूर्ण राज्यके व्यवहार व्यवसायको जानकर और राजाके नियोगीज
नोविषे राज्यद्रव्याप हारादि उपचारोकोभी जहां तहांसे जानकर १०

ततः सकाकमादाय राजानंद्रष्टुमागमत् स
र्वज्ञोस्मीतिवचनं ब्रुवाणःसंशितव्रतः ११

इसके अनंतर सो मुनी राजाके नगरको आवताभया राजानव इ
सको कौतुक देषणेको आवताभया इसीका कालमो इंद्रियोके
संयम युक्त सो कहताभयामें त्रिकालज्ञानका सर्वज्ञहूं ११ ॥

स स्म कौशल्यमागम्य राजामात्यमलंकृतं
प्राहकाकस्यवचनाद मुत्रेदं त्वयाकृतं १२

हे राजन् सो काकपक्षी संयुक्त मुनी कौशल्य राजा समेत बेठे संप
राशोभा युक्तराजमंत्रीको कहताभया यहमेराकाककहताहै तेने
अमुकस्थानमो पना धनराजाकाचोरी कियाहै इसमो मेरावचन
अन्यथा नहीहै १२ ॥

अशौवासौचजानीते राजकोशस्त्वयाहृतः
एवमाख्याति काकोयं तच्छीघ्रमनुगम्यतां
यहकाकहै पही इसवार्ताको जानताहै जो तेने राजा ॥ १३ ॥
काकोशखजानालियाहै इसप्रकार यहकाककहताहै तेने कोश
खजाना राजाका जहांधराहै तहांसे शीघ्र इहां प्राप्तकरो १३ ॥
तथान्यानपि सप्राह राजकोशहरांस्तदा न
चास्यवचनं किंचिद्वितथं श्रूयते क्वचित् १४
हे राजन् इसीप्रकार और बीजो राजाके कोशहारी मंत्रीजनहै ति
न्होंकोभी कहताभया उसकावचनकहाकही कोईभी मिथ्यानही
श्रवणहोता १४ ॥
तेन विप्रकृताः सर्वे राजप्रकाः करोद्दरु त
मस्याभि प्रसमस्य निशिकाक मवेदयन् १५
हे कुरुश्रेष्ठ उसमुनीते काकवचनसे सभही राजाके अधिकारी
अपने प्रतिबिगाडदिये जब अंधेरी रात्रिमो निद्राको प्राप्तभया
तबरात्रिमोही उसके काक पंछीको पंजरामोही बाणकर्के वेद
करतेभये काककोबाणकर्के मारदेतेभये १५ ॥
वायसं त विनिर्भिद्य दृष्ट्वा बाणेन पंजरे प्र
भाते ब्राह्मणो वाक्यं क्षेमदर्शनमब्रवीत् १६
प्रातकालमो मुनिकाकको पिंजरामो बाणकर्के वेधा देखकर्के
सर्वोक्तकालमो राजा क्षेमदर्शीको सोमुनिवचनको कहताभया १६
राजंस्त्वा मभयं याचे प्रभुं प्राणधनेश्वरं अनु
ज्ञातस्त्वया ब्रूयां वचनं भवतो हितं १७ ॥
हे राजन् तुम सभके प्राणधनोके ईश्वरहो प्रभुहो मै तुमसे अभ
यदानयाचनकरताहूं आप आज्ञाकरो जो मै आपका हितवचनको
कहताहूं १७ ॥
मित्रार्थं मभिसंनम्रो भक्त्या सर्वात्मनागतः
अयं तवार्थो क्रियते योब्रूयादक्षमान्वितः १८
राजा सभको प्राणधनकी पालनेसे मित्रहोताहै ऐसे जगतके मि
त्रभूत राजाकी भक्तिकर्के अपना सभही अर्थत्याग कियाहै इस
प्रकारसे जोकोई तुमको आपप्राप्तहोवे आनकरकहे यहतस्कर
अर्थी हर लियाहै इसप्रकार द्रव्यहरणेकी क्षमात्यागकर्के कहता
है उसविषे क्षमा कोई नहीकरता १८ ॥
संबुबोधयिषुर्मित्रं सदश्वमिव सारथिः अ

तिमन्युप्रसक्तोहि प्रसह्यहितकारणात् १८
सोकैसे सर्वले खोटे मित्रोको भेदबुद्धिकरणचाहताहे जैसेउन्मत्तघो
डेको सारथीखोटे मार्गसे शुभमार्गविषे प्रवृत्तकरणचाहताहे ऐसा
पुरुष सभके प्रतिकोपसंयुक्तहोताहे उसने सभसेहठकर्के स्वा
मीका हितकहाहे १९ ॥

तथाविधस्यसुहृदा हितकामस्यविजानता ऐ
श्वर्यमिच्छतानित्यं पुरुषेणावमर्षिता २०
उसविषे सुहृतजानकर स्वामीने अपनी हितकी नित्यवांछाक
र्के क्षमाकरणेयोग्यहे काककी न्याई प्रमादकर्के उसको और अप
ने अविचारी मित्रहे उन्हको नहीं घातकरणेयोग्यहे यत्नसे उस
की रक्षाकर्तव्यहे और हितवचन उसका श्रोतव्यहे २० ॥

तंराजाप्रत्युवाचेदं यत्किंचिन्मांभवान्वदेत्
कस्मादहंनक्षमेयमाकांक्षन्नात्मनोहितं २१
हे युधिष्ठिर ऐसावचन सुनकर क्षेमदर्शी राजा कौशल्य उसमुनी
को वचनकहताभया जो आपमित्रताके हितसे ऐसेवचनकोह
मारे बांधवोके प्रतिभी कहोतो अपनेहितकी वांछासे तुम्हारे ऐ
से वचनको सुनकरतुमको क्यों क्षमानहीं करोंगा २१ ॥

ब्राह्मण प्रतिजानेते प्रब्रूहि यदिच्छसि करि
ष्यामिहितेवाक्यं यदस्माद्विप्रवक्ष्यसि २२
तुमब्राह्मणहो मे तुमको हितवचन कहनेकी आज्ञाकरताहूं
जो तुममोको हितवचनकहोगे उसवचनको मे हित जानकरो
गा हे विप्र आप अर्थीकहो करकहो २२ ॥

मुनिरुवाच राजन्जानन्नहंश्चापि भृत्यानांतेभया
निव भयाहंतिसमायातो भवतोंतिकमागमं २३
मुनिरुवाच हे राजन् मे तेरे भृत्योकोपापवृत्ति अपाप वृत्तिजानक
र पापीभृत्योसे तोकोभययोगोकी प्राप्ति जानकर पापीभृत्योकी वृ
त्तिकहनेको तुम्हारे समीपको आयाहूं जोइहांवृत्तांतभयाहे ऐ
से वृत्तांतसे मोको राजसेवी जनोकादोषस्मरणभयाहे जोतमा श्रा
हे ऐसी गतिलोको राजाकी सेवाप्रनाहत्तिजैसी पराऽन्नभोजनवृत्तीहे
श्रागेवोक्तस्तदोषोयमाचार्यैर्नृपसेविनो अग
तीकागतिस्त्वेषा पापाराजोपसेविना २४ ॥ २३
जिसको राजसेवाकीवृत्तिहे उसको राजारूपी राजमंत्रीरूपी सर्पो
के साथनित्यसमागमबनाहे जोनसेराजालोकहे तिन्हकेबडुतमि
त्रजैसे अमित्रशत्रुसदा आसपासहोतेहे और हितकारी मित्रभी आ

सपाससदाहोतेहे २४ ॥

आशीविषेष्वनत्याङ्गः संगमेयस्यराजभिः
बहुमित्राश्चराजानो बहुमित्रास्तथैवच २४

हे राजन् राजसेवी जनोके राजाके मित्रोसे अमित्रोसे सभसे सदाभय
होताहे २४ ॥

नेभ्यःसर्वेभ्यएवाङ्ग भयंराज्ञोभिजीविनाम्
नेषेवा राजतोराजन् मुहूर्तादेवभीर्भवेत् २५

और सभकोही राजासे भयमुहूर्तमात्रसेभी होताहे जबराजा आ
ज्ञाकरेतत्कालही प्राणांतकारी भयहोजातेहे २५ ॥

नैकान्तेनाप्रमादोहि शक्यःकर्तुं महीपतौ
नतुप्रमादःकर्तव्यः कथंचिद्भूतिमिच्छता २६

राजाने एकभृत्याविषे अथवा सर्वभृत्योविषे सदाएकांत प्रमाद
जो विश्वासापनहोकर गुणदोषज्ञानहीनतही प्रवृत्तहोना और
सदेवभृत्योविषे प्रसन्नतासे प्रसादभी नहीकरणा अपनी यथा
प्रयत्नसेसंपदाकी वांछाकर्के प्रमादमो २६ ॥

प्रमादाद्धिस्खलेद्राजा स्खलितेनास्तिजीवितं
अग्निंदीप्तमिवासीदे द्राजानमुपशिक्षितः २७

और प्रमादमो सावधानता कर्तव्यहे जो राजा प्रमादसे राजनीति
से चलितहोवेतो उसको जीवनीकाभी संशयहोताहे सेवाधर्मकी
शिक्षावाले पुरुषने प्रदीप्तअग्निके समान अति निकटाको अति
विश्वासको त्यागकर्के राजाकी सेवाकर्तव्यहे २७ ॥

आशीविषमिवक्रुद्धं प्रभुंप्राणधनेश्वरम् य
त्नेनोपचरेन्नित्यं नाहमस्मीति मानवः २८

हे राजन् राजाको अपने प्राणधनोंका ईश्वरजानकर अतिक्रुद्ध
सर्पकीन्याईजाने यत्नकर्के सेवाकरे जीवनाशाको त्यागकर्के उप
कार सेवाको अभिमानकोभी त्यागकरे २८ ॥

दुर्व्याहृताच्छङ्कमानो दुःस्थितादुरधिष्ठितात्
दुरासिताद्दुर्व्रजिता दिंगितादंगचेष्टितात् २९

अपने पराके दुर्वाक्य से शंकाकरे दुष्टस्थानकी स्थितीसेभीशंका
करे दुष्टसेवनसेभीशंकाकरे और दुष्टताके पदार्थ भोगसेभी शं
काकरे दुष्टदेशकेगमागमसेभी शंकाकरे और दुष्टमनकी चे
ष्टासे शंकाकरे और दुष्टशरीरचेष्टासे भी शंकाकरे २९ ॥

देवतेवहिसर्वाग्नीन् कुर्याद्राजाप्रमादिनः

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
५२

52

वैश्वानरस्त्वकुद्धः समूलमपिनिर्दहेत् ३०॥

देवताके समान राजाको जानकर सर्वकार्योंको राजाके प्रमादसे रक्षा करे और राजाके प्रसादवास्ते सदा सेवा करे सो राजा प्रमाद करे तो अग्निकी न्याई कोप समूलही दग्धकरदेवे ३०॥

इतिराजन् यमःप्राह वर्तनेवन्तथैवनन् अ
यमभूयो समेवार्थे करिष्यामि पुनःपुनः ३१

इसप्रकार राजासे भयकहाहै सो भयशंका यथा तथा प्रकारही बनीहै और अपने मनविषे ऐसा निश्चयकरे जो मे अबसेभी अधिकमहाभारीसेवा कार्यको वार वार करोंगा ३१॥

ददातिस्महियोमात्या बुद्धिसाहाय्यमापदि
वायसस्त्वपमेराजन् नतुकार्याभिसंहितः ३२

और आपदाविषे भी राजाके साथ ऐसा अभिमान नही करे जो मेरा जैसा मंत्री राजाको आपदाके तरणवास्ते बुद्धीज्ञानके सहायको देताहै जैसे यहकाक हितकहनेके सहाय करकेभि विनाशको प्राप्त भयाहै ऐसेही मेभी विनाशकोप्राप्तहोवेगा इसप्रकारसे तुम्हारे मंत्री जनोसे भयको करताहुं ३२॥

नचमेत्रभवानार्यो नचतेषांभवान्प्रियः हि
ताहितांस्तुबुद्धेष्णा मापरोक्षमतिर्भवेः ये॰
त्वादानपरायेव वसंतिभवतोगृहे अभूति
कामाभूतानो नाटशोमेभिसंहितम् ३४

इहांमेनेतुम्हारेको दोषरोपकरकें निंदाकरणी योग्यनही जिन्होने हितकारी काकमरादियाहै उन्हको तुम्हारी प्रियताकहाहे हे राजन् आपइसप्रकार परोक्षशंकामनकरे पण्यस्तही शंकाकार्यको विचारकरे ३४ जोनसे मंत्रीलोक तुम्हाराकोशग्रहणविषे पराय णहे सो तुम्हारेगृहमो सदावासकरनेहे हमारे जैसेभृत तुम्हारी संपदाको कामनानही करने तिन्होविषे दुष्टमंत्री जनोने ऐसी मारणशंकामें ऐसी संमतिकी नीहै ३४॥

येवामवद्विनाशेन राज्यमिच्छन्त्यनेनरं श्री॰
नेवैरभिसंधाय राजन् सिध्यति वान्यथा ३५

जोनसे यहमंत्री आपके विनाशका लकेअनंतर आपकी राज्यसंपदाकी अखंडवांछाकरनेहे सो आपके और भी छिद्रदर्शी शत्रुजनोके संधिकरकें अन्यथाकारी होकर उन्हको राज्यप्राप्ति सिद्धहोवेगी इसमे अन्यथा शंकानहीहै ३५॥

तेषामहं भयाद्राजन् गमिष्याम्यन्यमाश्रमम्

नेहिमेसंधिनोवीणाः काकेनिपतितःप्रभो ३६
हे राजन् ऐसे यह तुह्मारे सहायकरणेहारे मंत्री लोकहे इन्द्रके भय
सेमे ओर हरदेशमें आश्रमकरणेको जाताहूं तिन्होनेही मेरे काकप
क्षीमो वाणकाप्रहार प्राप्तकियाहे ३६ ॥
छद्मकामेरकामस्य गमिनोयमसादनं दृष्टे
सेतन्मयाराजं स्तपोदीर्घेण चक्षुषा ३७ ॥
जो पुरुष कपट कार्यकी कामनावालीहे तिन्होकर्के कपटकार्यका
अकामी जो पुरुषही उसको यमलोककी प्राप्ती होतीहे यहवार्तादी
र्घदृष्टीसे तपोमयनेत्रकर्के देखाहे ३७ ॥
बहुनक्रझषग्राहांतिमिंगलगणाश्रुतो का
केनवालिशोनेमां यामनार्थ मरहुनदी ३८
हे राजन् यह तुह्मारी ऐसी राजनीतिकी नदीहे बहोतकपटी दुष्ट
कर्मकारी नक्रझषादि जलजीवगणोकर्के संकुलहे इसको मे मूढ
बुद्धि काकपक्षीके सहायमात्रकर्के कैसेतरजाताहूं जैसे काकप
क्षी मेराहे तैसे मेभी इसके मरणसे मृतही भयाहूं ३८ ॥
स्थाणवश्मकंटकवती सिंहव्याघ्रसमाकुला
दुरासदाडुष्प्रसहा गुहा हैमवती मिव ३९
वहोइयह तुह्मारी राजनीति हिमालयपर्वतका गुफा जैसी अग
म्यहे अगाधतमके अंधकारवालीहे जिसविषे कठोर प्रकृतिवाले
पाषाण कंटक अनेक दुष्टजीवहे और सिंहव्याघ्रतैसे अनेक भूतो
के संहारकारी दुष्टमंत्री जनहे महादुर्गमहे ओर महा असह्य दु
खमयकर्के प्राप्तभईहे ३९ ॥
अग्निना तामसंदुर्गं नौभिराप्यंच गम्यते राज
दुर्गावतरणेनोपायंपंडितापिविदुः ४० ॥
हे राजन् जहां अंधकार मयदुर्गमस्थानहे सो अग्निके प्रकाशक
र्के सुगमहोताहे ओर जहां जलकर्के दुर्गमस्थानहे सोनौका स
मूहके उपायकर्के सुगमहोताहे ओर जोनसा राजनीतिका दुर्गम
स्थानहे इसके तरणेके उपायको पंडितजनभी नहीजानते ४०
गहनंभवतोराज्य मंधकारंतमोन्विते नेह
विश्वसितेणाक भवतापिकृतोमया ४१ ॥
तामें यह तुह्मारा राज्यअतिदुर्गम महादुष्टमंत्री जनोंके अंधका
रकर्के परिपूर्णभयाहे इसमो आपराजाहो आपनेभी विश्वास
करणा अशक्यहेतो मेनेकहा इसमों विश्वास कर्तव्यहे ४१ ॥

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
५३

53

अतोनायंशुभोवासः तुल्येसदसतीइह वधो
हिवात्र सत्कृते दुष्कृते नचसंशयः ५२ ॥

इसविचारसे इहांवासकरणा शुभनहीहै जहांसज्जन असज्जन एक जैसे तुल्यसमानहै और जहां सत्कृतकर्मके कार्यमो शरीरकी वध फलसिद्धभयाहै तहां दुष्कृत कर्मकरणेमो वधका संशय नहीहै ५२ ॥

न्यायतोदुष्कृतेघातः सत्कृतेन कथंचन ने
हयुक्तं स्थिरंस्थातुं जवेनैवाव्रजेद्बुधः ५३

जहांन्यायमार्गकहकर्के दुष्टकर्मका घातफल भयाहै तहांसत्कृतकर्के कछुकैसेभी नहीबनता इहचिरकालस्थिरस्थिती नहीकर्ते यहे इहांसे बुधपुरुषवेगकर्केही चलाजावे ५३ ॥

सीतानाम नदीराजन् प्लवोयस्यां निमज्जति
तथोपमामिमांमन्ये वागुरां सर्वघातिनीं ५४

हे राजन् पृथिवीविषे एकसीतानामनदीहै सो सर्वोपायकर्के पार तरी नही जाती जिसविषे नौकादिक तरणके उपायसभही डूबजाते है उसके समान तुह्मारी नीति कोमैजानताहुं यह तुह्मारीनीति वधकीकी वागुराजैसी पाशबंधनकी जो बडीहै सर्वजीवोंकोघात करतीहै ५४ ॥

मधुप्रपातोहिभवान् भोजनं विषसंयुतम्
असतामिवतेभावो वर्ततेनसतामिव ५५

तुम राजा कैसेहो जैसे भ्रमरोंको मधुविषे मधुपानकेलोभसे तहांही शरीरपातहोजाताहै और जैसे विषसंयुक्त भोजनसे शरीरपात होजाताहै तैसेतुमारासंग देहपातकोकरताहै तेरावेषभाव असंतजनो जैसाहै संतजनोंके समान तेराभावनहीहै ५५ ॥

आशीविषैःपरिवृतः कूपस्त्वमसिपार्थिव
दुर्गतीर्थोबृहत्कूला कारीरावेत्रसंयुता ५६

तूं ऐसा राजाहै जैसे घोरविषधरोंकर्के परिवृतकूपहोताहै जैसीदुष्टनदीपाषाणप्रधानदेशाहोतीहै उसके उत्तरणेकामार्ग महादुर्गमहोताहै और तट उसके अतिविषमअति ऊचेहोताहै और पत्रहीन करीरादि कंटकी वृक्षोंकर्के सर्वत्रछायावाली होतीहै ५६ ॥

नदीमधुरपानीया यथाराजेंस्तथाभवान् ख
गध्रगोमायुयुतो राजहंससमोह्यसि ५७ ॥

जल उसका केवल मधुरहोताहै सो सभजीवोंको दुर्लभहोताहै

तैसाही आपविषे राजाभावहे जैसे श्मशानस्थान स्थान ग्टध्रशृगा
लादिमांसाहारी जीवोंकर्के व्याप्तहोताहे ऐसाही तूराजा बणाहे ४७

यथाश्रित्य महावृक्षं कक्षः संवर्द्धते महान् त
तथेनं संवृणोत्येव तमतीत्यचवर्द्धते ४८ ॥

यह तुम्हारे मंत्रीलोक ऐसी फलको तुमको प्राप्तकरेंगे जैसे महा
वृक्षको कक्षतृण आश्रयकर्के आपवृद्धि विस्तारको करताहे सोई क
क्षतृण अपनेविषे दावाग्निको वृद्धिको करताहे अपने साथही वृक्षकोभी
दाहकरादेताहे तैसे यह तुम्हारे मंत्रीलोक तुम्हारे आश्रयकर्के य
नसंपदाकी वृद्धिपाइकर तुम्हारी सर्वसंपदाके हरणेमो पापक
र्मरूपी दावाग्निसे व्याप्तभयेहे इन्हकेसाथही तुमनेभी नाशको प्रा
प्तहोताहे ४८ ॥

तेनैवाश्रयनेनैनं दावोदहति दारुणः त
थोपमात्यमात्यास्ते राजंस्तान्विशोधय ४९

सोवृक्ष उसीकक्षके आश्रयइंधनकर्के दावाग्निकर्के दग्धहोताहे तैसेही
हे राजन् अपनेमंत्री लोकोको शुद्धकर्के आपभी शुद्धहोवेगा ४९

त्वयाचैव कृताराजन् भवता परिपालिताः
भवंतमभिसंधाय जिघांसंति भवत्प्रियं ५०

यहमंत्रीलोकतुमनेही आपअधिकारी कियेहे तैनेही संपदा दा
नकर्के परिपालन कियेही अब तुम्हारेही वलके आश्रयको पाइक
र तुम्हारे प्रियकरणेहारेको माराचाहतेहे ॥ मेने तुम्हारे पास
शंकाकर्के पीडितहोकर निवासकियाहे जैसे सर्पकर्के युक्तगृह
मो वासकियाजावे जैसे वीरपत्नी पतिव्रताहे सो जार पुरुषको गृ
हमो देवरानीकर्के वासकरतीहे ५० ॥

उषितंशंकमानेन प्रमादंपरिरक्षिता अंतः
सर्पइवागारे वीरपत्न्याइवालये ५१ ॥

तुम्हारे राज्यकाआचार विचारशीलज्ञानकी इच्छाकर्के मेनेवास
कियाहे राजाकेधनहारी जीविकावाले लोकसभही जानलियेहे
राजाजितेंद्रिय कहीहे इसराजाने कामादिदोष कदाचित्जीतेहे ५२

शीलंजिज्ञासमानेन राजश्चसहजीविनः
कश्चिज्जितेंद्रियोराजा कश्चिदस्यानरागिताः ५२

मंत्रीजनोराजा कछुप्रियहे ओर राजा कोभी प्रजाअतिप्रियहे कछु
ऐसी प्रकृतिको जिज्ञासाकर्के मेतुम्हारे राजमंडलको प्राप्तभयाहू ५२

कश्चिदेषांप्रियोराजा कश्चिद्राज्ञः प्रियाःप्रजाः
विजिज्ञासरिहप्राप्त स्तवाहंराजसत्तम ५३

ऐसाोमें तुह्मारी सब संपदाकी दर्शन वांछासे आयाहूं मोको तुह्मारी
सबसंपदा ऐसी प्रीतीकों करतीहै जैसे क्षुधातुर पुरुषको भोजनका
दर्शन प्रीतिकरतीहे तुह्मारे अमात्यलोक मेरीस्थितिकों रुचिनही
करते जैसे तृषारहित पुरुषको जलपान रुचिनहीकरता ५३ ॥

नत्वमेरोचतेराजन् क्षुधितस्येवभोजनं अ
मात्या मेनरोचंते विटस्यस्यथोदकम् ५५

मोको तुह्माराहितकारी जानकर मंत्री जनोने मेरेविषे दोषकियाहे
और कारणकोईनहीहे इसमो संशयनहीहे ५५ ॥

भवतोपिकृदित्येव मयिदोषोहितैःकृतः वि
द्यते कारणंनान्यदिति मेनात्रसंशयः ५६

मेभी तुह्मारे मंत्रीजनोकाद्रोहकारी नहीहों उन्होका मेने दोषदर्शन
हेकियाहे जोपुरुषदुष्टहृदय होवेसो अरीहोताहे दुष्टहृदय अरीसे
कैसा भयकरणा जैसाभयदुष्टभंगवाले सर्पसेभयहोताहे ५६ ॥

नहितेषामहंद्रुग्धस्तेषांदोषदर्शनम् अ
रेर्हिदुष्टचित्ताद्वैयं भयदुष्टादिवोरगात् ५७ रा

जोवाच भूयसापरिहारेण सत्कारेणचभूयसा
पूजितोब्राह्मणश्रेष्ठ भूयोवसगृहेमम ५८

राजोवाच हे ब्राह्मणश्रेष्ठ मेआपको बहोतप्रकारकी संपदाकी प्र
जाकर्के मानसत्कारके पूजाकरताहूं तुम हमारे गृहमों प्रसन्नतासे
फेरनिवासकरो ५८ ॥

येत्वांब्राह्मण नेच्छंति तेनवत्स्यंतिमेगृहे भ
वतैवाहितास्तेयं यत्रदेषा मेननरम् ५९

हे ब्राह्मण जो जो अधिकारी लोकतोकों उत्तम प्रियकारी नही मा
नेगे सो सो हमारे गृहमोंवासनही करेंगे उन्हका भेद तुमनही
जानलेना ५९ ॥

यथाप्यात्वयनोदंडो यथावत्सुकृतंकृतं त
था समीक्ष्य भगवन् श्रेयसेवितिपुंत्वमो ५९

जैसे प्रकारकादंड उन्होको करीजावेगा जैसा कियेहे तदरसुकृतः
कलहोवे तेसा विचारकर्के आपने मोकोंकहना हेभगवन् आप
ही मोको कल्याणमार्गवास्ते नियोगकरो ५९ ॥

मुनिरुवाच प्रदर्शयन्निदंदोष मेकैकं त्रसदुर्व
ली ततःकारणमात्ताय पृकषपृकषं जहि ६०

मुनिरुवाच हे राजन् यहजो वचकामनासे कोपदंडदोष सो कि
सीकोभी प्रथमनही दिखावना एक एकमंत्रीको क्रमसे संपदाह

रणोकर्के दुर्बलकरो तदनंतर सभका अपराधकारण जानकर्के एक
एक पुरुष प्रति अपराधी जानकर सभको देहदंडकर्केमारो ९० ॥

एकदोषाद्धि बहवो मद्दीपुरपिकंटकान् मे
त्रभेदभयाद्राजंस्तस्मादेवंब्रवीमिते ९१ व
यंत्वब्राह्मणानाम सद्दंडाःकपालवः स्व
स्तिचेच्छामभवतः परेषांचयथात्मनः ९२

जो तुम एक एकको क्रमकर्के दंडकरोगे तो सभही एक संमतिक
र्के अपने कंटकोंको सभकोही एकवारही मारदेवेगा और मेरेजैसे
एकाकी कंटकजनोंकोकहावाकी छोडेगे इसवास्ते पृथक् पृथक्
ग्रहणकर्के दंडकर्तव्यहै ९२ ॥

राजन्नात्मानमाचष्टे संबंधी भवतोस्त्यहं सु
तिःकालक हतीय इत्येवमभिसंततिः ९३

हे राजन् हमतो अबब्राह्मणहतीहै सदास्तुद्धशीलहै सदाही द
यावानहै तुमहारेकोस्वस्तिकल्याण चाहतेहै जैसा अपने कोक
ल्याणचाहताहै तेसे परायेकोभी कल्याणचाहतेहै हे राजन् अब
मे अपनेकोभी कहताऊं मे कालकहतीय ब्राह्मणऊं तुह्मारा सर्व
कालका संबंधीहो ९३ ॥

पितुःसखाच भवतः संमतः सत्यसंगरः या
पत्रेभवतोराज्ये राजन् पितरि संस्थिते ९४

तुह्मारे पिताकाभे सखाऊं सत्यधर्मकी रक्षाकरणेहाराऊं जब
तुमको राज्यप्राप्तभया पिता तुह्मारा स्वर्गकोंगया ९४ ॥

सर्वकामान्परित्यज्य तपस्तप्तं तदामया स्ने
हात्वांत्वब्रवीम्येतन्माभूयोविभ्रमेदिति ९५

तवमे सर्वभोगोंको त्यागकर महातपको करताभया हर्वले संबं
धके स्नेहकेसंवंधसे पेसामे तुमको कहताऊं वहोड पेसा प्रमाद
का विभ्रम न होवे ९५ ॥

दृष्टेदृष्टाद्वःखसुखे राज्यंप्राप्य यदृच्छया रा
ज्येनामात्यसंस्थेन कथंराजन् प्रमाद्यसि ९६

हे राजन् अमात्योंको अधीनतासे सभके दुखसुख देखकर औ
र राज्यको पायकर यदृच्छा व्यवहारतुमकरो अमात्यलोकोंके
गुणदोषविचारनहींकरोगेतो केवल राजा नामसे ताको पाइकर
कों प्रमादकरताहै ९६ ॥

ततोराजकुलेमंत्री संजज्ञे भूयसापुनः पुरो

शां॰
रा॰ ध॰
टी॰
५५

55

हितकुलेचैव संग्रामेब्राह्मणर्षभे ८७ ॥
हे युधिष्ठिर तबसो कालकवृक्षीय ब्राह्मण राजकुलमो मंत्रीभया
पुरोहित कुलकोभी प्राप्तभयाहे बहोउब्राह्मणोविषे श्रेष्ठभयाहे ८७
एकछत्रां महींकृत्वा कौशल्याययशस्विने मु
निःकालकवृक्षीयईजेक्रतुभिरुत्तमैः ८८ ॥
हे भारत सो कालकवृक्षीय ब्राह्मण कौशल्यराजाकामंत्रीभया पुरो
हितभी भया कौशल्य राजाको एकछत्रा पृथिवीके राजाकर्के राज्याकी
जय हृद्धीवास्ते उत्तम यज्ञोकर्के यजनकरताभया ८८ ॥
हितं तद्वचनंश्रुत्वा कौशल्योप्यजयन्मही त
थाव कृतवान्राजा यथोक्तं तेनभारत ८९
इतिश्री महाभारते शांतौ राजधर्मेषु अमात्य
परीक्षायां कालक वृक्षीयोपाख्याने ८२ ॥
राजा कौसल्यभी उसके हितवचनसुनकर्के राजधर्मकरके पृथिवी
को जीतलेताभया जैसेकालवृक्षीय मुनीने हितवचन कहा तैसेही रा
जनीतिको पृथिवीमो प्रवृत्तकरताभया ८९ इतिश्री म॰ भारते शां॰ प
र्वणि अमात्यपरीक्षायां कालकवृक्षीयोपाख्याने ८२ ॥
युधिष्ठिरउवाच सभासदःसहायाश्च सुहृदश्च
विशांपते परिच्छदास्तथामात्याःकीदृशाःस्युः
पितामह १ ॥
युधिष्ठिरउवाच हे पितामह हे विशांपते रा
जाके सभासद जोहे सभाविषे बैठनेवाले
कैसे होवे और व्यवहारदर्शनेवाले सहायकैसेहोवे और राजाके
सज्जन कैसे होवे और सेनाके परिच्छद सामग्री कैसेहोवे और से
नाके अमात्य अधिकारीलोक कैसेहोवे यह सभहीके लक्षण
आपमोको कहो १ ॥
भीष्मउवाच ह्रीनिषेवास्तथादांताः सत्यार्ज
वसमन्विताः शक्ताःकथयितुंसम्यक्तेनव
स्युःसभासदः २ ॥ भीष्मउवाच जोनसे पुरुष सभाविषे
अयोग्यव्यवहारके वचनकी लज्जाधारीहोवे और इंद्रियोकी वृत्ति
केदमनशीलहोवे और सत्यवचनवालेहोवे और कपटकुटिलता
के त्यागवाले आर्जवगुणसंपन्नहोवे और व्यवहार निर्णय कह
नेको समर्थहोवे ऐसे सभाके बैठनेहारे सज्जन लोकतेरे सभास
दहोवे २ ॥
अमात्यांश्चातिशूरांश्चब्राह्मणांश्चबहुश्रुतान्
सुसंतुष्टांश्चकौंतेय महोत्साहांश्चकर्मसु ३

हे भारत अमात्यजोहे व्यवहार दर्शनकरणेहारे उन्नको ऐसेको तू
करणेके वांछाकरे जोनसे सूरमाहोवे ब्राह्मणहोवे और दानमानकी
शोभा संयुक्तहोवे और संतोषवालेहोवे और कार्यसाधनेविषेमहा उ
द्यमके उत्साह वाले होवे ३ ॥

प्रज्ञान्सहायोहियेषाः सर्वास्वापत्सुभारत कु
लीनःपूजितोनित्यं नहिशक्तिं निगूहति ४ ॥

ऐसेसहायकारी पुरुषोको तू आपदाकालमेभी अपनेसाथहेसदा
वांछाकरे हे राजन् ऐसापुरुष तुमारा परमसुहृदहोवे जोनसा कु
लीनहोवे सर्वप्रकारसे सभलोकोने मानसत्कारसे पूजितहोवे और
अपनी ज्ञानविचार पुरुषार्थशक्तिको गूहनहीकरे प्रगट करे ४ ॥

प्रसन्न मप्रसन्नंवा पीडितं हत मेववा आव
र्तयन्तिभूयिष्ठं नदेवस्त्वनुपालितम् ५ ॥

और स्वामी मन प्रसन्नहोवे पीडाको प्राप्तभयाहे और शत्रुगणोकर्के ह
तभयाहोवेतोभी अपनी पुरुषार्थ शक्तिकर्के वहोत सावधान समर्थ
करदेवे जो कार्य प्रारंभ कियाहे उसकर्के सिद्धिवास्ते सदास्वामीके अ
नुसारही होनाहे ऐसाही सुहृदपुरुष तमुको सदासेवाकरे ५ ॥

कुलीनादेशजाःप्राज्ञा रूपवन्तो बहुश्रुताः प्र
गल्भाश्चानुरक्ताश्च तेनवस्युः परिच्छदाः ६ ॥

हे राजन् जोनसे पुरुष उत्तम कुलके प्रधानहे और उत्तम प्रसिद्ध दे
शके जन्मवालेहे और अपने व्यवहारके प्राज्ञहोवे और रूपआकारवा
लेहे और वहोतव्यवहारज्ञानके श्रोताहे संग्रामकार्यकरणेमो प्रगल्भ
हे और अपनेस्वामीकी भक्तिमो अनुरागवालेहे ऐसी तुमारी सीनाके
प्रधान सीनापतिहोवे ६ ॥

दौस्कुलेयाश्च लुब्धाश्च नृशंसानिरपत्रपाः तेत्वा
ताननिषेवेयु यावदार्द्रकपाणयः ७ ॥

हेतात हेराजन् जोनसे दुष्टकुलके है और प्रतिलोमवालेहे और
क्रूरस्वभाववालेहे निर्लज्जहे ऐसेपुरुषतोको धावकादिलोपनसा
मग्रीकर्के सदालिमहस्तही सेवाकरे जोनसे पुरुषकार्यविना शुष्क
हस्तहोवेतो वहोउ विकारकार्य कोही करतेहैं ७ ॥

कुलीनान्शीलसंपन्ना निंगितज्ञाननिष्ठुरान्
देशकालविधानज्ञान्भर्तृकार्यहितैषिणः ८

हे राजन् जोनसेपुरुषकुलीनहोवे शीलआचार संपन्नहोवे और स
भके चित्तके अभिप्रायके वेत्ताहोवें और कठोर स्वभावहोवे और देश
कालविधीके ज्ञाताहोवे और भर्ताको कार्यविषे सदा हित चिंतक
होवे ८ ॥

श्री·
रा·ध·
टी·
५८

56

नित्यमर्थेषु सर्वेषु राजा कुर्वीतमंत्रिणः अर्थ
मानार्घसत्कारैर्भोगैरुच्चावचैःप्रियैः ९ ॥

ऐसे पुरुषोंको राजसेहमेशा राजकार्योविषे मंत्रीकरे हे राजन् जौ
नसे पुरुष द्रव्यदानमान सत्कारोकर्के और जो खानपानादि प्रियभो
गोकर्के संपन्नहे ९ ॥

यानर्थभाजोमन्येथास्तेतेस्युः सुखभागिनः
अभिन्नवृत्ताविद्वांसः सद्वृत्ताश्चरितव्रताः न
मो नित्यार्थिनोजह्यु रक्षुद्राः सत्यवादिनः १०

ऐसे पुरुषोंको तुम अपने तांबूलादि चर्वण पदार्थोंके धारणेऔर्पजा
नेगा सो तोको अपनी सेवाकर्के सुखभागी करेंगे हे राजन् जौनसे पुरु
ष भेदबुद्धिके आचार हतिवाले नहीहे और वेदविद्याके वेत्ताहे और वर्ण
धर्मके आचार हतिवालेहे और व्रतधारीहे और स्वल्पहृत्तिनहीहे सत्यवा
दीहे ऐसे नित्यदानवास्ते तुह्मारेको प्रतिपी लोकनित्य प्रतिसेवाकरे १०

अनार्यायेनजानंति समयंमंदचेतसः तेभ्यः
परिज्ञः संख्या येचापि समयच्युताः ११ ॥

जौनसेपुरुष शीलसंतोष त्यागकर्के खोटेस्वभाववालेहे और दानप्रदा
नके देशकालको नहीजानते और शास्त्रज्ञानविना मंदबुद्धीहे और अप
ने वर्णाश्रम धर्मकी कालमर्यादाको त्यागदेतेहे ऐसे अपात्रजनोको दा
नधर्म करणेमे तुमने निंदाकर्के त्यागकरदेवा ११ ॥

नैकमिच्छेद्गणंहित्वा स्याच्चेदन्यतरग्रहः यस्ते
कोबहुभिःश्रेयान् कामंतेन गणंत्यजेत् १२

हे राजन् एककुलके एक गणजैसे दशवीसजनोका गणहे उसमे
एक गणजे दूसरा पुरुष मिलजावे तो एककोही मुख्यता करणेकी
इच्छानकरे जो तुमा वहोतेके गणमे एकगणसंपदाकर्के अधिकहोवे
तो वहोतेगणको त्यागकर्के एक पुरुषको मुख्यकरलेवे १२ ॥

श्रेयसोलक्षणंचैतद्विक्रमोयस्यदृश्यते की
र्तिप्रधानोयश्चस्यात्समये यश्च तिष्ठति १३

उत्तम पुरुषका यही उत्तमलक्षणहे जिसमे पराक्रम अधिकहोवे
और अपनी पुरुषार्थ कीर्तिको प्रधानजाने और देशकालकी मर्यादामे
दृढस्थितीकरे १३ ॥

समर्थान्पूजयेद्यश्च नास्पर्धैःस्पर्धनेबुधः न
चकामाद्भयात्क्रोधाल्लोभाद्वाधर्ममुत्सृजेत् १४

और गुणपराक्रम सामर्थ्यवाले जनोंको सभसे अधिकपूजा मानकरे जो
गुणक्रमसे अपने समाननहीहे उन्हकीस्पर्धानहीकरे और कामसे
क्रोधसे भयसे लोभसे धर्मत्यागनहीकरे १४ ॥

अमानी सत्यवान् क्षान्तो जितात्मा मानसंयुतः
सते मंत्र सहायःस्यात् सर्वावस्था परीक्षितः १५
अपनी गुणसंपदाका अभिमान कर्तव्यता विना नहींकरे पुरुषार्थपरा
क्रमको सहारे और दुर्गुणोकी प्रवृत्तिसे मनको वशकरे अपने कुलके
मानको जाने इसप्रकारका पुरुष देशकाल अवस्थामो सदा परिचय
वालाहोवे सो तुमारे मंत्रकरणेको सहाय करताहोवे १५ ॥
कुलीनः सत्यसंपन्नस्तितिक्षुर्दक्षआत्मवान्
शूरःकृतज्ञः सत्यश्च श्रेयसःपार्थलक्षणम् १६
जो पुरुष उत्तम कुलकाहोय कुलके आचारसे संपन्नहोवे सहनशी
लहोवे कार्यव्यवहारस्थानमो चतुरहोवे और जितचित्तहोवे शूरमाहो
वे कार्यके उपायका ज्ञाताहोवे और उपकारकाकृतज्ञहोवे और मन
सावाचा कर्मणा सत्यधर्मवालाहोवे यहउत्तम पुरुषके लक्षणहै १६
तस्यैवंवर्तमानस्य पुरुषस्य विजानतः अ
मित्राःसंप्रसीदंति तथामित्री भवन्त्यपि १७
हे राजन् इसप्रकार बुद्धिज्ञानसंपन्न पुरुष अपने पुरुषार्थसे व्य
वहारमो वर्तमानहोवे उसको अमित्रभी प्रसन्न होतेहै सभही मित्र
भी होतेहैं १७ ॥
अतऊर्ध्वममात्यानांपरीक्षेतगुणागुणं संय
तात्माकृतप्रज्ञो भूतिकामश्चभूमिपः १८ ॥
इसप्रकार उत्तमपुरुषोकी परीक्षाकरकेराजा अमात्यमंत्री जनोके
भी गुणअगुणोकी परीक्षाभीकरे राजाकृतात्माहोवे गुणसंपदाका
अभ्यासकारीहोवे और जितचित्तहोवे गुणसंपदाकी समृद्धीकोवां
छाकरे सोउत्तमजनोकी परीक्षाकरे १८ ॥
संबंधिपुरुषैराप्तै रभिजातैःस्वदेशजैः अ
हार्यैरव्यभिचारैःसर्वशःसुपरीक्षितैः १९ ॥
जोनसे पुरुष उत्तमसंबंधवालेहै और विश्वास संपन्नहै और उत्तम
कुलीनहै और गुण संपदाकर्के प्रसिद्ध कुलकेहै और अपनेदेशनिवा
सीहै और धनसंपदाके लोभसे कदापि वशनही होते और स्वामीत्याग १९
के व्यभिचारसे रहितहै सर्वप्रकारकी दोषाभाव प्रकृतिसे परीक्षितहै
यौनाःश्रौताश्चयामौलास्तथैवाप्यनहंकृताः
कर्तव्याभूतिकामेन पुरुषेणबुभूषता २० ॥
ऐसे उत्तम जनोकेसाथ जिन्होका विवाहादि नाता संबंधसदा बना
है और वेदविहित श्रौताचार संपन्नहोवे जिन्हकी परंपरासे उत्तम
मूलप्रतिष्ठाबनीहै और अहंकार रहितहोवे ऐसे पुरुषराजाने अ
पने सदा ऐश्वर्य वृद्धिवास्ते और यशकल्याणकी वांछाकर्के अपने मं
त्री अमात्य कर्तव्यहै २० ॥

श्री
रा॰ पं॰
टी॰
५२

57

येषां वैनयिकी बुद्धिः प्रकृतिश्चैव शोभना ते
जोधैर्यं क्षमाशौच मनुरागास्थितिर्धृतिः २१

हे राजन् जिन्हकी बुद्धि विनयज्ञानसंपन्नहे और जिह्नकी स्वभावप्रकृ
तिसुंदरहे और जिन्होविषे तेजकाप्रभावहे धैर्यवहोनहे क्षमावहोन
हे शुद्धआचारवहोनहे और स्वामीका अनुरागवहोनहे और दृढस्थि
तीहे और धृती वहोनहे २१ ॥

परीक्षेनगुणान्नित्यं प्रौढभावान्धुरंधरान् पं
चोपधाव्यतीतांश्च कुर्याद्राजार्थकारिणः २२

इसप्रकार गुणोको परीक्षाकरके बहोउ उन्हकीभावना महाउज्वल क
र्मकरणेकीहे ऐसे अतिभारी कार्यके धुरंधानकर्के मायाछलकपट
के उपाधिरहितहोवे ऐसेपांच पुरुष अपने राज्यकार्यके अर्थसाधने
जानकर्के हारीमंत्री अधिकारी राजाकरे २२ ॥

पर्याप्तवचनान्वीरान्प्रतिपत्ति विशारदान् कु
लीनान्सत्वसंपन्नानिंगितज्ञाननिष्ठुरान् २३

हे राजन् ऐसे पुरुषोको अपने राजकार्यके अधिकारी करके इन्हसे
भी अधिकजोबडी मंत्री लोक उन्हकोभी परीक्षा राजाकरे कैसेहोवे जो
नसाकार्यकारणा प्रारंभकियाहे उसीकी विधानसिद्धीमो जिन्हका व
चन समर्थहोवे और पुरुषार्थसंपदाके महावीरहोवे और कार्यसिद्धी
के निर्वाहकारीहोवे और कुलप्रतिष्ठाके अभिमानीहोवे और अपने सा
मर्थ्य तेजसंपन्नहोवे सभकी शुभ अशुभमानसी भावनाके ज्ञाताहो
वे और मनवाणी कर्मकर्के क्रूरनही होवे २३ ॥

देशकालविधानज्ञा भर्तृकार्यहितैषिणः नि
त्यमर्थेषुसर्वेषु राजन् कुर्वीत मंत्रिणः २४

और देशकाल विवस्थाके विभाग विधानके वेत्ताहोवे और स्वामीकी
हितकार्यकी वांछाकारीहोवे ऐसेपुरुषोको राजाप्रियमे नित्यके संप
र्ण जो अर्थसिद्धीकेकार्यहे तिन्होविषे मुख्यमंत्रीकरे २४ ॥

हीनतेजाभिरम्हावै नैवजातु व्यवस्यति अव
श्यंजनयत्येव सर्वकर्मसु संशयम् २५ ॥

अब जोनसे पुरुषराजकार्य योग्यनहीहे उन्हको कहनेहे जिसमो
आज्ञाकरणेका तेजनहीहे और जवकार्यमों अधिकारी कियातो कार्यकी
कर्तव्यता अकर्तव्यताको निश्चयको नहीकरे ऐसा पुरुष सर्वकार्यो
विषे संशयको दिखावताहे २५ ॥

एवमल्पश्रुतोमंत्री कल्याणाभिजनोप्यत थ
र्माथकामसंयुक्तो नालंमंत्रंपरीक्षितं २६

और जिसमो बहुतगुणहे तोभी कछुदोषयुक्तहे उसकोंभी राज्यकार्य

से अयोग्यजानकरत्यागकरणा गुणवानभीहे कुलीनभी बहुगणोका
श्रोताभीहे जोनसा कायर जैसा अंधाजैसा अल्पकार्योविषेभी कर्तव्यता
से मूढहोताहे २६ ॥
नधीवानाभिजातोपि काममस्तु बहुश्रुतः अ
नायकइवाचक्षु र्मुह्यत्यारब्धु कर्मसु २७ ॥
योवाप्यस्थिरसंकल्पोबुद्धिमानागतागमः उ
पायज्ञोपिनालंस कर्मप्रापयितुंचिरम् २८
ओर जिसका मनोमय संकल्पस्थिरनहीहे सोबुद्धिवानहे ओर कार्यके
आगमके चिरकालसेभी समाप्तनहीकरसकता ओर जोनसापुरुष
तत्कालही कार्यको उपायके उपायको प्राप्तभयाहे जो उपायको जा
नताहे तोभीकार्यको चिरकासेभी समाप्तनही करसकता ओर जोन
सापुरुषतत्कालही कार्यको मानलेताहे परंतु कार्यविशेषोके
भेदज्ञानके श्रवणविना उत्बुद्धिहोताहे सोभी कार्यसिद्धिको नही
करसकता ऐसे अयोग्य पुरुषोको राजकार्यके नियोगसेत्यागदेवे २८
केवलात्प्रुनरादाना त्कर्मणोनोपपद्यते परा
मर्शोविशेषाणा मश्रुतस्येह दुर्मतेः २९ मं
त्रिणनत्वरक्तेन विश्वासोनोपपद्यते तस्मा
दनत्वरक्ताय नैवमंत्रं प्रकाशयेत् ३० ॥
हे राजन् जोनसामंत्री अपने स्वामीविषे अनुरागनहीकरे उसका वि
श्वासनहीकरे ओर उसकोमंत्रभी नही सुनाये ३० ॥
व्यथयेद्धिसराजानं मंत्रिभिः सहितोनृजुः
सारुतोपिहितच्छिद्रैः प्रविश्याग्निरिवद्रुमं ३१
हे राजन् खोटामंत्रीजोहे कुटिलताकर्के ओर मंत्री जनोको अपने
साथकरलेताहे राजाको व्यथाकरताहे जैसे हृक्षको अग्निपवनद्वा
राकोटर छिद्रों करके प्रवेशकरताहे उसहृक्षको दग्धकरदेताहे ३१
संक्रुद्धस्यथदास्वामी स्थानाच्चैवापकर्षति वा
चाक्षिपति संरब्धः पुनःपश्चात्प्रसीदति ३२
अब अनुरागवाले मंत्रीके लक्षण कहतेहे एक कालमो अपना
स्वामी राजा मंत्रीको क्रोधकर्के अधिकारसे उतारदेताहे वाणी करके
अनादरकरताहे वहीउप्रसन्नभी होताहे ३२ ॥
तानितान्यनुरक्तेन शक्यानिहितितितिक्षितुं मं
त्रिणांवभवेत्क्रोधो विस्फूर्जित मिवाशनेः ३३
जोनसे राजाने क्रोधकर्के वाणीके दुर्वचनकहेहे अनादरकियाहे
उसको अनुरागवालामंत्री सहारलेताहे नही तोमंत्री गणोको क्रो

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
५८

58

य वज्रपातकी गर्जनाजैसा असत्यहोताहे ३३ ॥

यस्तुसंहरतेनाति भर्तुःप्रियचिकीर्षया समा
नसुखदुःखेन हृष्टेदर्पेष्वमानवे ३४ ॥

जौनसा मंत्री स्वामीके प्रियहितकराचाहताहे स्वामीकेअनादरवचनो
कों सहारलेताहे ऐसामंत्री स्वामीके आज्ञाको सुखदुःखदशामों एकस
मानहीं सीसपरधारलेताहे उसको राजाअपनेविषे अनुरागवान हि
तैषी जानकर एकांतविषे अपने राजकार्योंका मंत्रसहायभी रक्खे ३ ४

अनाप्तस्त्वनुरक्तोपि संपन्नश्चेतरैर्गुणैः राज्ञः
प्रधानज्ञोपि नमंत्रं श्रोतुमर्हति ३५ ॥

जौनसा मंत्रीआज्ञाकारीनहीहोवे सोराजाविषे अनुरागभीकरे और भी
उत्तम जनोंकर्के संयुक्तभीहोवे और राजकार्योंके गुणदोषवेत्ताभी हो
वे तोभी मंत्रश्रवणका अधिकारीनहीहोता ३५ ॥

योमित्रैः सहसंबद्धो न पौरान्बहुमन्यते असु
हृत्तादृशोज्ञेयो नमंत्रं श्रोतुमर्हति ३६ ॥

जौनसामंत्री अमित्रोंके संबंधवालाहे और नगरके प्रधानलोकोंकों
बहोतनहीं मानता सो सुहृदनहीं होतासोभी मंत्रश्रवणका अधिकारी
नहीहे ३६ ॥

अविद्वानशुचिस्तब्धः शत्रुसेवी विकत्थनः अ
सुहृत्क्रोधनोलुब्धो नमंत्रं श्रोतुमर्हति ३७ ॥

जौनसामंत्री कार्यभेदकाज्ञानीनहीहे और खोटे आचरण करताहे और
अपनेजैसाकिसीकों नहीमानता और शत्रुसेवाको चाहताहे और अपनी
प्रशंसा बहोतकरताहे और सुहृदभावनहीकरता महाक्रोधीहे महा
लोभीहे सोभी मंत्रश्रवणके योग्यनहीहे ३७ ॥

आगंतुश्चानुरक्तोपि काममस्तुबहुश्रुतः स
त्कृतः संविभक्तोवा न मंत्रं श्रोतुमर्हति ३८

जौनसामंत्री नवा आयाहे सो अनुरागवानभीहे और बहुव्यवहारज्ञा
नकाज्ञाताभी मानयुक्तासे सत्कारवालाहे और आपभी अन्नदानादि
विभागदेकरमानीभीहे सोभी मंत्रसुननेको योग्यनहीहे ३८ ॥

विधर्मतोविप्रकृतः पितायस्य भवत्पुरा स
त्कृतःस्थापितःसोपि नमंत्रं श्रोतुमर्हति ३९

हेराजन् जिसका पिता प्रथम विरुद्ध धर्मकर्के विकृतकियाहे उस
कापुत्र सत्कारसे बहुतमानकर पिताके अधिकारकों वहीउस्थाप
नकीनाहे तोभी पिताके अनादरको जानताहे सोभी मंत्र श्रवण कर
णेको योग्यनहीहे ३९ ॥

यःस्वल्पेनापिकार्येण सुहृदाहितरतोभवेत् पु

नरैर्वैर्गुणैर्युक्तो नमंत्रं श्रोतुमर्हति ४० ॥
जोनसा पुरुष स्वल्पकार्यके विकारकर्केभी स्वल्पदंडसे दंडित कियाहे
वहोउसो अवर अनेक गुणोंकर्के संपन्नहोवे तोभी मंत्रश्रवण करणे
को योग्यनहीहे ४० ॥

कृतप्रज्ञश्च मेधावी बुधोजानपदः शुचिः स
र्वकर्मसुयः शुद्धः समंत्रं श्रोतुमर्हति ४१ ॥
जोनसा पुरुष गुणसंपदाकर्के चतुर बुद्धिहे और व्यवहार ज्ञानका पं
डितहे देशकावासीहे शुद्धआचारविचारवालाहे सर्वकर्मोंविषे शुद्धभी
हे सो राजाके मंत्रश्रवणकरणेकोयोग्यहे ४१ ॥

ज्ञानविज्ञान संपन्नः प्रकृतिज्ञःपरात्मनोः स
र्वदात्मसमोराज्ञः समंत्रं श्रोतुमर्हति ४२ ॥
जो जो पुरुष मंत्रश्रवणकरणेयोग्य अवउनकोभी कहतेहे जो पु
रुष सर्वप्रकारके व्यवहार तत्त्वका ज्ञान विज्ञान संपन्नहे अपनीप
राई देशकाल कार्य प्रकृतिका वेत्ता और अपने समान राजाका स्व
न्हे सो राजाके मंत्रश्रवणकरणेको योग्यहोताहे ४२ ॥

सत्यवाक शील संपन्नो गंभीरःसत्रपोमृदुः
पितृपैतामहोयःस्या त्समंत्रं श्रोतुमर्हति ४३
जोनसा पुरुष अपने वचनको अपने धर्मके आचारसे सत्यकरता
हे और रहस्यहातिहे और अपने कुलका शील संपन्नहे और गंभीरबु
द्धीहे और कुलशीलके लज्जासंपन्नहे पितृ पिताकी परंपरासे प्रा
सिद्धसेवाकरताहे सो राजाके मंत्रश्रवणकोयोग्यहे ४३ ॥

संहृष्टः संमतः सत्यः शौंडीरो हेयपापकः
मंत्रविकालविछूरः समंत्रं श्रोतुमर्हति ४४
और अपने यथा योग्य दान मानसे और संमानिकाजाताहे और रा
जाके वचनको सत्यमानताहे और हर्षमान मदवालाहे और पापकर्म
का शत्रुहे और मंत्ररहस्यका वेत्ताहे और देशकाल स्वभावका वेत्ताहे
और कार्यज्ञानमो महाधीरताका वीरहे सोराजाके मंत्रको श्रवण
करण योग्यहे ४४ ॥

सर्वलोकमिमंशाक्तः सांत्वेनकुरुते वशे न
सैमंत्रः प्रयोक्तव्योदंडमाधित्सतान्तप ४५
जोनसा पुरुष इसलोकमो सर्वजनोको अपने सांत्ववचनोकर्के व
शाकरणेको शक्तहे उसको मंत्र प्रयोगमो कर्तव्यहे मिथ्याभाषणमो
दंडविधानकी आज्ञाभी श्रवणकराईदेनी ४५ ॥

पौरजानपदायस्मिन् विश्वासं धर्मतोगताः

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
५५

59

योज्ञानयविपश्चिच्च समंत्रं श्रोतुमर्हति ५६

जिसकीधर्म कर्मकी प्रवृत्तीसे पुरवासीलोकदेशवासी लोकपर मविश्वासको प्राप्तभयेहे और पुरुजगत्शीलभीहे नीतिमार्गका वेत्ताभी हे सो राजाके मंत्रश्रवणको योग्यहे ५६ ॥

तस्मात्सर्वगुणैरेतैरुपपन्नाः सुपूजिताः मंत्रिणः प्रकृतिज्ञाःस्युःत्र्यवराःमहतीप्सवः ५७

ताते हेराजन् इसप्रकारके सर्वगुणोंकरके संपन्नहोवे दानमान सत्कारसे पूजितहोवे और राजधर्मकी सप्तांगी प्रकृतिज्ञानवालेहोवे और राजाके महाउदयकी वांछायुक्तहोवे सो पांचसे ऊनतीनसे अधिकमंत्री मंत्रवेत्ता कर्तव्यहे ५७ ॥

स्वासुप्रकृतिषुच्छिद्रंलक्षयेत्स्यस्य च मंत्रिणां मंत्रमूलंहि राज्ञोराष्ट्रं विवर्धते ५८ ॥

नास्यच्छिद्रंपरःपश्येत् छिद्रेषुपरमन्वियात् गूहेत्कूर्मइवांगानि रक्षेद्विवरमात्मनः ५९

ऐसी यहमंत्री अपने राजाकीस्वामी अमात्य सुहृत् कोशराष्ट्र दुर्ग बलरूपी प्रकृतिकेछिद्र जानकर्के रक्षासे गोपनकरे परराज्यके प्रकृतिछिद्रोंको चारप्रयोगसे जानलेवे मंत्री ओंका मंत्रमूलयहीहे राजाकीराष्ट्रवृद्धिकर्तव्यहे अपने राष्ट्रके छिद्रको परायाचारादिकोई नहींजाने और पर राष्ट्रके छिद्रोंकाज्ञान अपनेविषे विदितहोजावे अपने सप्तांगोंको कछुकेसमानगोपनकरे अपनेछिद्रको यत्नसे गोपनकरे ५९ ॥

मंत्ररक्षाहिराज्यस्य मंत्रिणोये मनीषिणः मंत्रसंहननोराजा मंत्रांगानीतरेजनाः ६० ॥

जिसराज्यके मंत्ररक्षावाले मंत्रीहे जो महामनकी सत्तावालेहे राजालोकोंको मंत्रकवचकी रक्षा कहीहे और जेते सूरमाजनोंकी सामग्रीहे सोसभही मंत्रके अंगहे ६० ॥

राज्यं प्राणाअपि मूलंहि मंत्रसारं प्रवर्तते स्वामिनस्तत्तु वर्तते ह्यर्थं सिद्धमंत्रिणः ६१

मेविनीय मदक्रोधौ मानमीर्ष्यां च निर्हताः नित्यंपंचोपधातीतैः मंत्रयेत्सहमंत्रिभिः ६२

ताते हेराजन् राजाजोहेसो मदको क्रोधको जीतकर्के वशकरके कोभी ईर्षाकोभी वशकर्के सुखीहोतीहे पंचप्रकारकी बलविद्या से रहितहोवे द्रोणके वधविषे अश्वत्थामाहतभया यहवाचकी हेमानसी नहींहे भीमसेनविषे नहाही वाचिकीदोनोही धृतराष्ट्र

विषे मानसी मात्रहै और धृतराष्ट्रके पुत्रोविषे लाक्षामंदिर कदाह
मो और अश्वत्थामादिविषे सौप्तिकरणविषे कायकी मात्रहै इसप्रका
रकी पंचविधाबलाविद्यासे रहितहोवे ऐसे मंत्री पांचहोइतीनहो
य उन्होंके साथ मंत्रविचारको करे ५२ ॥

तेषांत्रयाणां विविधं विमर्षं विशुद्धचित्तेनवि
निवेश्यतत्र स्वनिश्चयंतत्परनिश्चयंच नि
वेदयेद्नरमंत्रकाले ५३ ॥

हे राजन् इसमंत्रविचारमों तीनोंकामत एकनिश्चयकरे प्रथम
अपनामत और मंत्रीयोंका और निश्चयको जाननेहारा गुरुपिता
दिकोंकामत मिलायकर आपविचारलेवे ५३ ॥

धर्मार्थकामज्ञमुपेत्यपृच्छेद् युक्तोगुरुंवा
लक्षणप्रज्ञतरार्थ्य निष्ठाकृतानेनयदासम
स्तानमंत्रमार्गेप्रणयेदशंकः ५५ ॥

गुरुपितादिककैसेहोवे धर्म अर्थकामोंके त्रिवर्गनिश्चयवानहो
वे उसको निवेदनकर्के उसके अनंतर जो कार्यकर्तव्यहै उसकी
पृछाकरे जब गुरुपितानेकार्यकी कर्तव्यनिष्ठाकही तवमंत्रके
मार्गको राजा अशंकहोकर प्रयोगसे प्रगटकरे ५५ ॥

एवंसदामंत्रयितव्यमाहुर्यमंत्रतत्त्वार्थविनिश्च
यज्ञाः तस्मात्तमेवंप्रणयेत्सदैव मंत्रंप्रजासंग्र
हणेसमर्थं ५६ ॥

हे राजन् मौन से पुरुष मंत्रतत्त्वके
अर्थनिश्चयवेत्ता पुरुषहै सो इसप्रकार मंत्रविचारके कर्तव्यता
कोंकहते है ताते प्रथम तो सदाही यह मंत्रप्रयोगकहाहै जि ५६
सकर्के प्रजाको वशाकरणेको समर्थहै सोई मंत्रप्रयोगउत्तमहै

नवामनाःकुब्जकृशानखंजानांधोजडःस्त्री
चनपुंसकंच नचात्रतिर्यक्पुरोनपश्चान्नो
र्ध्वं नचाथःप्रचरेत्कथंचित् ५७ ॥

मंत्रविचारकालविषे वामना कुबरा कृशा खंज अंध जड मूक
स्त्री नपुंसक इन्होंको दूरकरे और आगे और पीछे और तिरछे नऊ
र्ध्वविषे अधोभागविषे इसप्रकारके संचारको दाक्षिन हीकरे ५७

प्रारूढनावंतनपैवशून्यंस्थलेप्रकाशेकु
शाकाशहीने वागंगदोषान्परिहृत्यसर्वा

मंत्रेनयेकार्यमहीनकालं ५८ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मेषु अशीतितमो
मंत्रकरणेको नौकामो आरोहणकरे शून्यस्थानमो ध्यायः ८३
मंत्रकरे जहां अतिप्रकाशहोवे ऊशाकाशादि तृणाहदलतादि
सघनस्थाननहीहोवे जहां मंत्रभेद जाननवालेको गुप्तस्थितीका
आश्रयनहीहोवेतहां मंत्रविचारको करे और अपनी वाणीके अं
गवेषादि सकल दोषोको त्यागकरके और समयकी हीनतादि
दोषरहितहोकर मंत्रविचारकोकरे ५८ इतिश्री महाभारते शां
तिपर्वणि राजधर्मेषु मंत्रविचारः अशीतितमोध्यायः ८३ ॥

भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनम् बृहस्पतेश्च संवादं शक्रस्यच युधिष्ठिर १
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर इसविचारमो एकपुरातन इतिहासको उदाहरण कहतेहे बृहस्पतिका और इंद्रराजाका संवादभयाहे इसको श्रवणकरो १ ॥

शक्रउवाच किंस्विदेकपदंब्रह्मन् पुरुषःसम्यगाचरन् प्रमाणं सर्वभूतानांयशश्चैवाप्नुयान्महत् २
शक्रउवाच हे ब्रह्मण ऐसाकौन एकमुख्य सर्वगुणोका पदहे जिसविषे संपूर्णगुण अंतर्भूत होतेहे और सर्वभूतोका एकवशीकरणमो प्रमाण भूतहे जिसकरके यशभी महाविस्तारसे होताहे ऐसा मुख्यराजधर्मका उपायकहो २ ॥

बृहस्पतिरुवाच सांत्वमेकपदंशक्र पुरुषःसम्यगाचरन् प्रमाणंसर्वभूतानां यशश्चैवाप्नुयान्महत् ३ ॥ बृहस्पतिरुवाच हे शक्र हे देवराज ऐसा एकमुख्य उपाय सर्वभूतोका वशीकार शांतनिष्कपट सांत्वप्रियवचनहे सर्वभूतोको यही प्रिय प्रमाणहे इसीकरके महायश प्राप्तहोताहे ३ ॥

एतदेकपदंशक्र सर्वलोकसुखावहं आचरन्सर्वभूतेषुप्रियोभवतिसर्वदा ४ ॥
यही सर्वगुणोका मुख्यपदहे सर्वलोकोकोसुख कारीही इसको योसदा आचरण करेतो सर्वभूतोविषेसदासर्वदा प्रियहोताहे ४

योहिनाभाषतेकिंचित् सर्वदाभ्रुकुटीमुखः द्वेष्योभवति भूतानांससांत्वमिहनाचरन् ५

जो पुरुष मुखसे सांत्वप्रिय वचन कबुनही कहताहे सदाअपनी
अभिमानकीगंभीरतासे सदावहभृकुटीमुखहोताहे सोअपने मूढ
भावकर्के सर्वलोकोंका हृथाही द्वेषपात्र होताहे ५ ॥

यस्तु सर्वमभिप्रेक्ष्य पूर्वमेवाभिभाषते स्मि
तपूर्वाभिभाषी च तस्य लोकः प्रसीदति ६

जो पुरुष अपने अभिमुख आये पुरुषको प्रथमही प्रसन्न ह
ष्टिसे देखकर प्रथमही मंद मुसकाइकर बोलताहे मंदमुसकाई
संयुक्त प्रथमही मधुरवचनकोकहताहे उसको लोक प्रियजान
कर कर प्रसन्नहोताहे ६ ॥

दानमेव हि सर्वत्र सांत्वेनानभिजल्पिते नप्री
णयति भूतानि निर्व्यंजनमिवाशनम् ७ ॥

हे शक्र दानभी सभको वशकरताहे सोभी मंदमुसकाइके सांत्व
मधुरवचनविना स्वादवालाव्यंजनविना भोजनके समान भू
ताकों प्रसन्ननहीकरता ७ ॥

अदानादपि भूतानां मधुरामीरयन्गिरं स
र्वलोकमिमं शक्र सांत्वेन कुरुते वशे ८ ॥

जिसको दानशक्ति नहीहे सो पुरुष उलटालोकोंसे याचनाकर्के
ग्रहणकरताहे सोभी मधुरवाणीकर्के बोलताहे जोपदार्थग्रहण
सोभी सर्वलोकोंकों सांत्ववचनकर्के वशकरलेताहे ८ ॥

तस्मात्सांत्वं प्रयोक्तव्यं दंडमापित्सतापि हि
फलं च जनयत्येवं न चास्योद्विजते जनः ९

ताने हे शक्र जिसने दंडभी करणा वांछाकीनीहे सोभी सर्वभूतों
विषे सांत्ववचनकाही प्रयोगकरे उसको यहीफलदेताहे जो लो
कोकामनउससे उद्विग्ननहीहोता ९ ॥

सुकृतेन हि सांत्वस्य श्लक्ष्णस्य मधुरस्य च स
म्यग्गासेव्यमानस्य तुल्यं जातु न विद्यते १०

यह सांत्ववचन महापुण्यहे महासुकृतकर्के पुरुषको होताहे
ऐसा यह मधुर मनोहर वचनजो पुण्यहे इसके तुल्य और पुण्यभी
नहीहे इसको जो सदासेवन करताहे उसको संपूर्ण पुण्यकर्मो
का फलप्रत्यक्षप्राप्तहोताहे १० ॥

भीष्मउवाच इत्युक्तः कृतवान्सर्वं यथा शक्रः पु
रोधसा तथा त्वमपि कौंतेय सम्यगेतत्समाचर ११

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर ऐसा माहात्म्य बृहस्पतीने सांत्ववचनका क
हा इसकी प्रयोगसे इंद्र सर्वदेवगणोंका प्रियकारी यज्ञभाग देवरा
जभयाहै तातेहेकौंतेय तूंभी इस सांत्ववचनके प्रयोगको सर्वत्र
सदा आचरणकर ११ ॥ इति श्री महाभारते शांति प
र्वणि राजधर्मेषु चतुरशीतितमोध्यायः ८४
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सांत्ववचन चतुरशी
ति तमोध्यायः ८४ ॥

युधिष्ठिरउवाच कथंस्विदिहराजेंद्र पालयन्पार्थि
वःप्रजाः प्रीतिंधर्मविशेषेण कीर्तिमाप्नोतिशाश्व
युधिष्ठिरउवाच हे राजेंद्र भीष्मजी राजा जोहै सोइसरा तीम् १
जधर्ममो कौन प्रकारकर्के प्रजाको पालनकरताहै सोधर्म विशेष
कर्के सर्वलोकों विषे प्रीतिको प्राप्तहोताहै और अखंड चिरकाल
स्थायी कीर्तिको प्राप्तहोताहै १ ॥

भीष्मउवाच व्यवहारेण शुद्धेन प्रजापालनतत्प
रः प्राप्यधर्मंचकीर्तिंच लोकावाप्नोत्युभौशुचिः २
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर कपटछलरहित शुद्धव्यवहारकर्के प्रजा
कोपालनेहारा जो राजाहै महाधर्मकर्मको प्राप्तहोकर महाकी
र्तिको प्राप्तहोताहै और भूलोक स्वर्गलोकमो उभयत्र पवित्रहो
ताहै २ ॥

युधिष्ठिरउवाच कीदृशोव्यवहारोसौ कश्चव्यवहरे
न्नृपः एतन्मेसर्वं महाप्राज्ञ यथावद्वक्तुमर्हसि ३
युधिष्ठिरउवाच हे महाप्राज्ञ सो शुद्धव्यवहार कैसाहै और उन्हकेनि
र्णयकरणेहारे करणेलोक कैसेहोवे जिन्होंकर्के राजाशुद्धव्यवहा
रोंको निर्णयकरे यह मैने आपप्रश्न कियाहै इसको यथा प्रका
रकहो ३ ॥

यैश्चैवसर्वंकथिता गुणास्ते पुरुषंप्रति नै
कस्मिन्पुरुषेत्येते विद्यन्त इतिमे मतिः ४
हे महाप्राज्ञ जो आपने उत्तमगुण सर्वपुरुषके प्रतिकहेहै सो
वह एतेगुण पुरुष विषे कहीं विद्यमाननहीहै ४ ॥

भीष्मउवाच एवमेतन्महाप्राज्ञ यथावदसि बु
द्धिमान दुर्लभःपुरुषःकश्चि देभिर्युक्तो गुणैः
शुभैः ५ ॥ भीष्मउवाच हे महाप्राज्ञ हे युधिष्ठिर जैसे तु

मकहनेहो सोयथार्थहे ऐसे उत्तम गुणोकर्के संयुक्त पुरुष पृ
थिवीलोकमों दुर्लभहे ५ ॥
किंतु संक्षेपतः शीलं प्रयत्ने नेहदुर्लभम्
वक्ष्यामितु यथामात्यान् यादृशांश्चकरिष्यसि ६
तोभी संक्षेपकर्के उत्तम पुरुषोके शीलकों मे संक्षेपसे कहताहुं
सोभी पुरुषो विषे दुर्लभहे जिसको श्रवण कर्के तूं उत्तममान्यज
नोको जैसे करेगा सो प्रकारमे कहताहुं ६ ॥
चतुरोब्राह्मणान् वैद्यान् प्रगल्भान् स्नातकान्
शुचीन् क्षत्रियांश्च तथाचाष्टो बलिनः शस्त्रपाणि
नः ७
हे राजन् चारब्राह्मणजोहे सोवेदविद्याविषे प्रगल्भहो
वे और समावर्तनकर्के गृहस्थधर्मवाले होवें उन्हको तुमने व्यव
हार दर्शनवास्ते मंत्रीकरणा और आटक्षत्रीहोवे सोभी बलवानहो
वे शस्त्रविद्याविषे चतुरहोवे हाथोविषे शस्त्रोको सदाधारणक
रे सोभीव्यवहारदर्शनके मंत्रीकरणे ७ ॥
वैश्यान् वित्तेन संपन्ना नेकविंशतिसंख्यया
त्रींश्च शूद्रान्विनीतांश्च शुचीन्कर्मणि पूर्वके ८
तैसे वैश्यभी धनसंपदा संपन्नएकविंश संख्याकर्के व्यवहार
दर्शनके मंत्री करणे और तीनशूद्र विनयसंपन्नहोवे पूर्वजो ती
नवर्ण उन्हकीसेवापरायणहोवे सोभीव्यवहारदर्शनविषे मंत्री
सहायकर्तव्यहे ८ ॥
अष्टाभिश्च गुणैर्युक्तं सूतं पौराणिकं तथा प
ञ्चाशद्वर्षवयसं प्रगल्भमनसूयकम् ९ ॥
तैसे एकसूतजाती पौराणिकहोय सो अष्टगुणोकर्के संयुक्त
होवे अष्टगुणसूतकेजोहे उन्हको कहतेहों शास्त्रोका श्रवण
और अर्थके धारणा और ऊहका तर्ककरणा और अ
र्थग्रहण और अर्थके धारणा और ऊहका तर्ककरणा और अ
पोहनतर्कका समाधान और विचारजन्यज्ञान और तत्त्वनिश्चय
ऐसे अष्ट गुण संयुक्त सूतहोवे पचाशवर्षकी उमरवालाहो
य और ब्राह्मणादि तीनवर्णभी पचाशवर्ष अवस्थावानहोवे ४
और सूतकैसाहे सभामो प्रगल्भहोय और निंदास्पर्धारहितहोवे
श्रुतिस्मृतिसमायुक्तं विनीतं समदर्शिनम्
कार्ये विवदमानानां शक्तमर्थेषु लोलुपम् १०
श्रुतिस्मृतिज्ञानसंयुक्त विनयवान् समदर्शी होय अपने कार्य
की निमित्तवादी प्रतिवादी लोकविवाद करतेहे उन्हके व्यव
हार ज्ञानविषे समर्थहोय और धन संपदाकी प्राप्तीविषे लो

भकी चंचलतासे रहितहोवे ९ ॥

वर्जितैश्चैव व्यसनैः सुघोरैः सप्तभिर्भृशम्
अष्टानां मन्त्रिणां मध्ये मन्त्रं राजोपधारयेत् ११

और चारकामचेष्टाके और तीनक्रोधवेगके व्यसन इसप्रकार सप्त
प्रकारके संपूर्णव्यसनोसे रहितहोवे राजा अष्टमंत्रियोके मध्य
मो मंत्रविचारको राजानिश्चयकरे अष्टमंत्री कौनहै चारब्राह्मण
तीनशूद्र एकसूत इन्हके साथ मंत्रविचारको राजाकरे ११ ॥

ततः सम्प्रेषयाद्राष्ट्रे राष्ट्रायाथ चदर्शयेत् स्त्र
नेन व्यवहारेण दृष्टव्यास्ते प्रजाः सदा १२

तदनंतर चारब्राह्मणआठक्षत्री एकविंशविश्यतीन शूद्र एकसू
त इन्हको अपने राष्ट्रमो व्यवहार ज्ञानवाले भेजदेवे जौनसारा
राष्ट्रका अधिकारीहै उसको राजाकहै यह व्यवहारदृष्टाहै सो तेने
यथाविधीसे दृष्टव्यहै हे राजन् इसप्रकार तुमने प्रजा सदा
दृष्टव्यहै १२ ॥

नचापि गूढं द्रव्यं ते याह्येकार्योपधानकं
कार्यं खलु विपन्नं त्वां सोधर्मस्तांश्च पीडये
त् विद्रवेयुश्च वा राष्ट्रं ते श्येनान्पक्षिगणा इव १३

और जौनसा न्यासापहारी व्यवहारका गूढद्रव्यहै उसके वास्ते अ
र्थी प्रत्यर्थी विवादकरतेहै परस्परविषे अपना अपना स्वत्वक
रतेहै इसरेवादीका स्वत्वनिहत्त करतेहै उक्तदोनोका द्रव्यका
स्वत्वनिहत्तकर्के यहद्रव्यराजाकोहै इसप्रकारकी स्वत्वकल्पना
तुमने नही करणी ऐसी कार्यभी धर्महानि जो होवेगी सो अध
र्म तुमको पीडाकरेगा १३ ॥

परिस्रवेच्च सततं नौर्विशीर्णेव सागरे प्रजाः
पालयतो सम्यगधर्मेणाद्य भूपतेः १४ ॥

तेरा सभही राष्ट्रतेरेसे भयभीतहोकर भागेगा जैसे श्येनपंखी
सेलघुपंखी गणभाग जातेहै और संपूर्ण राष्ट्रतेरा विकृतहोजा
वेगा जैसी फूटी नौका समुद्रमोविगडजातीहै १४ ॥

हार्दं भयं संभवति स्वर्गश्चास्य विरुध्यते
अधर्मतःपाति राजा मान्योप्यथवात्मनः १५

जो तुम प्रजाको अधर्मकर्के अमार्गकर्के प्रजापालनकरोगा
होतो हृदयमो अधर्मका भयहोवेगा और स्वर्गगतीका वि
रोधहोवेगा १५ अथ और सुनो जौनसा राजा अथवा राजमंत्री

अथवा राजाकापुत्र धर्म कर्मके निर्णयके मूलभूत धर्मासन
मो बेठाहे सो अधर्म मार्गसे व्यवहार निश्चयको प्राप्तहोताहे १५

धर्मासनेसन्नियुक्तो धर्ममूले नरर्षभ कार्ये
ष्वधिकृताः सम्यगकुर्वन्तोऽनृपानुगाः आत्मा
नं प्रवनः कृत्वा यांत्यधः सह पार्थिवाः १६॥

अथवा राजाके अधिकारी पुरुषभी राजाके अनुसार अधर्ममार्ग
का व्यवहार निर्णयकरतेहे सो अपनेको अधर्मीकर्के राजासमे
तेही नरकमो अधोगतीको प्राप्तहोतीहे १६ ॥

बलात्कृतानां बलिभिः कृपणांबहुजल्पताम्
नाथोवैभूमिपोनित्य मनाथानां नृणांभवेत् १७

हे राजन् जोनसे लोक अधर्मकर्के बलवानभयेहे तिन्नोने अ
नाथकृपणोके साथ अधर्म कियाहे इसव्यवहारकर्के अनाथदी
नलोकपीडित कियेहे बहोतदीनवचनोकर्के उपकारकरतेहें
ऐसे अनाथलोकोका नाथपालना रक्षाकरतोहारा राजाही होता
हे १७ ॥

ततः साक्षिबलं साधु द्वैधवादकृतं भवेत् अ
साक्षिकमनाथंवा परीक्ष्य तद्विशेषतः १८

तहां राजाने अपने अधर्मभयसे साक्षीबल अर्थीनरासे युक्त क
रनेयहे अब इसनिर्णयका अर्थकहतेहे जिसव्यवहारविषे अर्थी
जोहे पूर्ववादी उसने आस्कर मेरा सुवर्णशतइसने लियाहे त
बप्रत्यर्थी उत्तरकहेजो सत्यहे मेने सुवर्ण शतलियाहे मे इसको
देदेताऊं ऐसे सत्य उत्तरमो साक्षीका प्रयोजननहीहे उन्नका वि
वादहोगयाहे जहां अर्थीके सन्मुखप्रत्यर्थी कहे सुवर्ण शतमेने
सत्यही लियाहे परंतु मेने इसको अमुक दिनमो अमुकस्थान
मों देदियाहे अबयहमोको असत्य बोलकर असत्यही विवादक
रताहे ऐसे विवादमो प्रत्यर्थीने साक्षीहारसे लिखित हे अपना
पक्ष सत्यकरदेना साक्षी लिखितदोनेके नहीहोवे तोशपथकर्के
दिव्यकर्के अपनापक्षसत्यकरणे योग्यहे जहांक्षेत्र गृहादिभूमि
विषयकाविवादहोय तो दशवीशवर्षादि भोगकाल सत्यकर
दिखाया चाहीये जबप्रत्यर्थीकहीमेने इसको गृह अथवा क्षे
त्रलियारहा परंतु इसको मेनेदेदियाहे अथवा प्रत्यर्थिकहेमे
रा इसका गृहका क्षेत्रकाविवाद प्रथमभी भयाहे तहां यहमे
राबादी मेरेसेहाराहे विवादमो असत्यवादी भया अबकेर निर्ण
रावादी ... विवादमो साक्षी लिखित भुक्ति प्र
जतासे विवादकरताहे ऐसे विवादमो साक्षी लिखित भुक्ति प्र

णकर्के दोनोमे एकवादीने पराये पक्षको असम्यकरदेना अप
ने पक्षको सम्यकरदेना जोदोनो वादीयोसे लिखितसाक्षीभुक्ति
का प्रमाणनहीहोवे तो दोनोविषे किसी एकने अपने सम्यधर्म
के विवादमक्तनिर्णयके निश्चयवास्ते लोहमय तप्तपरश्रुधारणा
दि दिव्यशपथादि सम्यधर्मके प्रमाणवास्ते अवश्यकर्तव्यहै १८ ॥

अपराधानुरूपंच दंडपापेषुधारयेत् विधो
जनैर्धनैश्चैवा नधनानपबंधनैः १९ ॥

हे राजन् इसप्रकारसे और विवादोका निर्णयभी राजाकरे और
अपराधकी अनुसारविचारकर्के पापकारीलोकोविषे दंडधारण
करणे योग्य और धनमदके पापकारी लोकोको धनसंपदासे रा
हितकरे जौनसे निर्धनपापकारी लोकहै उन्को कारागारादि
दीर्घकालबंधनकर्के दंडकरे १९ ॥

विनयेच्चापिदुर्हेत्तान्प्रहारैरपिपार्थिवः सा
ध्वेनोपप्रदानेन शिष्टांश्चपरिपालयेत् २०

हे राजन् चोरी परधनहरणपरदारागमन वधबंधनादि पापी॰
कारी जनोविषे हस्तछेदादि दोहदंडोकोभी धारणाकरे और वर्णा
श्रमधर्मनिष्ठावाले सज्जनजनजोहै तिन्को दानमानसत्कारसे
पालनरक्षणाकरे २० ॥

राज्ञोवधंचिकीर्षेद्य स्तस्यचित्रोवधोभवेत्
आदीपकस्यस्तेनस्य वर्णसंकरिकस्यच २१

जो पुरुष राजाके वधकराचाहताहै उन्को हस्तपादादि छेदक
रके अनेकदेहपातादि विचित्रदंडकर्तव्यहै और जौनसे पापकारी
लोकग्रहदाहवास्ते अग्निलगादेतेहै चोरी करतेहै और व्यभिचारक
र्के वर्णसंकरकारीहै २१ ॥

सम्यकप्रणयतोदंडं भूमिपस्यविशांपते प्र
कस्यवानास्यधर्मो धर्मएवहिशाश्वतः २२

तिन्को देहपातादि दंडराजाधर्ममर्यादासे करणे हाराजो राजा
है उसको धर्मरक्षावास्ते हिंसारूपी दंडकरणाहै परमधर्म होताहै

कामकारेणदंडंतु यःकुर्यादविचक्षणः स
इहाकीर्तिसंयुक्तो मृतोनरकमृच्छति २३

हे राजन् जो राजा धर्मशास्त्रके विचार विना अपनी इच्छाक काम
क्रोधादिवेगसे दंडकरे सो महामूढहै इहलोकमों अकीर्तिको
प्राप्तहोताहै परलोकमोनरकको प्राप्तहोताहै २३ ॥

नपरस्यप्रवादेन परेषांदंडमर्पयेत् आगमा
नुगमेकृत्वा बध्नीयान्मोक्षयेत्तवा २४ ॥
हे राजन् परमनुष्यके प्रतिनिधीकर्के अवर संबंधि प्रहषो
कों दंडकी शासनानहीकरे जैसे पिताके प्रतिनिधि पुत्रको पु
त्रके प्रतिनिधिभूत पिताको इसदंडविचारके आगमके अनुसा
र पिता पुत्रादि प्रतिनिधीको अपने वंशबंधनमो स्थापनक
रके अपराधकानिर्णयकरके अपराधी जनको दंडकरे प्रतिनि
धीको संदेहपर्यंत बंधनकरे अथवा बंधनसे मुक्तकरदेवे २४
नतुहन्यान्नृपोजातु दूतंकस्यांचिदापदि दू
तस्यहंतानिरय माविशेत्सचिवैःसह २५ ॥
परंतु हे राजन् कैसीभी अपराधकी आपदाहोवे उसमो दूत
किसी शत्रुकाभी नहीमारे जोकोई राजा दूतको मारे सो अपने
मंत्री सहायजनोके साथहीनरकको प्रवेशकरताहै २५ ॥
यथोक्त वादिनंदूतं क्षत्रधर्मरतोन्नृपः योह
न्यात्पितरस्तस्य भ्रूणहत्यामवाप्नुः २६ ॥
दूतजो होताहै सोयथार्थवक्ता होताहै उसको जो राजा क्षत्रधर्म
से मारताहै उसके समही पितृगण भ्रूणहत्याके नरकको गर्भ
वान बलवान दोषकोपाइकर घोरनरकको प्राप्तहोतेहैं २६ ॥
कुलीनः कुलसंपन्नो वाग्मीदक्षः प्रियंवदः
यथोक्तवादी स्मृतिमान् दूतःस्यात्सप्तभिर्गुणैः २७
अवदूतके लक्षण प्रसंगसेकहतेहै दूतजोहै सोभी कुलीनहो
वे कुलधर्म संपन्नहोवे वचन बोलने मो प्रगल्भहोवे और अपने
पराये व्यवहारज्ञानमो चतुरहोवे और प्रियवादीहोवे यथोक्तहत्ता
नका वक्ताहोवे सर्वपरहत्तांतको स्मरणकरणेहाराहोवे ऐसे स
प्तगुणोकर्के संपन्नहोवे सो उत्तमदूतहोताहै २७ ॥
प्तैरेव गुणैर्युक्तः प्रतीहारोस्य रक्षिता शि
रोरक्षश्चभवति गुणैरेतैः समन्वितः २८ ॥
इसी प्रकार सम गुण संपन्न राजाका द्वारपालहोवे और इसीप्र
कारके समगुण संपन्न देहविषे शिरो अंगके समानजो राजसे
पराके मुख्यस्थानजो दुर्गनगरादिको विषे द्वारस्थान कोशस्था
न शस्त्रवस्त्रादिराजाके मुख्यस्थान तिन्होकारक्षाकारी मंत्रीभी
होवे २८ ॥
धर्मशास्त्रा र्थतत्त्वज्ञः संधिविग्रहिको भवेत्

मतिमान् स्मृतिमान् ह्रीमान् रहस्यविनिगूहिता

हे राजन् अब राजाके और मंत्रीके लक्षण कहतेहे राजाका आज्ञाका
री मंत्रीजोहे सो धर्मशास्त्रके तत्वकावेत्ताहोवे और संधिविग्रहकारी
होवे सर्वज्ञान संपन्न जिसकी बुद्धिहोवे और धैर्यवानहोवे कार्यवि
षे कायरता नकरे असिद्धीका जिसको लज्जाहोय और रहस्यमंत्रका
अप्रकाशकहोय २९ ॥

कुलीनः सत्वसंपन्नः शुक्लोमात्यः प्रशस्यते प
नैरेव गुणैर्युक्त स्तथा सेनापतिर्भवेत् ३० ॥

और कुलपरंपरासे मान्यहोवे और पुरुषार्थ संपन्नहोवे ऐसा धर्म
कर्मका शुद्ध अमात्य श्रेष्ठहोताहे ऐसेही लक्षण जिसमो विद्यमा
न होवे सो राजाका सेनापति होवे ३० ॥

व्यूहयंत्रा युधानां च तत्वज्ञो विक्रमान्वितः व
र्षशीतोष्ण वातानां सहिष्णुः पररंध्रवित् ३१

वहोर सेनापति कैसा होवे व्यूहविद्याका वेत्ताहोय आग्नेयादि
यंत्रविद्याका वेत्ताहोय और शस्त्रविद्याकाभी वेत्ताहोवे और सेनाप
ति व्यवहारका तत्ववेत्ताहोय और पराक्रम संपन्नहोवे और वर्षाशी
त उष्ण वातादि विकारका सहनशीलहोवे और पराईसेनाको छि
द्रान्वेषीहोवे ३१ ॥

विश्वासयेत् परांश्चैव विश्वसेत्तु नकस्यचित् पु
त्रेष्वपि हि राजेंद्र विश्वासोन प्रशस्यते ३२ ॥

और परसेनाके सेनापतीलोकोको विश्वासकर ताहाराहोवे आप
किसीकोभी विश्वासनहीकरेहे राजकार्यवाले लोकोको पुत्रोवि
षेभी विश्वास चंगा नहीहे अपने पराये विश्वास की हदनही
करणी यही परमश्रेष्ठ कार्यसिद्धीका यत्नहे ३२ ॥

एतत् शास्त्रार्थ तत्वंते मयाख्यातं नवानघ अ
विश्वासोनरेंद्राणां गुह्यं परम मुच्यते ३३ इति

श्री शांतौ राजधर्मे पंचाशीतितमः ८५ ॥

हे राजन् यही राजधर्मशास्त्रका परमतत्वमेने आपको कहा
हे जो राजालोकोको अपने विश्वासका गोपनकरणा यही प
रमगुह्य राजनीतिका धर्मका तत्व कहाहे ३३ इतिश्रीम॰ भारते
शांतिपर्वराजधर्मेषु पंचाशीतितमोध्यायः ८५ ॥

युधिष्ठिरउवाच कथंविधं पुरा राजा स्वयमावस्त
मर्हति कृतंवा कारयित्वा वा तन्मे ब्रूहि पितामह

युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी राजा जोहे सो कोन प्रकारसे न
गरको वनाइकर आप निवासकरणेको योग्यहो ताहे जोनसा
नगर आगे प्रथमही वनाहै अथवा आपनया अपनी विधीसे व
नवायलेवे इसके स्वरूप लक्षण गुणदोषोको विचारसे कहो १

भीष्मउवाच वस्तव्यं यत्र कौंतेय सपुत्रज्ञातिबं
धुना न्याय्यंतत्र परिप्रष्टुं वृत्तिं गुप्तिंच भारत २

भीष्मउवाच हेकौंतेय जहां राजाने पुत्रज्ञाति बंधुवर्ग सहित
निवासकर्तव्यहे उहांकीनीति और खानपानादिवृत्ति और स्था
नरक्षा यह सभही व्यवहारवेत्ता जनोको प्रथम प्रश्नकरणा
उचितहे २ ॥

तस्मात्ते वर्तयिष्यामि दुर्गकर्म विशेषतः
श्रुत्वा तथा विधातव्य मनुष्ठेयं च यत्नतः ३

हेतात तुमने जो प्रश्न कियाहे ताते तुमको मे दुर्ग कर्मके
विधानको विशेषसे कहताहूं श्रवणकर्के आपने तैसाही
विधान कर्तव्यहे यत्नसे इसका संपूर्ण अनुष्ठानकर्तव्यहे ३

षड्विधं दुर्ग मास्थाय पुराण्यथ निवेशयेत्
सर्वसंपत्प्रधानं यद्बाहुल्यं वापि संभवेत् ४

प्रथमतो षट् प्रकारका दुर्गविधान देशकाल व्यवस्थासे जै
सा बने तैसा विधानकर्के पश्चात् दुर्गके अनुसार पुरोंकी क
ल्पनाभी तहां स्थापन करे तहां संपूर्ण संपदाकी प्रधानताभी
करे और विस्तारकल्पना भीकरे ४ ॥

धन्वदुर्गं महीदुर्गं गिरिदुर्गं तथैवच मनु
ष्यदुर्गं मृद्दुर्गं वनदुर्गं चतानि षट् ५ ॥

एकनिर्जल देशका दुर्गहै जिसकी वाह्यभूमिका विषे जलन
हीहोय एक पृथ्वीका अगम्य दुर्गहै एकपर्वतशिखर अग
म्यदुर्गहै एकमनुष्य सेनाका अगम्य अजेय दुर्गहै एकमृत्ति
का कल्पित अगम्यदुर्गहै एक वनकी सघनताका अगम्य दु
र्गहै यहषट् प्रकारके दुर्गहै ५ ॥

यत्पुरं दुर्गसंपन्नं धान्यायुधसमन्वितं दृ
ढप्राकारपरिखं हस्त्यश्वरथसंकुलं ६ ॥

हे राजन् जोनसा पुर दुर्ग कल्पनाकर्के संपन्नहै सो संपूर्ण
अन्नसंग्रह शस्त्रसंग्रह युक्त कर्तव्यहै दृढइसकी प्राकार कोट
कल्पना कर्तव्यहै और परिखा खाईकी कल्पना संयुक्त कर्त

यहे हाथी घोडा रथोकर्के संयुक्त कर्तव्यहे ८ ॥

विद्वांसः शिल्पिनो यत्र विद्या स्य ससेविताः
धार्मिकश्च जनोयत्र दास्य सुजनम मास्थितः ७

और जहां शिल्पविद्याके अनेक विधानवेत्ताहोवे और शिल्पविद्या
के साधनसामग्रीके संग्रहबहोत प्रकारके होवे और धर्मनिष्ठावा
न जनसंग्रहबहोतहोवे सभही अपने अपने धर्मकर्मकी वा
र्धनिष्ठावानहोवे ७ ॥

ऊर्जस्विनर नागाश्च चवारा पणशोभिते प्र
सिद्धव्यवहारे च प्रशांत मकुतोभयं ८ ॥

और महाबल वेगसत्तावाले मानुषहाथी सूरमा मनुष्यहोवे और
समाचोक विजार कल्पनासे शोभितहोवे प्रसिद्धव्यवहार संपन्न
होवे और उपद्रवशांत जहांहोवे जहा सर्वप्रकारकी निर्भयताहोवे

सप्रभं शांतनादं च सप्रशस्त निवेशने शूरा ८
ढ्यजनसंपन्नं ब्रह्मघो षाद्यनादिते ९ ॥

सुंदर जिसकी दर्शनीयकल्पनाकी प्रभाहोवे और गीतवाद्यादि
धुनि संयुक्तहोवे और सुंदरजिसके प्रवेशनिर्गमके स्थानहोवे
सूरमालोक प्रधानता शीलसंपन्न आर्यलोकोकर्के संयुक्तहोवे
और ब्राह्मणोके वेदपाठ स्वस्तिवाचन पुण्याहवाचनादि शांतिक
पौष्टिक विधानकी वेदमंत्रध्वनिसंयुक्तहोवे ९ ॥

समाजोत्सवसंपन्नं सदापूजितदैवतं वश्या
मात्यबलोराजा तत्पुरं स्वय माविशेत् १० ॥

और अनेक समान उत्सवोकर्के संयुक्त होवे सदा देवपूजासंयुक्त
होवे ऐसे पुरको वनाइ कर राजा अपने अमात्यबलको सेनाबलको
वशकरके आपनिवासवाले प्रवेशकरे १० ॥

ततकोशं बलंमित्रं व्यवहारं च वर्धयेत् पुरे
जनपदे चैव सर्वदोषा न्विवर्तयेत् ११ ॥

हे राजन् तहांराजा प्रवेशकरके कोशवृद्धिकरे बलवृद्धिकरे
मित्रवृद्धिकरे व्यवहारकी वृद्धिभी करे अपने पुरविषेजनपद
के देशविषे जो दोषउत्पन्नहोवे तिन्होको सर्वप्रकारसे निवृत्तकरे ११

भांडागारा युधागारं प्रयत्नेना भिवर्धयेत्
निचयान्वर्धयेत्सर्वां स्तथा यंत्रायुधालयान् १२

और अनेकप्रकारके भांडकल्पनाके यंत्रकल्पनाके शस्त्रकल्पनाके
स्थानजोहे उन्होको अधिक वृद्धकरे और भी जेते संग्रहकरणेके

पदार्थहे तिन्हके संग्रहकोभी हढकरे तैसे मंत्रयंत्र शास्त्रोके संग्रह
कोभीकरे १२ ॥

काष्ठलोह तुषांगार दारुशृंगास्थि वेणवान् म
ज्जा स्नेह वसा क्षौद्र मौषध ग्राम मेवच १३ ॥

और काष्ठ लोहतुष अंगारोके कोले अग्निदीपन दारुहर्णीदारुहर्णी
के शृंगादिपात्र और गज दंतास्थि प्रकार वांसके पिटारी आदिक सं
ग्रहपात्र मज्जा जो चरवी इसका हन तेल और मांस गत स्नेह वसा
माक्षी आदिक मधु और अनेक औषधि समूहभी तहां संग्रहकरे १३

शाणं सर्जरसं धान्य मायुधानि शरां स्तथा च
र्मस्नायु तथा वेत्रं मुंज वल्वज बंधनान् १४

और शाणसूत्र और सर्जरस राल और धान्य सर्वप्रकारके शस्त्र सर्व
प्रकार और बाण अनेकप्रकारके और चर्म अनेकप्रकारके चमडे च
र्मके स्नायु नाडिका तंदी आदिक तैसे वांसोकी रज्जू जेवडी आदि
क और मुंजके छिलके और वी लता इत्यादि त्वचामयरज्जूबंधन
इनका वहोत संग्रहकरे १४ ॥

आशया श्चोदपाना श्च प्रभूतसलिलाकराः नि
रोद्धव्या सदाराज्ञा क्षीरिण श्च महीरुहाः १५

हेराजन् अतिजलसंग्रहकेस्थान और कूपादिक स्वल्पजल संग्रहके
स्थान और तडागादिक महाजलाशय यहसभही राजाने शत्रुथा
रीजनोकर्के यत्नसे रक्षणीयहे जिन्होविषे कोई परायाजन विष
चूर्णादि विकार करणा नही करेसके और दुग्धस्रवणेहारे महावृ
क्षभी यत्नसे रक्षणीयहे १५ ॥

सत्कृता श्च प्रयत्नेन आचार्य र्त्वि कपुरोहिताः म
हेष्वासाः स्थपतयः संवत्सर चिकित्सकाः १६

और आचार्य लोक ऋत्विजलोक पुरोहितादि शास्त्रविधानके वेत्ता
लोक और शस्त्रविद्याके अभ्यासकारी महाधनुर्विद्याके प्रवीण से
नापती आदिक सरदारलोक और लग्नशकुनग्रहवार तिथिनक्षत्र
वारयोग संवत्सरफल ग्रहतोत्पादि फलज्ञानवाले ज्योतिषशास्त्र
वेत्ताजन और रोगादि चिकित्सा ज्ञानवालेजन और शस्त्रघातादिचि
कित्सा ज्ञानवालेजन और विष अग्निपीडा स्तंभवेत्ताजन और यंत्र
मंत्रादिविधानवेत्ताजन जोहे तिन्हको सर्वप्रकारसे यत्नसे सन्मा
मान प्रतिष्ठासे पुरविषे स्थापनकरे पालन पोषणसे रक्षाकरे १६

प्राज्ञा मेधाविनो दान्ता दक्षाःशूराःबहुश्रुताः
कुलीनाःसत्त्वसंपन्ना युक्ताःसर्वेषु कर्मसु १७

हे राजन् जौनसे लोक अनेक शास्त्रोके ग्रंथोंका अर्थज्ञानसंपन्नहे
और जिनको अर्थज्ञानके ऊहापोहज्ञानतरणे विषे समर्थवाली मेधा
बुद्धीहे ऐसे जो पंडितलोकहे और मन बुद्धी इंद्रियोंको दमन करणे
हारेहे और सकल व्यवहारमो कुशलजो लोकहे और महा सूरमा लो
कहे और सकलशास्त्रव्यवहारके श्रोता जनजोहे यह सभही उत्तम
कुलकी धर्ममर्यादा संपन्नहोवे और वलपराक्रम संयुक्तहोवे सर्वप्र
कारकी कार्यसिद्धिविषे योग्यहोवे १७ ॥

प्रजये द्धार्मिकान् राजा निगृह्णीया दधार्मिका
न् नियुंज्या च्च प्रयत्नेन सर्ववर्णा न्स्वकर्मसु १८

जो अपने देशनगरमो धर्मकर्मी लोकहोवे उनको राजा मान प्रजा
करे अधर्मीलोकोको दंडकर्के निग्रहकरे और सर्ववर्णोके लोकोको
अपने अपने वर्णधर्मोविषे नियुक्तकरे १८ ॥

बाह्य माभ्यंतरं चैव पौरजानपदं तथा चारैः स्व
विदितं कृत्वा ततः कर्म प्रयोजयेत् १९ ॥

और अपना जो राजकार्यहे उसको बाह्य देशका आंतरीय व्यवहार
पुरजनोकाव्यवहार देशराष्ट्रका व्यवहार जोहे उसको चारलोको
कर्के सम्यक् ज्ञानकर्के पश्चात्कार्यकरणेविषे सभलोकोको यु॰
क्तकरे १९ ॥

चारान् मंत्रं च कोशं च दंडं चैव विशेषतः अनु
तिष्ठेत्स्वयं राजा सर्वं ह्यत्र प्रतिष्ठितं २० ॥

हे राजन् चारोंके व्यवहारको कोशखजानेके व्यवहारको मंत्रवि
चारकेव्यवहारको और दंडनीतिकेव्यवहारको राजा आपही अ
वश्य निर्णयकर्के देखे सभही राजधर्मका तत्त्वअपने देखनेमो
ही प्रतिष्ठितहे २० ॥

उदासीनारि मित्राणां सर्वमेव चिकीर्षितं पु
रे जनपदे चैव ज्ञातव्यं चारचक्षुषा २१ ॥

जौनसे अपने राजमंडलके उदासीन राजालोकहे शत्रुरूपजो रा
जालोकहे और अपने मित्रराजालोकजोहे और पुरवासी देशवासी
जो लोकहे उनका जो कार्यकरणेका निश्चय जोहेसो चाररूपी अ
पने चाररूपी नेत्रोकर्के राजा आप देखे २१ ॥

ततः स्वेषां विधातव्यं सर्वमेवा प्रमादतः भक्ता
नुजयता नित्यं द्विषतश्च निगृह्णता २२ ॥

जो कछु चार हारसे सभ लोकोका व्यवहारहजौन विदितभयाहे

उसको मंत्रीजनोसे संमतीकरे तदनंतर सर्वव्यवहारके निर्णयको
सावधानतासे प्रमादरहितकरे वहीउ राजा धर्मकर्के अपनी सेवाकारी
जनोको मानसत्जाका अनुग्रहकरे और धर्मद्वेषकारी शत्रुजनोको नि
ग्रहकरे २२ ॥

यष्टव्यं क्रतुभिर्नित्यं दातव्यं चाप्यपीडया प्रजा
नो रक्षणं कार्यं नकार्यं धर्म बाधकं २३ ॥

सदा यज्ञयागादिकोकर्के परमेश्वरका यजनकरे और लोकपीडावि
ना प्राप्तभये द्रव्यकर्के दानदानव्यहे प्रजालोकोंका रक्षणाकर्तव्यहे
और धर्मबाधाकारी जनोंका पालन नहीकरणा उनको दंडकर्के प्रा
सन करणा २३ ॥

कृपणानाथ वृद्धानां विधवानां च योषितां यो
गक्षेमं च वृत्तिं च नित्यमेव प्रकल्पयेत् २४ ॥

हे राजन् कृपण दीन अनाथ वृद्धजनोका और विधवा निर्धन ईस्त्री
योंका उपजीविकाका प्रयत्न रक्षा धर्म मर्यादाकी पालना वृत्ति स
र्वप्रकारसे नित्यही राजाकरे २४ ॥

आश्रमेषु यथाकालं चैलभाजन भोजनं सदै
वोपहरे द्राजा सत्कृत्याभ्यर्च्य मानदः २५ ॥

और जहां जहां अपने देशमों तपसी ब्रह्मचारी त्यागी संन्यासी आ
श्रमो विषेहें तिन्हको शीत उष्ण वर्षाकालके यथायोग्य वस्त्र पात्र
भोजनादिकसदाही मानसत्कार पूजाकर्के आपही अधिकवि वि
चारसे पहुचायदेवे २५ ॥

आत्मानं सर्वकार्याणि तापसे राष्ट्र मेवच नि
वेदये त्प्रयत्नेन तिष्ठेत्प्रह्वश्च सर्वदा २६ ॥

हे राजन् जोकोई उत्तम वृत्तिवाला त्यागी योगी ब्रह्मचारी ब्राह्मण
संन्यासी उत्तमहै उसको राजा आप जायकर्के प्रणामकरे उसको प्र
पना आप धर्म कर्म राजकार्य सभही निवेदन करे हे स्वामीजी यह
सभही हमारा देह प्राणधा जीवन धन संपदा पुत्र मित्र कलत्रा
दि कुटंब राज्यभोग आपके प्रसादकाहे ऐसे प्रार्थनाकर्के सदा
नम्रवृत्ति होवे २६ ॥

सर्वार्थी त्यागिनं राजा कुले जातं बहुश्रुतं पू
जये त्तादृशा दृष्ट्वा शयना सन भोजनैः २७

विशेषकर्के सभसे उत्तम सर्वत्यागवाला उत्तम कुलकी मर्यादा
वाला बहुत शास्त्रश्रवण ज्ञाननिष्ठावाला जो कोई मुख्य तपस्वी हो
वे उसको देखकर्के जैसी उसकी प्रसन्नता होवे तैसेही शयनासन

श्री॰
रा॰ ध॰
टी॰
८२

67

भोजनकर्के सदा शुश्रूषा करे २७ ॥

नास्मि न्कुर्वीत विश्वासं राजा कस्यांचि दापदि
तापसेषु हि विश्वास मपि कुर्वंति दस्यवः २८
हे राजन् राजाको किसीकाभी विश्वास नही कर्तव्यहे परंतु किसी
आपदाके निमित्त स्वधर्मनिष्ट ऐसे तपस्वीका विश्वास कर्तव्यहे जो
नसे चोरादि लोकहै सोभीविश्वास किसीका नही करते तोभी ताप
स जनोका विश्वास चोर लोकभी करतेहे ताते चोरादिकजनोकेग्र
हण यतन तापस जनोका विश्वास कर्तव्यहे २८ ॥

तस्मि न्निधी नादधीत प्रज्ञां पर्या दधीतच न
चाप्य भीक्ष्णं सेवेत भृशंवा प्रतिपूजयेत २९
ऐसे तापस जनविषे विश्वासवास्ते कछु अपना रत्नादि पदार्थ स्था
पनकरे तहांसे शत्रु चोरादिकानकी बुद्धि ग्रहणकरे और अतिशाय
कर्के तापसोकी सेवानही करे और अत्यंत सजाका अभाव भी नहीक
रे राजा योगी अग्रजल इनकी उलटीरीत इस प्रमाणको स्मरणकरे २९

अन्यः कार्यः स्वराष्ट्रेषु परराष्ट्रेषु चापरः पररा
ष्ट्रा टवीस्थेषु यथास्व विषये तथा ३० ॥
लोकविश्वासवास्ते एक तपस्वी अपने राष्ट्रमो स्थापनकरे एकतप
स्वीको परके राष्ट्रमो करे और एक तपस्वी दुर्गम गाड़ी आदिकस्थ
स्थानमो एक तापसको राजमंडलके राज नगरोविषेकरे ३० ॥

ते कस्यांचि दवस्थायां शरणं शरणार्थिने राज्ञे
दद्यु र्यथाकामं तापसाः संशितव्रताः ३१ ॥
हे राजन् कोई आपदा कालकी अवस्थामो राजा लोकका अपनी
शरण तापसोविषे वांछा करतेहे ऐसे व्रतनिष्ठावाले तपस्वीलो
क राजाको शरणागत जानकर शरण देतेहे ३१ ॥

एषते लक्षणोद्देशः संक्षेपेण प्रकीर्तितः या
दृशे नगरे राजा स्वय मावस्तु मर्हति ३२ इति
राजधर्मे दुर्गपरीक्षाऽध्यायः ८६ ॥
हे राजन् यह तुमको राजाके निवास नगरोके एकदेश करके ल
क्षणोका समुदाय संग्रह संक्षेपकर्के कहाहे जैसे नगरको आप
विचारकर्के निवासकरणे को योग्य होताहे ३२ इतिश्रीमहाभारते
शांतौ राजधर्मे दुर्गा नगरादिपरीक्षा षडशीतितमोऽध्यायः ८६ ॥

युधिष्ठिर उवाच राष्ट्रगुप्तिंचमे सम्यग्राष्ट्रस्यैव तु
संग्रहं सम्यग् जिज्ञासमानाय प्रब्रूहि भरतर्षभ १

युधिष्ठिरउवाच हे भरतर्षभ नगर गुप्ति प्रकार आपसे सुनाहै
मेरे मनविषे राष्ट्रगुप्ति श्रवणकी वांछाहै ताते राष्ट्रपालनकी
विधी मोको अब आप कहो १ ॥
भीष्मउवाच राष्ट्रगुप्तिं वते सम्यग्राष्ट्रस्यै वत
संग्रहं हंत सर्व प्रवक्ष्यामि तत्व मेकमनाः
भीष्मउवाच हे राजन् राजकी पालन हन्नीकोजे शृणु २
र राष्ट्रकी संग्रह जोहै वशीकार हन्नीकोभी मे तोको कहताहुं
तुम इसको एक मनकी सावधानतासे श्रवणकरो २ ॥
ग्रामस्याधिपतिःकार्यो दशग्राम्या स्तथाप
रः द्विगुणायाः शतस्यैवं सहस्रस्य च कारयेत् ३
हे राजन् प्रथमतो राष्ट्ररक्षा विधिवास्ते एकग्रामका एकग्राम
स्वामीकरे इसीप्रकार दशग्रामोका एकस्वामी एकवीसग्रामो
का एकस्वामी एकशतग्रामोका एकस्वामी एकसहस्रग्रामो
का एकस्वामीकरे इसीप्रकार लक्षकोट्यादिग्रामोकेस्वामी प्र
त्येककरे ३ ॥
ग्रामेयान् ग्रामदोषांश्च ग्रामिकः प्रतिभावये
त् तान् ब्रूया दशपायासौ सतु विंशतिपायवे ४
अब रक्षा प्रकार कहते है हे राजन् ग्रामका स्वामी जोहै सो ग्रा
मी जनोके गुणदोषोको और ग्राम भूमिको देश कालके गुण
दोषो आप जतनसे सम्हारे जो अपनेसे सो गुणदोष सुधारे
नही जावे तो दशग्रामोके स्वामीको सुनायकर उसकी संमती
से सुधारे दशग्रामस्वामीसे गुणदोषनही सुधारे जावेतो वी
शग्रामोकेस्वामीके मनसे सुधारे ४ ॥
सोपि विंशत्यधिपति र्वृत्तं जानपदे जने ग्रामा
णां शतपालाय सर्व मेव निवेदयेत् ५ ॥
वीशग्रामके स्वामीसे गुणदोषनही सुधारे जावेतो शतग्राम
स्वामीके मनसे वीशग्रामेश सुधारे इसि प्रकार शतग्रामेश
सहस्रग्रामेशके मनसे सुधारे ५ ॥
यानि ग्राम्याणि भोज्यानि ग्रामिक स्ता न्युपाश्नि
येत् दशप स्तेन भर्तव्य स्तेनापि द्विगुणाधिपः ६
हे राजन् अब इनकी भोग्यहतिको सुनो जोनसे ग्रामके अन्न
पान शाक तरकारी फलफूल दधिदुग्धादिक ग्रामी लोकोने
राजाको दानमहे सो नित्यही अवश्यदानमहे राजा हर देशा

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
८८

68

नर मोहे ओर फल पुष्प दधिदुग्धादिक राजा ततकाल पहुचनही
सकते दिनांतरमो विकृत होजातेहे इन्हको राजाका प्रतिनिधि
होकर ग्रामेशग्रहणकरे जो राजद्रव्य ग्रहणसे भयभीनहोवे तो
उसको वेचकर्के मोलका संग्रहकरे इसप्रकार ग्रामेशान दश
ग्रामेशको निवेदनकरणो उसने दशग्रामेशने विंशति ग्रामेश
को निवेदनकरणो उसने शतग्रामेशको उसने सहस्रग्रामेशको
निवेदनकरे ६ ॥

ग्रामं ग्रामशताध्यक्षो भोक्तुमर्हति सत्कृतः
महांतं भरतश्रेष्ठ सुस्फीतं जनसंकुलं ७ ॥

अब इन्हको राजाने जो वृत्ति दातव्यहे उसको कहतेहे राजाने
जोवृत्ति ग्रामेशादिकोको दातव्यहे उसको कहतेहे ग्रामेशको
एकहलकी वृत्ति दातव्यहे दशग्रामेशको दशहलकी वृत्ति
दातव्यहे शतग्रामेश एकग्रामकी वृत्तिपावे मानसत्कार ग्रा
मीन लोकोसे पावे हे भरतश्रेष्ठ महाग्रामको समृद्धीवाले
जनसमूह संयुक्त मानप्रजाको पावे ७ ॥

तत्र ह्यनेक पायत्तं राज्ञो भवति भारत शा
खा नगर मर्हस्तु सहस्रपति रुत्तमः ८

हेभारत उसी राष्ट्र देशमो शतग्रामसे अधिक सहस्रग्रामसे
ऊन अनेक ग्रामेश जोहेसो द्विगुण त्रिगुण संपदावाले म
हाग्रामको भोगने योग्यहोताहे ओर सहस्रग्रामे शजोहे सो
शाखानगरजोहे जिसके आसपाश दशग्रामहे उन्हके द्रव्यरा
शिके धनको सहस्रग्रामेशपावताहे ८ ॥

धान्यं हिरण्य भोगेन भोक्तु राष्ट्रीयसंगतः
तेषां संग्रामकृत्यं स्या द्ग्रामकृत्यंच तेषु यत् ५

धान्यको ओर सुवर्णादि द्रव्यको राष्ट्रसंबंधसे सोई सहस्र ग्रा
मेश पावताहे हे राजन् जोन से यह ग्रामेश राजाने कियेहे
इन्हको राजाने संग्रामकृत्य करावणा ओर ग्रामरक्षाका कृत्य
भी करावणा ९ ॥

धर्मज्ञः सचिवः कश्चित् तत्प्रपश्ये दतंद्रितः
नगरे नगरे वास्या देकः सर्वार्थ चिंतकः १०

अब ग्रामेशादिक जोहे इन्हकाभी गुणदोषज्ञानवाले एक ध
र्मज्ञ अमात्य कोई आलस्य त्यागकर्के इन्होका ओर ग्रामजनोके
व्यवहार देखणोहारा ग्रामग्रामविषे अथवा नगर नगरविषे
सर्वप्रकारके अर्थव्यवहारको चिंतासे विचारकरणेहारा स्या

नाधिपति राजाने कर्तव्यहे ९ ॥

उच्चैः स्थाने घोररूपो नक्षत्राणामिव ग्रहः भवे
त्तता न्यरिक्तामे त्सवीने व सभासदः ११ ॥

अधिक उत्तमस्थानविषे सभको अधर्म व्यवहारके भयवास्ते
विद्या शास्त्रादिसंपन्न घोररूप जैसा ग्रहनक्षत्रोका स्वामी सूर्य
है ऐसा तेजप्रभावसंयुक्त कर्तव्यहे सो स्थानाधिपति सो ग्रामे
शादिकोको और ग्रामनगरादि सभ्यलोकोको राजाज्ञाके वलसे
व्यवहारचर्याके नियोगवास्ते राजाके समान आज्ञाशासनकरे ॥

तेषां वृत्तिं परिणये त्कापि दाष्टेषु तच्चरः जि
घांसवः पापकामाः परस्वादायिनः शठाः १२

जेते यह राजाके अधिकारीहे इन्की शुभा शुभ वृत्तीको स्था
नाधिपतीका कोई एक चार जो हे सो उसस्थानपतीको निवेद
नकरे यह ग्रामेशादिक जोहेसो राजाने प्रजाकी रक्षावास्ते
अधिकारी कियेहे सो रजोगुणके वेगवलसे प्रजाको पापह
त्तिसे माराचा हतेहे परद्रव्यको हरणेहारेहे महाछलवृत्ति हो
तेहे १२ ॥

रक्षाभ्य धिकृतानाम तेभ्यो रक्षे दिमाः प्रजाः
विक्रयं क्रय मध्वानं भक्तं च सपरिछदम् १३

राजाने तो रक्षाधिकारी कियेहे सो सभही पाप वृत्तिजवहो
वे तवस्थानाधिपति अधिकारी जनोकी पापवृत्तीसे प्रजालो
कको रक्षाकरे हेराजन् नगरोविषे ह्नेत्रोका अभावहे ताते
नगरवासी वैश्यजनोसे जो क्रय विक्रयका करआवे उसके
भागसे स्थानाधिपतीकी वृत्तिभी कल्पितहोवे १३ ॥

योगक्षेमं च संप्रेक्ष्य वणिजां कारये करान्
उत्पत्तिं दानवृत्तिं च शिल्पं संप्रेक्ष्य वा सकृत् १४

हे राजन् व्यापारी जनोकी व्यापारकी लाभ वृद्धिको और मूल
रक्षाको विचारकर्के और शिल्पिजनोकी शिल्पविद्याकी उत्पत्ति
और शिल्पकरणोकी दान वृत्तिको और शिल्पकरणोकी निपुण
ताको सम्यक् विचारकर्के १४ ॥

शिल्पं प्रतिकरानेव शिल्पिनः प्रतिकारयेत्
उच्चावचकरादाप्याः महाराज्ञा युधिष्ठिर १५

हेयुधिष्ठिर एकएक शिल्पप्रति इसप्रकारसेशिल्पीजनोके प्र
ति महाराजाने उचेनीमे करदिवाने प्रमाण मर्यादासे करणे यो
ग्यहे १५ ॥

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
६९

69

यथा यथा नसीदेरंस्तथा कुर्यान्महीपतिः फलं
कर्मच संप्रेक्ष्य ततः सर्वं प्रकल्पयेत् १६ ॥

जैसा जैसा प्रमाण करलेकर्के व्यापारीलोक शिल्पीलोक अपने अ
पने व्यापारकर्मविषे शिल्पकार्यविषे क्लेश दुखकर्के प्रतिबंधको
नहीपावे तैसे सभको कर्मको और लाभ फलकोभी विचारकर्के य
हराजा सभसे करादान मर्यादाको करे १६ ॥

फलं कर्मच निर्हेतु नकश्चित्संप्रवर्तते यथा
राजा च कर्ता च स्यातां कर्मणि भागिनौ १७

हे राजन् कार्यकरणेके उद्यमको और लाभफलको प्रतिक्रमके
हेतु विचारविना कोई जीवजातिनही प्रवृत्तहोता तातें जैसे कर्मक
र्ता और राजा कर्मफलको लाभ भागी होवे १७ ॥

समवेक्ष्य तथा राज्ञा प्रणेयाः सततं कराः नो
च्छिद्यादात्मनो मूलं परेषां चापि तृष्णया १८

जैसे राजाने विचारकर्के सदाकर ग्रहणके विभाग प्रकार प्रमा
णकर्नेयहे राजाभी अपने करग्रामीके मूलको और परायेकी ला
भग्रामीके मूलको और परायेकी लाभग्रामीके मूलको अपनी
तृष्णाकर्के छिन्नभिन्न नहीकरे १८ ॥

ईहाद्वाराणि संरुध्य राजा संप्रीतदर्शनः प्रद्वि
षंति परिख्यातं राजानमतिखादिनं १९

हे राजन् राजा जोहे सो जे जेने अति लाभ तृष्णाके अधर्मलाभके
द्वारहे उनको सर्वप्रकारसे रोककर्के जितचित्तहोकर्के सदा
प्रसन्न मनहोवे जोनसा राजा अतिलोभकर्के प्रजाको भक्षणक
रणेसे प्रसिद्धभयाहे उसको अपने पराये सभही प्रजालोक द्वे
षकरतेहे उसकी राज्यहानिको सभही वांछाकरतेहे १९ ॥

प्रद्विष्टस्य कुतःश्रेयो नाप्रियो लभते फलं व
त्सौपम्येन दोग्धव्यं राष्ट्रमक्षीणबुद्धिना २०

जौनसा सभके द्वेषवालाहे उसको प्रियकौन मानताहे जिसको
लोक प्रियनहीमाने उसको सुखभोगका फलनही होताहे राज्य
ने राष्ट्रको वछाकी उपमाकर्के वृद्धी की क्षीणता का भोक्तव्यहे २०

भृतो वत्सो जातबलः पीडां सहति भारत नक
र्म कुरुते वत्सो भृशं दुग्धो युधिष्ठिर २१ ॥

हेभारत जो वछाको दुग्ध पानसे पालन कियातो वछावडा हो
कर बलप्राप्तिको प्राप्तहोताहे तो भार उठावने की पीडाको भी
सहार सकताहे हेयुधिष्ठिर प्रथमही वछाको अतिदुग्धके दोह

न से हीणवल कियातो वल हद्वीसे हीन होताहे भारवाही
कर्मको नही करसकताहे २१।
राष्ट्रं मथ्नाति दुर्बुद्धि नकर्म कुरुते महत् यो
राष्ट्रमनुगृह्णाति परिरक्षन् स्वयं नृपः २२
हे राजन् इसी प्रकारसे राजाने अतिदोहन कियातो राजाको थ
न संपदाकी हद्वीको यशोहद्वीको नही करता जो राजा अपने
राष्ट्रको राजनीतिसे अनुग्रह करताहे प्रजाको आपही विवेकसे
पालन करताहे रक्षा करताहे २२ ॥
संजातमुपजीवन्स लभते सुमहत्फलं आ
पदर्थं च निर्याते राजा न इह विंदते २३ ॥
संपदावान राज्यको पालनसे करे उसकर्के अपना उपजीवनकरे
राजा तो महासुख भोगके फलको प्राप्तहोताहे जो राजा आप
दा तरणेको द्रव्यप्राप्ति चाहेतो प्रजापीडनेसे अर्थप्राप्तीको नही
लभताहे २३ ॥
राष्ट्रे च कोशभूतं स्यात्कोशो वेश्मगतस्तथा
पौरजानपदान् सर्वान् संश्रितो पाश्रितांस्तथा २४
जिस राजाका राष्ट्र कोश खजानेको वहो नफेरे और जिस राजाके
कोश खजाना अपने गृहमो प्राप्तहोवे सो राजा अपने पुरवासी ज
नोको और जनपदवासी आसपास आश्रित उपाश्रित लोकोको २४
यथा शक्त्यनुकंपेत सर्वान्स्वल्पधनानपि वा
ह्यं जनं भेदयित्वा भोक्तव्यो मध्यमः सुखं २५
यथाशक्ति यथोचित अनुग्रहकरे और स्वल्पधनवाले लोकोकोभी
अनुग्रहकरे और वाह्यराजमंडके लोकोकोभी भेदकर्के अपने व
शकरलेवे तो सभ लोकोको एसा कहे तुम इहां चोर भयसे उट
कर हमारे निकटसमीप निवासकरो अपने मध्यराष्ट्रके लोको
को संपन्नकर्के धनसंपदाको भोगसुखसे भोगतारहे २५ ॥
एवं नास्य प्रकुप्यंति जनाः सुखित दुःखिताः
प्रागेव तु धनादानमनुभाष्य ततः पुनः २६
हे राजन् इस प्रकार अनुग्रहकरणेसे राजाविषे सुखी दुखी जेसी
अपनी पराई प्रजाजोहे सो कोपहानिकी नही करते ताते जो राजा
कों अपने वश कियाचाहे सो प्रथमही धनग्रहणेकी वार्ता प्रजा
को अपने वशहोकर निवासकरे तव व
ण नहीकरे जव प्रजालोक अपने वशहोकर निवासकरे तव व
होउ ऐसा करे २६ ॥
संनिपत्य स्वविषये भयं राष्ट्रे प्रदर्शयेत् इय

श्री॰ वा॰ ष॰ टी॰ ७॰

७०

माप समुत्पन्ना परचक्रभयं महत् २७ ॥

अपने वश होजावे तब राजा अपने राज्यविषे आपदाका भय दिखावे है लोका यह आपदा इस देसविषे प्राप्तभईहै परचक्रका भय महा प्राप्तभयाहै २७ ॥

अपि चात्मकल्पेते वेणो रिव फलागमः अ
रयो मे समुत्थाय बहुभि र्दस्युभिः सह २८

इस प्रकार अपने देशके ग्रामोविषे आप जायकर्के कहै चौरोके भय निहत्त करणेको धनकी अपेक्षा मोको भईहै यह सभही चोर लोक और शत्रुलोक सभही इसदेशके अंतकरणेको उद्यमकरतेहै २८

इद मात्मवधायेव राष्ट्र मिच्छंति बाधितं अ
स्या मापदि घोरायां संप्राप्ते दारुणे भये २९

यह शत्रुलोक और चौरलोकभी अपने विनाशवास्तेही ऐसी इस घोर आपदाविषे महाचोरभयप्राप्तभयाहै २९ ॥

परित्राणाय भवतः प्रार्थयिष्ये धनानिवः प्र
तिदास्ये च भवतां सर्वं चाहं भयक्षये ३० ॥

तुम लोको की रक्षावास्ते तुह्मारे धनकी वांछा करताहुं अबतुमसे धनग्रहणकर्के आपदा निहत्तिकरके जब भय निहत्त होवेगा तुह्मारको मै धन देवोगा ३० ॥

नारयः प्रतिदास्यंति यद्धरेयु र्बलादितः कल
त्र मादितः कृत्वा सर्वं वो विनशेदिति ३१ ॥

जो शत्रुलोक तुह्मारे धनको ले जावेगे सो तुमको धन नही देवेगे तुह्मारे कुटंब स्त्री पुत्रादिक सभही विनाशको प्राप्तहोवेगा

अपि चेत्पुत्र दारार्थ मर्थसंचय इष्यते नंदामि
वः प्रभावेन पुत्राणा मिव चोदये ३२ ॥ २१

धन संग्रहकी कल्पना पुत्रदारादिकुटंब सुखवास्तेहीहै ताते जब यह आपदा निहत्त होवेगी तब जैसे पुत्रोके उदयविषे आनंद सुखहोताहै तैसे मैभी तुमको पुत्रोकी न्याई आनंद सुखकरेगा ३२ ॥

यथा शक्त्युपगृह्णामि राष्ट्रस्या पीडया वयः
आपत्स्वेव हि वोढव्यं भव द्भिः पुंगवै रिव ३३

अबमे जैसी तुह्मारी यथाशक्ति धनदेनेकीहै तैसे ही आपसे धन ग्रहण करताहुं अपने राष्ट्रकी पीडाको मैभी नही चाहता यह आपदा निहत्तकरणेका भार तुमने महाधुरंधरोकी न्याई धारणे योग्यहै ३३ ॥

नच प्रियतरं कार्यं धनं कस्यचि दापदि इ
तिवाचा मधुरया श्लक्ष्णया सोपचारया ३४
जो कदाचित् कोई आपदा प्राप्तहोवे तव धनकिसीको प्रिय
नहीहोता इस प्रकार मधुर प्रियवाणीकर्कै सभको उपचारक
र्कै सुखको करतीहै ऐसी वाणीकर्कै प्रसन्नकरलेवे ३४ ॥
स्वरश्मीन भ्यवसृजे योग मादाय कालवित
प्रकारं मत्यमरणे धने संग्रामतो भये ३५
हे राजन् जैसे सूर्यभगवान् पृथवीविषे जल आकर्षणवास्ते
अपनी किरणोको युक्तकरताहै तैसे राजाभी अधिकारी लोको
केपेदले जोहै तिन्हका धनग्रहणवाले प्रेषणकर्कै देशकाल
की युक्तिकर्कै संहरणी प्रजासे आपदानिहानिवास्ते धनको लेवे ३५
योगक्षेमं च संप्रेक्ष्य गो मिनःकारये त्करान्
उपेक्षिता हि नश्येयु र्गोमिनो रण्यवासिनः ३६
जोनसे गोउचरणोहावे जोगो पालीलोकहै उन्हकाभी गोपाल
नेका योगक्षेमकी वृद्धिलाभदेषकर अपना करलेना रक्षा पा
लनकीविधीसे सांत्वविधीकर्कै करे उन्हकी रक्षापालनविषे
उपेक्षा नहीकरे उपेक्षासे गोपालीलोक वनवासीलोकहो
तेहै सो सताबी नशजातेहै ३६ ॥
तस्मा त्तेषु विशेषेण मृदुपूर्वं समाचरेत् सां
त्वनं रक्षणं दान मवस्था चाप्य भीक्ष्णशः गो
मिनांपार्थ कर्तव्यः संविभागः प्रियाणिच ३६
ताते उन्हके साथ मृदु उपायपूर्वक करलेना प्रमाणकरे उन्ह
की सांत्वनाकरणी रक्षाकरणी दानदेना अवस्था उन्हकी सर्व
प्रकारसे सावधान करणी ३६ ॥
प्रजस्व मुपयोक्तव्यं फलं गोमिषु भारत प्र
भावयंति राष्ट्रंच व्यवहारं कृषिंतथा ३७
इस प्रकार गोपाली लोकभी विभागसे प्रियवचनकर्कै व
धाकरणे उन्हकोभी ऐसे कहना यह कार्य आपदाका प्राप्त
भयाहै अवश्य तुमने भी अपने द्रव्यकाविभागसे दातव्यहै
इस प्रकार निरंतर फलभोगका उपयोग कर्तव्यहै ३७ ॥
तस्मा द्गोमिषु यत्नेनप्रीतिं कुर्या द्विचक्षणः
दयावान प्रमत्त श्च करा नसंप्रणये त्सदा ३७

शां॰
रा॰ ध॰
टी॰
७१

हे भारत गोपाली लोकजोहेसो राष्ट्रको दृढकरतेहे सकलजन
व्यवहारको अपनी हानिसे दृढकरतेहे कृषीकोभी दृढकरता
ते गोपाली लोकोविषे सभसे राजा अधिक प्रीतीकरे ३७ ॥

सर्वत्र क्षेमचरणं सुलभं नाम गोमिषु नत
तः सदृशं किंचि दुरमस्ति युधिष्ठिर ३८
इति श्री शांतौ राजधर्मे सप्ताशीतितमोऽध्यायः

आप राजा दयावान् होकर ऋटुउपायसे उनके करो ८७
कोभी ऋटु प्रकारकेहीकरे राजाको सर्वत्र क्षेमकल्याण करणा
उत्तमहे सो क्षेम कल्याण गोपाली लोकोविषे सुलभहे ताते
हे युधिष्टिर सर्वत्र प्रजाविषे सुहृदभावजोहे इससे श्रेष्ट प्र
जापालनका उपाय अवर नहीहे ३८ इति श्री राजधर्मेषु स॰
माशीतितमोऽध्यायः ८७ युधिष्ठिरउवाच ॥

युधिष्ठिरउवाच यदाराजा समर्थोपि कोशार्थी
स्यान्महा मते कथं प्रवर्तेत तदा तन्मे ब्रूहि पि
तामह १ ॥ हे पितामहजी राजासंपदाकी संपन्नतासे
समर्थभीहे वहोउभी कोशाहृद्धीकी वांछाकों
करे तव कौनउपायकीरीतिसे प्रवृत्तहोवे उसरीतिके मार्गकों
आपकहो १ ॥

भीष्मउवाच यथादेशं यथाकालं यथाबुद्धि
यथाबलं अनुशिष्यात्प्रजाराजा धर्मार्थी तद्धि
तेरतः २ ॥ भीष्मउवाच हेराजन् जोराजा अपनी कोशवृ
द्धीकी वांछाकरे तो प्रजाकों यथाकाल यथादेश यथाबुद्धि य
थाबल सभही उचितजानकर प्रजाको शासनकरे धर्मप्रवृत्ति
वाले प्रजाके हितकरणेविषे रतहोवे २ ॥

यथा तासां च मन्येत श्रेय आत्मन एव च
तथा कर्माणि सर्वाणि राजा राष्ट्रेषु वर्तयेत् ३
जव राजा अपने हितकों प्रजाके हितकल्याणकी वांछाकरे
तो संपूर्ण राष्ट्रदेशमो जेते धर्म कर्मोको सर्वप्रकारसे प्रवृत्त
करे ३ ॥

मधुदोहं दुहेद्राष्ट्रं भ्रमराइव पादपं वत्सा
पेक्षी दुहेच्चैव स्तनांश्च नविकुट्टयेत् ४
जैसे भ्रमर वृक्षको पीडाविना मधुको दोहन करताहे जैसी
प्रजाकी पीडाविना मधुदोहनरीतिसे धनरूपी मधुको प्रजा
वृक्षसे दोहनकरे जैसेवछाकी पालन अपेक्षा करके दुग्धको

दोहन करहे गौके स्तनकी कुहनपीडा नही करने तैसे प्रजापीडन
नहीकरे ४ ॥

**जलौकावत् पिबे राष्ट्रं मृदुनैव नराधिपः व्याघ्री
वच हरे त्पुत्रान् संदंशे नच पीडयेत् ५ ॥**

जैसे जोंक मृदुमुख प्रयत्नकर्के रुधिरपान करलेतीहे तैसे राजा
पालनरूपी मृदु उपायसे प्रजाको दोहन करे जैसे व्याघ्री अपने
पुत्रोंको दांतोसे पीडानही करती और निर्भयस्थानको दांतोसेही
ग्रहणकर्के लेजातीहे तैसेही राजाभी रक्षाके उपायसे प्रजाको अ
पने अपने उपजीविका कर्मविषे प्रवृत्तकरे ५ ॥

**यथा शल्यकवाना खुः पदंधूनयते सदा अती
क्ष्णेना भ्युपायेन तथाराष्ट्रं समापिबेत् ६ ॥**

जैसे शल्यकवान् मूषकजानीहे निद्राको प्राप्तभए पुरुषके पाद
तलमांस मृदुमुखसंयोगसे मांसको भक्षणकरताहे निद्रावाला
पुरुष मंदमंदचरणको कंपनकरताहे तीव्रपीडाविना जाग्रतन
हीहोता उस मूषेको अपने चरणसें निवारणा नहीकरता तैसेही
राजाभी अपने राष्ट्रको मंदमंदकरलेणेसे पीडा नहीकरे और श
नै शनै राष्ट्रके सार रसको पानकरे ६ ॥

**अल्पेनाल्पेन देयेन वर्द्धमानं प्रदापयेत् ततो
भूयस्ततोभूयः क्रमवृद्धिं समाचरेत् ७ ॥**

अल्प अल्प करादानकर्के राष्ट्र वृद्ध होता जाताहे जैसे जैसे राष्ट्र
वृद्ध होताजावे अधिकसे अधिककरको वृद्धी क्रमसे अधिकारी ज
नोकेद्वारा दिवावे ७ ॥

**दमयन्निव दम्यानि शश्वद्भारं विवर्द्धयेत् मृ
दुपूर्वं प्रयत्नेन पाशानभ्यवहारयेत् ८ ॥**

जैसे दमन करणे योग्य जो वच्छे आदिक भारवाहनेयोग्य पशुग
णहे उन्हको क्रमक्रमसे दमनकर्के भारको वधावतेहे तैसे क
म क्रमसे मृदुकरकेकरवृद्धिकर्के लेवे ८ ॥

**सकृत्पाशावकीर्णास्ते न भविष्यंति दुर्दमाः उ
चिते नैव भोक्तव्या नभविष्यंति यत्नतः ९ ॥**

जो एकवारही प्रथम उग्रकरकी पाशीसे बांधलिये तोउन्हका जी
वन कठिनहे याते सभका वशीकाररूपी दमनकरणा कठिन
होताहे ताते मृदुकरलेना उचितहे इसीकर्के सभको ग्रसकरले
वे और यत्नसे वशनहीहोवेगे ९ ॥

तस्मात्सर्वसमारंभो दुर्लभः पुरुषंप्रति यथा
मुख्यान्सांत्वयित्वा भोक्तव्याइतरेजनाः १० ॥
तातें हे राजन् सभको एककालमो एक एक पुरुषके प्रति वशक
रण दुर्लभहै तातें जो जो उन्होंविषे मुख्य मुख्यहै तिन्हको सांत्ववच
नोकर्के वशकरे तो उन्हकेद्वारा और भी सभ वशहोजातेहैं १० ॥
ततस्तान्भेदयित्वातु परस्परविवर्तिनान् भुं
जीत सांत्वयेच्चैव यथा सर्वमयत्नतः ११
सभही मुख्य पुरुषके द्वारा अपना अभीप्रायकहनेको वांछाकरते
हैं तव उन्हको भेद ले कर्के वशीकारसे भोगे और सुगम उपायके य
तनसे सभको सांत्वनाकरे ११ ॥
नवा स्थाने नवा काले करं लोभ्यो निपातयेत्
आनुपूर्व्येण सांत्वेन यथाकालं यथाविधि १२
और देशकालके विचार विना उन्हसे कर नहीलेवे क्रमपूर्वक दे
शकाल विधिसे सामपूर्व उपायकर्के वशीकार कर भोगे १२ ॥
उपाया न्प्रब्रवीम्येता न्नमे माया विवक्षिता अ
नुपायेन दमयन् प्रकोपयति वाजिनः १३
हे राजन् मे तमको प्रजाकारके उपायकहताहुं इहां मायाकप
ट कहना उचितनहीहै जो उपायविना म्हडकरविना प्रजाको व
शीकारचाहेतो सांत्ववचनविना सभको उद्विग्न चित्त करदेता १३ ॥
पानागारनिवेशाश्च वेश्याःप्रापणिकास्तथा कु
शीलवाः सकितवा येचान्ये कोपि दीदृशाः १४
सभको वशीकार धर्मरक्षासे अधर्मदंडसे होताहै इसवास्ते मदि
रापानकी शालामोअपने रक्षा पिकारोक पुरुष नियुक्तकरणे जो
नसे वेश्याजनहै और स्त्रीपुरुषोके परस्पर संदेशा लेजानेहारी
कर्के कुटनीयांहै और नटलोक जोहै और जू आहून कारी लोक
है और वी जोकोई य मिवि रायकारी लोकहै १४ ॥
नियम्याः सर्वएवैते येराष्ट्रस्यो पघातकाः एते
राष्ट्रे भितिष्ठंतो वाधंते भद्रिकाः प्रजाः १५ ॥
सो सभही राष्ट्रके विनाशकारीहै सभही पकडकर दंडशासनासे
निकासने योग्यहै सभको जेल खाने मो रोकने योग्यहै जो ऐसे नीच
वृत्तिलोक राज्यमो यथेष्ट विचरेतो धर्मकर्मवाली कल्याण रूपी प्र
जाको धर्म कर्मसे विगाडकरदेतीहै १५ ॥
न केनचि द्याचि तव्यः कश्चि त्किंचि दनापदि इ

ति व्यवस्था भूतानां धर्मस्य मनुना कृता १६
इन्होंसे ऋणादियाभी नही याचना करणी करभी इन्होंसे याच
नकरणा येनकेन प्रकारकर्के इन्हको अपने राष्ट्रमो प्रवेश
नही देना सर्वप्रकारसे प्रवृत्तिका अभावही कर्तव्यहे आपदा
कालविषे इन्होका द्रव्य आप ग्रहण नहीकरणायह व्यवस्था
मनुमहाराजने सर्वभूतोके धर्मस्थिती वास्ते कीनीहे १६ ॥
सर्वे तथानु जीवेयु नैरुप्युः कर्मचे दिह सर्व
एव इमे लोका न भवेयु रसंशयं १७ ॥
अधर्म त्यागकर्के सभही अपने राष्ट्रमो ठोर सेवा वृत्तिसे उप
जीवनको करे अधर्म कार्यको नहीकरे ऐसा करणेसे सभही
लोक अधर्मकारी कदापिनही होवेगे इसमों संशयनहीहे १७
प्रभु र्नियमने राजा यएतान्न नियच्छति धंके
स तस्य पापस्य चतुर्भाग मिति श्रुतिः १८
राजा धर्म मर्यादाकी रक्षाका प्रभुहे जोराजा इस प्रकारके अध
र्मकारी लोकोका दंड प्रयत्न नहीकरे तो पापकर्मका चतुर्था
शभागी आपहोताहे यह धर्मशास्त्रमोवेदश्रुती वनीहे १८ ॥
भोक्ता तस्यतु पापस्य सुकृतस्य यथा तथा
नियंतव्याः सदा राज्ञा पापा येस्यु र्नराधिप १९
हेराजा जो अपने राष्ट्रके पाप कर्मका पुण्यकर्मका चतुर्थांश
भागी वनाहे ताते राजाने यथा तथा प्रयतनसे पापकारीलोक
सदाही दंडशासनासे वश कर्तव्यहे १९ ॥
कृतपाप स्त्वसौ राजा य एतान्न नियच्छति
यथा कृतस्य धर्मस्य चतु र्भाग मुपाश्नुते २०
सो राजाही आप पापकारीहे यो राजा अधर्मकारी लोकोको दंड
नहीकरे जेसे धर्मरक्षाकर्के पुण्यकर्मका चतुर्थांशभागी राजा
अनायासकर्केही पापकर्मका चतुर्थांशभागी होताहे २० ॥
स्थानान्येतानि संयम्य प्रसंगो भूतिनाशनः २१
कामप्रसक्तः पुरुषः किमकार्यं विवर्जयेत्
हे राजन् यह मद्यशालादिस्थान अधर्मप्रसंगकेहे अधर्मप्र
संग सजा प्रजाकी संपदाका नाशकारीहे जो पुरुष कामचेष्टा
प्रसंगकारीहे सो क्या क्या अधर्मनही करेगा २१ ॥
स्थानान्येतानि संयम्य प्रसंगो भूतिनाशनः

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
७३

73

मद्य मांस परस्वानि तथा दारा धनानि च आह
रे द्रागवशाग स्तथा शास्त्रे प्रवर्तयेत् २२
हे राजन् मद्य मांस परद्रव्यका लोभ और परदारप्रसंग यह सभ
ही अधर्मकार्य हे इन्हको जो कोई ग्रहण करता हे राजाकी निर्वल
तासे करता हे ताते राजा शास्त्र मार्गकी मर्यादासे इन्हको अपने
राष्ट्रसे वर्जन करे २२ ॥
आपदर्थं न याचंते येषां नास्ति परिग्रहः दा
तव्यं धर्मत स्तेभ्यो स्त्वनुक्रोशा द्दया न्नत २३
आपदाकी निवृत्तिवाले सभही धनयाचना करनेहे जिन्हको धन
प्राप्तिका उपाय नहीहे उन्हकोभी धर्मकार्यके निर्वाहवाले करु
णाकर्के दातव्य हे अधर्म प्रवृत्तिके भयसे किसीकोभी धन दातव्य नही
माते राष्ट्रे याचनका स्तूव न्मावापि दस्यवः हे २३
एषां दातार एवैते तेते भूतस्य भावकाः २४
हे राजन् तेरे राष्ट्रविषे अधर्म प्रवृत्तिके धनयाचक कदापि न
हीहोवे और धनसंपदाको हरणेहारे चोरादिलोक नहीहोवे जो
पुरुष अधर्मकारी पुरुषोके धनदाताहे सो पुरुष भूतसमूहके
कल्याणभावनासे रहित भयेहे २४ ॥
ये भूतान्यनुगृह्णांति वर्द्धयंति च ये प्रजाः
ते ते राष्ट्रे प्रवर्तंतो मा भूतानाम भावकाः २
जोनसे पुरुष धर्मकर्मसे भूतोविषे अनुग्रह करतेहे और जोनसे
पुरुष धर्मकारी प्रजाको वृद्धिको प्राप्त करते सो सो पुरुष तुम्हा
रे राष्ट्रको सदा वर्तमान होवे अधर्मप्रवृत्तीसे भूतोके विनाशका
री अधर्मीलोक मत वर्तमान होवे २५ ॥
दंड्या स्तेन महाराज धना दानप्रयोजकाः प्र
योगं कारयेथ स्तान् यथा बलिकरा स्तथा २६ ५
हे महाराज ऐसे लोक तुम्हारे दंडयोग्य नहीहे अपने धर्म कर्मवा
ले ऋणलेनेदेनेहे और राजन् जोनसे तुम्हारे अधिकारीलोक हे
सो किसीसे वहोत धन देखकर्के लोभकर्के अधिकर वधायकर
लेवे सो अधिकारीलोक राजाने दंडनीय हे जहां राजा निकट न
हीहे तहां और आसपासके अधिकारी तहां यथाविधि ग्रहणके
वलि प्रयोग करावे २६ ॥
कृषि गोरक्ष वाणिज्यं यच्चान्य त्किंचि दीदृशं पु
रुषैः कारये त्कर्म वहुभिः सहकारिभिः २७

जौनसे लोक प्रवृत्तिसे कृषिहै उन्होंको राजाका अधिकारी अथवा
राजा आपदाकी निवृत्तिवास्ते कृषीकरावे गोरक्षा करावे वाणिज्य
करावे जो और ऐसा कार्यहै वहोत पुरुषोके सहायकर्के करावे
एकाकी पुरुषसे नही करावे २७ ॥

नरश्चेन्न कृषिगोरक्ष्य वाणिज्ये चाप्यनुष्ठितः
संशयं लभते किंचि तेन राजा विगर्ह्यते २८

हे राजन् जो पुरुष कृषिनही करता गोरक्षानहीकरता वाणि
ज्यभी नही करता उसका दिया धन राजा ग्रहण नही करे उस
मो यह संशय होताहै यह धन इसने चौरोसे लियाहै तो हम
को देताहै अथवा हमारे अधिकारी लोक इसको लूटतेहै उन्होंके
भयसे देताहै उसकेधन दानका हेतुको राजानही विचारकरेतो
अन्याय धनग्रहणको निंदादोष राजाको होताहै २८ ॥

धनिनः पूजये त्रित्यं पानाछादनभोजनैः
वक्तव्या श्चानुगृह्णीध्वं प्रजाःसहमयेतिवै २९

जौनसे धनी पुरुषहै जिन्होंको राजा सुंदर खान वस्त्र आछादनो
कर्के मानसत्कारपूजाकरे उन्होंको ऐसा वचनकहै तुमने हमा
री प्रजाको हमारे समेत सदा अनुग्रहकरणा जवकार्यवने त
व धन प्रयोगसे कार्यमो सहायकरणा २९ ॥

अंग मेत न्महद्राज्ये धनिनोनाम भारत क
कुदं सर्वभूतानां धनस्थो नात्र संशयः ३०

हेभारत राज्यव्यवहारमो धनीलोक वडे सहायके अंगवनेहै
जो धनवान पुरुष होताहै सो सभभूतोंका शिरोमणि होताहै ३०

प्राज्ञःशूरो धनस्थश्च स्वामी धार्मिक एवच
तपस्वी सत्यवादी च बुद्धिमा श्चापि रक्षति ३१

राजाके राज्यको यह पुरुष रक्षा करते शूरमा पुरुष और धनवा
न् पुरुष राज्यका स्वामी रक्षा करताहै और धर्म कर्मवान् पुरुष
और तपस्वी पुरुष और सत्यवादी पुरुष और बुद्धिमानपुरुष य
हसभही राजानेमानसत्कारसे पूज्यहै ३१ ॥

तस्मात्सर्वेषु भूतेषु प्रीतिमा न्भव पार्थिव स
त्य मार्जव मक्रोध मानृशंस्य च पालय ३२

ताते हे राजन् तुम आप सर्वभूतोविषे प्रीतिवालेहोवो सत्यधर्म
को और आर्जवशील को और अक्रोधको और अक्रूरतासे अहिंसा
धर्मको सदापालनकरो ३२ ॥

श्री॰
रा॰ ज॰
टी॰
७५

एवं दंडं च कोशं च मित्रं भूमिं च लप्स्यसि सत्या
र्जवपरो राजन् मित्रकोशबलान्वितः ३३
इति श्रीमहाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्मे षु
ग्रष्टाशीतितमोऽध्यायः ८८ ॥

इस प्रकार धर्मरत्नाकर्के तुम दंडनीतिके फलको और कोशवृ
द्धिको और मित्रलाभको और पृथिवीके जयको प्राप्तहोवोगे तातें
सत्यधर्मको आर्जवशीलको सेवनकरोगे तो मित्रकोश बल संप
न्नहोवोगे ३३ इति श्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मेषु अष्टाशी
तितमोऽध्यायः ८८ ॥

भीष्मउवाच वनस्पतीन् भक्ष्यफलान्न छिंद्युर्विष
ये तव ब्राह्मणानां मूलफलं धर्ममाहुर्मनी
षिणः १ ॥ भीष्मउवाच हे राजन् जोनसे महावृक्ष भक्षणी
य फल संपदावालेहै तिन्होंको तेरे राष्ट्रमे कोई पुरुष छेदनन
हीकरे ब्राह्मणोको मूल फलोंका भोजन धर्म कर्मका मूल सभ
ही शास्त्रवेत्ता पंडित कहतेहै १ ॥

ब्राह्मणेभ्यो तिरिक्तं च भुंजीरन्नितरे जनाः न
ब्राह्मणोपरोधेन हरेदन्यः कथंचन २ ॥
ब्राह्मणोके भोजनसे अधिकजो मूलफल उसको इतरजन भोज
नकरे ब्राह्मणोकी पालनाविना और जनफल मूलको ग्रहण न
हीकरे २ ॥

विप्रश्चेत्त्यागमातिष्ठेदात्मार्थे वृत्तिकर्शितः
परिकल्प्यास्य वृत्तिः स्यात् सदारस्य नराधिप ३
जो ब्राह्मण अवृत्तिकर्के कृशहोकर जिस राजाके राष्ट्रको त्यागकि
याचाहे तो तहां राजाने उस ब्राह्मणकी सकुटुंबकी पालनावृत्ति
कल्पित करणा योग्यहै ३ ॥

स चेन्नोपनिवर्त्तेत वाच्यो ब्राह्मण संसदि क
स्मिन् इदानीं मर्यादा मयं लोकः करिष्यति ४
सो ब्राह्मण वृत्ति कल्पनासेभी नहीं निवृत्तहोवे तो ब्राह्मणोकी स
भामे राजाने उसके वृत्तांतकरणा इसकी वृत्ति करदेनीहै यह ब्रा
ह्मण निवृत्तनहीं भया क्याहेतुहै जो हाथी घोडा रथ सवारीचाह
ताहै तो सोभी इसको दे देवेका कहताहै जो हाथीरथादिक इसको
दे देवेको तत्परहै ब्रह्मकर्मकी मर्यादाविना यह अबवही अमर्यादा
से शांतहोजावेगा ४ ॥

ब्रंसेशयं निर्वेदेन नचेद्वस्य ततः परं सर्वं
परोक्षं कर्तव्यमेत कौंतेय शाश्वतं ५ ॥
ऐसी प्रार्थना श्रवणकरके निश्चयसे निवृत्तहोवेगा जो निवृत्त
होवेतो उसको फेरकहना अब तुम इसी प्रकारसे वृत्ती करोगेतो
सर्वेही तुमने ऐसी वृत्तिकों नही मानी जो हमने तुम्हारी ऐसी
वृत्तिकरणी विस्मरण होगईहे तो आपने अपराध क्षमा कर्तव्य
हे इस प्रकार प्रथम उस ब्राह्मणोसे परोक्षही सभब्राह्मणोसे
कहिकर पश्चात् उसकी प्रार्थना कर्तव्यहे ५ ॥
आहुरेत जना ब्रह्मन् नचेन कुर्द्धयाम्यहं नि
मंत्रयामिभवेद्भोगैर्वरम्या वे तदाचरेत् ८ ॥
हेब्रह्मन् सभही जनक हतेहे आप भोग पदार्थोकी वांछा क
रतेहो परंतु मे इस वार्ताको श्रद्धानही करता ऐसे कहकर उस
को भोगोकरके भी निमंत्रणकरे जो केवल अवृत्तिसे कृशहोकर
जाताहे तो वृत्तिकल्पनासेही निमंत्रणकरे ८ ॥
कृषिगोरक्ष्य वाणिज्यं लोकाना मिहजीवनं ऊ
र्ध्वं चैव त्रयीविद्या सा भूता भावयत्युत ७ ॥
हे राजन् लोकोकी उपजीवका कृषी गोरक्षा वाणिज्य यह सामान्य
वृत्तिहे ओर इससे उत्तम वेदत्रयीकी ब्रह्मविद्याहे उसकरके यज्ञया
गादि क्रिया होतीहे सो वेदत्रयीकी संपूर्ण भूतोकी देवता ऋषि ७
मनुष्यादि तृप्तिकरके दृष्ट अदृष्ट पापकर्मके भयसे रक्षाकरतीहे
तस्यां प्रयतमानायां येस्युः तत्परिपंथिनः द
स्यव स्तद्वधाये ह ब्रह्मा क्षत्र मथाऽसृजत् ८
हे राजन् वेदत्रयीकी विद्याकों ओर कृषी गोरक्षा वाणिज्य वृत्तिका
जब पातहोवे विघ्नहोवे उसके जो विनाशकारी अधर्मकारी चोरा
दिकहोवे उनके वधवास्ते ब्रह्माजी क्षत्रधर्मको सृजतेभये ८ ॥
शत्रूञ्जय प्रजारक्ष यजस्व क्रतुभिर्नृप युद्ध्य
स्व समरेवीरो भूत्वा कौरवनंदन ९ ॥
तातें तुम सर्वजगतकी धर्म कर्मरक्षावाले शत्रुगणको जयकरो
प्रजाकी रक्षाकरो ओर यज्ञविधीको यजनकरो हेकौरवनंदनवीर
होकर रणमोयुद्धकर ९ ॥
संरक्ष्या पालये द्राजा सराजा राजसत्तम ये
केचिनात्र रक्षंति ते रथो नास्ति कश्चन १०

जौनसे धर्म कर्मवाले रक्षायोग्यलोक है तिन्हको राजा रक्षाकरे सो
ई राजा कहाहे जोराजा लोकजालोक धर्मकर्मकी रक्षावास्ते प्रजाको
पालन नही करते उन्हके राजा भावका कोई अर्थ नही वनता ११

**आंतरेभ्यः परान्रक्षन् परेभ्यः पुनरांतरान् प
रान्परेभ्यः स्वान्स्वेभ्यः सर्वान् पालय नित्यदा १२**

हे युधिष्ठिर सर्वलोक ऐसेही मानतेहे जो राजाने राष्ट्र रक्षावाले
सदा युद्ध कर्तव्यहे ताते राजाने मनुष्यकी भोक्तव्यहे जौनसे अप
ने आंतरीय निकटवर्ती जनहे उन्हसे वाहिरके लोकोको रक्षा
करो और परलोक जोहेशत्रुलोक तिन्हसे अपने राष्ट्रके अंत
र्गत प्रजालोकोकी रक्षाकरो जो अपनेसे दूरपरके लोकहे उन्ह
कोभी अपनेसे पराये शत्रुगणके तिन्होसे रक्षाकरो जौनसे अ
पने अधिकारीलोकहे तिन्होसे अपने मित्रलोकोको रक्षाकरो १२

**आत्मानं सर्वतो रक्षन् राजा रक्षेत मेदिनीं आ
त्ममूल मिदं सर्व माहुर्वै विदुषो जनाः १३**

राजा अपने आत्माको सभसे सर्वप्रकारसे रक्षाकरे और अपने
क्षत्रधर्मसे रणकर्के पृथ्वीको रक्षाकरे यह सभही राजधर्मका
मूल राजासीहे सभही धर्मवेत्ताजन ऐसे सदा कहतेहे १३ ॥

**किं छिद्रं कोनुषंगोमे किंवा स्या विनिपातितं
कुतो ममाश्रये दोष इति नित्यं विचिंतयेत् १४**

आत्मरक्षावाले राजा सदा इसप्रकार चिंतनकरे मोको क्याछिद्र
हे और व्यसनप्रसंग मोको क्याहे क्या किसने विकार कियाहे
और कहांसे मोको दोष प्राप्तहोताहे इसप्रकार सदा चिंतनकरे १४

**अतीतदिवसे वृत्तं प्रशंसंति नवा पुनः गूढै
श्चारै रनुमतैः पृथिवी मनुसारयेत् १५ ॥**

पूर्वबीते दिनमों वृत्तांत भया उसकोमेरे प्रति कहेंगे नहीकहेंगे
ऐसा गुप्तजो चारलोकहे तिन्होकर्के पृथ्वीकों संचार करावे १५

**जानीयुर्यदि मे वृत्तं प्रशंसंति नवा पुनः क
च्चिद्रोचे जनपदे कच्चिद्राष्ट्रे च मे यशः १६**

मेरा शुभा शुभ लोकजानेगे नहीजानेगे राष्ट्रविषे मोको प्रशं
सा करतेहे नहीकरतेहे क्या मे अपने राष्ट्रमो लोकोको रुचि
वालाहुं नही रुचि करताहुं राष्ट्रविषे मेरा यश वनाहे नही
वनाहे १६ ॥

धर्मज्ञानां धृतिमतां संग्रामेष्व पलायिनां राष्ट्र

न येन जीवंति येन राज्ञो नुजीविनः १७ ॥
जो राजालोक सर्व धर्मज्ञ भयेहे संग्राममें कदापि फिरते न
हीहे उन्नके धर्ममार्गको में प्राप्त भयाहुं नही प्राप्त भयाहुं औ
र राष्ट्रमो जोनसे लोक जीवतेहे जोनसे राजद्वारविषे राजाके
अनुसार जीवनेहे १७ ॥
अमात्यानां च सर्वेषां मध्यस्थानां च सर्वशः
येच त्वाभिप्रशंसंति निंदेयु रथवा पुनः १८
जोनसे अमात्यलोकहे उन्नका क्या हननहे और मध्यस्थ लोकोंका
क्या हननहे हेयुधिष्ठिर जोनसे पुरुष तुम्हारी प्रशंसा करतेहे औ
र जोनसेलोक तोकों निंदाकरनेहे तिनको तुमने सभको यथा
धिकार स्थापनकरणा १८ ॥
सर्वा न्सुपरिणीतां स्तान्कारयेथा युधिष्ठिर य
कोने नहि सर्वेषां नृपाकों तात रोचितं १९
मित्रा मित्र मध्यानां मध्ये सर्वभू तेषु भारत १९
सभको यथात सावि करणेको कोई समर्थ नही होता मित्र अ
मित्र मध्यस्थ सर्वत्र सर्वभूतोंविषे वनेहे १९ ॥
युधिष्ठिरउवाच तुल्यबाहुबलानांच तुल्यानांच
गुणैरपि कथंस्या दधिकःकश्चित् सच भुंजीतमा
नवान् २०
युधिष्ठिरउवाच हेपितामहजी राजाके समान स
भही मनुष्योंविषे बाहुबलहे और गुणोंकर्केभी सभही मनुष्य तु
ल्यहे राजा कोन गुणकर्के अधिकहे जो सर्व मनुष्योंको आप भो
गनेको समर्थहोताहे २० ॥
भीष्मउवाच यचरा ह्यचरानद्यु रदंष्ट्रान् दंष्ट्रिण २१
स्तथा आशीविषा इव क्रुद्धा भुजंगान् भुजगा इव
भीष्मउवाच जोनसे पादचारी पशुयोनिहे सो पादरहित तृण ल
तादिकोंको भोजनकरनेहे और जोनसे जीव दंतोंकी दंष्ट्रासे रहित
हे तिन्नको दंष्ट्रावाले सिंहादिक दंष्ट्रावाले भोजनकरनेहे २१
एतेभ्य श्चा प्रमत्तःस्यात् सदाशत्रो युधिष्ठिर २२
यह सभही बलवान् भूत निर्बलभूतोंको भोजनकरनेहे जैसे
सर्पजाती सभही विषधरहोतेहे तिन्नोंविषेभी बलवान्सर्प नि
र्बलसर्पोंको भोजनकरनेहे तैसे जो बलवान मनुष्यजोहे सो
दुर्बलमनुष्योंको अपनी आज्ञाकी सामर्थ्यसे भोगनेहे २२ ॥

श्री॰
शां॰ध॰
टी॰
७८

२०

भारुंडसदृशा ह्येते निपतंति प्रमादतः क
च्चित्ते वणिजो राष्ट्रे नोद्विजंति करार्दिताः २३
हे युधिष्ठिर तुमभी इन्होंसेही शिक्षा लेकर बलवान होकर शत्रु
जयके वास्ते अपनी बलसत्ताविषे अप्रमत्तहोवे २३ ॥
क्रीणंतो बहुनाल्पेन कांतारकृत विश्रमाः क
च्चिन्न कृषिकरा राष्ट्रं न जहत्यति पीडिताः २४
यह शत्रुलोक प्रमादसे राजाविषे पक्षीकी न्याई आन पडतेहे ता
ते मेतेरी बलसत्ताको जाननेको इच्छाकरताहुं तेरे राज्यविषे वणि
या लोक वाणिज्यवृत्ति करतेहे सदा दुर्गम देशविषे वाणिज्यकरणे
को विचरतेहे सो शत्रुबलसे भयभीततो नही नाहोते जोनसे
वणिया बहोत व्यापारकर्के अथवा स्वल्पव्यापारकर्के लाभपदा
र्थके क्रय विक्रयवास्ते दूर दुर्गमदेशकी यात्राकरणेको इच्छति
श्रय करलेतेहे २४ ॥
ये वहंति धुरं राज्ञो ते भरंती तरानपि २५ ॥
और जोनसे तुम्हारे राष्ट्रमो कृषी करणेहारेहे सोभी अतिकरग्रह
णसे पीडितहोकर अपने राष्ट्रको त्यागतो नही नाकरतेहे २५ ॥
इतो दत्तेन जीवंति देवाः पितृगणास्तथा मनु
ष्या उरगरक्षांसि वयांसि पशवस्तथा २६ ॥
जोनसे यह कृषीकरणेहारे राजाके पुरको देतेकी कृषी कर्मकी
वृत्तीकर्के पालन करतेहे और राष्ट्रके लोकोको भी पोषण करतेहे
जिन्होकी कृषीका अन्नदान होताहे जिसकर्के देवतागण ऋषि
गण पितृगण तृप्तहोतेहे और भी मनुष्य नाग राक्षस पंछी पशु
गण सभही तृप्तहोतेहे २६ ॥
एषा ते राष्ट्रवृत्तिश्च राज्ञां गुप्तिश्च भारत एत
मेवार्थमाश्रित्य भूयो वक्ष्यामि पांडव २७ इति
श्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मेषु राष्ट्रगुप्ति
हे भारत यह तुमको मेने राष्ट्रपालनेकी वृत्ति कही र्नाम ८९
हे राजाकी वृत्तिभी कहीहे हे पांडव अब इसीको मे बहोडभी
प्रसंग पाइकर और प्रकारसे उदाहरण विस्तारसे कहताहुं २७
इति श्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मेषु राष्ट्रगुप्तिर्नाम एको
ननवतितमोध्यायः ८९ ॥
भीष्म उवाच पार्थगिराः तत्रधर्मो ज्ञतथ्यो बल

वित्तमः मांधात्रे यौवनाश्वाय प्रीतिमानभ्यभाष
भीष्मउवाच हेराजन् उतथ्य जो मुनि सो अंगिरामुनिके त १
गौत्राहे ब्रह्मवेत्ताजनोविषे उत्तम भयाहे यौवनाश्वराजे पुत्रको
मान्धाता राजाको प्रीतिमान होकर जौनसे राजधर्मको कहता भया १
सयथाह प्रशासैन मुतथ्यो ब्रह्मवित्तमः त
ते सर्वं प्रवक्ष्यामि निखिलेन युधिष्ठिर २॥
वहोउ सोई ब्रह्मवेत्ता जनोविषे उतथ्यमुनि जिसप्रकार मांधा
ताराजाको राजधर्मको जिस प्रकार शिक्षा करताभया तैसेही
संक्षेपताकरके तुमको कहताहूं २॥
उतथ्यउवाच धर्माय राजा भवति नकाम करणा
यतु मांधात रिति जानीहि राजा लोकस्य रक्षिता ३
उतथ्यउवाच हेमांधाता राजन् राजा जो होताहे सो धर्मरक्षाके
कारणसे होताहे अपनी इच्छासे कामभोगके कारणसे नही
होता यह तुमने निश्चय जानना राजालोकरक्षा कर्ताहे ३॥
राजा चरति चेद्धर्मं देवत्वायैव कल्पते सचे द
धर्मं चरति नरकायैव गच्छति ४॥
जो राजा धर्माचरणकरे सो देवता भावकी प्राप्तीको समर्थहोताहे
उसकी आज्ञा देवताभी मानतेहे सोई अधर्माचरणकरेतो नरक
को जाताहे ४॥
धर्मे तिष्ठंति भूतानिधर्मो राजनि तिष्ठति तं
राजा साधुयः शास्ति सराजा पृथिवी पतिः ५
जोराजा धर्मकर्ममो स्थित होवेतो सभहीभूत धर्म कर्ममो स्थि
तहोतेहे जो राजा सर्वभूतोको धर्म कर्मको शासना करताहे
सो राजा पृथवीपति होताहे ५॥
राजा परम धर्मात्मा लक्ष्मीवा न्धर्मउच्यते तदेव
मंगलं लोकः सर्वः समनुवर्तते ६॥
जो राजा परमधर्मात्मा होताहे सो लक्ष्मीवान् साक्षात् धर्मरूपी
होताहे जो राजाकहे धर्म कछुहेनही उसके गृहसे सभही देवता
अपनी देवसत्ताको लेकर चले जातेहे इहा धर्महे तहा ऐसेकहते
हे देवनिंदासर्वत्र प्रहतहोतीहे ६॥
अधर्मे वर्तमानानां मर्यादिः प्रदृश्यते त
देव मंगलं लोकः सर्वः समनु वर्तते ७॥

जो अधर्मविषे प्रवृत्त भये लोकको अर्थसिद्धि कछु सिद्ध होतीहे सोई अमंगलरूपहे उसको सभही लोक सर्वप्रकारसे अधर्ममें प्रवृत्त होते हे ७ ॥

उछिद्यते धर्मवृत्तं अधर्मो वर्तते महान् भयमाहुर्दिवा रात्रं यदा पापो नवार्यते ८ ॥

हे राजन् हे तात जब पापकर्मका निवारण नही होता तहां धर्म कर्मका सभही वृत्तांत उछिन्नहोजाताहे महा अधर्म प्रवृत्तहोताहे उहां दिनरात्र सदा भय प्रवृत्तहोताहे ८ ॥

ममेद मिति नैवेतत् साधूनां तात धर्मतः नैव व्यवस्था भवति यदा पापो न वार्यते ९ ॥

हेतात जब पापकर्मका निवारण नही होताहे तब ऐसा अधर्म प्रवृत्तहोताहे जो साधुलोकोंको यह हमारा धर्मकर्महे ऐसी धर्मकर्मसे व्यवस्था कही नही स्थितहोती ९ ॥

नैव भार्या न पशवो नक्षेत्रं ननिवेशनं संदृश्येत मनुष्याणां यदा पाप बलं भवेत् १० ॥

हे राजन् जब पापकाबल प्रवृत्तहोताहे तब भार्याभी अपनी नही वशहोती पशुभी अपने वशनही होते क्षेत्रभी अपने वशनही होता गृहभी अपने वशनहीहोता मनुष्योंका आचारविचारभी अपने वश दृष्टनही होता १० ॥

देवाः पूजां नजानंति नस्वधां पितरस्तदा नपूज्यंते ह्यतिथयो यदा पापो नवार्यते ११ ॥

जब पाप कर्मका निवारण राजासे नही तब देवता अपनी पूजाको नही पाइ जानते और पितर अपने स्वधाकार श्राद्धादिकोंविषे नही पाइ सकते अतिथी नही पूजेजाते ११ ॥

नवेदानधि गच्छंति व्रतवंतो द्विजातयः नयज्ञांस्तन्वते विप्रा यदा पापो नवार्यते १२ ॥

जहां पापकर्मका निवारण राजासे नही बनता तहां ब्राह्मणोंको वेदाध्ययन नही बनता व्रतनिष्ठावाले विप्रलोक दृष्टनहीहोते और विप्रजन यज्ञयागादि विधीको विस्तारनही करते १२ ॥

वध्यानामिव सत्वानां मनोभवति विह्वलं मनुष्याणां महाराज यदा पापो नवार्यते उभौलोकावभिप्रेक्ष्य राजानमृषयः स्वयं १३ ॥

जहां राजासे पापकर्मकी निवृत्तिनही होसकती तहां संपूर्ण मनुष्योंका मन वध्यस्थी जनोंकीन्याई धर्मकर्मकी संपन्नताविषे व्याकुलहोताहे १३ ॥

असृजत्सुमहद्भूत मयंधर्मोभविष्यति य
स्मिन्धर्मोविराजेत तंराजानं प्रचक्षते १४॥

हे महाराज जेते देवलोकके ऋषिगणहे सो सभही उभयलोक
की मर्यादाको धर्मकर्मके अधीनजानकर धर्मकर्मकी रक्षावाले
अपने अपने तेजकी सत्ताका महापुंजरूप महाबुद्धि ब्रह्मार्षि
सेपत्रराजारूपी महाभूतको सृजतेभये यहीधर्मरक्षाकरणेहारा
हमाराधर्मरूपहोवेगा १४ ॥

यस्मिन्विलीयतेधर्म स्तंदेवाहृषलंविदुः वृ
षोहिभगवान्धर्मो यस्तस्य कुरुतेत्वलं १५

जिसविषेधर्मरक्षाकर्के धर्मविराजमान उसको देवता अपना
भी मालकराजा मानतेहे जिसमो धर्मरक्षाका लवमात्रनहीहे
उसको देवता सूद्रचंडाल जैसे मानतेहे १५ ॥

वृषलंतं विदुर्देवा स्तस्माद्धर्मं विवर्द्धयेत् ध
र्मेवर्द्धति वर्द्धंति सर्वभूतानि सर्वदा तस्मि
न् ह्रसति क्षीयं तेस्माद्धर्मं नलोपयेत् १६

भगवान् धर्मजोहे सो वृषरूपहे जो कोई धर्मरूपी वृषको अ
लंकरदेताहे विनाशकरदेताहे उसकानाम वृषलहे वृषजो
धर्महे उसको लूनकरे छेदनकरे सो वृषलकहाहे इसप्रकार
देवता उसको चंडालकहतेहे ताभेराजा धर्मकर्मको पालना
से वृद्धीको प्राप्तकरे १६ ॥

धर्मेवर्द्धति वर्द्धंति सर्वभूतानि सर्वदा त
स्मिन् ह्रसति क्षीयं तेतस्माद्धर्मं नलोपयेत् १७

धर्मकी वृद्धिमो सर्वभूतोकी वृद्धिहोतीहे धर्मकी हानीमोसर्व
भूतोकी हानिहोतीहे ताते राजाधर्म कर्म कालो पनहीकरे
सदापालनकरे १७ ॥

धनात्स्रवति धर्मोहि धारणाद्वेति निश्चयः
अकार्याणां मनुष्येंद्र ससीमांतकरः स्मृतः १७

धर्म कर्मसेहि धर्मउदेहोताहे अथवा अपनी वर्णाश्रममर्या
दाका निश्चयधारणेसे धर्मकहाहे सो धर्मधाराजावे तो जेते म
नुष्योके अकार्यहे अधर्मके उन्को अंतकरणेहारी परम अव
धी धर्मही कहाहे १७ ॥

प्रभवार्थंहिभूतानां धर्मःसृष्टःस्वयंभुवा त

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
७८

28

स्मात्प्रवर्तयेद्धर्मं प्रजानुग्रहकारणात् १८ ॥
हे मानदाता राजन् सर्वभूतोके कल्याणकहीवास्ते स्वयंभू प्रजापतीने प्रथमधर्मही रचाहे ताते प्रजाके अनुग्रहकरणसे राजाधर्मकोही प्रवृत्तकरे १८ ॥

तस्माद्धि राजशार्दूल धर्मः श्रेष्ठतरः स्मृतः स राजा यः प्रजाः शास्ति साधुकृत्पुरुषर्षभ १९

ताते हे राजशार्दूल धर्मही सर्वपुरुषार्थोंविषे श्रेष्ठहे हे पुरुषश्रेष्ठ राजा सोहे जो प्रजाको धर्मशासनासे प्रजाकोपालनकरताहे २५

कामक्रोधावनादृत्य धर्ममेवानुपालय धर्मः श्रेयस्करतरो राज्ञां भरतसत्तम २० ॥
हे भरत रघुकेरांजसत्तम कामक्रोधोंको अनादरकर्के आपधर्मकोही सदापालनकरो राजालोकोंको धर्मजोहे सो परमकल्याणकोकरताहे २० ॥

धर्मस्य ब्राह्मणो योनिस्तस्मात्तान्पूजयेत्सदा ब्राह्मणानां वशं धीमान् कुर्यात्कामानमात्सरो २१
हे राजन् धर्मज्ञानके मूल उत्पत्तिस्थान ब्राह्मणहे धर्मकर्मकेजानवाले तुम ब्राह्मणकोहि पूजनकरो हे मानदाता ब्राह्मणोकी हितकरणेहारी कामना तुम सभही दोषारोपविनाही सदाचरणकरो २१ ॥

तेषां ह्यकामकरणाद्राजा संजायते भयम् मित्राणि न च वर्द्धन्ते तथामित्रीभवंत्यपि २२
ब्राह्मणोंकी कामनानही करणेसे राजाको महाभयप्राप्तहोताहे उसराजाको मित्रहद्धी नहीहोती सभही मित्रलोक अमित्रहोतेहे २२ ॥

ब्राह्मणानसदासूया द्वाल्पाद्वैरोचनो बलिः प्रध्यास्माच्छ्रीरपाक्रामद्यास्मिन्नासीत्प्रतापिनी २३
हे राजन् ब्राह्मणोकीदोषदृष्टि करणेसे विरोचनकापुत्र बली दानवजोहे सो अपनी बालबुद्धी करणेकर्के ऐश्वर्यराज्यलक्ष्मीसेहीनभयाहे जोनसी प्रतापसंपदा प्रथमबनीरही उससेभ्रष्टभयाहे २३

ततस्तस्मादपाक्रम्य सा गता पाकशासनम् अपश्चात्सोन्वतप्यत श्रियं दृष्ट्वा पुरंदरे २४
सोराज्यलक्ष्मीबलीको त्यागकरदेतीभई इंद्रजाइप्राप्तहोतीभई

जयत्रैलोक्यकाइंद्रकोप्राप्तभईदेखकर बली बहोतपश्चात्तापकर
ताभया २४ ॥

एतत्फल मसूयाया अभिमानस्यवाविभो
तस्माद्बुध्यस्वमांधात मात्वाजह्यात्प्रतापिनी २ ५

हे मान्धाताराजन् यहफलब्राह्मणोंकी सहीकाहै और अपने
अभिमानकाहै तातेतुमभी ऐसेजानकर ब्राह्मणोंसे द्वेषन
हीकरो और अपनी प्रतापसंपदाको ब्राह्मणोंकी निंदाकरणे
से मतविनाशकरो २५ ॥

राजर्षयश्चबलवत्तथाबुध्यस्व पार्थिव रा
जाभवतितं जित्वादासस्तेनपराजितः २६

यह अभिमानजोहै इसकानामदर्पहै सोदर्पअलक्ष्मीका
पुत्रहै सो अधर्मसे उत्पन्नभयाहै यहकथा प्रथममैंने सु
नीहै उसदर्पने देवता असुर बहोत नाशको प्राप्तकियेहै २६

दर्पोनामाश्रियःपुत्रो जज्ञेधर्मादितिश्रुतिः
तेनदेवासुराराजन् नीतास्सुबहवोक्षयं २७

हे पार्थिव राजऋषीभी बहोतनाशको प्राप्तकियेहै तातेदर्प
के त्यागदेना इसबातको तुमभी विचारकरो दर्पअभिमान
को जो जीते सो राजाहोताहै जिसको दर्पणे जीताहै सो अ
धर्मका दासहोताहै २७ ॥

सयथादर्पसहित मधर्मनानुसेवसे तथा
वर्तस्वमान्धात श्चिरंचेत्स्थातुमिच्छसि २८

सोई राजा सदा जयशाली है जौनसा राजा अभिमान दर्पस
हित अधर्मको नहीहोवे हे मान्धातराजाजी जो तुमको चिर
काल राजधर्म पालनेकी वांछाहै तो दर्पअभिमानको जीत
कर अपने राज्यको शासनाकरो २८ ॥

मत्तात्प्रमत्तात्पाखंडा उन्मत्ताश्चविशेषतः न
दम्भासाडुपावर्त संहितानांच सेवनात् २९

ताते हे राजन् मत्तजो पुरुषहै मद्यादिसेवनेहारे और प्रम
त्त जोहै भोगासक्त पुरुषपाखंडजोहै दंभाचारवाले पुरुष उ
न्मत्त धनसंपदाके प्रमादवाले इन्होंसे असंगहोजाओ यहचा
रो अधर्मके मंत्रीहै इन्होंका सभका जहां समागम अभ्यास
सेहोताहै ऐसी महा अधर्मकी अवस्थाहै कामक्रोध लोभमो
हकी प्रबलता उसको जीतकर सदाधर्मपालनाकोकरो २९ ॥

श्री० रा० प० टी० ७९

79

निग्रहीनादमात्याच स्त्रीभ्यश्चैव विशेषतः प
र्वतादिषुमा दुर्गा हस्तिनोश्वात्सरीसृपात् ३०
हे राजन् अपने जो अमात्य लोक है तिन्होकोभी काम क्रोधसे नि
ग्रहकरो और स्त्री प्रसंगसेभी सभका निग्रहकरो और स्त्री प्रसंग
सेभी पर्वतदेशविषे विषममार्गसे और दुर्गमदेशकी कार्यकाल
विना नित्ययात्रासे आपभी निवृत्तहोयो और जो शिक्षाअभ्यासर
हित हस्ती तुरंगके आरोहणसेभी आपनिवृत्तहोवो और सर्पदु
ष्टस्थानसेभी मंत्रयंत्र औषधी प्रयत्नविना निवृत्तहोवो ३० ॥
एतेभ्यो नित्ययुक्तःस्या नक्तंचर्याविवर्जयेत्
अत्यागंचाभिमानंच दंभंक्रोधंचवर्जयेत् ३१
एतेव्यसनस्थानेसे नित्यसुष्टप्रसंगहोवे और तथारात्रिविषे
यात्राचर्याको वर्जनकरो और कृपणताकी अत्यागवृत्तिको त्यागो
और तथा अभिमानको त्यागो और दंभवृत्तिको त्यागो तथा क्रोध
कोत्यागो अविचारके कामक्रोधोको अवश्यत्यागकरो ३१ ॥
अविज्ञातासुचस्त्रीषु क्लीवासुस्वैरिणीषुच
परभार्यासुकन्यासु नाचरेन्मैथुनं नृप ३२
हे राजन् मात्याता जोनसीया अपराधकर्के अनादरकीनीहै
और विधवाजोस्त्रियाहै और व्यभिचारकरणेमोस्वतंत्रप्रजो स्त्रियो
है और परपुरुषकी विवाहितस्त्रियाहै विवाह संस्कार रहित क
न्याजोहै इन्होविषेराजा मैथुन प्रसंगको वर्जनकरे ३२ ॥
कुलेषुपापरक्षांसि जायंतेवर्णसंकरात् अ
पुमांसोंगहीनाश्च स्थूलजिह्वा विचेतसः ३३
ऐसाव्यभिचारकरणेसे वर्णसंकरतावारवर्णोके कुलोविषे हो
तीहै उसकर्के पापकर्मके फलपरिपाक पापकर्मकी प्रवृत्तिवा
ली राक्षसरूपसंतानउत्पन्नहोतीहै कोईतो नपुंसकहोतीहै
पुरुषार्थशक्तिरहितहोतेहै कोई अंगहीनहोतीहै कोई स्थूल
जिह्वावाले मूकहोतीहै इसप्रकार अंधपशुकासो वधिर कुरूप
कुटिल पापवृत्तीभी होतेहै ३३ ॥
एतेचान्येचजायंते यदाराजा प्रमाद्यति त
स्माद्राज्ञाविशेषेण वर्तितव्यं प्रजाहिते ३४
हे राजन् एते इसप्रकारके औरभी वर्णसंकरता दोषसे होतेहै
जबराजा धर्मरक्षाविषे प्रमादी होताहै ताते राजाते प्रजाके
हितकरणेमो प्रयत्नकरणेमो प्रवृत्तहोने योग्यहै ३४ ॥

क्षत्रियस्य प्रमत्तस्य दोषः संजायते महान्
अधर्माः संप्रवर्तन्ते प्रजाः संकरकारकाः ३५
जो क्षत्रीराजा प्रजापालनेमो प्रमादकरे तो वर्ण संकरता करणे
महादोष उदे होताहे अधर्मके लक्षण सर्वत्र वृद्धिको प्राप्तहोतेहे
सोसभही देशकाल धर्मोकी संकरता करतेहे ३५ ॥
अशीते विद्यते शीतं शीते शीतं न विद्यते अवृ
ष्टिरतिवृष्टिश्च व्याधिश्चाप्याविशेत्प्रजाः ३६
शीतकाल विना ग्रीष्मकालमो शीत होताहे और शीतके कालमो
शीत विद्यमान नहीहोता वृष्टिके प्रतिबंधसे अवृष्टिहोतीहे अति
वृष्टिभीहोतीहे और प्रजाको व्याधिरोग आइकर प्रवेशकरतेहे ३६
नक्षत्राण्युपतिष्ठन्ति ग्रहा घोरास्तथापरे उत्पा
ताश्चात्र दृश्यन्ते बहवो राजनाशनाः ३७ ॥
और धूम्रकेतु आदिक विपरीत नक्षत्र दर्शन होतेहे और ग्रहचार
भी घोररूप होतेहे और भूकंपादि दिव्य आंतरिक्ष भोम उत्पातभी
होतेहे देशकालके धर्म सभ बहोत विपरीत होतेहे सो राजाको
और प्रजाको नाशकारी होतेहें ३७ ॥
अरक्षितात्मा यो राजा प्रजाश्चापि न रक्षति प्र
जाश्च तस्य क्षीयन्ते ततः सोऽनु विनश्यति ३८
जोनसा राजा अपनेको अधर्मप्रवृत्तीसे रक्षा नही करता और
प्रजाकोभी रक्षा नही करता प्रजा उसकी नाशको प्राप्त होतीहे
पश्चात् आपभी नाशको प्राप्त होताहे ३८ ॥
द्वावाददाते ह्येकस्य द्वयोश्च बहवो परे कुमा
र्यः संप्रलुप्यन्ते तदाहुर्नृपदूषणम् ३९ ॥
हे राजन् राजाकी रक्षा विना एक पुरुषके धन कुटुंबादि पदार्थ
को दो पुरुष मिलके अपने हिरण बलकर्के छीनलेजातेहे ते
सेही दो पुरुषोसे चार पुरुष लेजातेहे उन्होसे आठलेजातेहे और
लोकविषे अविवाहित कन्याभी लूटीजातीहे यह सभही अधर्म
प्रवृत्तिसे लोकमर्यादाका विनाश होना राजाको प्रसाद दूषण
हे होताहे ३९ ॥
ममेद मिति नैकस्य मनुष्येष्ववतिष्ठति त्यक्त्वा
धर्मं यदा राजा प्रमादमनुतिष्ठति ४० इति श्री

श्री॰
रा॰ ध॰
टी॰
८॰

80

महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मेषु उतथ्यगी
तासु नवतितमोध्यायः ९० ॥

यह धर्मकर्म गृह कुटुंबादि हमारेहे इसप्रकारका ममता व्यवहार मनुष्योविषे किसीको कहीभी एक पुरुषोभी नहीप्रतिष्टा करता जब राजा धर्ममर्यादाको त्यागकर्के प्रमादनिष्टामो स्थितहोताहे ५॰ इ तिश्री महाभारते शतसहस्त्रसंहितायां शांतिपर्वणि राजधर्मे षुउतथ्यगीतासुनवतितमोध्यायः ९० ॥

उतथ्यउवाच कालवर्षीच पर्जन्यो धर्मचारीचपा
र्थिवः सपद्यदैषाभवति साबिभर्ति सुखंप्रजाः १

उतथ्यउवाच हे मान्धाता राजाजी पर्जन्यजो यथाकाल उचित वर्षाको करताहे सो जबराजाधर्मचारीहोताहे तबही होताहे जेतीयह धन धान्य संपदाहोतीहे सोईधनधान्यसंपदा प्रजाको पोषणकरतीहे यही राजाको धर्मसे प्रजापालनका फलहोताहे १ ॥

योनजानातिनिर्हंतं वस्त्राणांरजकोमलं रक्ता
नांवाशोधयितुं यथानास्ति तथैवसः २ ॥

हे राजन् इहांलोक व्यवहारका दृष्टांतसुनो जोनसा रजकवस्त्रोको शुद्धकरणहारासोजोवस्त्रके मलहरणोनहीजानताहे ओर रंजित वस्त्रोको शुद्धनही जानता सो रजक जैसाबनाहे तैसाही नहीबनाही सकाहे २ ॥

एव मेतत् द्विजेंद्राणां क्षत्रियाणां विशांतथा
शूद्रस्यतथैववर्णानां नानाकर्मस्ववास्थितः ३ ॥

इसीप्रकार तुमब्राह्मण सर्ववर्णोविषे अपनेको श्रेष्ठमानतेहे उन्होकोभी तुम धर्म कर्म विना नाममात्रही जानो क्षत्रीयोको ओर वैश्योको ओर शूद्रोकोभी सर्वकर्मोकीव्यवस्थामो नामधारणमात्र जाति अभिमानवालीहीजानो ३ ॥

कर्मशूद्रेकृषिर्वैश्ये दंडनीतिश्च राजनि ब्र
ह्मचर्यंतपोमंत्रा सत्यंचापिद्विजातिषु ४ ॥

हे राजन् शूद्रोंका जातिधर्म तीनवर्णोका सेवाकर्महे वैश्योका जातिधर्म कृषिवाणिज्यहे ओर दंडनीति राजाका जातिधर्महे ओ र ब्राह्मणोकाजातिधर्म ब्रह्मचर्य तपकरणा मंत्रपाटकरणा हे सर्ववर्णोको सत्यधर्म सामान्यहे ४ ॥

तेषांयःक्षत्रियोवेद वस्त्राणामिवशोधनं शी
लदोषाविनिर्हंतं सपिता स प्रजापतिः ५ ॥

हे राजन् जैसे चारोवर्णोंके प्रजालोकहे तिन्हके जो अधर्मशी
लताको दोषहे उन्हको वस्त्रोके मलकी न्याई स्वछकरजाने सो
राजा सभका पिताहोताहे प्रजापतिभी सोईहोताहे ५ ॥

कृतंत्रेताद्वापरंच कलिश्चभरतर्षभ राज
वृत्तानि सर्वाणि राजैवयुगमुच्यते ६ ॥

हे भारत खंडविषे श्रेष्टकृतयुग त्रेतायुग द्वापरयुग कलियु
ग यह सभही राजाके शीलहजके अनुसारहे ताते राजायुग
रूपहे ६ ॥

चातुर्वर्ण्यं तथावेदा श्चातुराश्रम्यमेवच स
र्वंप्रमुह्यते ह्येत यदाराजा प्रमाद्यति ७ ॥

जवराजा धर्मरक्षाविषे प्रमादी होताहे तबचारोवर्णोके धर्म
चारवेदोके धर्म चार आश्रमोके धर्मराजाके प्रमादसे सभही
प्रमादको प्राप्तहोतेहे ७ ॥

अग्नित्रेतात्रयीविद्या यज्ञाश्चसहदक्षिणाः स
र्वएवप्रमाद्यंति यदाराजा प्रमाद्यति ८ ॥

अग्नितीन जोहे आहवनीय गार्हपत्य दक्षिणाग्नि और बहोत द
क्षिणावाले यज्ञ यह सभही राजाके प्रमादसे प्रमादको प्राप्त
होतेहे ८ ॥

राजैवकर्ताभूतानां राजैवचविनाशकः ध
र्मात्मा यःसकर्तास्यादधर्मात्माविनाशकः ९

राजाही सर्वभूतोका कर्ताहे राजाही सभका विनाशकरता
हे धर्मात्मा राजा सभकाकर्ताहे अधर्मात्मा राजा सभका विना
शकर्ताहे ९ ॥

राज्ञोभार्याश्चपुत्राश्च बांधवाःसुहृदस्तथा
समेत्यसर्वेशोचंति यदाराजाप्रमाद्यति १०

राजाके प्रभावसे भार्यासुखी होतीहे पुत्रसुखकोदेतीहे बां
धवस्नेह करतेहे सुहृदलोकप्रीती करतेहे यहसभहीरा
जाकेही बनेहे जो राजा प्रमादकरे तोसभही मिलके शोचा
करतेहे १० ॥

हस्तिनोश्वाश्चगावश्च उष्ट्राश्वतरगर्दभाः अ
धर्मभूते नृपतौ सर्वेसीदंति जंतवः ११ ॥

जो कदाचित् राजाअधर्मीहोवे तो हाथी घोडे और गोआ उष्ट्र और

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
८१

त्वचा यह सभही दुखी होजाते हे कृश होजाते हे ११ ॥

**दुर्बलार्थं बलं सृष्टं धात्रा मांधातृ कथ्यते अब
लं तु महद्भूतं यस्मिन्सर्वं प्रतिष्ठितम् १२**

हे मांधाता राजा ब्रह्मा दुर्बलभजोके बलवास्ते विधाताने राजाही ब
लरूप सृजा हे जैसे अबलभूत हे तिन्हको महाबल राजा विषेही
प्रतिष्ठित हे १२ ॥

**यच्च भूतं संभजते ये च भूतास्तदान्वयाः अ
धर्मस्थे हृतदर्पतौ सर्वे शोचंति पार्थिव १३**

जौनसे दुर्बलभूत अन्नादिक भोजनसे बलको भजते हे जौन
से दुर्बल भूतोकी संबंधी बांधव हे सो सभही अधर्मकारी राजा
विषे शोचना करते हे १३ ॥

**दुर्बलस्य च यच्चक्षुर्मुनेराशीविषस्य च अ
विषह्यतमं मन्ये मास्म दुर्बलमासदः १४**

हे राजन् दुखपीडित जो दुर्बल जन हे उसके दुखभरी दृष्टि
हे विषज्वालाभरी सर्पदृष्टिसमान हे अति असह्य हे अति घो
र हे ताते तुम दुर्बलको पीडा मत करो १४ ॥

**दुर्बलांस्तात बुध्येथा नित्यमेवाविमानितान्
मा त्वां दुर्बल चक्षूंषि प्रदहेयुः सबांधवं १५**

हे तात जौनसे दुर्बल लोक अवमान पायकर दुःखी होते हे
उन्हको तुमने अवश्य दया करके विचारकरणे योग्य हे उन्ह
की रक्षा कर्तव्य हे तुमको दुर्बलोके नेत्रोकी दुखाग्नि संताप
से दग्ध नहीं करे १५ ॥

**नहि दुर्बल दग्धस्य कुले किंचित्प्ररोहति
आमूलं निर्दहत्येव मास्म दुर्बलमासदः १६**

जिन्हके कुलको दुर्बलोके संतापकी अग्नि दग्ध करती हे सो
कुल बहोड अंकुरको नही उदे करता समूलही सो अग्नि उस
को दग्ध करता हे ताते दुर्बल जनोको पीडा मत करो १६ ॥

**अबलं वै बलाच्छ्रेयो यच्चाति बलिवद्बलम्
बलस्याबलदग्धस्य न किंचिदवशिष्यते १७**

सर्वप्रकारके बलसे दुर्बल जनोका संतापबल महाबलवान
हे दुर्बलोके संतापबल करके जो दग्ध होता हे सो शेषवाकी
कछु नही होता १७ ॥

विमानितो हतः क्रुष्ट स्रातारं चेन्न विंदति अ
मानुषकृतनस्तत्र दंडो हंति नराधिपं १८ ॥
हे राजन् दुर्बल जनजो किसीने अवमानकियेहे किसीने मारा
हे और क्रोधकर्कें पीडितकियाहे बहोत दुखसे प्रकारकरतीहे उ
सको रक्षाकरणेहारा राजाआदिककोई प्राप्तनहीहोता उसके म
नमो संहरणिजगतके मानुषमरगयेहे संहरणिजगतनहीमारागा
याहे ऐसे अमानुष जगतकरणेका पापदंड राजाको प्राप्तहो
ताहे सो राजाको अतिपीडाकरतीहे १८ ॥
मास्मतातबलेस्थिता भुंजीथा दुर्बलं जनं मा
त्वा दुर्बल चक्षूंषि दहंत्वाग्नि रिवाश्रयं १९ ॥
हे तात तूं अपनी बलसन्नाविषे स्थितहोकर दुर्बल जनको अ
रक्षासे मतभोजनकरे तो को दुर्बलोके नेत्ररूपी अग्निवनकी
दावाग्नि वनकीन्याई मतदग्धकरे १९ ॥
यानि मिथ्याभि शस्तानां पतंत्यश्रूणि रोदतां
तानिपुत्रान्पशून्घ्नंति तेषां मिथ्याभिशंसनात् २०
हे राजन् मिथ्यादोषपीडितजो दुर्बलजनहे उनके रोदनसे जे
ते अश्रुजलके बिंदुपृथिवीमों पडतेहे सो अश्रुजलके बिंदुमि
थ्यादोषकरणेको तथा राजाके पुत्रोको और पशुसंपदादि सम्
हको दग्धकरदेतेहे २० ॥
यदिनात्मनि पुत्रेषु नचेत्पौत्रेषु नप्तृषु नहि
पापं कृतंकर्म सद्यःफलति गौरिव २१ ॥
हे राजन् जोनसा दुर्बलजनोकी पीडाकाजो पापकर्म हे सो जो
कदाचित् दुर्बलोकी पीडाकर्मका फलपापकारी पुरुषके श
रीरमों नहीभया पुत्रविषे नहीभया पुत्र प्रपौत्र मोनहीभया
गौकी प्रसूति समान तत्कालही नही भयातो २१ ॥
यत्राबलोवध्यमान स्रातारंनाधि गच्छति म
हान्दैवकृतस्तत्र दंडःपततिदारुणः २२
जिसराजाके देशमो अबल जनवध बंधनादिकोंकर्कें पीडित
भयाहे सो त्राता जनको किसीकोनही प्राप्तहोताहे तहां ऐसे म
हाघोर पापकर्मके फलसे महामारी दुर्भिक्षादि महाघोर दंड
प्राप्तहोताहे संहरणिदेशको विनाशकरताहे २२ ॥
युक्तायदाजानपदा भिक्षंते ब्राह्मणाइव अ
भीक्ष्णंभिक्षुरूपेण राजानंघ्नंति तादृशाः २३

हे राजन् जिसराजाके देशमे प्रजालोकदुःखपीडाको पायकर ब्राह्म
णोकी न्याई अपनी रक्षाकी भिक्षाको याचनकरतेहे धनदारादि संपदा
हरणोसे भिन्नरूपसेभीदीनभयेहे सोऐसे दुर्बलाजनहे सो अपने दुः
खसंतापके शस्त्रकोपकर्के राजाके वंशकोभी समूलघात मारदे
तेहे २३ ॥

राज्ञोयदा जनपदे बहवो राजपूरुषाः अ
नयेनोपवर्तंते तद्राज्ञः किल्बिषं महत् २४

जबराजाकेजनपददेशविषे बहोत अधर्मवाले राजाके अधि
कारी पुरुष अनीतिसे प्रजाको शासन करतेहे सोअनीति कर्म
का फलराजाकोही होताहे २४ ॥

यदाप्रज्ञानयंत्यर्था कामादर्थवशेनवा क
पणं याचमानो तद्राज्ञोवैशसंमहत् २५ ॥

जबराजाका अधिकारी पुरुष दुर्बललोक बलवानलोकोकी
पीडासे दुखित होकर्के अपनी रक्षावास्ते पुकार करतेहे उनको
रक्षापालननही करताहे कामक्रोधलोभसे अन्यथाही न्यायको
उलट पलट करताहे सो उसका पापराजाको फलकरताहे २५

महावृक्षोजायतेवर्द्धतेच तंचैवभूतानिसमा
श्रयंति यदावृक्षश्छिद्यतेदह्यतेच तदाश्रया
अनिकेताभवंति २६ ॥

अब अधर्मकारणेहे फलको दृष्टांतपूर्वककहतेहे हे राजन् रा
जारूपी महावृक्ष पूर्वसे कर्मबीजोकर्के उगताहे और वृद्धिकोभी
प्राप्तहोताहे उसके प्राणीजीव अनेक आश्रय करतेहे जब सो रा
जारूपी महावृक्ष पापकर्मके परिपाक कर्के छेदको प्राप्तहोता
हे अथवा दग्ध होताहे तब उसवृक्षके आश्रयकरणेहारे सभ
ही अनाश्रितहोकर्के नाशकोप्राप्तहोतेहे २६ ॥

यदाराष्ट्रेधर्ममग्र्यंचरंति संस्कारंवा राजः
गुणंब्रुवाणाः तैरेवाधर्मश्चरितोधर्ममोहा
त्तूर्णंजह्यात्सुकृतंदुष्कृतंवा २७ ॥

हे मान्धाता राजाजी जब राजाके अधिकारी अतिउग्र अधर्मको
आचरण कर्के आपने महत्वसंस्कारको करतेहे और राजाके प्री
तिगुणको अतिव्याख्यानको करतेहे तिन्होने अधर्मजो कियाहे
धर्ममोहसे उसकर्के सुकृतकात्यागहोताहे और पापकीप्राप्ति
राजाको होतीहे २७ ॥

यत्रपापाज्ञायमानाश्चरंति सतांकलिर्विंदते

तत्रराज्ञः यदाराजाशास्तिनरानशिष्टां स्तदा
राज्यंवर्द्धतेभूमिपस्य २८ ॥
जिसकेराज्यमों पापकारी लोकप्रसिद्धहोकर विचरतेहे और संत
जनोंविषेकलिजो अधर्मसेवाधाको करताहे सो कली दोषराजा
को होताहे जवराजा अधर्मकारी अशिष्टलोकोंविषे दंडनीतिसे शा
सनकरताहे तब राजाका राज्यवृद्धिको प्राप्तहोताहे २८ ॥
यश्चामात्यान्मानयित्वायथार्हं मंत्रेचयुद्धेचन्ट
पोनयुंज्यात् विवर्द्धते तस्यराष्ट्रं न्टपस्यभुंक्ते
महीं चाप्यखिलां चिराय २९ ॥
जोनसा राजा अपने अमात्य लोकोकों यथायोग्य सत्कारकर्के मं
त्रकार्यविषे और युद्धकार्यविषे नियोगकरताहे तबराजाको राज्य
देशपके प्राप्तिवृद्ध संपन्नहोताहे राजा चिरकालपृथिवीको धर्मसे
भोगताहे २९ ॥
यश्चापि सुकृतंकर्म वाचं चैव सुभाषितम्
समीक्ष्य पूजयद्राजा धर्ममाप्नोत्यनुत्तमम् ३०
जो राजा सुकृतकर्मको देखकर्के और सुकृतवाणी सुंदरवाणी
भाषितसुनकर्के सत्कारसे पूजाकरताहे सो राजा उत्तमधर्मफ
लको प्राप्तहोताहे ३० ॥
सं विभज्य यदाभुंक्ते नामात्या नवमन्यते नि
हंतिवलिनंदृप्तं सराज्ञो धर्मउच्यते ३१ ॥ जोरा
जा देवता ऋषि मनुष्योको यथाभागदेकर आपभोजनकरताहे
और धर्मपालनावाले अमात्यलोकोको अवमाननहीकरता जोन
सा अधर्मकारीवलवान पुरुषही उसको दंडनीतिसे वधबंधन
करताहे सो राजाको अपना अवश्य धर्मकर्मकहाहे ३१ ॥
त्रायतेहियदासर्वं वाचाकायेन कर्मणा पुत्र
स्यापिनमृष्येच्च सराज्ञोधर्मउच्यते ३२ ॥
जवसर्वलोकको वाणीकर्के कायकर्के रक्षाकरताहे चोरादि दुष्ट
जनोको दंडकरताहे जवसंग्रामविषे शत्रुगणोको जयकरताहे
सो राजाका धर्मकहाहे ३२ ॥
संविभज्ययदाभुंक्ते न्टपतिर्दुर्बलान्नरान् न
दामवंतिबलिनः सराज्ञो धर्मउच्यते ३३ ॥
जवराजा राष्ट्रको रक्षा करताहे चौरादिदुष्टजनोको दंडकरताहे
अधर्मकारी पुत्रकोभी क्षमानही करता सो राजाको पवित्रकरणेहा
रा धर्मकहाहे ३३ ॥

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
८३

83

यदारक्षतिराष्ट्राणि यदादस्यूनपोहति यदा
जयति संग्रामे सराजो धर्मउच्यते ३४ ॥
जो राजाके देशमो कर्मकर्के अथवा वाणीकर्के कोई पुरुष पापक
र्मकरताहे सो अपना प्रियभी होवे इसको दंडकरणेमो क्षमानही क
रताहे सो राजा धर्म कर्मका साक्षात्स्वरूपधारी कहाहे ३४ ॥
पापमाचरतोयत्र कर्मणाव्याहृतेनवा प्रिय
स्यापि नमृष्येत सराजोधर्मउच्यते ३५ ॥
जबराजा शरणागत दीनजनोको पुत्रके समान पालनकरताहे धर्म
मर्यादाको भेदन नही करता सो राजाकाधर्म कर्म अतिउत्तम कहाहे ३५
यदाशरणिकाद्राजा पुत्रवत्परिरक्षति भि
नत्तिचनमर्यादां सराजो धर्मउच्यते ३६ ॥
जबराजा धर्मम बड़दक्षिणावाले यज्ञोको श्रद्धाकरताहे कामद्वे
षोको अनादरकरके प्रजापालन करताहे सो राजाकोपरम धर्मक
यदाप्तदक्षिणैर्यज्ञै र्यजते श्रद्धयान्विताः होहे ३६
कामद्वेषावनादृत्य स राजो धर्मउच्यते ३७ ॥
जबराजा कृपण अनाथ वृद्धजनोको दुखजनोको निवृत्तिकर्कै दु
खजलवाले नेत्रोके जलको मार्जनकरताहे सभलोकोको हर्ष उप
जावताहे सो राजाको स्वर्गप्राप्तिका धर्मकहाहे ३७ ॥
कृपणानाथवृद्धानां यदाश्रु परि मार्जति ह
र्षं संजनयन्नृणां स राजो धर्मउच्यते ३८ ॥
जो राजा मित्रोकी वृद्धीकरताहे शत्रुजनोके मारकर्कै क्षीणकरता
हे साधुजनोकी रक्षनकरताहे सो राजाको मोक्षसिद्धिका धर्मक
विवर्द्धयतिमित्राणि तथारींश्चापकर्ष होहे ३८
ति संपूजयतिसाधूंश्च स राजो धर्मउच्यते ३९
जो राजा ब्राह्मणोकी पालन करताहे और निम्नभूमिदानदेता हे
प्रतिपीजनोकोअन्यलोको कोभी धनसंपदा दानकर्कै प्रसन्नकर
ताहे सो राजाको परमकल्याणकारी धर्मकहाहे ३९ ॥
निग्रहानुग्रहौ चोभौ यत्रस्यातां प्रतिष्ठितौ अ
स्मिंल्लोके परे चैव राजासप्राप्नुतेफलं ४० ॥
जिसके राज्यमो निग्रह और अनुग्रह यथाविधि प्रतिष्ठित बनेहे
सो राजा इहलोकविषे यशको और स्वर्ग भोगको फलको प्रा
प्तहोताहे ४० ॥

सम्यक्पालयितृश्रीमान् नित्यंभूमिं प्रयच्छति
प्रजयेद्दातिणीन् यत्मान् सराजा धर्म उच्यते ५१
हे महाराजा राजाजो धर्म कर्म करणेहारे लोकोको राजा धर्मराजा
परमेश्वरहोताहे सोई राजा अपने इंद्रियोंके जीतलेताहे कामको
धरहितहोताहे तो महाऐश्वर्यको प्राप्तहोताहे जोनि जैंद्रियन
ही होताजोअग्निरूपहोताहेजे सेअग्निकाष्टोंकोदाहकर्के आप
भी शांतहोताहे तैसे राजाभी प्रजापीडनकर्के आपभी समाप्त
होजाताहे ५१ ॥
यमोराजा धार्मिकाणां मोधाता:परमेश्वर:
संयच्छन्भवति प्राणा नसंयच्छस्तु पावक: ५२
सो राजाजब अपने ऋत्विक पुरोहित आचार्योंकोसत्कारकर्के
मानहूजाकर्के प्रसन्नकरताहे सोराजाका धर्म कर्मकी परम
सिद्धीकाभागी कहाहे ५२ ॥
ऋत्विक पुरोहिता चार्यान् सत्कृत्यानवमन्य
च यदासम्यक् प्रारहूणाति सराजाधर्मउच्यते ५ ३
हे राजन् यमराजा जोहे सोसर्वभूतोको विशेषविचारविनाही स
वभूतोंको संहारकरताहे तैसेराजानेभी सभकोपीडानही कर्न
व्यहे विधिवत् प्रजाको पालनकर्नव्यहे ५३ ॥
यमोयच्छतिभूतानि सर्वाण्येवा विशेषत:
तथा राज्ञानुकर्तव्यं येनयाविधिवत्प्रजा: ५४
जो राजा सदाधर्मपालनाको देखताहे सोसदासहस्राक्ष इंद्रके
समानउपमाको प्राप्तहोताहे जिसधर्मको आपसम्यक विचार
कर्के करताहे हे पुरुष श्रेष्ठसोई परधर्महे ५४ ॥
सहस्राक्षेण राजाहि सर्वथैवोपमीयते सप
श्यतियंधर्म सधर्म:पुरुषर्षभ ५५ ॥
हे राजन् तुम आपभी प्रमादकोत्यागकर क्षमाको बुद्धिज्ञानको
धृतीको शुभमतीको और सर्वभूतोंकी साधु असाधुकर्मजिज्ञासा
को सदाही शिक्षाको अभ्यासको करो ५५ ॥
अप्रमादेनशिक्षेथा: क्षमांबुद्धिं धृतिं मतिं
भूतानां चैवजिज्ञासा साधु साधुच सर्वदा ५६
और सर्वभूतोका संग्रह करणा और दानकरणा मधुर वचनक
हना इन्हका अभ्यासकरणा और पुरवासी लोकोको देशवासी
लोकोकी सदारक्षा करणी यथा सब सभको प्रसन्न करणा ५६

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
८४

84

संग्रहः सर्वभूतानां दानेन मधुरं वचः पौर
जानपदाश्चैव गोप्तव्यास्ते यथासुखं ४७
हे तात जो राजा धर्मविचारमो दक्षनहीहे सो प्रजारक्षाकर
णेको नही समर्थ होता यह राज्यकापालना महाभारीही
राज्यकरणा महादुष्करहे ४७ ॥

नशक्यं दक्षोन्नृपतिः प्रजाःशक्नोति रक्षितुं
भारोहिसुमहांस्तात राज्यंनामसुदुष्करं ४८
राज्यकरणेको दंडवेत्ता सूरमा पुरुषहीरक्षासे करसकताहे जो
राजा दंडनही करजानेऐसे कायर मूढबुद्धिकरकें राज्यकी रक्षा
अवश्यहे ४८ ॥

तद्दंडविन्नृपःप्राज्ञः शूरःशक्नोति रक्षितुं
नहि शक्यमदंडेन क्लीवेनाबुद्धिनापिवा ४ ५
हेमान्यात्ता राजातुम आपभी अमानदू पसंपन्न कुलीनजन्मवा
ले उत्तमजनोकरकें संयुक्तहोकरकें धर्मविचारविषे चतुरऐसे
जो आपनेभक्त बहुश्रुतलोकहे तिन्होकरकें सर्वप्रकारकी धा
र्मकर्मकी बुद्धीकों परीक्षाकरो और जो लोकतपस्वी जनोके
आश्रमो विषे जो लोकनिवास करतेहे तिन्होकोभी बुद्धीको
भी परीक्षासे जाननेयोग्यहो ४९ ॥

अभिरूपैःकुलेजातैर्दक्षैर्भक्तैर्बहुश्रुतैः स
र्वाबुद्धीः परीक्षेथा स्तापसा श्रमिणामपि ५०
जो तुम उत्तमजनोकी बुद्धिविचारकोजानोगे तवसर्वभूतोकी
परमधर्मवृत्तीकोस्वदेशमो परदेशमोभी धर्मतुजिजानोगी तो
तुम्हारा धर्मकही भी लुप्तनही होवेगा ५० ॥

ततस्त्वं सर्वभूतानां धर्मवेत्स्यसिवैपरम स्व
देशेपरदेशेवा नतेधर्मोविनंक्ष्यति ५१ ॥
ताते तुम्हारा अर्थ और कामाचारभी सभही धर्मप्रधानही
होवेगा इसी हेतुसे धर्मात्मा अखंडसुखको भोगताहे ५१ ॥

तस्मादर्थाश्चकामाश्च धर्मएवोत्तरो भवन्
अस्मिंल्लोके परेचैव धर्मात्मासुखमेधते ५२
उत्तम पूजा योगगुणी लोकजोहे सो पुत्रोको दारा कुटुंबको
त्यागदेतेहे सर्वभूतोके दयाधर्म संग्रहको मधुर वाणीको स
दासे वनेहे ५२ ॥

त्यजंतिदारान्प्राणांश्च मनुष्याःपरिसजिताः

संग्रहश्चैवभूतानां दानंच मधुराचवाक् ५३
हे मान्धाता राजानी प्रमादका त्याग और शौच यह दो धर्मराजा
को सदाही परम ऐश्वर्यको करतीहै इन्होंको कदापि प्रमाद क
दापिनहीकरणा ५३ ॥
अप्रमादश्च शौचंच राज्ञोभूतिकरं महत
ऐतेभ्यश्चैवमांधातः सततंमाप्रमादिथाः ५४
राजा परदेशके अपने देशके छिद्रदेशनेमो कदापिप्रमादनही
करे इसके छिद्रको परायाजननही देखे आपराजा परकेछिद्रको
अप्रमत्तो भवेद्राजा छिद्रदर्शी परात्मनोः देखे ५४
नास्यछिद्रंपरःपश्ये छिद्रेषुपरमन्वियात् ५ ५
हे राजन् अपने छिद्रोका गोपन करणा पराये राष्ट्रके छिद्रोंका
दर्शनकरणा यह इंद्रका व्रतहै यमका व्रतहै वरुणकाव्रतहै
सकलराजऋषियोंकोभी यहीव्रतहै तुमभी इसव्रतको सेवन
एतद्व्रतंवासवस्य यमस्य वरुणस्यच करो ५५
राजर्षीणां चसर्वेषां तत्वमप्यनुपालय ५६
हे भरतखंडके महाराज जोनसाराजऋषि सेवितव्रतहै इसको
तुमकरो यहदेवलोकका दिव्यमार्गहै इसको तुमनिरंतर
सेवनकरो ५६ ॥
तत्कुरुष्व महाराज व्रतं राजर्षि सेवितं आ
तिष्ठ दिव्यपंथान मह्राय भरतर्षभ ५७ ॥
धर्मवृत्तंहि राजानं प्रेत्यचेहच भारत देव
र्षिपितृगंधर्वाः कीर्तयंति महौजसाः ५८
हे भारतखंडके कर्मनिष्ठोविषे श्रेष्ठधर्मवृत्तिवाले राजाको इ
हलोकविषेपरलोक विषेभी देवऋषिपितर और गंधर्व सभ
ही महाप्रभाव संपन्नहै सोभी सदाकीर्तनकरतेहै ५८ ॥
भीष्मउवाच सएवमुक्तो मांधाता तेनोतथ्येन
भारत कृतवान विशंकश्च एकःप्रापच मेदिनी
भीष्मउवाच हे भारत उतथ्य मुनीने जबऐसा मांधाता म ५९
राजा को कहा तवसो राजाजैसेकहा तैसेही शंका त्यागकेकै
सकल धर्मको करता भया संपूर्ण पृथिवीके राज्यको प्राप्तहो
ताभया ५९ ॥

श्री०
रा० ध०
टी०
८५

85

भवानपितथासम्यक् मांधातेव महीपते ध
र्मंकृत्वामहींरक्षन् स्वर्गेस्थानमवाप्स्यसि ८
इतिश्रीमहाभारते शतसहस्रसंहितायांराज
धर्मेषु उतथ्यगीता एकनवतितमः ९१॥
हे महीपते युधिष्ठिर आपभी इसीप्रकार मान्धाताराजाकी न्याय
से धर्म कर्मकरके पृथिवीको रक्षाकरो ऐसे धर्मकरणेसे स्वर्गमें
वासकरणेको स्थानको प्राप्तहोवेगे ८ इतिश्री महाभारते शांति
पर्वणिराजधर्मेषु उतथ्यगीता एकनवतितमोध्यायः ९१॥
युधिष्ठिरउवाच कथंधर्मेस्थातुमिच्छन् राजाव
र्तेतधार्मिकः पृच्छामित्वाकुरुश्रेष्ठतन्मेब्रूहि
पितामह १ भीष्मउवाच ॥
युधिष्ठिरउवाच हे कुरुश्रेष्ठ पितामहजी धार्मिकजो राजाहै सो ध
र्मकर्मविषे स्थितीकी वांछाकरणेहारा कौनप्रकारसे इसलोकविषे
वर्तमानविषे वर्तमानहोवे यह में आपपृछाकरताहूं आपमोको
निर्णय करके कहो १ भीष्मउवाच ॥
अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासंपुरातनं गी
तंदृष्टार्थ तत्वेन वामदेवेन धीमता २॥
हे राजन् इसअर्थमोभी एक पुरातन इतिहासको उदाहरण क
हतेहैं जौनसा इतिहास सर्वतत्वार्थ दृष्टा मे वामदेव महामती
ऋषीने कहाहै २॥
राजावसुमनानाम ज्ञानवान्धृतिमान्शुचिः
महर्षिंपरिपप्रच्छ वामदेवं तपस्विनम् ३
एक राजा वसुमना भयाहै सो महाज्ञानवान् धैर्यवान् महा
पवित्रभयाहै सो राजावामदेव नामवाले महातपस्वी ऋषीकों
प्रश्नकरताभया ३ ॥
धर्मार्थ सहितैर्वाक्यै र्भगवननुशाधिमां
येनवृत्तेनवैतिष्ठ न्नहीयेयं स्वधर्मतः ४
हे भगवन् धर्मार्थ निर्णय सहित जो वाक्यहै तिन्होकर्के तुम
मोको शिक्षाकरो जैसे वृतकर्के अपने धर्मकर्मसे हीननहीहो
तमब्रवीद्वामदेव स्तेजस्वीतपतांवरः वो ध
हेमवर्णंसुखासीनं ययातिमिवनाहुषं ५

वामदेव महानपस्वी जोहे सो सभही नपो निष्ठावान मुनि
जनोंविषे श्रेष्ठहे राजा वसुमनाको वचनकहता भया केसाहै
राजा वसुमना सोवर्णमय सिंहासनमो बैठाहे नहुषपुत्रके
ययाती राजा समान महाप्रभावसें युक्तहै ५ ॥

वामदेवउवाच धर्ममेवानुवर्तस्व नधर्माद्विद्यते
परं धर्मेस्थिताहि राजानो जयंति पृथिवीमिमा
वामदेवउवाच हे वसुमना राजन् तुमसदा धर्मको मू ६
अनुसारही सदावर्तमानहो धर्मसेपरे और कोई उभयलोकका
हितकारी नही हे सभही राजालोक धर्मनिष्ठामो स्थितहोकर
इसपृथिवीको संपूर्णजयकरलेतेहे ६ ॥

अर्थसिद्धेः परंधर्मं मन्यतेयो महीपतिः
सतो च कुरुतेबुद्धिं सधर्मेण विराजते ७
जो राजाधर्मको अर्थसिद्धीसे परम उत्तम मानताहे और संतज
नोकी सेवामो बुद्धीको दृढकरताहे सो राजा धर्म करके उभयलो
कविषे विराजमानहोताहे ७ ॥

अधर्मदर्शी योराजा बलादेव प्रवर्तते ति
प्रमेवापयातोस्मा दुभौ प्रथम मध्यमो ८
जौनसा राजा अधर्मकर्ती होताहे और अपने बलसे अधर्मवि
षे प्रवृत्तहोताहे उसको तत्कालही उत्तममोक्षगति मध्यम स्व
र्गगति यहदोनो उसकोदूरहो जातेहे अथवा प्रथम इहलोक
मध्यम स्वर्गलोक वहदोनो दूरहोतेहे तृतीयलोकविषे उत्तम
लोकसे और मध्यमलोकसेभी अधोगामीकीभूमिका विषे नरक
विषे पातहोताहे ८ ॥

असत्पःपापसचिवो वध्योलोकस्यधर्महा
सहैव परिवारेण क्षिप्रमेवाव सीदति ९
जौनसाराजा असत्यप्रवृत्ती वाला हे और जिसके पापकारी अ
मात्यहे सोराजा धर्मके फलसे फलरहितहे लोकोके धर्मकर्म
का नाशकारीहे सोअपने परिवार सहितही शीघ्रकाल मोही
विनाशको प्राप्तहोताहे ९ ॥

अर्थानामननुष्ठाता कामचारी विकत्थनः
अपिसर्वां महींलब्ध्वा क्षिप्रमेव विनश्यति १०
जौनसा राजा धर्मार्थ पालनके अनुष्ठानको नही करता काम

चारी भयाहे विपरीतकथाको प्रवृत्तकरताहे सो संपूर्ण पृथिवीका राज्यपाइकर्केभी तत्कालही नाशको प्राप्तहोताहे १० ॥

अथाददानः कल्याण मनसूयुर्जितेंद्रियः
वर्धते मतिमान् राजा स्रोतोभि रिव सागरः ११

और जो नसा उत्तमराजा प्रजापालनासे धर्मफलके कल्याणको लेताहे दोषकल्पनारहितहे जितेंद्रीहे ऐसा मतिमान् राजा सदा राज्यवृद्धिको प्राप्तहोताहे जैसे नदीओं कर्के समुद्रवृद्धीको प्राप्तहो

नहीणोस्मीति मन्येत धर्मतःकामतोर्थ ताहे ११
तः बुद्धितो मित्रतश्चापि सततं वसुधाधिप १२

हे वसुमान् राजान् राजाने अपनेको धर्मपालनासे हीननही मानना कामसेहीननहीमानना अर्थसे हीननही मानना बुद्धिविचारसे गुणसंग्रहसे हीननही मित्रसंग्रहसे हीननही मानना धर्मार्थकामके त्रिवर्गका सदा अभ्यास करणा और गुण संग्रह मित्रसंग्रहभी सदाकरणा १२ ॥

एतेष्वेवहि सर्वेषु लोकयात्रा प्रतिष्ठिता एता
निशृण्वंल्लभते यशःकीर्तिःश्रियःप्रजाः १३

ऐसेगुणोविषेही लोक व्यवहारकी यात्रावनीहे इनके अभ्यासकारी नीतिधर्मशास्त्रोके श्रवणसे राजाजोहे सो यशको कीर्तिको संपदाको प्रजावृद्धीको प्राप्तहोताहे १३ ॥

एवंयो धर्मसंरंभी धर्मार्थपरिचिंतकः अ
र्थान्समीक्ष्यभजते सध्रुवं महदश्नुते १४ ॥

हे राजन् इसप्रकार जो राजा धर्मकर्मका सदा प्रारंभ करताहे और धर्मार्थके श्रवण विचारसंयुक्तहे और अपने अर्थ परमार्थको विचारसे भजताहे सो निश्चयकर्के महाउत्तमसुख कोभोगताहे १४

अदाताह्यननिस्नेहो दंडेनावर्तयन्प्रजाः साह
सप्रकृतीराजा क्षिप्रमेवविनश्यति १५ ॥

हे राजन् जोराजा दानमहादान नहीदेताप्रजाको अभयदाननही देता दीनअनाथोके पालनेमे प्रीतिस्नेहको नहीकरता केवल दंडमात्रकर्के प्रजाको आज्ञाकरताहे जैसे दंडप्रकारकर्के गोको दोहनाचाहताहे ऐसा साहसकारी स्वभाववालाराजाशीघ्रही विनाशकोप्राप्तहोताहे १५ ॥

अथपापकृतंबुद्ध्या नवपश्यतिबुद्धिमान् अ
कीर्त्याभिसमायुक्तो भयोनरकमश्नुते १६ ॥

वहोउअपनेपापकर्मसेकिये अधर्मको बुद्धिविचारसे पश्चातापको
भी नहीकरताहे अर्थनपापके अभ्यासको निरंतरकर्ताहे संपूर्ण
जगतकी अकीर्तीसे पूर्णहोताहे पापकेभारसे नरकसमुद्रमो डू
वताहे १६ ॥

अथमानयितर्दाप्तः सुहृत्सुवशवर्त्तिनः
व्यसनेस्वमिवोत्पन्ने विजिघांसंतिमानवाः १७

हे राजन् और भी सुनो जोराजा दानमानसत्कार करताहे मधुरबो
लताहे रक्षाकरणे मों वश कर्ताहे उसकी जो कदाचित् आपदा
कोव्यसनप्राप्तहोवे तो उसके सभही मनुष्य व्यसनको अपनेको
प्राप्तभये जैसे मानकर्के सभही मिलकर्के निहन्नकियाचाहतेहे १८

यस्यनास्तिगुरुर्धर्मे नचान्याननुपृच्छति स
सुखतंत्रार्थलाभेषु नचिरंसुखमश्नुते १८ ॥

अवरभी तुमजानो जिसराजाका गुरुधर्मकर्ममें निष्ठा कोनहि
जानताहे और राजगुरू और राजाभी अपने सुखके लाभवास्ते अभि
मानसे प्राप्तपुरुषार्थी जनोको प्रश्ननहीकरताअभिमानसे किसी
के अधीननहीहोताहे सोचिरकालसुखकोनहीभोगताहे १८ ॥

गुरुप्रधानोधर्मेषु स्वयमर्थान्ववेक्षिता धर्मप्रधा
नोलाभेषु सचिरंसुखमश्नुते १९ इतिश्री महा
भारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेवामदेवगीतासु ९२

जिसका गुरु धर्मार्थज्ञानमार्गमों प्रधानहे आपभी संपूर्ण धर्मार्थ
ज्ञानकावेत्ताहे और लाभकार्य विषे धर्मज्ञानप्रधानहे सोराजाचिर
कालसुख भोगताहे १९ इतिश्रीम॰भा॰शां॰प॰राजधर्मेष॰द्विन
वतितमोध्यायः ९२ ॥

वामदेवउवाच यत्राधर्मंप्रणयतेदुर्बलेबलवत्त
रः तांहवृत्तिमुपजीवंतियेभवंजितदन्वयाः १ ॥

वामदेवउवाच हेवसुमनराजाजी जिसराजा मोदुर्बलजनोंविषे अ
तिबलवानपुरुष अधर्मदंडकोकरताहे और उसकेअनुसारीलो
कभी उसीउपजीवकाकोकरतेहे १ ॥

राजानमनुवर्त्तंते पापं पाप प्रवर्त्तके अवि
नीतमनुष्येहि क्षिप्रंराष्ट्रं विनश्यति २ ॥

पसे पापकारी राजाके सभही अधिकारी लोक उस राजाके पा
प कर्मके अनुसार पापकर्मकोही करतेहें पसोजहां केलोक स

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ ८७

भ इष्टहानिभयेहे सो संहरणे शत्रुश्रीघ्रविनाशको प्राप्तहोताहे २ ॥

यद्वृत्तमुपजीवंति प्रकृतिस्थस्यमानवाः तदे

म वविषमस्थस्यस्वजनोपिनमर्षते ३ ॥

जो नसासुखसंपदाकी अवस्था मोनीचहानिहोताहे सो विषमावस्था विषे भी उसकी विषम हानिको खोटीलोकनही मानते ३ ॥

साहसप्रकृति र्यस्तुकिं चिदुल्बणमाचरेत् अ

शास्त्रलक्षणोराजा क्षिप्रमेवविनश्यति ४ ॥

ऐसा उग्रहानिजहा अति उग्रकर्मकोकछु और करे ऐसा अशास्त्रलक्षणवालाराजासत्ता वीनष्टहोताहे ४ ॥

योत्यंतांचरितांवृत्तिं क्षत्रियोनानुवर्तते जि॰

तानामजितानांच क्षत्रधर्मादपैतिसः ५

जौनसा क्षत्रीराजा शत्रूनीजीतेहे जोराजे आपदाको प्राप्तभयेहे उनकी अभ्यासकीनी हानिको और स्वधर्मस्थ संपदा वाले राजा लोको की अतिधर्माचारवाली हानिकों नहीसेवनकरता सोराजा अपने क्षत्रधर्मसे पतित होताहे ५ ॥

द्विषंतंकृतकल्याणं गृहीत्वान्रपतिंरणे योन

मानयतेद्वेषात् क्षत्रधर्मादपैतिसः ६ ॥

जौ, हेराजन् जौनसा राजा प्रथमअपनेको उपकारकरणेहाराहे पश्चात् किसीदोषसे द्वेषकरताहे उसकोंरणविषेंजीतकर्के अपने बलसे ग्रहणकर्कें दोषनिवारणकर्कें वहाउभी उसीदोषारोपणसे पूर्वले उपकारको स्मरणकर्कें सन्मानसत्कारकोनही करताहे सो अपने क्षत्रधर्मसेपतित होताहे ६ ॥

शक्तःस्यात्सुमुखोराजा कुर्यात्करुणमापदि प्रि

योभवतिभूतानां नचविभ्रश्यतेश्रियः ७ ॥

जोराजा अपनी संपदा समर्थहोय तो सुखभोगको करे आपदामो आपदीनिवारणवास्ते पुरुषार्थके अनुसार न्यायकर्मकरे सोराजासर्वभूतोंका प्रियहोताहे वहाउ संपदासे रहित नही होता ७ ॥

अप्रियंयस्यकुर्वीत भूयस्तस्यप्रियंचरेत् नचि

रेणाप्रियः सस्यात् योप्रियःप्रियमाचरेत् ८ ॥

जिसका किसीका अप्रियकरे विचार कर्कें बहुउ उसकाप्रियकरे सोवह पुरुषराजाका सत्तावीप्रियहोताहे जौनसाअप्रियहे सोभीप्रियहोताहे प्रियकार्यकोकरताहै ८ ॥

स्वाभावं परिहरेत् कुर्यात्प्रियमयाचितः न
चकामान्न संरंभा न्नद्वेषाद्धर्ममुत्सृजेत् ९ ॥
राजाजोहेसे असत्यभाषणहथाभाषणकोत्यागदेवे जिसकाप्रिय
करणाहोये उसको अधिकारदेव करयाचनाविनाहीप्रियकरे और अ
पने धर्मत्यागनहीकरे क्रोधसेधर्मत्यागनहीकरे द्वेषसेभीधर्मत्या
गनहीकरे ९ ॥
नापत्रपेत प्रश्नेषु नाविभाव्यांगिरंसृजेत् न
त्वरेतनचासूये तथासंवरणेपरः १० ॥
संशयनिवारणेको प्रश्नकरणेमोंलज्जानही करे और असंभवकार्य
वाली वाणीउच्चारणनहीकरे और अविचारसे शीघ्रकारी नहीहोवे
और अविचारसे वैरस्पर्धाभी नही करे ऐसाकरणेसे जौनसा पराया
जनहे सोभीवशहोताहे १० ॥
प्रियेनातिभृशंहृष्ये दप्रियेनचसंज्वरेत् नत
प्येदर्थकृच्छ्रेषु प्रजाहितमनुस्मरन् ११ ॥
हेराजा राजाजोहे सोप्रिय वस्तूके सुखकीपाइकर मर्यादासे अधि
कहर्ष नही करे अप्रिय प्राप्ति विषे संतापनही करे और अर्थकार्यों
की कठिन ता मो संतापको प्राप्तनहीहोवे प्रजाकाहित सदास्मरण
करे ११ ॥
यःप्रियंकुरुतेनित्यं गुणतोवसुधाधिपः न
स्यकर्माणिसिध्यंति नचसंत्यज्यतेश्रिया १२ ॥
जो राजा गुणोके अनुसार लोकोंके प्रियकोंकरताहे उसराजाके सं
पूर्णकार्यसिद्धहोतेहे राज्यसंपदाकर्के उसराजाकात्यागनहीहोता १२
निहृत्तंप्रतिकूलेषु वर्तमानमनुप्रिये भक्तं
भजेतनृपतिः सदैवसुसमाहितः १३ ॥
जो पुरुषराजाके कार्योविषे निहत्तभयाहे और प्रियकार्यमोंवर्त
मानहे ऐसेपुरुषकोंभक्तको राजाभी सावधानतासेभजे १३ ॥
अप्रकीर्णेंद्रियग्राम मत्यन्तानुरागिणंशुचिं श
क्तंचैवानुरक्तंच युंजन्महतिकर्मणि १४ ॥
जौनसापुरुष इंद्रिय ग्रामको दृथा चेष्टासे निग्रह करताहे और अ
पने आज्ञाकरणेमे अत्यंत अनुसारभयाहे और आचारविचारसे शु
द्धहत्तीहे और कार्यकरणेमो अतिसमर्थहे और राजकार्यमों अति

श्री॰
उ॰प॰
टी॰
८८

८८

प्रीतीवालाहै ऐसेभक्तजनको महाभारी कार्यमों युक्तकरे १४ ॥

एवमेतैर्गुणैर्युक्तो योनुरज्यति भूमिप भर्त्तरर्थे
अप्रमत्तं नियुंज्यादर्थकर्मणि १५ ॥

जौनसापुरुष इसीप्रकारकेगुणोंसंयुक्तहै जोभी राजाके कार्यमो उदासी
नहै राजाके अर्थोकेविकारमोसावधानहै उसको सामान्यअर्थोकेका
र्यमोंयुक्तकरे १५ ॥

मूढमैंद्रियकंलुब्ध मनार्यचरितंशठं अन:
तीतोपधंहिंस्रंदुर्बुद्धिमबहुश्रुतं १६ ॥

औरहे राजन् जौनसा पुरुष मूढबुद्धिहै इंद्रियोकेभोगसुखकालोभी
है और तुच्छजिसकाआहारविहारहै और ठगपाखंडीहै और छलमाया
केविचारवालाहै और हिंसाप्रधानहै और व्यवहारकार्यमोबहुज्ञनन
हीहै १६ ॥

त्यक्तोदात्तंमद्यरतं द्यूतस्त्रीमृगयापरं कार्ये
महतियुंजानो हीयतेनृपति:श्रिया १७ ॥

और उदारकर्मसेरहितहै मद्यसेवारतहै द्यूतक्रीडारतहै स्त्रीजितहै
मृगयारसकहै ऐसेपुरुषको महाभारीकार्यमोराजायुक्तकरे तो सं
पदासेहीन होताहै १७ ॥

रक्षितात्माचयोराजा रक्ष्यान्यश्चानुरक्षति प्रजा
श्चतस्यवर्द्धंते ध्रुवंचमहदश्नुते १८ ॥

हे राजन् वशमना जोराजा अपनीरक्षाको सर्वप्रकारसे करताहै औ
र जिनकी रक्षा कर्तव्यहै ऐसेदीनदुःखी धर्मात्मलोक उनकी रक्षाको
भीकरताहै ऐसे राजाके प्रजालोक राजाकेधर्मसेवृद्धिकोप्राप्तहोताहै
और राजा निश्चयकरके सुखकोप्राप्तहोताहै १८ ॥

येकेचिद्भूमिपतय: सर्वांस्तानन्ववेक्षयेत् सु
हृद्भिरनभिख्यातै स्तेनराजानरिष्यते १९ ॥

जौनसे राजालोक पृथिवी मो महायश धर्म पराक्रम संपन्नभयेहै
उनको सभकोही अतिविश्वासवाले सुहृदोकेसाथ विचार करे
ऐसेराजा लोक कैसे आचारविचार महापदवीको प्राप्तभयेहै ऐसेवि
चारकर उत्तममर्यादामो स्थितहोवे इसप्रकारसे राजासभसे अधि
कप्रतापसंपदावाला होताहै १९ ॥

अपकृत्यबलस्थस्य दूरस्थोस्मीतिनाश्वसेत् श्ये
नाभिपतनैरेते निपतंतिप्रमाद्यत: २० ॥

जो पुरुष अपकार करकें बलपराक्रममें सावधान स्थितभयाहे जो
इरहे तोभीइसकाविश्वासनहीकरे जोनसा प्रमादी राजाहे इसविषे
लवान शत्रुराजे बाजपंछीकी न्याई हरसेही ग्रानपड़ते हैं २० ॥

दृढमूलस्त्वदुष्टात्मा विदित्वाबलमात्मनः अ
बलानभियुंजीत नतुयेबलवत्तराः २१ ॥

हे राजन् वसमनाजी दुष्टबुद्धिजोराजाहे सोदृढमूलभीहे अपनेव
लको बहोत मानताहे ओर सभको अबलजानकर अबलही सेना
को जयवास्तेयुक्तकरताहे जोनसे अतिबलवानहे तिरूकोनहीजान
ता शीघ्रसी विनाशको प्राप्तहोताहे २१ ॥

विक्रमेणमहीलब्धा प्रजाधर्मेणपालयेत्
आहवेनिधनंकुर्या द्राजाधर्मपरायणः २२ ॥

हे राजन् राजा जोहे सो पराक्रमकरकें पृथिवी कोप्राप्तहोकरकें प्र
जाकों धर्मकरकेंपालनकरे युद्धविषेमरणामारणकरे सोराजाधर्मक
र्मपरायणहोताहे २२ ॥

मरणांतमिदंसर्वं नेहकिंचिदनामयं तस्मा
द्धर्मेस्थितोराजा प्रजाधर्मेणपालयेत् २३

यह सभही जगतका राज्यभोग मरणांत पर्यंत दृष्टहोताहे प्राप्य
नस्थिरकछुनहीवनाहे ताते राजा धर्मविषेस्थितहोकरप्रजाको ध
र्मकरकें पालनकरे २३ ॥

रक्षाधिकरणंयुद्धं तथाधर्मानुशासनं मंत्र
चिंतासुखंकाले पंचभिर्वर्द्धतेमही २४ ॥

हे राजन् राजालोकोकेपांचकृत्यमुख्यहे रक्षाकेस्थान दुर्गादिकक
रणे ओर रणविषे युद्धकरणा ओर धर्मकर्मकी आज्ञापालनकर
णा ओर मंत्रचिंताकरणी ओर कालसमयके अनुसारसुखभोगक
रणा इह्नपांचोंकरकें राजाकी राज्यभूमिअधिकहोतीहे २४ ॥

एतानियस्यगुप्तानि सराजाराजसत्तम सत
तंवर्तमानोत्र राजाधत्तेमहीमिमां २५ ॥

इहपांचोकार्यजिसकेप्रात्रुजनोकोछिद्रदर्शनरहितहे सो राजारा
जसत्तमहे सदाही राजधर्मविषे इसपृथिवीकोपालनकरताहे २५

नैतान्येकेनशक्यानि सातत्येनानुवीक्षितुं ते
षुसर्वंप्रतिष्ठाप्य राजाभुंक्तेचिरंमही २६ ॥

हे राजन् एतेकार्य एकराजाने करणे अशक्यहे इसप्रकारके स
र्वकार्यों विषे अधिकारी पुरुषोंको यथाविधिस्थापन करकें आप

श्री० रा० प० टी० प८५

89

सर्वज्ञान संपन्न होवे सोचिरकाल पृथ्वीको भोगताहे २६ ॥

दातासंविभक्तासि मार्दवोपगतःशुचिः असं
त्यक्तमनुष्यश्च तंजनाःकुर्वतेनृपं २७ ॥

जोनसा महादानोको दान पात्रोंविषेदेताहे अभयदानदीनदुर्बलो
को देताहे आतिथी देवता पितर कुटंबपोषणकर्के भोग भोग
ताहे और आतिथ्यजनोको अपराधविनात्यागनहीकरे उसकोही
सभलोक राजामानतेहे २७ ॥

योर्थकामस्यवचनं प्रातिकूल्यान्नमृष्यते शृ
णोति प्रतिकूलानि सर्वदाविमनाइव २९

यस्तानिःश्रेयसंकृत्वा ज्ञानेनप्रतिपद्यते आ
त्मनोमतमुत्सृज्यतंलोकोनुविधीयते २८

जोनसाराजाकार्यार्थी जनके उलटेवचनोको सह्यारताहे विपरीत
जानकर्के कोपनही करताहे अनुकूलतासे सभही वचनोको उ
दासीनमन जैसा सदासर्वदाश्रवणकरताहे इसप्रकार अपने हि
तकारी जनोकेभी अपनेहि तवास्ते अधिकारी मित्रजनोकेवचन
कोश्रवणकरताहे सोराजासंपदासेहीन नही होता २८ ॥ जोरा
जा दुर्गादिपंचअधिकारी जनोविषे एककिसीने कछु हित ज्ञान क
हा उसको अपनाहि तजानकर्के अपने मतके अभिमानकोत्यागक
र उसीवचनको हितमानताहे उसीराजाकेमतको लोकमानताहे २९

अग्राम्यचरितांवृत्तिं योनसेवेतनित्यदा जिता
नामजितानांच नतंधर्मादपैतिसः ३० ॥

जोराजा अग्राम्यलोकजोहे बुद्धिसंपन्नपुरुष उनकी हानिको सदा
नहीमानता बुद्धिमानपुरुषजयवाले अथवा पराजयवाले उन्ह
केवचनको अभिमानसे नहीमानताहे सोराजा राजधर्मसे हीन
होताहे ३० ॥

निगृहीतादमात्याच्च स्त्रीभ्यश्चैवविशेषतः प
र्वताद्विषमाद्दुर्गा द्धस्तिनोश्वात्सरीसृपात् ३१

हे राजन् जो अमात्यराजाने अपराध ज्ञानकर्के निग्रह दंडकर्के पी
डित कियाहे उसका और स्त्रियोसे विशेष कर्के विश्वासनही करे
और पर्वतमार्गसे विषममार्गसे दुर्गममार्गसे अपरि ज्ञात हाथी
से घोडासे सर्पकेनिवाससे इन्होसे नित्यही युक्तियुक्तहोकर
अपनीरक्षाकरे ३१ ॥

एतेभ्योनित्ययुक्तःसन् रक्षेदात्मानमेवतु

अर्चानमान्यान्योहित्वा निहीनान्कुरुतेप्रिया
न् सवैव्यसनमासाद्य गाधमंतोनविंदति ३२
जोराजा अर्चीहजा योग्य मान्यजनोको अवमानकर्के हीनपुरुषो
कों प्रियकरताहैं सोराजा अतिविषम आपदाको पाइकर आपदा
नरोकेमार्गको नहीप्राप्तहोताहे ३२ ॥
यःकल्याणगुणान्ज्ञातीन् प्रद्वेष्टान्नोबुभूष
ति अल्पश्रीमात्दृढक्रोध सक्तमोविसनेत्तिके ३३
जोराजा कल्याणगुणवाले जाती संबंधिजनोको अपनी समान
ताके वेष संपदाकर्के शोभामान नहीचाहताहे आपचंचलचित्त
हे सर्वत्र दृढक्रोधहोताहे सोराजासमुद्रवकानिकटवर्ती होता हे ३३
अथयोगुणसंपन्नान् हृदयस्यप्रियानपि प्रि
येणाकुरुतेवश्यां चिरंयशसितिष्ठति ३४ ॥
और जोराजा गुण संपन्न पुरुषोको अपनेहृदयकेप्रियभीजानके
कें प्रियकार्यकर्के वशकरलेताहे सोराजा चिरकालयशकीशोभा
मोस्थितहोताहे ३४ ॥
नाकालेप्रणयेदर्थो नाप्रियेजातुसंचरेत् प्रि
येनातिसंशांतिहे युज्येतशुभकर्मणि ३५ ॥
हे राजन् राजाजोहे सोदेसकालविनाअर्थकार्योकेनिर्णयको
नहीकरे और अप्रियप्रामीमोअतिसंतापनहीकरे और प्रियकार्यमो
अतिप्रेमनिष्ठानहीकरे अपनीप्रियताकोशुभकार्यविषेयुक्तकरे ३५
केवानुरक्ताराजानः केभयात्समुपाश्रिताः म
ध्यस्थदोषाःकेचैषा मितिनित्यंविचिंतयेत् ३६
और ऐसेविचारकोराजानित्यकरे राजालोकमेरेकोन अनुरागवा
लेहे और भयकर्के मोकोकोनसेवाकरतेहे और मध्यस्थदोषवाले
दुष्टोविषेकोनहे ऐसाविचारनित्यप्रतिकरणा ३६ ॥
नजातुबलवान्भूत्वा दुर्बलेविश्वसेत्कचित्
भारुंडसदृशाह्येते निपतंतिप्रमाद्यतः ३७
हे राजन् दुर्बलजोराजेहोगयेहे तोभीदुर्बलोविषेभीकदापि वि
श्वासनहीकरे जोराजादुर्बलशत्रुजानकरप्रमादीहोजावे तोदुर्ब
लराजेभीमांसक ऊपर गरुडपक्षीसमान प्रमादीराजाविषे एका
ताकर आनपडतेहे ३७ ॥
अपिसर्वगुणोपेतं भर्तारंप्रियवादिनं अभि

श्री॰
रा॰ धं॰
टी॰
५॰
90

दुरात्नि पापात्मा नतस्माद्विश्वसेज्जनात् ३८
जो पुरुष पापी मनवाला होताहे अपना स्वामीका प्रियवादी होवे
तोभी द्रोह करताहे ताते दुष्टजनन विषे कदापि विश्वास नही करे ३८
एवं राजोपनिषदं ययातिःस्माहनाहुषः मनु
ष्यविषये युक्तो हंति शत्रूननुत्तमान् ३९ इति
श्रीमहाभारते शांतिपर्वणि वामदेवगीता ९३
हे राजन् वसुमनाजी इसप्रकारकी राजनीतिको नहुषकापुत्र
राजा ययाति कहताभया जो राजा मनुष्यलोक विषे इसनीतिधर्म
विषे युक्त होवे सोदुर्जय जनोकोभी मार देताहे ३९ इतिश्रीम॰ भा॰
शां॰ प॰ राजधर्मेषु वामदेवगीतासु॰ त्रिनवतितमोध्यायः ९३
वामदेवउवाच अयुद्धेनैव विजयं वर्द्धयेद्वसुधा
धिपः जघन्यमाहुर्विजयं युद्धेन च नराधिप १
वामदेवउवाच हे राजन् वसुमनाजी नीतिमान् राजा जोहे सो युद्ध
विनाही भूमिजयकी वांछाको करे युद्धकरके जो भूमिविजयहे
उसको राजनीति विषे अधम पक्ष कहतेहे १ ॥
न चाप्यलब्धं लिप्सेत मूलेनातिदृढेसति न
हि दुर्बलमूलस्य राज्ञोलाभो विधीयते २
जो अपना राज्यमूल अतिदृढ नहीहोवे तो अलब्धदेशके लाभको
वांछा नही करे जो राजाको मूल दृढ नहीहोवे तो दुर्बलराजाको
अधिकलाभ नही होता २ ॥
यस्यस्फीतो जनपदः संपन्नःप्रियराजकः सं
तुष्टःपुष्टसचिवो दृढमूलःसपार्थिवः ३ ॥
अब दृढमूलराजाके लक्षणकहतेहे जिसराजाका राष्ट्रदेश
धनधान्यसंपदा संपन्नहे और राजाप्रजाको अन्योन्यप्रेमबना
हे सदासंतुष्ट सभलोक होवे अमात्यालोकभी संतुष्ट होवे संप
दाके गुणसे पुष्ट होवे सोराजा राज्यविषे दृढमूल होताहे ३
यस्ययोधाःसुसंतुष्टाः सांत्विताःसुपतर्पिताः अ
ल्पेनापि सदंडेन महींजयति पार्थिवः ४ ॥
जिसराजाके योधा लोक परस्पर विरोधविना सदा संतुष्ट होवे
और राजाने सांत्ववचनोकर्के संपदाकर्के संतर्पित होवें सोराजा
स्वल्पदंड कर्केभी संपूर्णभूमिको अनायासकर्के जीतलेताहे ४

पौरजानपदायस्य भूतेषुचदयालवः सध
नाधान्यवंतश्च दृढमूलःसपार्थिवः ५ ॥
जिस राजा केजानपदलोक सर्वभूतोंकी दयासंपन्नहै धनधा
न्यसंपदा संपन्नहै सोराजा दृढमूल सदा बना है ५ ॥
प्रतापकालमधिकं यदामन्येतचात्मनः त
दालिप्सेतमेधावी परभूमिधनान्युत ६ ॥
अब राजा अपने प्रताप कालको अधिकमाने तब अपने बुद्धि
विचारसे परराजालोकोंकीभूमिधन जय की वांछाको करे ६
भोगेष्वदयमानस्य भूतेषुचदयावतः वर्द्ध
तेत्वरमाणस्य विषयोरक्षितात्मनः ७ ॥
जोनसाराजा भोगपदार्थोंके उदयमो सर्वभूतोंविषे दयासंपदा
वालाहै और धर्मकर्मकीरक्षावास्ते मानसीचिंताकर्के संतापवा
लाहै प्रजाकी रक्षायुक्तहै उसकाराज्यदेशासंपदासे युक्तसंपन्न
होताहै ७ ॥
तक्षत्यात्मानमेवैष वनंपरशुनायथा यःस
म्यग्वर्तमानेषु स्वेषुमिथ्याप्रवर्तते ८ ॥
राजा जोहैसो अपने आत्माको आपको भोगलंपटतासेहीनक
रे जैसेपरशुकर्के वनको छीणकरतेहै जोराजा अपनी इंद्रियों
की अहर्निशविषे मिथ्यावृत्तिकरे ८ ॥
नैवाद्विषंतोहीयन्ते राज्ञोनित्यमनिघ्नतः क्रो
धंहंतुंयोवेद तस्यद्वेष्टानविद्यते ९ ॥
जोनसे पुरुष पापकर्मविषे द्वेषकरतेहै सोकदापि हिंसादो
षकोप्राप्तनहीहोता राजाभी किसीकोनहीमारे उसकेराज्यमोहिं
सानहीकरे जोराजा अधर्मवृत्तिकेतथा क्रोधकोमारणाजाने
उसकाद्वेषकारीजगतमो कोईनही है ९ ॥
यदार्यजनविद्विष्टं कर्मतन्नाचरेद्बुधः यत्क
ल्याणमभिध्यायेत् तत्रात्मानंनियोजयेत् १०
जोनसाकर्मआर्यसंतजनोकर्के दुष्टभयाहै उसकर्मकोबुधज
ननहीकरे जोसंतजनोंकाकल्याणमार्गहै उसविषे अपने आ
त्माकोयुक्तकरे १० ॥
नैवमन्येवजानंति नात्मनापरितप्यते कृ

श्री॰
रा॰ज॰
टी॰
५१

91

नपोषेणयोराजा सर्वान्नतुबुभूषति ११ ॥
ऐसेराजाको ओैर लोक अवमाननहीकरते सोराजाभी आपसेंताप
कोकदापिनहीकरताहै जो राजा अपने बलकेकृत्यशोषककैं पराये
कृत्यको समाप्तकरताहै ११ ॥

इदंहत्तंमनुष्येषु वर्ततेयोमहीपतिः उभो
लोकौविनिर्जित्य विजयेसंप्रतिष्ठते १२ ॥
हे राजन् वसुमनाजी इसप्रकारकेकृत्यको जोराजा मनुष्योंविषेव
र्तमान होताहै सोराजा मनुष्योंविषेवर्तमान् उभयलोकोंको जयक
र्के अपनेविषयदेशमें प्रतिष्ठाकोंप्राप्तहोताहै १२ ॥

भीष्मउवाच इत्युक्तोवामदेवेन सर्वंतत्कृतवान्नृप :
तथाकुर्वंस्त्वमप्येतौ लोकौजेतानसंशयः १३ ॥
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर सो राजावसुमना वामदेवजीने ऐसे कहा त
बवामदेवजीके उपदिष्टमार्गकर्के सकलराष्ट्रकोंपालनकरताभया
हे भारत तूंभी इसप्रकारकेराजधर्मको आचरणकरे तो दोनोलोकों
कोजीतेगा १३ ॥

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजध
र्मेषुवामदेवगीताचतुर्नवतितमोध्यायः ९४
इतिश्रीम॰भा॰शां॰प॰ राजधर्मेषुवामदेवगीताचतुर्नवतितमोध्यायः ९४

युधिष्ठिरउवाच अथयोविजिगीषेत क्षत्रियःक्ष
त्रियंयुधि कस्तस्यविजयेधर्मो एतत्पृष्टोब्रवीहिमे १
युधिष्ठिरउवाच हेपितामहजी अबमेयहपृछाकरताहूं जोनसात्र
क्षीराजाहोकर क्षत्रीराजाको युद्धविषेजीताचाहै उसकोयुद्धकेजय
करणेमेंजोकर्तव्यहै उसधर्मको आपमेरेप्रतिकहो १ ॥

भीष्मउवाच ससहायोऽसहायोवा राष्ट्रमागम्यभू
मिपः ब्रूयादहंवोराजेति रक्षिष्यामिचवःसदा २
भीष्मउवाच राजा आपसहाययुक्तहोवे अथवा असहायहोवे जेत
वराष्ट्रको प्राप्तहोकर्के सर्वलोकोंकोऐसावचनकहै मैंतुम्हारा
राजाहों तुम्हारी सदारक्षाकरोंगा २ ॥

ममधर्म्यंबलिंदत्त किंवामांप्रतिपत्स्यथ तेचे
त्तमागतंतत्र वृणीयुःकुशलंभवेत् ३ ॥
मोकों तुमधर्मरक्षाकी बलीजोहै दातव्यकर उसकोदेवो अथवा
तुममोकों युद्धकरणेको प्राप्तहोवोगे सोतुममेरेप्रतिकहो हे राज

न ऐसा वचन सुनकर उसके जो प्रजालोक हैं सो सामउपायके व
चन राजाको कहकर राजाको अपनी रक्षाको वर्णकरे प्रार्थनाकर्के
हे राजन् आपका आगमनसे हमको कुशल होवे ३ ॥

नेचेदलक्षत्रियाःसंतो विरुध्येरन्कथंचन सं
वीपायैर्नियंतव्या विक्रमस्यानराधिप ४ ॥

सो न होके लोक राजाके अधीन नहीं है राजाको विरोध करावि तक्करे
तब सर्वीपायकर्के राजाने विरुद्धकारी सभही पकडकर्के राजधर्मक
र्के दण्ड देनेसे वश करतव्य है ४ ॥

अशक्तं क्षत्रियं मत्वा शस्त्रंगृह्णात्यथापरः त्रा
णायाप्यसमर्थंतं मन्यमानमतीवच ५ ॥

उस देशमो क्षत्रीको अपनी रक्षाकरणेको अशक्तजानकर्के तहांका
कोइ और जातीका शस्त्रग्रहणकरेतो शस्त्रबलकर्के जीते जो ग्रामादिक
है तिन्का मुख्यस्वामीको राजाके सन्मुख स्थित होवे तब राजा जो है
सो प्रथम उस राष्ट्रको सामादि उपायकर्के सांत्वना आश्वासनकर्के
अपने वश करे ५ ॥

युधिष्ठिरउवाच अथयःक्षत्रियोराजा क्षत्रियंप्रत्युपा
व्रजेत् कथंसप्रतियोद्धव्यो तन्मेब्रूहिपितामह ६

युधिष्ठिरउवाच यह तो आपने जहा युद्धकरणे हारा क्षत्रीराजा शत्रु
नहीं है तहांका हुक्म कहा है परंतु जहा क्षत्रियराजा युद्धकरणे
को आवे तो क्षत्री राजाने क्षत्रीराजाके साथ कैसे युद्ध करतव्य है उस
युद्धधर्मको आप मेरे प्रति कहो ६ ॥

भीष्मउवाच नैवासन्नद्धकवचो योद्धव्यःक्षत्रियोरणे
एकएकेनयोध्यश्च विसृजेदस्त्रमेवयथा ७ ॥

भीष्मउवाच जिस क्षत्री साथ नहीं नहीं होवे तो क्षत्री राजाके साथ युद्ध न
ही कर्तव्य है जो कवचादि युद्धसाधन संपन्न एकही सहायविना यु
द्धकरणेको आवे तो उसके साथ एकाकी होकर धर्मयुद्ध कर्तव्य है
युद्धकरणेमो समर्थ नहीं होवे उसको युद्धकरणेमो त्याग देवे ७ ॥

सचेत्सन्नद्धआगच्छेत्सन्नद्धव्यस्ततोभवेत् स
चेत्सैन्यआगच्छेत्ससैन्यस्तमथाह्वयेत् ८

जे तो सन्नद्धबद्ध होकर आवे तो आप सबद्धबद्ध शस्त्र होवे जो शत्रु से
ना सहित आवे तो आप भी राजा सेना सहित होकर युद्ध करे ८ ॥

सचेन्निकृत्यायुध्येत निकृत्याप्रतियोधयेत् अ

यथेद्धर्मतो युद्धे दुर्मर्षेणैव निवारयेत् ९ ॥

जोशत्रु कपटमायासे युद्धकरे तो आपभी कपटमायाकायुद्धकरे जोशत्रु धर्मयुद्धकरेतो आपभी धर्मयुद्धकरे ९ ॥

नाश्वेनरथिनंयाया उदियाद्रथिनंरथी व्यस नेनप्रहर्तव्यं नभीतायजितायच १० ॥

अश्वकर्के रथवालेको युद्धकरणेनहीजावे रथवालाही रथीकोयुद्धक रणेकोजावे जोशत्रुकोव्यसनको प्राप्तहोवेतो उसको प्रहारनहीक रे जोभयभीतहै उसको प्रहार नहीकरे जीतलियाहै उसकोभी प्रहारनहीकरे १० ॥

इषुर्लिप्तोनकर्णीस्या दसतामेतदायुधं यथा र्थमेवयोद्धव्यं नक्रुध्येनजिघांसतः ११ ॥

विषलिप्तबाणजोहै उलटेपलटेसकंटकबाणजोहै यह असतजो षोंकेबाणशस्त्रहै उनकेविना यथार्थयसेयुद्धकर्तव्यहै जोप्रहारक रणेवाहै उसविषे प्रहारकियेविना बाधाकोधनहीकरे ११ ॥

निःप्राणोनाभिहंतव्यो नानपत्यःकथंचन भ ग्नशस्त्रोविपन्नश्च कृत्तज्योहतवाहनः १२ ॥

बलहीनशत्रुनहीमारणा और संतानरहितभीनहीमारणा भग्नश स्त्रभीनहीमारणा मूर्छादिआपदाप्राप्तभीनहीमारणा अशस्त्रनही मारणा हतवाहनभीनहीमारणा १२ ॥

चिकित्स्यःस्यात्स्वविषये प्राप्योवास्वगृहेभवेत् साधूनांतुयदाभेदात् साधुर्व्यसनीभवेत् १३

जोयुद्धमोशस्त्रघातसेपीडितभयाहै उसको अपनेदेशमोचिकित्सा करके अपने गृहमो प्राप्तकर्तव्यहै जो साधुउपायभेदासे साधुविद्या सापन्नयोधा व्यसनको प्राप्तहोवे शरणागतहोवे तो १३ ॥

निर्व्रणश्चसमोक्तव्य एषधर्मःसनातनः त स्माद्धर्मेणयोद्धव्य मितिस्वायंभुवोब्रवीत् १४

उसकोशस्त्रघातविनाही त्यागकर्तव्यहै यहसंतजनोका सनातन धर्महै तातेधर्मयुद्धकेज्ञाताने धर्ममर्यादासेयुद्धकर्तव्यहै ऐसास्वा यंभुव मनुमहाराजका वचनप्रमाणहै १४ ॥

सत्सुनित्यःसतांधर्म स्तमास्थायननाशयेत् यो वैजयत्यधर्मेण क्षत्रियोधर्मसंगरः १५ ॥

हे राजन् संतजनोविषे सत्यधर्मसदास्थितहै सत्यधर्मकोप्राप्तकर

नाशनहीकरे कर्मयह असाधुजनोकाहे असाधुजनोको असा
धुउपायसे जयकरणा १५ ॥

आत्मानमात्मनाहंति पापोनिकृतिजीवनः
कर्मचैतदसाधूनां साधुनासाधुनाजयेत् १६

धर्मयुद्धकर्के मनुजोहे सोकल्याणरूपहे पापकर्मकर्के जयन
हीकरणा अधर्मकाआचरणसद्यफलकोनहीकरता गोकीप्रसू
ती समान अपने परिपाक कालमो फलकोदेताहे १६ ॥

धर्मेणनिधनंश्रेयो नजयःपापकर्मणा
नाधर्मश्चरितोराजन् सद्यःफलतिगौरिव १७

अधर्मकाजोराजाधर्मयुद्धकर्के जयकरताहे सोराजाधर्मयुद्धका
योधाहे १७ ॥

मूलानिचप्रशाखाश्च दहन्समधिगच्छति पा
पेनकर्मणावित्तं लब्ध्वापापःप्रहृष्यति १८

जोनरुपापकारीपापपुरुषहे सोपापकर्मकर्के जीवताहे आच
रणजोहे सो अधर्मकारी पुरुषके वंशको मूलशाखा प्रशाखा
विस्तारको दाहकरताही फलपरिपाकताको प्राप्तहोताहे पाप
कारी पुरुषजोहे सो पापकर्मकर्के धनसंपदाकोपाइकर महा
हर्षको प्राप्तहोताहे १८ ॥

सवर्द्धमानःस्तेयेन पापःपापेप्रसज्जति न
धर्मोस्तीतिमन्वानः शुचीनवहसन्निव १९

सो पापी पुरुष परद्रव्य हरणकर्के नकालहीहुद्दीपाइकरपा
पसमुद्रमो मगन होताहे धर्मकछुवस्तुनहीहे ऐसेमानताहे
धर्मकारी लोकोंकाभीधनहरके उनको उपहास जैसा करताहे

अश्रद्दधानश्चभवे द्विनाशमुपगच्छति स
बद्धोवारुणैःपाशै रमर्त्यइवमन्यते २० ॥

धर्मकर्मविषे अश्रद्धाकरताहे आपही विनाशको प्राप्तहोताहे
नागपाशोंकर्के बांधाजाताहे अपने मनुष्यभावको विस्मरणक
र्के अवमानजैसाकरताहे ऐसीखोटी दुर्गतीकोंप्राप्त होताहे २०

महाहृतिरिवाध्मातः सुकृतेनैववर्धते ततः
समूलोह्रियते नदीकूलादिवद्रुमः २१ ॥

जैसे महाविस्तारवाला चमड़ेकासंपुट वायुवेगसे उड़जाताहे

ऐसा समझके कर्मकी प्रवृत्तिविना समूलही अधर्मकर्के भोगमोक्षके मार्गसे हरउडजाताहे जैसे नदीतटकामहावृक्ष जलप्रवाहके वेग कर्के हरदेशको चलाजाताहे तैसेअपनेस्थानसेदूरहोजाताहे २१

अथैनमभिनंदंति भिन्नकुंभमिवाश्मनि न सा ऽधर्मेणविजयं कोशंलिप्सेतभूमिपः २२

इतिशांतौराजधर्मेजिगीषमाणवृत्ते ९५

ऐसे इसपापकर्मीकेविनाशकालमेंही सबही लोक पाषाणमें विपकुंभकेफूटनेकीन्याई देखकर्के परमहर्षकोप्राप्तहोतेहे तातेराजा धर्मकर्केंही विजयको ओर कोशवृद्धीकोंवांछाकरे २२ इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेषु॰विजिगीषमाणवृत्तेपंचनवतितमोध्यायः ९५ ॥

भीष्मउवाच नाधर्मेणमहींजेतुं लिप्सेतजगतीपतिः अधर्मविजयंलब्ध्वा कोनुमन्येतभूमिपः १

भीष्मउवाच हे राजन् जगती पति जोराजाहे सो अधर्मकर्के पृथ्वी जयकरणेको वांछानही करे अधर्मकर्के जयकोपायकर कौनराजा अपनेको चिरकाल भूमिपति मानताहे १ ॥

अधर्मयुक्तोविजयो ह्यध्रुवोऽस्वर्ग्यएवच । सादयत्येषराजानं महींचभरतर्षभ २ ॥

हे भरतर्षभ अधर्मयुक्तजो विजयहे सो अटलनहीहे स्वर्गगतिसे वर्जितहे ऐसा विजयजोहे सोराजाकोविनाशकरताहे पृथ्वीकोभीविनाशकरताहे २ ॥

विशीर्णकवचंचैव तवास्मीतिचवादिनं कृतांजलिंन्यस्तशस्त्रं गृहीत्वानविहिंसयेत् ३

तातें हे राजन् जिसयोधाकारणमेंकवचटूटजावे शस्त्रहीनहोवे मेंअब तुम्हारा अधीनभयाहूं अंजलीकरके ऐसेकहे न्यस्तशस्त्र होवे इसकोअपनेपास ग्रहणकर्के नहीमारे ३ ॥

बलेनविजितोयश्च नतंयुध्येतभूमिपः सं॰ वत्सरंविप्रणये तस्माज्जातःपुनर्भवेत् ४

जोशत्रुअपनेबलकर्कें जीताहे इसको वहोड युद्धको राजा बुलावे जोतो सोजीताहुआ शत्रु असंतानहोवेतो वर्षदोवर्ष संतानकेवास्ते देखलेवे जोसंतानहीजावे तब इसको त्यागदेवे प्रथम इसकोविद्यासजातकर पोषणकरे ४ ॥

नार्वाक्संवत्सरात्कन्याः प्रष्टव्याविक्रमाहृताः

एवमेवधनंसर्वं यच्चान्यन्महदाप्नुते ५ ॥
ऐसेही जोकन्याभीदिग्विजयकरके जीतीहोवेतो उसकोभी वरव
दोवरधमालनकरके इच्छाकरे तूंहमारेकोवरेगी अथवाकिसी औ
रकोवरेगी जोकन्या औरको वराचाहेतो अपने गृहसे निकासक
र जोदास दासीजन धनसंपदाहरणकीनीहै सोभी उसकोदेक
र विदाकरे जोउसकी धनसंपदा पलटकरदीजी- है उसकादा
नफल अपने दियेजैसाहोताहै ५ ॥
नतुवध्यधनंनित्यं नियेद्ब्राह्मणाःप्रभुः
युंजीरन्नप्यनड्वाहः चेत्तदेवातदाभवेत् ६
हे राजन् ऐसेही जो चौर वधयोग्यहै उसकाधनगोसंपदाजो
कछुप्राप्तभयाहै उसकोभी अपनेकोशमोनहीस्थितकरे उ
सकीगोधनका गोरसको अभ्यागतब्राह्मण पानकरें और ह
लादिकभी अपनीकृषीकर्ममोनहीजोतने और भारवाही क
र्मभीनहीकरणा जोवधयोग्य चौरनही होवेतो उसकाधनभी
दीनदुखी अनाथजनोकोदेदेना अपनेराजकार्यमो उपयुक्त
नहीकरणा ६ ॥
राजाराजैवयोद्धव्य स्तथाधर्मोविधीयते ना
न्योराजानमभ्यसे दराजन्यःकथंचन ७ ॥
हेराजाने आप राजासेही युद्धकर्तव्यहै और जन राजाविना रा
जाकेसन्मुखयुद्धको नहीजावे राजालोकोंकाइसीप्रकारथ
र्मयुद्धहोनाहै ७ ॥
अनीकयोःसंहतयो यदीयाद्ब्राह्मणोंतरा
शांतिमिच्छन्नुभयतोनयोद्धव्यंतदाभवेत् ८
जोकदाचित्दोनोराजाकीसेना युद्धकरणेकोतियारभईहै
उनकेमध्यमो धर्मरक्षावास्ते ब्राह्मणदोनोकीविरोधशांति
कीवांछाकरकेआजावे तबयुद्धनहीकरणा ८ ॥
मर्यादांशाश्वतींभिंद्या द्ब्राह्मणंयोभिलंघयेत्
अथवेल्लंघयेदेव मर्यादांनतियप्रभवः ९
जोकोईराजाब्राह्मणोकीशांतिधर्मकी आज्ञामर्यादाको उलंघ
नकरे ब्राह्मणको अवमानकरेहमरताजीहै ऐसेकहेकरके अभि
मानसे धर्म मर्यादाको जोबलसे उलंघनकरे ९ ॥

असंख्येयस्ततस्तर्थैस्या दनादेयस्त्रसंसदि यस्त
धर्मविलोपेन मर्यादाभेदनेनच १० ॥

न्नत्रीसंख्यारहितकरणा अपनीजातीकी सभापंक्तिसेबाह्यकरणा
जौनसा अपने लोपकरणेकर्के और मर्यादा उलंघनकर्के अशुद्ध
भयाहे १० ॥

नोहन्तिनानुवर्तेत विजिगीषुर्महीपतिः
धर्मलब्धाद्धिविजया लाभःकोप्यधिकोभवे
त् सहसानार्यभूतानि क्षिप्रमेवप्रसादयेत् ११

हे राजन् विनयवांछावाला महीपतिहैसो अनार्यलोकोकी हीन
हानिको वर्तमाननहीहोवे जौनसा विजयालाभ धर्ययुद्धकेलाभ
सेवनजावे उससेअधिक और क्यानाभहोवेगा ११ ॥

सान्त्वेनभोगदानेन सराज्ञोपरमोनयः भु॰
अमानानाययोगेन स्वराष्ट्रादभितापिताः १२

जौनसे विजयकालमो अपनेसे अनार्यकार्यभयेहे उन्होको वि
जयलाभके उपरंत धर्मवेत्ता महासंतजनोसेतत्कालहीक्षमा
करावे दानमानभोगदानकर्के और सांत्ववचनोकर्के सभको
प्रसन्नकरावे १२ ॥

अमित्रास्तमुपासीने व्यसनोचप्रतीक्षणाः अ
मित्रोपग्रहेचास्य तेकुर्युःक्षिप्रमापदि १३ ॥

हे राजन अब आप और प्रकारभीसुनो जौनसे लोक अपनेराज्य
मो अन्यायुयोगकर्के प्रजालोककेधनसंपदाकोभोगतेरहे सो
अपनेराष्ट्रसेनिकासदियाहे इसकर्के अपने अमित्रभयेहे सो
ई राजधर्मकीशास्त्रनाकारी राज्यमोस्थितभयेकोव्यसनप्राप्तिके
आपदाकालकोदेखतेहे १३ ॥

संदुष्टाःसर्वतोराजन् राजव्यसनकांक्षिणः
नामित्रोविनिकर्तव्यो नातिछेद्यःकथंचन १४

सोअमित्रलोक इसके अमित्रसंग्रहकोभीइसेकीआपदामोंकरे
गे सदाकालमोसमनीकरणेमो इष्टहे राजाके व्यसनकी कां
क्षा करते हे १४ ॥

जीवितंत्यप्यतिछिन्नः संत्यजेच्चकदाचन अ
ल्पेनापिचसंयुक्त स्तुष्यत्येवनराधिप शुद्धे॰

जीवितमेवापि नादृशोबहुमन्यते १५ ॥
इसप्रकारका जोकोई अमित्रहै सो क्योनही विकारकरकें वंचनाकरणे
सो अवश्यही छलकरकेवंचनाकरणेयोग्यहै उसको नहीवंचना
करणे उन्होकी वंचना विना राजाको कदापि अतिकल्याणनहीहोना

यस्यस्फीतोजनपदः संपन्नःप्रियराजकः सं
तुष्ट भृत्यसचिवो दृढमूलःसपार्थिवः १६
अतिकपटीहोकर अपने जीवितकोत्यागदेवेगा सोभी इसलोक
राजाके कार्यको विगाडदेवेगा १६ ॥

ऋत्विक्पुरोहिताचार्या येचान्येश्रुतसत्तमाः
पूजार्हाःपूजितायस्य सवैलोकविदुच्यते १७ ॥
हे राजन् जो धार्मिकहै सत्यउपकारकरकेभी संतुष्ट होताहै ऐसा
धार्मिक राजा अपने शत्रुजीवनेकोही बहुत उत्तम मानता है १७

एतेनैवचहतेन महीप्रापस्वराजसमः अने
नवैन्द्रविषयं विजिगीषंतिपार्थिवाः १८ ॥
इसी हे नृपसमेने आपको सर्वभी कहाहै जिसका जनपदधर्मसं
पदासंयुक्त संपन्नभयाहै सोआप संपन्नहोकर राजाको अतिप्रि
यमानतेहै और जिसके भृत्यजन अमात्यजन धर्ममर्यादाकी संप
दाकर्कें संतुष्ट भयेहै सोराजा ही दृढमूलकहाहै १८ ॥

भूमिवर्जंधनंराजा जित्वाराजन्महाहवे अपि
चान्नौषधीःशश्व दाजहारप्रतर्दनः १९ ॥
जिसराजाकेऋत्विक पुरोहित आचार्यजोहै और भी धर्मकर्मकी
मर्यादाके बहुश्रुतलोकहै सोभी दानमानसत्कारकर्कें पूजितहै
सोई राजा धर्मवेत्ताकहाहै १९ ॥

अग्निहोत्राग्निशेषंच हविर्भोजनमेवच आज
हारदिवोदास स्ततोविप्रकृतोभवेत् २० ॥
हे युधिष्ठिरप्रतर्दनराजा जोहै सो शत्रुराजाको महारणविषे जी
तकर पृथ्वीकाराज्य उसका त्यागकरके अन्नको औषधी समूह
कोभी हरलेताभया २० ॥

सराजकानिराष्ट्राणि नाभागोदक्षिणांददौ अ
न्यत्रश्रोत्रियस्वाच तापसस्वाच्चभारत २१ ॥
दिवोदास राजा जोहै सो अग्निहोत्रकेशेष हविष्यभोजनकोभी

शत्रुको जीतकरहरलेताभया ताते आपभीवंचितहोताभया आप
भी अग्निहोत्रके हविषोके अन्नभोजनको नहीप्राप्तहोताभया २१

उच्चावचानिवित्तानि धर्मज्ञानोयुधिष्ठिर आस
न्नातोपुराणानो सर्वंतत्ममरोचते २२ ॥

हे राजन् नाभागराजाजोहे सो अराजकजोराज्यहे तिस्को विश्व
जितयज्ञविषे दक्षिणादेताभया परंतउस्के अंतर्गतश्रोत्रियब्राह्म
णोके अर्थविना और तपस्वी जनोके अर्थत्यागकरदेताभया २१ ॥

उच्चावचानिवित्तानि धर्मज्ञानोयुधिष्ठिर आस
न्नातोपुराणानो सर्वंतत्ममरोचते २२ ॥

हे राजन् नाभागराजाजोहे सो अराजकजोराज्यहे तिस्को विश्व
जितयज्ञविषे दक्षिणादेताभया परंतउस्के अंतर्गतश्रोत्रियब्रा
ह्मणोके अर्थविना और तपस्वी जनोके अर्थत्यागकरदेताभया २२

सर्वविद्यातिरेकेण जयमिच्छेन्महीपतिः न
माययानदंभेन यइच्छेद्भूतिमात्मनः २३ ॥

हेयुधिष्ठिर पुराणोजोराजऋषिभयेहे जोनसे शत्रुराजालोकोके
रक्षा कुटुंबपालनाके उत्तमनिष्कपटजेतेद्रव्यहे सोहरणेयोग्य
नहीहोतेभये धर्मज्ञराजा लोकोकायेही परमधर्मभयाहे जोसर्व
स्वाकिसीकाभी नही हरणा येहीधर्ममोकोभी रुचीकरताहे सोउ
मनेभी कर्तव्यहे हेराजन् धर्मज्ञयोराजाहे सो सर्वस्वहरणेकी
विद्याकेविना अपनेजयकीवांछमायाकर्के दंभकर्के अपने विजय
कीवांछानहीकरे २३ ॥

इतिश्रीमहाभारतेशांतोराजधर्मे ९८ युधिष्ठिर
उवाच क्षत्रधर्मान्नपापीयान्धर्मोस्तिनराधिप
अपयानेनयुद्धेन राजाहंतिमहाजनं १ ॥

इतिश्री· म· भा· शां· पर्व· राजधर्मेषु· अष्टनवतितमोध्यायः ९८
युधिष्ठिरउवाच हेमहाराज यहहमारा क्षत्रधर्महे इससे अधिक
पापकारी धर्मकोईनहीहे जोराजा शत्रुदेशकोजयकरताहे तोश
त्रुको सपरिवार मारताहे उसशत्रुराजाके प्रसंगकर्के जोकटका
क्षितवैश्यपरारि दिमहाजनोकोभीमारताहे १ ॥

अथस्मकर्मणाकेन लोकांजयतिपार्थिवः वि
हज्जिज्ञासमानाय प्रब्रूहिभरतर्षभ २ ॥

इसकारणसे धर्ममर्यादाका जिज्ञासु भयाहो हेभरतश्रेष्ठ मोको
आपकहो कौनसेधर्मकर्के स्वर्गलोकोंकोजीनताहे २ ॥

भीष्मउवाच निग्रहेणचपापानां साधूनांसंग्रहे
णच यज्ञैर्दानैश्चराजानो भवंतिशुचयोमलाः ३

भीष्मउवाच हे राजन् राजालोक जोहे सो पापकारी लोकोंकेनिग्र
हकर्के साधुजनोंके रक्षापालनादि धर्मकर्मकर्के और यज्ञदाना
दिधर्मकर्के हिंसाधर्मसें पवित्रहोतेहे निर्मलहोतेहे ३ ॥

उपरुंधंतिराजानो भूतानिविजयार्थिनः त
एवविजयंप्राप्य वर्द्धयंतिपुनःप्रजाः ४

राजालोक विजयार्थी होकर शत्रुदेशके सर्वलोकोंकानिग्रहक
रतेहे सोईराजे विजयको पाइकर बहोउप्रजाको पालने संप
दाकर्के वधावतेहे ४ ॥

अपविद्धंतिपापानि दानयज्ञतपोबलैः अ
नुग्रहायभूतानां पुण्यमेवाभिवर्द्धते ५ ॥

जोकछु विजयकालमें ज्ञातअज्ञातपापहोतेहे तिन्हको यज्ञदा
न तपोबलकर्के पापफलको निहत्तकरतेहे राजालोकोंका पु
ण्यकर्म सर्वभूतोंकेपालनेको होताहे ५ ॥

यथैवक्षेत्रनिर्याता निर्यांतक्षेत्रमेवच हिन
स्तिधान्यकक्षंच नचधान्यंविनश्यति ६ ॥

जैसे कृषी करणेहारा क्षेत्रमों उत्पन्नभये धान्यको तृणोंका शो
धनकरताहे तृणको और धान्यकोभी शोधनकरताहे तहांतृण
हरहोताहे नवधान्यकानाशनहींहोता ६ ॥

एवंशस्त्राणिमुंचंतो घ्नंतिवध्याननेकधा त
स्यैषानिष्कृतिःकृत्स्ना भूतानांभावनंपुनः ७

इसी प्रकार राजा लोकभी विजयकालमों शस्त्रप्रहारकरतेहे
वधयोग्यशत्रुजनको मारतेहे प्रसंगकर्के ज्ञातअज्ञात और हिं
साजोहोतीहे उसकाशोधन जोहे सो पश्चात् सर्वभूतोंकी दान
मानसत्कारकरणाहीबनताहे ७ ॥

योभूतानिधनाक्रांत्या वधात्क्लेशाच्चरक्षति
दस्युभ्यःप्राणदानात्स धनदःसुखदोविराट् ८

जोराजा विजयकालमे भूतोंको धनापहारकर्के पीडनकरताहै वि
जयकेअंतमें सर्वभूतोंको चौरादिकोसेरक्षाकरताहै प्राणदाताहो
ताहै धनदाताहोताहै सुखदाताहोताहै जोयशकर्के विराजमानहो
ताहै प

स सर्वयज्ञैरीजानो राजाथाभयदक्षिणैः
अनुभूयेह भद्राणि प्राप्नोतीन्द्रसलोकताम् ९

वहोउ सोईराजासर्वप्रकारके यज्ञोंकर्के यज्ञपुरुषको यजन
करताहै वहोतदक्षिणादानकर्के धर्मकर्मकरताहै इसलोकमे
अनेककल्याणकारीसुखभोगकर्के स्वर्गलोकमें इंद्रपदकेसुखोको
भोगताहै ९ ॥

ब्राह्मणार्थे समुत्पन्ने योऽभिः स्थास्यति
आत्मानं यूपमुत्सृज्य स यज्ञोऽनन्तदक्षिणः १०

हे राजन् जोराजा ब्राह्मणादिधर्मकर्मकारीलोकोकी रक्षावास्ते दी
न दुखी जनोकी पालनावास्ते रणयज्ञजोप्राप्तभया उसमें शत्रुज
नोंकेसन्मुखधर्मकर्के रण यज्ञको करताहै सोअपने आपको यशकी
सोभाको प्रतिरूपकरनावाले यज्ञरूपस्तंभको स्थापनकर्के अनंतद
क्षिणावाले अभयदानकेयज्ञको नित्यप्रतिकरताहै १० ॥

अभीतो विकिरन्शत्रून्प्रतिगृह्णञ्छरांस्तथा
न तस्मात्त्रिदशाः श्रेयो भुवि पश्यन्ति किंचन ११

आपनिर्भयहोकर शत्रुगणोविषे शस्त्रवर्षा करताहै और शत्रुजनो
के बाणादिप्रहारोको अपनेदेहविषे प्रतिग्रहणकरताहै ऐसे रण
यज्ञसेदेवतालोकपृथ्वीविषे और कल्याणकारी उत्तमयज्ञको कि
सीको नहीजानते ११ ॥

हे राजन् शस्त्रवानजेते उसकेदेहकीत्वचाके रोमजालको स्पर्शक
रतेहैं तावत्संख्याके वर्षसहस्र सर्वकामनाके कामनाधेनूसमा
न अक्षयस्वर्गभोगोकोभोगताहै १२ ॥

जोनसा युद्धविषे उसकेदेहसे शस्त्रपातकर्के रुधिरपृथ्वीकोप्रा
प्तहोताहै उसकर्के सोराजा रणहिंसाकेपापसंयुक्तसर्वपापोकर्के
मुक्तहोताहै १३ ॥

हे राजन् क्षत्रीयुद्धके संतापकरकेंजेते दुःखसहारताहे उसी उसी संतापदुःखकरके उसको अनेकतपकरणेकाफलहोताहे धर्मवेत्ताजनसभहीयेसेधर्मतत्वकोंमानतेहें १४ ॥

एष्टतोभीरवःसंख्ये वर्ततेधर्मपूरुषाः
अशक्तशरणमिच्छन्तः पर्जन्यादिवजीवनं १५

और जोधर्मकेकर्मकारी जनहें सोरणधर्मवाले सूरमाकपीछेहोकरभयभीतजैसेसूरमायोंथासे अपनीशरणचाहतेहैं जैसेसंतापसेयुक्तसभही लोकपर्जन्यसे अपनासंजीवनरूप जलवर्षणकोचाहतेहें १५ ॥

यदिशूरस्तथाक्षेमे प्रतिरक्षेद्यथाभये
प्रतिरूपंजनंकुर्यात्त्वचनहततेनतथा १६ ॥

हे राजन् जबसूरमा पुरुष अपनी रक्षामें सहाय संपदाकरके सभकीरक्षाकरे भयकीप्राप्तिमें यथायोग्य युद्धकरणेहारेकों अपनेसन्मुखनहीकरे तोयथाविधिरणयज्ञकापुण्यफलनहीप्राप्त होता जोआपही सभके आगेहोकर उत्तमगुणकुल अभिमानसे अधिकबलवाले सूरमाके साधरणकरणेकोजावे सकलसूरमाजनोंको अपने एष्ठमेंकरे तोउसकों रणयज्ञका इसी प्रकारफलहोताहे १६ ॥

यदिनेकृतमाज्ञाय नमस्कुर्युःसदैवतं
युक्तंन्याय्यंवकुर्वीत तेनतहततेनतथा १७

और जोतो शत्रुराजालोक येसेमहासूरमाके रणविद्याकाचमत्कारकर्मदेषेविनाही भयभीतशरणागतहोकरप्रणामकरेतोउनकासंरक्षणकरणायोग्यन्यायरूपहे एसा करणे करके रणकर्मसे पालनरक्षणकरणा अनि उत्तम पुण्यकर्मको तथा प्रकारही उत्तम फलहोताहे १७ ॥

पुरुषाणांसमानानां दृश्यतेमहदंतरं
संग्रामेनीकवेलायां मुक्ष्टेभिपतेस्तत १८

हे राजन् अंगप्रत्यंगादिस्वभावसेसभही पुरुषसमानहे परंतु सूरमाभावकेचमत्कारकासभविषे अतिविचित्रमहा अंतरबनाहे संग्रामसेनाके समागमवेलाविषे सूरमालोक सभसे उत्तम

सूरमत्ववाले अधिकसूरमाके सन्मुखही जाइपडतेहे १८ ॥

पतत्यभिमुखःशूरः परान्भीरुःपलायते
आस्थायस्वर्ग्यमध्वानं सहायान्विषमेत्यजेत् १९

सूरमापुरुष सूरमाजनोके सन्मुखही जाइ पडताहे जोपरकीसे
नाके भीरुजनशरणागतहोतेहैं तो उनकीपालनाकरेतो आपस्व
र्गगामीकेमार्गकोपाइकर सहायकारीभीरुजनोकोप्राणसेकट
मोत्यागकरदेताहे १९ ॥

मास्मतेतादृशांस्तान जनिषाःपुरुषाधमान्
येसहायान्रणेहित्वा स्वस्तिमंतोगृहान्ययुः २०

हे राजन् वीरजनोकीमाताजोहेसोऐसेपुरुषोको अपनेउदरसे
जन्मनहीदेवे जोनसे राजालोक अपनेसहायकारी सेनापतिलो
कोंको रणविषेछोडकरके शरीररक्षावास्ते स्वस्थकल्याणसे अप
नेगृहको आजातेहे २० ॥

अस्वस्तितेभ्यःकुर्वंति देवाइंद्रपुरोगमाः
त्यागेनयःसहायानां स्वान्प्राणांस्त्रातुमिच्छति २ १

इंद्रादिदेवताभी ऐसे पुरुषोको स्वस्तिकल्याणनहीमानते जोनसेरा
जा लोक सहायकारी जनोको रणमोत्यागकर्के क्षेमकल्याणसे
गृहको आजातेहैं २१ ॥

नेहस्युःकाष्ठलोष्टैर्वादहेयुर्वाकटाग्निना
पशुवन्मारयेयुर्वा क्षत्रियायेस्युरीदृशाः २२

जोनसा क्षत्री रणत्यागकर्के गृहकोंआजावे उसको और वीरमानी
क्षत्रीलोककाष्टपाषाणोंकर्के मारदेवे अथवातृणभार उसकेशरी
रमो लपेटकर दग्धकरदेवे २२ ॥

अधर्मःक्षत्रियस्यैष यच्छय्यामरणंभवेत्
विसृजन्श्लेष्ममूत्राणि कृपणंपरिदेवयन् २३

क्षत्रीशरीरकोयहमहाअधर्मकाफलहे जोगृहकीशय्यामो मर
णहोवे श्लेष्ममूत्रकोकरणा रोगपीडाकर्के दीनप्रकारसे रोदन
करणा २३ ॥

अविक्षतेनदेहेन प्रलयंयोधिगच्छति
क्षत्रियोनास्यतत्कर्म प्रशंसंतिपुराविदः २४

शस्त्रघातविना अक्षतदेहकर्के जोक्षत्री प्रलयको प्राप्तहोताहे उ
सके इसप्रकारकेकर्मको पुरातनधर्मवेत्ताजनप्रशंसानहीकरते २४

नगृहेमरणंतात क्षत्रियाणांप्रशस्यते
शौंडीराणामशौंडीर्यं मधर्मंकृपणंचतत् २५
तातेहेतात क्षत्रीयोकामरणगृह विषेप्रशस्तनहीहे जौनसे र
णमेंउलमोक्षत्र धर्मकेमनवारे वीरसूरमाहे नवशरीरसे ऐसेम
रणकीवांछानहीकरते यहमरणा अधर्महे अतिहीनहे २५ ॥
इदंदुःखंमहत्कष्टं पापीयइतिनिष्ठवत्
प्रतिधस्तमुखःपूति रमात्मानत्रुशोचयत् २६
यहमहादुखहे महाकष्टहे महापापहे ऐसेनिष्ठावालामरण
महापापरूपहे जोशरीरमो दुर्गंधी रुधिरपाककीभईहे और अ
मात्यलोक गृहमरणकर्के क्षत्रीकी शोचनाकरे २६ ॥
अरोगाणांमनुष्याणां मृत्युंशस्त्रमपीच्छति
वीरोहृसोभिमानीच नेदृशंमृत्युमर्हति २७
हे राजन् मृत्युवी अरोगशरीरवाले वीरजनोकी मृत्युकोउनम
मानताहे सोभीवीरतासेउत्तमहोताहे महाअभिमानी वीरजोहेसो
रोग मृत्युकोयोग्यनहीहोता २७ ॥
रणेषुकदनंकृत्वा ज्ञातिभिःपरिवारितः
तीक्ष्णैःशस्त्रैरभिक्लिष्टः क्षत्रियोमृत्युमर्हति
क्षत्रीसूरमाजोहे सोरणविषे शत्रुकदनकर्के ज्ञातीवाले सूरमा
जनोकर्के संयुक्तभयाहे तीक्ष्णशस्त्रोकर्के खंडितदेहभयाहे ऐ
सेमरणकोयोग्यहोताहे २८ ॥
शूरोहिकाममन्युभ्या माविष्टोयुध्यतेभृशं
हन्यमानानिगात्राणि परैर्नैवावबुध्यते २९
सूरमापुरुषजोहे सोनिजयकामनाकर्के क्रोधकर्के आवेशपाइ
करवीरोकेसाथयुद्धकरताहे परके सूरमाजनोके शस्त्रोकर्के मा
राजाताहे तोभीशरीरपीडाकोंनहीमानताहे २९ ॥
ससंख्येनिधनंप्राप्य प्रशस्तंलोकपूजितं
स्वधर्मंविपुलंप्राप्य शक्रस्यैतिसलोकतां ३०
सोऐसावीर लोकविषे यशपराक्रमकर्के प्रशस्तमरणकोरण
विषेपाइकरअपनेवीरधर्मकी प्रतिष्ठाको इंद्रकीसमानलोक
ताकोप्राप्तहोताहे ३० ॥
सर्वैपायैरणमुख मातिष्ठंस्त्यक्तजीवितः

श्री॰
शां॰ पं॰
टी॰
९८

९८

प्राप्नोतीन्द्रस्य सालोक्यं शूरः पृष्ठमदर्शयन् ३१

हे राजन् वीरमानी क्षत्रिजो है सो सर्वप्रकारके उपायकर्के रणमें उ
लमो वीरजनो के सन्मुखस्थित होता है रणविषेही जीवनेको त्याग क
रता है इंद्रकी समान लोकताको प्राप्त होता है रणविषे अपने पृष्ठको
नहीं दिखावता ३१ ॥

यत्र यत्र हतः शूरः शत्रुभिः परिवारितः
अक्षयाँल्लभते लोकान् यदि दैन्यं न सेवते ३२
इति श्रीमहाभारते शांतौ राजधर्मेषु॰ सप्तनव
तितमोध्यायः ९७ ॥

शूरमा पुरुष यहां कहां हत होता है शत्रुजनो के परिवार संयुक्त हो
ता है अक्षय लोकोंको प्राप्त होता है जो दीनता वचनको अंगीकार नहीं
करे तब उत्तम गतीको प्राप्त होता है ३२ इति श्रीमहाभारते शांतिप॰
राजधर्मेषु॰ सप्तनवतितमोध्यायः ९७ ॥

युधिष्ठिर उवाच के लोका युध्यमानानां शूराणामनि
वर्तिनां भवंति निधनं प्राप्य तन्मे ब्रूहि पितामह १

युधिष्ठिर उवाच हे पितामहजी जोनसे शूरमा लोक सन्मुख युद्ध कर
ते हैं रणसे कदापि पीछे फिरके हारे नहीं हैं सो रणविषे मृत्युको प्राप्त
कर स्वर्गगतीको प्राप्त होते हैं उनकी स्वर्गगतीके कौन कैसे लोक हो
ते हैं यह मोको आप कहो १ ॥

भीष्म उवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरा
तनं अंबरीषस्य संवाद मिन्द्रस्य च युधिष्ठिर २

भीष्म उवाच हे युधिष्ठिर जो तेने प्रश्न किया है इसमें एक इतिहासको
को पुरातन उदाहरण कहते हैं जौनसे इतिहासमें अंबरीष राजा
का और इंद्रका संवाद भया है २ ॥

अंबरीषो हि नाभागिः स्वर्गं गत्वा सुदुर्लभं
ददर्श सुरलोकस्थं शक्रेणामरविं सह ३ ॥

अंबरीष राजा नाभाग राजाका पुत्र भया है सो अपने क्षत्रधर्मके
यज्ञयागादि धर्मकर्के दुर्लभ स्वर्गलोकको जाइकर स्वर्गलोकवि
षे अपने सेनापतिको इंद्रके साथ उत्तम आसनविषे विराजमा
न देखता भया ३ ॥

सर्वतेजोमयं दिव्यं विमानवरमास्थितं
उपर्युपरि गच्छंतं स्वं वै सेनापतिं प्रभुं ४

केसादेषाहे दिव्यतेजोमय उत्तमविमानकोपाइस्थितभयाहे
सभविमानोकेऊपरसेऊपरजानाहे पेसाअपनासेनापतिदिव्य
तेजकी प्रभासंयुक्तदेखाहे ४ ॥

सदृष्टोपरिगच्छंतं सेनापतिमुदारधीः
अद्दिंदृष्ट्वास्यदेवस्य विस्मितःप्राहवासवं ५

सो उदारबुद्धिराजासेनापतिकोसभसेऊपरिविराजमान विमा
नविषे उसकी समृद्धिकोदेषकरविस्मितभया अंबरीषराजा
इंद्रकोवचनकहताभया ५ ॥

अंबरीषउवाच सागरांतांमहींकृत्स्नां मनुशास्य
यथाविधि चातुर्वर्ण्यंयथाशास्त्रं प्रवृत्तोधर्मकाम्य

अंबरीषउवाच हेदेवराज मेनेसागरपर्यंतसमग्रय॥ था ६
थाविधिधर्मकर्के शासनकर्के चातुर्वर्ण्यधर्मभी यथाशास्त्रवि
धीसेप्रवृत्तकियाहे ६ ॥

ब्रह्मचर्येणघोरेण गुर्वाचारेणसेवया
वेदानधीत्यधर्मेण राजशास्त्रंचकेवलं ७

घोरब्रह्मचर्यकर्के गुरुसेवाके आचारकर्के गुरुप्रसन्नकियेहे
वेदोंकोअध्ययनकर्के राजधर्म शास्त्रभी केवलप्रवृत्तकियाहे ७

अतिथीनन्नपानेन पितॄंश्चस्वधयातथा
ऋषीन्स्वाध्यायदीक्षाभि र्देवान्यज्ञैरनुत्तमैः ८

ओर अतिथिजनको अन्नपानदानकर्के तृप्तकियाहे पितरनको
स्वधाकार श्राद्धदानकर्के तृप्तकियाहे ओर ऋषीलोकोको स्वा
ध्यायदीक्षाकर्के प्रसन्नकियाहे ओर उत्तमयज्ञोंकर्के देवताग
णको तृप्तकियाहे ८ ॥

क्षत्रधर्मेस्थितोभूत्वा यथाशास्त्रंयथाविधि
उदीक्षमाणःपृतनां जयाम्यहंयुधिवासव ९

ओर क्षत्रियधर्ममों स्थितहोकर यथाशास्त्र यथाविधि अपनी से
नाको केवल दर्शनहीकरताभया युद्धविषेशत्रुगणको आप
हीजयकरताभया ९ ॥

देवराजसदेवोयं ममसेनापतिःपुरा
आसीद्योधःप्रशांतात्मा सोयंकस्मादतीवमा ९
मनेनक्रतुभिर्मुख्यै र्नैषेनापिद्विजातयः

श्री·
रा·थ·
टी·
५५

99

नर्पिताविधिवच्छक्र सोयंकस्मादतीवमे १०
हेदेवराज यहसुदेवनामक मेरासेनापति मेनेकियारहा यहप्रशांतचित्तवाला मेरारणाविषे योधामात्रहीभयाहे सोयहमोसेकैसेअतिअधिकहोगयाहे १० इसने अति उत्तम यज्ञोंकरके यजन भीनहो किया और ब्राह्मणोंभी अन्नदानदक्षिणाकरके विधिपूर्वकनहीकिये सोयह मोको अतिशयकरके उल्लंघकरगयाहे इसकोऐसी उत्तम गती कैसे प्राप्तभई हे १० ॥

इंद्रउवाच एतस्यविततस्तात सुदेवस्यबभूव
ह संग्रामयज्ञःसुमहान् यश्चान्योयुध्यतेनरः ११
इंद्रउवाच हेतात अंबरीषराजाजी यहजोतेरासेनापतिसुदेवहे इसकारणयज्ञ महाविस्तारविधीकाभयाहे जैसासंग्रामयज्ञभयाहे ऐसा और किसीयोधाकानहीहोता ११ ॥

सन्नद्धोदीक्षितःसर्वो योधःप्राप्यचमूमुखे
युद्धयज्ञाधिकारस्थो भवतीतिविनिश्चयः १२
हे राजन् सबीलोकजोउत्तमहो तुम्हारायुद्धयज्ञकेसाहे इसमोशस्त्रअस्त्रसन्नद्धबद्धकरणेयही इसकादीक्षाधारणाहे और योधा जोहे सो रणविषेसन्मुखहोवे यहीइसयज्ञकी यज्ञाधिकारकीस्थिती होतीहे हे राजन् जोनसे नित्यकेपंचयज्ञहे सोसर्ववर्णोंकेसमानहे यहयुद्धयज्ञउत्तमलोकोकासदानित्ययज्ञहे १२

अंबरीषउवाच कानियज्ञेहवींष्यस्मिन् किमाज्यंका
चदक्षिणा ऋत्विजश्चात्रकेप्रोक्ता स्तन्मेब्रूहिशतक्र
अंबरीषउवाच हेदेवराज ऐसेइसरणयज्ञविषेहोम ॥ तो १३
केहवी द्रव्यकोनहे और होमकाहुतकाहे और दक्षिणा इसमोक्याहे और ऋत्विजइसकेकोनहे हेशतक्रतुमहाराजजी यहमोकोनिर्णयसेकहो १३ ॥

इंद्रउवाच ऋत्विजःकुंजरास्तत्र वाजिनोध्वर्यवस्त
था हवींषिपरमांसानि रुधिरंत्वाज्यमुच्यते १४
इंद्रउवाच हे राजन् इसरणयज्ञमोऋत्विजकुंजरहाथीहे और घोडेऋत्विजहे और शत्रुशरीरोकेमांसहोमद्रव्यहे और रुधिरयोधाशरीरोंहुतहे १४ ॥

सृगालगृध्रकाकोलाः सदस्यास्तत्रपक्षिणः
प्राज्यशेषंपिबंत्येतेहविःप्राश्नंतिवाध्वरे १५

और शृगाल गृध्रकाकादिमांसभक्षकपक्षी इसयज्ञकेसदस्यहे ए
हीयज्ञकेसभाकेप्रधानहे सोरुधिररूपीआज्यशेषकोपानकरनेहे
और यज्ञविषे होमशेषभीभोजनकरनेहे १५ ॥

प्रासतोमरसंघाताः खड्गशक्तिपरश्वधाः
ज्वलंतोनिशिताःपीताः स्रुवस्त्वस्याध्वमंत्रिणः १६

और प्रासतोमर शस्त्रोंकेसमूह और खड्ग शक्ति परशु यह अग्नि
के समान प्रज्वलतभये हे शाणयंत्रविषे शिकल कियेहे और
खारे जलकर्के शुद्धकियेहे सोमंत्र संस्कारवाले स्रुवेहे १६

चापवेगायतस्तीक्ष्णः परकायावभेदनः
ऋजुःसुनिशितःपीतः सायकश्चस्रुवोमहान् १७

और धनुषके वेग बल करके दीर्घगतीवाला अतितीक्ष्णबाण
जोहे सोपरकायका भेदकारीहे ऋजुहे सुधाहे शिकलकियाहे
क्षारजलकर्के शुद्धकियाहे सोई महाहोमका स्रुवाहे १७ ॥

द्वीपिचर्मावनद्धश्च नागदंतकृतत्सरुः
हस्तिहस्तहरःखड्गः स्फ्यभवेत्तस्यसंयुगे १८

और व्याघ्रचर्मकर्के कोशजिसका खचितकियाहे और गजदंत
कर्के जिसका मुष्टिग्रहणबनाहे ऐसाजो खड्ग सो हाथीके शुं
डादंडका छेदकारीहे इसरणयज्ञमेंस्फ्यरूप बनाहे १८ ॥

ज्वलितैर्निशितैःप्रास शक्त्यृष्टिसपरश्वधैः
शैक्यायसमयैस्तीक्ष्णै रभिघातोभवेद्धवि १९

महा प्रज्वलितयमकवालेजो सिकलकिये प्रास शक्ति ऋष्टि
परशु जो शस्त्रहे सो सभही सिक्केके लोहेके बनेहे उनका जो
प्रहारका घातहे सोई इसरण यज्ञमें महायज्ञका नानाप्रकार
कादृव्यसंग्रहे १९ ॥

संख्यासमयविस्तीर्णं मभिजातोद्भवंवसु
आवेगायच्चरुधिरं संग्रामेस्ववनेभुवि २०

संख्या मर्यादाके विस्तारवालाजोवारंवार वहोतप्रहारजोहो
ताहे उससेजो रुधिर प्रवाह होताहे २० ॥

सास्यपूर्णाहुतिर्होमे समृद्धासर्वकामधुक्
छिन्नभिंधीन्ययेशाह्‌ः स्यपतेवाहिनीमुखे २१

सोइसरणयज्ञमें महाविस्तारवाली सर्वकामकेसिद्धिवाली
पूर्णाहुती वसुधारा होतीहे हे राजन् जोनसा इसरणयज्ञमें

श्री·
ग·प·
टी·
१०१

100

छिंपिभिंधी जोधागणोंका सेनामुखमोशद्बश्रवणहोताहैं सो इस रणयज्ञका सामवेदकागायनहै और इसयज्ञमो होमद्रव्यकास्थापनस्थान सेनाके आवनेकामुखस्थानहे २१ ॥

सामानिसामगास्तस्य गायंतियमसादने
हविर्द्धानंतुतस्याहुः परेषांवाहिनीमुखे २२

हे राजन् हस्ती समूहका अश्वसमूहका चर्मकेपात्र संपुटोका समूहहे जोहे सोई इसयज्ञका श्येनचित अग्निसंस्कारहे २२

कुंजराणांहयानांच वर्मिणांचसमुच्चयः
अग्निःश्येनचितोनाम सचयज्ञेविधीयते २३

नव सहस्र जोधा जहां हत होताहे तहांएककबंध योधा शिरविनाही रणकरणेको उठखडा होताहै सो ईरणयज्ञका यूपस्तंभखडाहोताहै जोनसा यज्ञमो खदिरकाष्टके अष्ट अंशोवाला काष्ट स्तंभ होता है २३ ॥

उत्तिष्ठन्तेकबंधोत्र सहस्राणिहतेतुयः
सयूपस्तस्यशूरस्य खादिरोष्टाश्रिरुच्यते २४

हे राजन् इसरणयज्ञमो हस्तिशिक्षाकर्के महावतलोकोने अंकुशाकोकर्के प्रेरण कियेहु एहस्ती आक्रोशशद्बको करते हे सोईहोताजनोके हस्ततलकेघोषशद्बवाला वषट्कार प्रयोगहोताहै २४ ॥

इडोपहूताःक्रोशंति कुंजराअंकुशेरिताः
व्याघुष्टतलनादेन वषट्कारेणपार्थिव २५

संग्रामयज्ञजोहै तिसमोत्रिसामनालवाला दुंदभी शद्बहोताहे हे राजन् जहां ब्राह्मणोका द्रव्यहराजावे तहांजो सूरमा संग्रामको अपनी देहीको त्यागकरे २५ ॥

उद्गातातत्रसंग्रामे त्रिसामादुंदुभिःस्मृत
ब्रह्मस्वेह्रियमाणेतु त्यक्त्वाप्राणान्प्रियांस्तनुं २६

अपने शरीरको यज्ञ के यूपस्थानमो त्यागजाताहै तो रण यज्ञ अनंत दक्षिणावाला होता है और जोनसा सूरमा योधास्वामी कार्य वास्ते शत्रुसेनाके सन्मुखपराक्रमकरे २६ ॥

आत्मानंयूपमुत्सृज्य सयज्ञोनंतदक्षिणः
भर्तुरर्थेचयःशूरो विक्रमेद्वाहिनीमुखे २७

मरणाभय कर्के पीछेनहीफिरे उसकोमेरीसमान स्वर्गलोक

गती होतीहै और जिसके व्याघ्रचर्मकेकोशवाले खड्गोकर्कै औ
र लोहकेस्तंभरूपीपरिघोकर्कै २७ ।।

नभयाद्विनिवर्तेत तस्यलोकायथामम
नीलचर्मावृतैःखड्गै बाहुभिःपरिघोपमैः २ ८
रणयज्ञकीवेदी विस्तारसे पूर्णभईहै उसको मेरेसमानलोक
होतेहैं जोनसहायतामाविजयकरणेकोरणमोस्थितभयाहै स
हायकी वांछानहीकरता २८ ।।

यस्यवेदिरुपस्तीर्णा तस्यलोकायथामम
यस्तुनापेक्षतेकंचित् सहायंविजयेस्थितः २ ९
और समस्त शत्रुसेना को अवगाहनकरताहै उसको मेरेसमा
न लोक प्राप्त होतेहै २९ ।।

विगाह्यवाहिनीमध्यं तस्यलोकायथामम
यस्यशोणितसंघाता भेरीमंडूककच्छपा ३०
हे राजन् जिसकेपराक्रमकर्कै योधा गणके संग्राममो ऐसी
नदी रुधिर प्रवाहसे परतीहै कैसीहै रुधिरका जलप्रवाह
जिसमोहै और भेरी नगारे बजंत्रशब्द जिसके मंडूककच्छप
जीवशब्दहै ३० ।।

वीरास्थिशर्कराडुर्गा मांसशोणितकर्दमा
असिचर्मप्लवाघोरा केशशैवलशाद्वला ३१
वीरोकी अस्थियां जिसमो कंकरहै ऐसीदुर्गम और मांसरु
धिरका जिसमो कर्दमकी चबनाहै और तरवारोके कोश जि
समो गीडकोकेउडकारहै केशशिवालकी सवजीवालीहै ३१

अश्वनागरथैश्चैव संछिन्नैःकृतसंक्रमा
पताकाध्वजवानीरा हतवारणवाहिनी ३२
और हस्तीघोडेकेदेहछिन्नभिन्नभयेहै सोईजिसमो टापू और
सेतुबनेहै और पताकाध्वजा जिसके तीवार तृणकेपुंजहै औ
र हतभये हस्ती देहोकेमध्यमार्ग कर्कैवेगसे वहतीहै ३२

शोणितोदासुसंपूर्णा दुस्तरापारगैर्नरैः
हतनागमहानक्रा परलोकवहाशिवा ३३
और रुधिरजलसे पूर्णभईहै पारगामी नरोकर्कै दुस्तरहै ह
तभये हस्ती देहोके जिसमो नक्रजीवहै और परलोकसमुद

केसन्मुखप्रवाहवालीहे महाभयानकहे ३३ ॥

ऋत्विग्वृन्दमहानौका गृध्रकंकबलप्लवा
प्ररुषादानुचरिता भीरूणांकश्मलावहा ३३

और ऋत्वीग्वृन्दोकीसंकुलताही महानौकाहे गृध्रपक्षी काकप
क्षी जिसमो मंडूकजीवोकीहे ससारसमालाहे और पुरुषाद जोहे
राक्षसभूमीपार्थिकहे उन्होंके संचारवालीहे भीरुजनोको महाभ
यकरतीहे ३४ ॥

नदीयोधस्यसंग्रामे नदस्यावभृथंस्मृतं
वेदीयस्यत्वमित्राणां शिरोभिश्चप्रकीर्यते ३५

हे राजन् ऐसी महानदी योधागणोके संग्राम विषेबहतीहे उस
के विषे रणयज्ञकायज्ञांतस्नानका अभिषेककहाहे और जिसकी
वेदी वीरोकेश्रीफलशिरोंकरके बनतीहे ३५ ॥

अश्वस्कंधेगजस्कंधे स्वर्गलोकाययाममम
पत्नीशालाकृतायस्य परेषांवाहिनीमुखं ३६

और अश्वोंके ग्रीवास्थानोकरके गजोके स्कंधस्थानोकरकेभी वेदीक
ल्पना जोवीरपुरुषकरताहे उसको मेरे समान स्वर्गलोकप्राप्तहो
तेहे और जिसरणयज्ञमों जिसयोधाने पत्नीशाला शत्रुसेनाकामु
खकियाहे ३६ ॥

हविर्धानंस्ववाहिन्या सदस्याद्क्षिणीधिष्णाः
सदस्यादक्षिणायोधा आग्नेयाश्चोत्तरांदिशं ३७

जिसको अपनीसेनाप्रतिहोमद्रव्यकोदानको मतिप्रधान पंडि
तकहनेहे इसरणयज्ञमो दक्षिण हस्तकरके शस्त्रप्रयोगकरणे
हारे चतुरयोधालोकसदस्यकहेहे सदस्यजोहेने यज्ञविद्याको
हस्तामलकजे सी प्रगटदिखाइदेनेहे और आग्नेयअस्त्रशस्त्रप्रयो
गजोहे सो ब्रह्मलोक प्राप्तीकी उत्तरायणगतीकोकरताहे ३७

शत्रुसेनाकलत्रस्य सर्वलोकाननहरतः
यदात्रभयतोव्यूहे भवत्याकाशमग्रतः ३८

और शत्रुसेनाका मुखपत्नीशाला जोकहीहे सोशत्रुसेनाकाक
लत्रजोहे पत्नीशाला उसको रणयज्ञमो ब्रह्मलोकादिप्राप्तिह
रनहीहे तत्कालहीहोजातीहे जोनसाहनोकेसमूहके आकाश
होताहे ३८ ॥

सास्यवेदिस्तदायज्ञे नित्यंवेदास्त्रयोग्रयः

यत्नयोध: पराहत्त: संत्रस्तोहन्यतेपरै: ३९
अप्रतिष्ठ:सनरकं यातिनात्रसंशय:
यस्यशोणितवेगेन वेदि:स्यात्संपरिप्लुता ४०

सो आकाशमंडल समस्तयज्ञ विधानकर्के सामवेदीहोतीहै तहांतीनेरवेदनी नोवेदिकाकीतीनो अग्नि नहांहोतीहे वीर लोकोकी आयागमनमध्यस्थितीसेहोतीहे जौनसायोधात्रास को पाइकर रणयत्नसे फिरजाताहे शत्रुजनोंकर्के माराजाता हे सोनरहा अप्रतिष्ठितहोताहे उसको मारणेहाराभी अप्रति ष्ठितहोताहै नरककोजाताहे इसमो संशयनहीहे जिसके देहहेरुधिरकर्के रणकीवेदीसिंचनहोतीहे ४० ॥

केशमांसास्थिमोहणी सगच्छेत्परमांगति
यत्तसेनापतिंहत्वा तद्यानमधिरोहति ४१

और केशमांसअस्थिपुंजकर्के हणीहोतीहे सोयोधापरमगती कोंपावताहे जौनसायोधाशत्रुसेनाके सेनापतिकोंमारके उ सकीअसवारीको आरोहणकरताहे ४१ ॥

सविष्णुविक्रमक्रामी बृहस्पतिसम:प्रभु:
नायकंतत्कुमारंवा योवास्यात्तत्रपूजित: ४२

सोविष्णुभगवानजीके त्रिविक्रमअवतारजैसीमहिमाकोप्राप्त होताहे बृहस्पतिसमानप्रभावसंपन्नहोताहे जौनसाजोधाश त्रुसेनापतिको अथवा उसके कुमारको अथवा अवरकिसीमा नप्रतिष्ठावालेसुखयोधाको ४२ ॥

जीवग्राहंप्रगृह्णाति तस्यलोकायथामम
आहवेतुहतंशूरं नशोचेतकथंचन ४३

जयकर्कै जीवणग्रहणजैसेही अपनेवशग्रहणकरलेताहे उसकोमेरेसमान स्वर्गलोकप्राप्तहोताहे ४३ ॥

अशोच्याहिहत:शूर: स्वर्गलोकेमहीयते
नह्यन्नंनोदकंतस्य नस्नानंनाप्यशौचकं ४४

हे राजन् अंबरीषजी जौनसेशूरमा रणविषेमाराजाताहे उस कीमृत्युकोनही शोचना उसकी परम उत्तम गती होताहे ४४

हतस्यकर्तुमिच्छंति तस्यलोकाननुत्तमे
वराप्सर:सहस्राणि शूरमायोधनेहतं ४५

और रणविषे हतभया उसके उशोक दुःखकरणेको शास्त्रवेत्ताइच्छा
नही करते जो उसकोलोक प्राप्तहोतेहै तिन्हकोसुनो जो शूरमाय
हमो हतहोताहे उसको उत्तमअप्सराके सहस्त्रआकाशमोदेष
तेहै ४५

त्वरमाणाभिधावंति ममभर्ताभवेदि
ति पतन्नपस्युएयंच धर्मश्चैवसनातनः ४ ९

अतिवेगसे उसकेसन्मुखधावतीहै अन्योन्यवादकरतीहै सभ
ही पृथक्पृथक्कहतीहै यहमेराभर्ताहोये अबहीमेराभर्ताहो
वे ताते हे राजन् तत्रीस्वरमाकोरणाकर्मपरमतपहे परमपुण्य
हे सनातनधर्मरणाहे ४६ ॥

चत्वारआश्रमास्तस्य योयुद्धमनुपालयेत्
वृद्धवालौनहंतव्यौ नचस्त्रीनैवपृष्ठतः ४७

जौनसायुद्धधर्मकोपाले उसकोचारआश्रमोंकेधर्मकापुण्यहे र
णमोवृद्ध और बालकनही मारणेस्त्रीकोंनहीमारणा जोरण
मोपीठदिखावे उसकोंनहीमारणा ४७ ॥

तृणपूर्णमुखश्चैव नवास्मीतिचयोवदेत्
जंभवृत्रंबलंपाकं शतमायंविरोचनं ४८
दुर्वार्यंचैवनमुचिं नैकमायंचशंवरं
विप्रचित्तिंचदैतेयं दनोःपुत्रांश्चसर्वशः ४ ५

जौनसा योधावाणवर्षाकेके मुखभयाहे मेअवतेरेअथी
नभयाहूं इसप्रकारशरणागतहोवे उसकोभीनही मारणा
हे राजन् मेभीरणयत्नकर्के जंभासुरमाराहे वृत्रकोमाराहे व
लदैत्यकोमाराहे पाकअसुरकों शतमायदैत्यकोमाराहे विरो
चनकोमाराहे दुर्वारदैत्यकोंमाराहे नमुचीकोमाराहे नैकमा
यकोंमाराहे और शंबराकोमाराहे विप्रचित्तीदैत्यकोमाराहे
और भीदनुपुत्रसभही सर्वयत्नसेमारेहे ४९ ॥

प्रह्लादंचविनिर्हत्याजौ ततोदेवाधिपोभवं ५०

और प्रह्लादको भीरणविषे मारकरतबमेदेवराजभयाहों हे
अंबरीषमहाराज इसीप्रकार रणकर्के सदेवसेनापति भी मे
रे समान स्वर्गलोकको प्राप्तभयाहे आपने इसकोदेषकरवि
स्मयनहीकरणा ५० ॥

भीष्मउवाच इत्येतच्छक्रवचनं निशम्यप्रतिगृ
ह्य च योधानामात्मनःसिद्धि मंबरीषोभिपन्नवान् ५१

इतिश्री महा भारते शांतौ राजधर्मेषु अ
ष्टनवतितमोध्यायः ९८ ॥
भीष्मउवाच हे युधिष्टिर इस प्रकारके इंद्रवचनको सुनकर्के
सत्यप्रमाणमानकर्के योधालोकोकी अपने विषेभी परमसि
द्धीकोप्रापतभया ५१ इतिश्री महा भारते॰ शांति॰ पर्व॰ रा
जधर्मेषु अष्टनवतितमोध्यायः ९८ ॥
भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासंपुरा
तनं प्रतर्दनोमैथिलश्च संग्रामंयत्रचक्रतुः १
भीष्मउवाच हे युधिष्टिर सूरमालोकोके उत्साह करणेमो भी
एक पुरातन इतिहासको बहोउकहतेहे प्रतर्दनराजा ओर
मैथिलराजाजनक जिसकालमो अन्योन्ययुद्धकरतेभये १
यज्ञोपवीतीसंग्रामे जनकोमैथिलोयथा
योधानुद्धर्षयामास तन्निबोधयुधिष्टिर २
तबराजाजनकजैसे ब्रह्मचर्यदीक्षाकायज्ञोपवी तधारणसु
खधर्महे तैसेसंग्रामदीक्षावास्ते शास्त्रअस्त्रधारणकर्के अप
नेजोधालोको उत्साहवृद्धिकरावताभया उसको आपभीनि
श्चयकरो २ ॥
जनकोमैथिलोराजा महात्मासर्वतत्त्ववित
योधान्स्वान्दर्शयामास स्वर्गंनरकमेवच ३
सो राजाजनकमैथिल अतिमहात्मा सर्वधर्मोकातत्ववेत्ता
होताभया अपनेयोधागणोको संग्रामके गुणदोष उदाहर
णवास्ते अपनी योगसिद्धीकर्के स्वर्गको ओर नरकको प्रत्य
क्षदिषावताभया ३ ॥
अभीरूणामिमेलोका भास्वंतोहंतपश्यत
पूर्णागंधर्वकन्याभिः सर्वकामदुहोक्षयाः ४
जेनेहमारीसेनाके सूरमालोकहे सोसभही जोनसे सूरमा
लोकरणविषेभयत्यागकर्के युद्धकरतेहे तिन्होंकेलियेइस
प्रकारकेयह उत्तमलोकहोतेहे गंधर्वोकी उत्तमकन्यागा
णो कर्के परिपूर्णहोतेहे सर्व प्रकार केकामना भोगोके
युक्त यकामधेनु होतेहे ४ ॥
इमेपलायमानानां नरकाःप्रत्युपस्थिताः

अकीर्तिःशाश्वतीचैव यतितवमनन्तरं ५
सो भी प्रत्यक्षमें नेत्रमको दिखायेहे और जौनसेरणसे भय भी
नहो करपलायमानहोतेहैं तिन्होंकोयहमहापीडाककें भयका
री नरकलोकनयारवनेहे तिन्होंकोभी तुम प्रत्यक्षवर्तमानदे
खो और चिरकाल तुह्मारी अकीर्ति इसलोकविषेवनीरहेगी
ताते तुमने अपनीकी नीकीस्थिति वास्ते सदा प्रयत्नकर्तव्यहे ५
तान्ह्यारीन्विजयत भूत्वासंत्यागबुद्धयः
नरकस्याप्रतिष्ठस्य माभूतवशवर्तिनः ६
ऐसी अपनी अखंडकीर्तिको मन विषेदृढ करकें और भयबु
द्धीकात्याग करकें शत्रुगणकोरणविषेविजयकरो जिसकरकें अ
पनी प्रतिष्ठा अकीर्ति लोकमेनही विद्यमानहोती ऐसी नर
कगतीकेवशवर्ति तुम मतहोवो ६ ॥
त्यागमूलंहिशूराणां स्वर्गद्वारमनुत्तमं
इत्युक्तास्तेन्पतिना योधाःपरपुरंजय ७
सूरमालोकोंको प्राणत्यागके भयका त्यागही स्वर्गद्वारकीप्रा
प्तीका उत्तम गुणमूलकहाहे ताते तुम सभही प्राणत्यागके
भयकोरणविषेत्यागकरो हे युधिष्ठिर ऐसे जब जनकमिथि
लेशनेकहातवसभही सूरमा भयको त्याग करते भये ७
अजयंतरणेशत्रून् हर्षयंतोनरेश्वरं
तस्मादात्मवतानित्यं स्थातव्यंरणमूर्धनि ८
रणविषेशत्रुजनोंको जयकरतेभये राजाको अतिहर्षकर
तेभये ताते क्षत्री जो सूरमा पुरुष हे उसने भय को त्यागक
रकें धीरता की दृढतासेरणमंडल मोस्थिती कर्तव्यहे ८ ॥
गजानांरथिनोमध्ये रथानामनुसादिनः
सादिनामंतरेस्थाप्यं पादातमपिदंशितं ९
यएवंव्यूहतेराजा सनित्यंजयतिद्विषः
तस्मादेवंविधातव्यं नित्यमेवयुधिष्ठिर ९
अवव्यूहकल्पनाकी मर्यादा कहतेहे हे राजन् गजोंकी सेना
के मध्यमो रथोंकी सेना कीस्थिति कर्तव्यहे और रथोंकी से
ना के मध्य गत अश्वोंकी सेना स्थितकर्तव्यहे और रथोंकी
सेनाकी स्थिति कर्तव्यहे और रथोंकी सेनाके मध्यगत पेदल
सेनास्थितकर्तव्यहे हे युधिष्ठिर व्यूहकल्पना की स्थिति इसी

प्रकार नित्य प्रति कर्तव्यहै सो राजा इस प्रकार व्यूह कल्पना
करलेताहै सो राजा शत्रुसेनाको निश्चही जयकरताहै १०

सर्वैस्सर्गतिमिच्छंति सद्युद्धेनातिमन्यवः
क्षोभयेयुरनीकानि सागरंमकरायथा ११

हे राजन् जैसे सूरमालोकके केवल अतिक्रोधको प्रधाननही
करते सुंदर नीतिमार्गकरकें शत्रुजयकरणेसे स्वर्गगतीकी
इच्छाकोंकरतेहै जो इस प्रकारकी व्यूहरचनाकरकें अपनी सेना
कों दृढस्थिति करकें रणकरेतो संपूर्ण शत्रु सेनाके बलको
अपने संचार सेक्षोभकरतेहै जैसे सागरको मकर गणक्षो
भकरतेहै ११ ॥

हर्षयेयुर्विषण्णांश्च व्यवस्थाप्यपरस्परं
जितांचभूमिंरक्षेत भग्नान्नात्यनुसारयेत् १ २

जो सूरमा लोकरणविषे दृढ स्थितहोवेतो जौनसे दुर्बल
दुखी सेनाकेलोकहै तिन्हकोभी हर्ष उत्साहकोंकर देतेहै
ताते जौनसी पृथ्वी जीतलीनीहै उसको रक्षाकरे जो नसे
योधागण पलायन करजावे उन्हकेपीछे अतिवेगसेनही
धावेकदाचित् फिरकरकें युद्धकरणेकोनही आजावे १२ ॥

पुनरावर्तमानानां निराशानांचजीविते
वेगःसुदुःसहोराजे स्तस्मान्नात्यनुसारयेत् १३

जौनसे योधालोकपलायनकरजातेहै वहोउ अकीर्तिभय
सेफिर करकें रणकों आवतेहै सो अपनी कीर्तिवास्ते जीवन
की आशाकोंत्यागकरणकरतेहैं उन्हकावेग वलअतिदुःस
हहोताहै १३ ॥

नहिप्रहर्त्तुमिच्छंति शूराःप्रद्रवतोभृशं
तस्मात्पलायमानानां कुर्यान्नात्यनुसारणं १४

सूरमा लोकपलायमान शत्रुविषे प्रहारकरणा धर्मयुद्ध १४
नही मानते ताते पलायमाण जोधागणके पीछे नहीजावे

चराणामचरात्वन्न मदंष्ट्रादंष्ट्रिणामपि
आपःपिपासतामन्न मन्नंशूरस्यकातरः १५

हे राजन् चरभूतोको अचरभूत भक्षणके निमित्त वनेहै
और दांतोकी दंष्ट्रावाले भूतोके अदंष्ट्रावाले भूतभक्षणके अ
न्नवनेहै और तृषातुरभूतोको जल अन्नवनाहै और सूरमा

श्री·
शां·प·
टी·
१०४

104

जनोकोकायरजन भइवनेहे १५ ॥

समानपृष्ठोदरपादाः पराभवंभीरवोवैव्रजे
ति अतोभयार्ताःप्रणिपत्यभूयः कृतांजलीनु
पतिष्ठंतिशूरान् १६ ॥

हे राजन् सूरमाजनोके ओर कायरजनोकेपृष्ठ उदरहाथ चर
णादि अंगरचनायकसमानही वनीहे उन्होविषेकायरलोक
अपने मनकी कायरतासे भागजातेहे ताते जोकायरलोकजो
हे सो अपने को जयकरणेहारे सूरमालोकोकों भयभीतहो
कर अंजलिकरके प्रणामकरे ओर वहोडभीप्रार्थनाकरे १६

शूरबाहुषुलोकोयं लंबनेपुत्रवत्सदा
तस्मात्सर्वास्ववस्थासु शूरःसंमानमर्हति १७

हे राजन् सूरमालोकोके भुजदंडोंविषे बालपुत्रोंकीलटक
ताहे ताते सूरमा वीरसदामहामान सन्माकरणेकोंयोग्यहो
ताहे १७ ॥

नहिशौर्यात्परंकिंचि त्रिषुलोकेषुविद्यते
शूरःसर्वंपालयति सर्वंशूरेप्रतिष्ठितम् १८
इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणि राजध
र्मेविजिगीषमाणाद्वृत्ते ९९ ॥

जो तसा सूरमा जनोका रण कर्म धर्महे इस सेपरे अधिक
उत्तम त्रिलोकी विषेविद्यमान नहीहे सूरमा पुरुषसर्व लो
ककों पालन करताहे ताते सूरमा पुरुष विषे जयकी स्थि
र्मक र्मसमही प्रतिष्ठितभयाहे १८ इतिश्रीम·भा·शां·प·
राजधर्मे· नवनवतितमोध्यायः ९९ ॥

युधिष्ठिरउवाच यथाजयार्थिनःसेनां नयंतिभ
रतर्षभ ईषद्धर्मंप्रपीड्यापि तन्मेब्रूहिपितामह १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी जयकीवांछावालेराजालोकजो
हे सो अपनी सेनाको किंचित् धर्मपीडाको भी करतेहे भय
भीतजनोको राजाकाभयदिखायकरके अपने अग्रणीकर
लेतेहे ओर सेनाकोंजिसविधीसेलेजाते उसविधीकोआपक
हो १

भीष्मउवाच सत्येनहिस्थितोधर्म उपपत्या
तथापरे साधाचारतयाकेचि त्तथैवापधिकादपि २

भीष्मउवाच हे राजन् क्षत्रधर्म जो है सो अपनी सत्यमर्यादाको
पालनकरताहै सो अवश्य अपने परायेमरणनिश्चयवालाहै
इसको कोई पुरुष इसको मरण निश्चय करके दृढकरतेहै
कोई पुरुष भय दृष्टांतदर्शन करके दृढकरतेहै २॥

उपायधर्मान्वक्ष्यामि सिद्धार्थानर्थधर्मयोः
निर्मर्यादादस्यवस्तु भवंतिपरिपंथिनः ३

अवतुम्हारेको उपायधर्मोको कहतेहै कैसेहैं उपायधर्म अ
र्थविषयमै विषे अपनी अर्थसिद्धि करणेहारेहै राजालोकोके
राज्यहारीलोकजोहै सो सत्यधर्मकी मर्यादारहितहोतेहै कप
टछलादि चोरहत्तिभी करतेहैं ३॥

तेषांप्रतिविघातार्थं प्रवक्ष्याम्यथवैदिकं
कार्याणांसर्वसिद्ध्यर्थं तानुपायान्निबोधमे ४

अब इस प्रकारके छलपाप हत्तिवाले चोरजनोके विनाश
वाले तुमको वेदविधीप्रोक्त उपायभेदोको कहतेहै सर्वका
र्योंकी अर्थमो जो उपाय वनेहै तिन्हकोहमसे तुम भीजानले

उभेप्रज्ञेवेदितव्ये ऋज्वीवक्राचभारत वो ध
जानन्वक्रान्नसेवेत प्रतिबाधेतचागतान् ५

हे राजन् राजधर्मकी दोप्रकारकी विचार बुद्धिज्ञातव्यहै ए
कतोसत्यधर्म करके सूधीहत्तिहै और दूसरी कपटमाया प्रधान
टेढीहत्तीहै जोकोई धर्म ज्ञराजाहै सो उपाय ज्ञानवालाहै सो
तो अपने ज्ञान बल करके टेढीपापकारी हत्तिको सेवनन
ही करे जबटेढीहत्तिको अपने जय वास्तेकरे उसको अप
ने प्रज्ञाबलसेनिहत्तकरे आपजोहै सो टेढीहत्तीका सदा
अभ्यासनही करे ५॥

अमित्राएवराजानं भेदेनोपचरंत्युत
तेराजाभिकृतिंजानन् यथामित्रान्प्रबाधते ६

जोनसेराजाके अमित्रलोकहै सो राजाके प्रतिभेदके उपचा
रोकोकरतेहै उन्हके उपचारोकोराजाजानलेवे जो कछु अ
मित्रलोक अपने विषेखोटीहत्तिकरतेहै उसको आप भी
उसी प्रकारकी मायाहत्तिकरके बाधाकरे ६॥

गजानांपार्श्वचर्माणि गोवृषाजगराणिच
शल्यकंटकलोहानि तनुत्रचमराणिच ७

हे पार्थ गजोंके चर्म जो हैं गोहषोंके अजगरोंके चर्म संग्रह करे शा
स्त्र जो बाण है और लोहकंटक जो है और लोहाके कवच उत्तम जो
है इनके संग्रह करे ७ ॥

शितपीतानि शस्त्राणि सन्नाहाः पीतलोहिता
नानारंजनरक्ताः स्युः पताकाकेतवश्च ह ८

और शिकल किये हैं और तार द्रव्य करकें शुद्ध किये शस्त्र जो हैं औ
र हस्तपादादि रक्षावाले कवच प्रकार जो हैं संस्कार युक्ति करकें
शुद्ध होवे दृढ होवे और पताकाध्वजा जो है सो नानारंगोंकरकें
रंगी होवे पीतवर्ण रक्तवर्ण कर्तव्य है ८ ॥

ऋष्टयस्तोमराः खड्गा निशिताश्च परश्वधाः
फलकान्यथ वर्माणि प्रतिकल्प्यान्यनेकशः ९

ऋष्टि शस्त्र तोमर शस्त्र और खड्ग शिकल कर्तव्य है परशुधी
शिकल कर्तव्य है और फलक वाले चर्म वाले आदिक अनेक
प्रकारकी कल्पनासे कर्तव्य है ९ ॥

अभिनीतानि शस्त्राणि योधाश्च कृतनिश्चयाः
चैत्र्यां वा मार्गशीर्ष्यां वा सेनायोगः प्रशस्यते १०

हे राजन् शस्त्र समाज सभही शुद्ध शिकल कर्तव्य है और योधा
लोक जो हैं सो युद्ध करणेको दृढ निश्चयवाले ज्ञातव्य है चैत्रकी
पूर्णमासीकी अथवा मार्गशीर्षकी पूर्णमासीकी सेना तीराज
नका याग कर्तव्य है १० ॥

पक्वसस्या हि पृथिवी भवत्यम्बुमती तदा
नैवातिशीतो नात्युष्णः कालो भवति भारत ११

जब पृथ्वी सो सस्य खेती के परिपक्व हो जावे और जल भी निर्मल
होवे वर्षाकालकी जलवृद्धि कम हो जावे मार्ग सुसक हो जावे
अति उष्ण अति शीतकाल नही होवे तब राजाको यात्राकाल होता
है ११

तस्मात्तदा योजयेत परेषां व्यसनेऽथवा
एते हि योगाः सेनायाः प्रशस्ताः परबाधने १२

हे भारत जब इस प्रकार देशकाल शुद्धि और अपनी रणया
त्राकी साधन सामग्री अनुकूल होवे तब युद्धकी यात्राको क
रे अथवा जब शत्रुजनोंको आपदाकाल होवे तो भी युद्धया
त्राका उद्योग कर्तव्य है इस प्रकारके उद्योग योग शत्रु बाधाक
रणेको प्रशस्त कहे है १२ ॥

जलवांस्तृणवान्मार्गः समोगम्यः प्रशस्यते
चारैः सुविदिताभ्यासः कुशलैर्वनगोचरैः १३
हे राजन् जलसंपदावाला तृणसंपदावाला मार्ग विजययात्रा
वाले राजाको समभूमिवाला प्रशस्तहै वहीउकैसाहै मार्ग वन
संचारवाले कुशल चारलोको कर्के जिसविषे गतीका अभ्यास
विदितकियाहै १३ ॥
नह्यरण्येनशक्येन गंतुंमृगगणैरिव
तस्मात्सेनासुतानेव योजयेन्निजपार्थिवः १४
जैसेवनविषे वनके मृगगण संचारकरतेहै तैसेवनके अरण्य
मार्गविषे सेनाकेलोकोने यात्रागतिकरणेका अशक्यहै ताते
ही विजययात्राकी वांछावाले राजालोक सेनाकी यात्राविषे
प्रथम चारलोकोकोही नियोग करतेहैं १४ ॥
अग्रतः पुरुषानीकं शक्यंचापिकुलोद्भवं १५
आवासस्तोयवान्दुर्गो एकमार्गः प्रशस्यते
संपूर्ण सेनाके आगे कुलधरोंकी सेवासे कदीमचलाआये
पुरुषोकी सेनाको राजालोक अपने पराये विश्वासकारीको
नियोगकरतेहै हे राजन् निवासस्थान और जलवालास्थान
और दुर्गस्थान यहरक्षावाले एकमार्ग कर्के प्रशस्त होतेहै १५
परेषामुपसर्पाणां प्रतिषेधस्तथाभवेत्
आकाशान्तवनाभ्याशं मन्यंतेशरणंवनं १६
हे राजन् पराईसेनाकेप्रवेशकरणेहारे पुरुषोका निषेध
एकमार्ग कर्के ही बनताहै इसीकारणसे मदान आकाशवा १६
लेनिवाससेवनके आश्रयको निवासकोशरणकारीमानतेहै
बहुभिर्गुणजातैश्च येयुद्धकुशलाजनाः
उपन्यासोभवेत्तत्र बलानांनातिदूरतः १७
जो तैसे शूरमालोक बहुतगुणसमूहयुक्तहोवे युद्धविद्याविषे
कुशलहोवे उन्होके आसपाससेनाकानिवासहोवे अतिदूरन
हीहोवे सेनाकासमाजका उतरणा और पैदललोकोकारक्ष
णोकरणा सो वनके आसपासकरणा और शत्रुजनोकाप्र
तिचार आनपडना उस आपदाका आश्रयबनका आसपा
सस्थानमोंकर्तव्यहै १७ ॥
उपन्यासावतरणं पदातीनांचगूहनं

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१०८

106

प्रथमात्प्रतीचात मापर्दर्थपरायणो १८
हे राजन् सप्तऋषियोंको पृष्ठविषेकर करकै दक्षिणमुखहोकरकै
अचलपर्वत जैसे होकर सेनाकेयोधायुद्धकरे ऐसी विधी करकै
युद्धकरेतो दुर्जयशत्रुसमूहकोजीतहोवे इसकरकै दक्षिणमु
खहोकर प्रथमयुद्धकाप्रारंभकर्तव्यहै पर्वतवन उत्तरविषे
पृष्ठमोकर्तव्यहै १८ ॥

सप्तर्षीन्पृष्ठतःकृत्वा युध्येयुरचलाइव
अनेनविधिनाशत्रून् जिगीषेनापिदुर्जयान् १९
हेयुधिष्ठिर जिसदिसाविषेपवनहोवे जिसदिसाविषेसूर्यहोवे
और जिसदिशाविषे शुक्रग्रहहोवे उसदिशासे उठकर प्रथमयु
द्धकरे इन्होंविषे जोजो पहिले पहिले पृष्ठविषेहोवे तबयु
द्धकरणा श्रेष्ठकहाहै १९ ॥

यतोवायुर्यतःसूर्यो यतःशुक्रस्ततोजयः
पूर्वंपूर्वंज्यायएषां सन्निपातेयुधिष्ठिर २०
अकर्दमामनुदका मर्यादामलोष्ठकां
अश्वभूमिंप्रशंसन्ति येयुद्धकुशलाजना २१
जो नसीभूमिपंककीचरहितहोवे और सेतुप्राकारादिप्रतिबंधर
हितहोवेएसीभूमिका अश्वोकेसंचारयोग्य युद्धकुशलतावाले
स्वरमालोककहतेहै २१ ॥

अपंकागर्तरहिता रथभूमिःप्रशस्यते
नीचद्रुमामहाकक्षा सोदकाहस्तियोधिनां २ २
हे राजन् जो नसीभूमिकापंककीचरहितहै और गर्तपाषाण
दिरहितसमभूमिकाहै सोरथसंचारको प्रशस्तहै जिसमेपु
रुषप्रमाणसे भीनीमेहक्षनीमेमहीहै ऐसीविशालमार्गकी
भूमिका हस्ति संचारकोप्रशस्तकहीहै २२ ॥

बहुदुर्गामहाकक्षा वेणुवेत्रसमाकुला
पदातीनांक्षमाभूमिः पर्वतोपवनानिच २ ३
वहोतदुर्गममार्गवाली महाविशालहै और वासवनोके वन
करकै संकुलहै ऐसीभूमिकाजोहै पर्वतवनोकी प्रधानतावाली
सोपेदलजनोके संचारको प्रशस्त कहीहै २३ ॥

पदातिबहुलासेना दृढाभवतिभारत

रथाश्वबहुलासेना सुदिनेषुप्रशस्यते २४
जो नसीसेनाबहोतपैदलोसे पूर्णसेनाहै सो सदाटढ़होतीहै औ
र रथअश्वादियुक्तसेनाजोहै सो वर्षाकालादिविनेपरहितदिनों
विषेप्रशस्तहै और बहोतपदातीसमूहकी वर्षाकालामोप्रशस्त
कहीहै २४ ॥

पदातिनागबहुला प्रावृट्कालेप्रशस्यते
गुणानेतान्समख्याय देशकालौप्रयोजयेत्
एवंसंचिंत्ययोयाति तिथिनक्षत्रपूजितः २५

हे राजन् इत्यादिप्रशस्तगुणोंकोविचारकर्के कार्यकेभी देशका
लविभागसेप्रयोगकर्के जो राजाविजययात्राके उद्योगकरे सो
तिथिनक्षत्रवारलग्नादियोगके गुणदोषपरिहारके पूजनादि
विधानभीकरलेवे तवविधिसेविजययात्राकोकरे २५ ॥

विजयंलभतेनित्यं सेनांसम्यक्प्रयोजयेत्
प्रमत्तान्भक्षितान्श्रान्तान् प्रकीर्णान्नाभिघा

सो राजा नित्यही विजयकों प्राप्तहोताहै परंतु॥ तयेत् २६
सेनाको सम्यक् विधीसे प्रयोगकरे और धर्मचिंतावालाराजाजो
है सो प्रमत्तवीरोंको तृषार्तवीरोंको परिश्रमयुक्त और युद्धकी
सामग्रीरहित वीरोंको घातनहीकरे २६ ॥

मोक्षेप्रयाणेचलने पानभोजनकालयोः
अतिक्षिप्तान्व्यतिक्षिप्तान् निहतान्प्रतनूकृतान् २२

जिन्होने युद्धकरकेशस्त्र अस्त्रोंकामोक्षकियाहै त्यागकियाहै और
यात्राप्रयाणविषे आसक्तहै और मार्गकेचलनेविषे पानभोजनो
के कालमोंअतिआसक्तजोयोधाहै और कार्यांतरविषेनियुक्तकि
येहै अथवा को शरत्रामोयुक्तकियेहै अपराधकर्के अनादर
को प्राप्तकियेहै ऐसेमनुष्योंकोयुद्धकानियोगनहीकरे २७

अविस्रब्धान्कृतारंभा नुपन्यासान्प्रतापितान्
बहिश्चरानुपन्यासान् कृतवेश्मानुसारिणः २८

जिन्हकायुद्धकरणेकाविश्वास नहीहै जिन्होनेविवाहादिकार्य
का प्रारंभकियाहै और सहेंगादिअमउपायविषे आसक्तभयेहै
और किसीवादी जननेसंतापको प्राप्तकियेहोवे और तृणकाष्ठा
दिसंग्रहवास्ते वाह्यदेशकेसंचारीहै और तृणादिस्थापनसाम
ग्रीकोंमामोले आवनेहै और अपनीमंडलीसे स्वस्थहोगयेहै और
अपनेगृहकार्यके अनुसारकियेहै ऐसेवीरोंकोभी युद्धकानि
योगनहीकरे २८

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
१०७

107

पारंपर्यागतेद्वारे येकेचिदनुवर्तिनः
परिचर्यावनोद्वारे येचकेचनवर्गिणः २९
जो नसे राजद्वारमो अथवा अमात्यद्वारमो सदा अनुकूलसेवाका
रीहै और जो नसे पुरुष और राजसेवाकारी जनोकेद्वारसे अपना
समुदाय कर्के सेवाकरतेहै इन्हकोराजाने नहीमारणा २९ ॥
अनीकंयेविभिंदंति मित्रंसंस्थापयंतिच
समानाशनपानास्ते कार्याद्विगुणवेतनः ३०
और जोनसेपुरुष शत्रुसेनाको भेदकर अपने वशकरतेहै और
मित्रको विश्वासकर्के अपने अनुकूलस्थापनकरतेहैं ऐसे उ
त्तम बुद्धिज्ञानवाले भोजनपानमर्यादासे समानवृत्तिकरणे
और सेवादिवेतनसे द्विगुणसत्कारवृत्तिसंयुक्तकरणे ३० ॥
दशाधिपतयःकार्याः शताधिपतयस्तदा
ततःसहस्राधिपतिं कुर्याच्छूरमतंद्रितं ३१
केतेयोधालोक दशवीरोकेस्वामीकरणे केतेवीरशतवीराधिपति
भी करणे सहस्रवीराधि पतिको महावीरसर्वगुणज्ञानसंपन्नजा
नकर अपने समान मानसत्कारसंयुक्तकरे ३१ ॥
यथामुख्यान्सन्निपात्य वक्तव्याःसंशयामहे
विजयार्थेहिसंग्रामे नत्याज्यामःपरस्परं ३२
हे राजन् जैसे मुख्यसेनापतीहै उन्हको एकत्रस्थितकर्कै ऐसे
वक्तव्यहै जोसंग्रामविषे विजयसंशयहमकरतेहै तुमने अप
ने समुदायविषे ऐसानिश्चय कर्तव्यहै हम अपने समुदायको
संग्रामविषे कदापिनही त्याग जानैंगे ३२ ॥
इहैवतेनिवर्तंतां येचकेचनभीरवः
घातयेयुःप्रदरं कुर्वाणास्तुमुलंप्रति ३३
जोकोई रणसेभयानीतहै सो इहांसेफिरजावे नही तोभीरलो
कजोहै सो भयकर्कै अपने वीरजनोको व्याकुलकरतेहै ३३ ॥
नसन्निपातेप्रदरं वधंवाकुर्युरीदृशाः
आत्मानंचस्वकीयंवा पलायन्हंतिसंयुगे ३४
ऐसे वीर लोकजोहै सो रणकार्यके प्रारंभमो सभकोमहाभ
यकरावेंगे जोनसा ऐसाभीरुजनको अथवा परसेनाके प
त्तके जोधाको पलायनकरनेही रणमरे मारे ३४ ॥
अपिनाशोवधोकीर्ति रयशश्चपलायने

अमनोज्ञास्सुखावाचः पुरुषस्यपलायने ३५
पलायनकरणेमो पुरुषका स्वार्थपरमार्थका नाशहोताहै ओर वधहोताहै अकीर्तिहोतीहै अयशहोताहै जो पलायन सूरमा नही करेतो चारोतरफसे यशकीर्तिके श्रवणकरणेहारी ओर मनोहरसुखकरणेहारी ओवाणी ओसर्वजनोके श्रवणगोचर होतीहै ३५ ॥

प्रतिघस्तोष्ठदंतस्य न्यस्तसर्वायुधस्यच
अमित्रैरवरुद्धस्य द्विषतामस्तुनःसदा ३६
हे राजन् इसप्रकार की यशोहानि द्रव्यहानि ओर द्रव्यहानि हमारेशत्रुजनोकीहोवे कैसे सो रणकी भीतिसे कंपायमान जिसकेदंत ओर ओष्ठहे सभही अस्त्रशस्त्र भी त्यागदीनेहें ओर शत्रुजनो कर्के अत्यंतरोकाहे ३६ ॥

मनुष्यापसदाह्येते येभवंतिपराङ्मुखाः
राशिवर्द्धनमात्रास्ते नैवतेप्रेत्यनोइह ३७
जो पुरुष रणमोंविमुखहोतेहै सो पुरुषोविषेमलमूत्रसमा की सामान्यदेह प्रकृती सेवीरपुरुषोसमानहै केवलशतस इत्यादि योधागणकी संख्या पूरणमात्रहै नाउन्हकोपरलो कशुभहोताहै ओर इहां भी उन्ह की मानप्रतिष्ठानही होती ३७

अमित्राहृष्टमनसः प्रत्युयांतिपलायिनं
जयिनस्तनराम्तात वेदनैर्मंडलेनच ३८
हे राजन् पलायनकरणेहारेको अमित्रजनहृष्टमनहोकर पीछेजातेहै जयकरनेहारे को महापीडावालेरोदन केशब्दो कर्के ओर प्रार्थनाकेमंडलों कर्के जातेहैं ३८ ॥

यस्यस्मसंग्रामगता यशोघ्नंतिशत्रवः
नदसह्यतमंदुःख महंमन्येवधादपि ३९
जिसकी मान प्रतिष्ठाके यशको संग्रामकों प्राप्तहो करशत्रु लोकनाशकरदेतेहै ऐसे दुखको मरण सेभी अति असह्य मानताहूं ३९ ॥

जयंजानीतधर्मस्य मूलंसर्वसुखस्यच
याभीरूणांपराग्लानिः शूरस्तामधिगच्छति ४०
हे राजन् तुम संग्राम विषे जयप्राप्तिको सर्वसुखवाले धर्मके मूलको जानो जो भी रूलोको को प्रहार जो करणा सो

जो सूरमालोकोकोमहानीचनरकमेंहे ५० ॥

नैवयेस्वर्गमिछन्तः संग्रामेत्यक्तजीविताः
जयंतेवध्यमानावा प्राप्नुयाममहद्गति ५१

जो नसे वीर जो कहे सो संग्राम कों जाय कर ऐसे मानतेहे ह
मतोसोवीर पुरुषहैं जो संग्राम विषे जयकी वांछा करके जी
वनात्यागकरके जयकों प्राप्तहो वेगे तोभी जो मारेगये तोभी
महा सद्गति को प्राप्तहो वेगे ५१ ॥

एवंसंसमप्रायथाः समभित्यक्तजीविताः
अमित्रवाहिनींवीराः प्रतिज्ञाहंत्यभीरवः ५२

हे राजन् वीरलोक जोहे सो इस प्रकार सपथ की मर्यादाकोक
रकेसन्मुखही प्राणत्यागकोमानतेहे अमित्रोंकी सेनाको अपनी
प्रतिज्ञाकेवचनोकों कहतेहैं और अभीरु होतेहैं ५२ ॥

अग्रतःपुरुषानीक मसिचर्मवतांभवेत्
पृष्ठतःशाकटानीकं कलत्रंमध्यतस्तथा ५३

सेनाकेमुखाग्रमेंाअसिचर्मधारी पुरुषोंकी सेनाहोवे और पीछे
छकडेरथो की सेनाहोवे और जोयोधालोकोके स्त्रीकलत्रहे सो
मध्यमेंहोवे ५३ ॥

परेषांप्रतिघातार्थं पदातीनांचगूहने
अपितस्मिन्परेहद्रा भवेयुर्येपुरोगमाः ५४

और पराये योधागणोके बानकेप्रहारकरणेकोपेदलोकोसंरक्ष
णकरनेमेहे जोनसे उससेनाकेपुरो अग्रवर्तीहोवे सो सूरमालो
क सो पदातीलोकों काटफसंरक्षणकरे ५४ ॥

येपुरस्तादभिमताः सत्ववन्तोमनस्विनः
तेपूर्वमभिवर्तेरं स्तानेवनरेजनाः ५५

हे राजन् जो नसे अग्रवर्ती सूरमालोकमानतेहें बलपराक्र
मवालेहे धीरमनवालेहे जैसेक्रमसे पूर्ववर्तमानहोवे उन्हके
अनुसार और जनभीवर्तमानहोवे ५५ ॥

अपिचेद्धर्षणेकार्ये भीरूणामपियत्नतः
स्कन्ददर्शनमात्रात्तु तिष्ठेयुर्वासमीपत ५६

जो नसे रणमे भीरुलोकहे उन्हकाभी यत्नकरके उत्साहहर्षव
ढावनेयोग्यहे सेनासमूहकेदर्शनमात्र भीरुलोकभी समीप
विषे दक्षिणवामभागविषेस्थितहोवे ५६ ॥

संहतान्योधयेदल्पान् कामं विस्तारयेद्बहून्
सूचीमुखमनीकं स्यादल्पानां बहुभिस्सह ४७

हे राजन् अपनी से नामो सूरमा योधा स्वल्पहोवे तोउनको
अन्योन्यमिलितसमुदायकर्कें युद्धकरावे जोबहोतहोवेतो
विस्तारविभाग कर्कें भी युद्धकरावे स्वल्पयोधागणोंकी जो
सेनाहे उसके वीरोंकासूह सूची मुख जैसा एकाकारसमू
हहोवे तो अल्प सूरोंका भी वहोतसूरमालोकोकेसाथयु
द्धजयकारी होताहे ४७ ॥

संप्रयुक्ते निकृष्टे वा सत्यं वा यदि वानृतं
प्रगृह्य बाहून् क्रोशेत भग्ना भग्नाः परे इति ४८

जो परस्परयोनो सेनाके योधालोकोका मुख मिलजावे औ
र समीप प्राप्तहो जावे तो सत्यहोय भावेंमिथ्याहोवे तो
अन्योन्यभुजाको पकडकर प्रहार कर्कें पुकारे यह हमारे
अमित्र जनभाग गयेहे एसे उच्चस्वर कर्कें पुकारणोयोग्यहे ४८

आगतं मे मित्रबलं प्रहरध्वमभीतवत्
सत्ववंतोभिधावेयुः कुर्वंतो भैरवान् रवान् ४९

हमारी मित्रसेनाबहोत आगईहे तुम अभीतहो करशस्त्र
प्रहारकरो इस प्रकारबल पराक्रमी सूरजनो को सुखका
रीसुंदर महाभय कारी वचनोको शत्रुसेनाको सुनावनेरहे ४९

क्ष्वेडाः किलकिलाशब्दाः क्रकचा गोविषाणिकाः
भेरीमृदंगपणवा नादयेयुः परस्परान् ५०
इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे ९०

और गर्जनाके किलकिलाशब्दक्रकचवजंत्रोकोगोविषाणा
दिवजंत्रोकोवजावे भेरीमृदंगपणवादिवजंत्रोको वजा इ
कर अग्रवर्तीवीरलोकोंको गर्जनाकरावे जिस कर्कें सम्पू
र्ण सेनाके योधालोकोको रणकरणेका उत्साहहर्ष कर्कें
उदेहोताहे ५० इति श्रीम॰भा॰शां॰प॰राजधर्मे॰रणोद्योगः
शततमोध्यायः ९० ॥

युधिष्ठिर उवाच किंशीलाः किंसमाचाराः
कथंरूपाश्च भारत किंसन्नाहाः कथंशस्त्रा
जनास्युः संगरे क्षमाः १ भीष्म उवाच ॥

भी॰
प॰ भ॰
टी॰
१०९

109

भीष्मउवाच हे राजन् जैसा अपने कुलका आचारहै तैसाही व
स्त्रशस्त्रधारणा पुरुष को उचितहै कुलाचारज्ञानसेही वीर पु
रुष कों यथा धिकारकर्मविषे प्रवृत्तिहोतीहै २ ॥

गांधाराःसिंधुसौवीराः नखरप्रासयोधिनः
आभीरवःसुबलिन स्तद्वलंसर्वपारगं ३ ॥

जो नसे योधागांधार देशकेसे सिंधुदेशकेसे सौवीरदेशके
सो नखो करके प्रासशस्त्रोंकरके युद्धकुशलहोतहै और भीरु
नहीहोते अतिवलवानहोतेहै उन्होंकीसेना संपूर्ण रण
कर्मोकीपारगामीहोतेहै सदाविजयकारीहोतीहै ३ ॥

सर्वशस्त्रेषुकुशलाः सत्ववंतोउशीनराः
प्राच्यामातंगयुद्धेषु कुशलाःकूटयोधिनः ४

और उशीनरदेशके योधालोकजोहै सो सर्व प्रकारके शा
स्त्रकर्मोविषे कुशलहोतेहैं बलसत्ताकरके धीरताकरके सं
पन्नहोतेहै और सर्वसमुद्रके निकटदेशवासी योधालोक
जोहैसो हस्तिके ऊपर आरूढ होकर युद्धकरणेमोकुशल
होतेहैं मायाकरके कूटयुद्धविषेभी कुशलहोतेहैं ४ ॥

तथायवनकाम्बोजा मथुरामभितश्चये
एतेनियुद्धकुशलाः दाक्षिणात्याऽसिपाणयः ५

तैसेही यवनदेशके कांबोजदेशके और मथुराके आसपा
सके योधालोकजोहै सोबाहुयुद्धमो अतिकुशलहोतेहै
और भी युद्धकुशलता उन्होंविषे होतीहै और दाक्षिणात्ययो
धालोकजोहै सो संपूर्ण युद्धकुशलतासे असियुद्धमो अ
तिकुशलहोतेहैं ५ ॥

सर्वत्रशूराजायन्ते महासत्वामहाबलाः
प्रायएवसमुद्दिष्टा लक्षणानितुमेशृणु ६

हे राजन् संपूर्ण देशोविषे रणविद्याके कुशलशूरमालो
कहोतेहै महाधीरहोतेहै महाबलसंपन्न होतेहैं प्रायका
वहोतनिश्चयसे सभही योधालोकशूरमाही होतेहै अव:
तमवीरताकेविशेषलक्षणोंकोंश्रवणकरो ६ ॥

सिंहशार्दूलवाङ्नाः सिंहशार्दूलगामिनः
पारावतकुलिंगाक्षाः सर्वेशूराःप्रमाथिनः ७

जो नसेवीर पुरुष होतेहै सो सिंहशार्दूल समान वाणीकी

नेत्रोंकी प्रभावसता संपन्न होतेहैं सिंहशार्दूलसमान उदार
ता धीरता संपन्नगतीवालेहोतेहैं और पारावतपंछी कुलिंग
पंछी केसमान और सर्प केगजके समान नेत्रजो ननावालेहो
तेहैं ऐसे सूरमालोक सर्वत्रयुद्धोविषे शत्रुसेनाकेमथनका
रीहोतेहैं ७ ॥

मृगस्वराद्वीपिनेत्रा ऋषभाख्यास्तरस्विनः
प्रमादिनश्चमन्दाश्च क्रोधनाःकिंकिणीस्वनाः ८

जिनकों मृगकी न्याई वाणीका स्वरहोताहै द्वीपिजोव्याघ्रउस
के समाननेत्रहोतेहैं ऋषभकी न्याई तीव्रनेत्रहोतेहैं सो अ
तिवेगवान्होतेहैं और प्रमादी जैसेमंदगति होतेहैं और क्रो
धीजैसे सदाटष्टहोतेहैं और किंकिणीजो क्षुद्रघंटिका उस
कीन्याई जिन्हकीवाणीकास्वनहै ८ ॥

मेघस्वनाःक्रोधमुखाः केचित्करभसन्निभाः
निम्ननासाग्रजिलाश्च दूरगादूरपातिनः ९

जिन्हकामेघगर्जनासमानस्वनहै और क्रोधसंपन्नजैसामुख
है और कोई योधा उष्ट्र समान भी विलक्षण आकारवालेहैं
और जिन्हकी नासिकाग्रचिपिटाजैसाहै और आकारस्वरूप
भी चिपिटजैसाहै ऐसेसूरमालोकदूरगामी होतेहैं और दू
रसेही युद्धमोजा उफडतेहैं ९ ॥

विडालकुब्जतनव स्तनुकेशास्तनुत्वचः
शीघ्राश्चपलहत्नाश्च तेभवन्तिदुरासदाः १०

जो नसैयोधालोकविडालके समानकुब्जमूर्ति होतेहैं कोम
लशरीर और कोमलत्वचावालेहोतेहैं शीघ्रवचनवाले चप
लहस्तीहोतेहैं सोभीदुर्जयहोतेहैं १० ॥

गोधानिमीलिताःकेचि न्मृदुप्रकृतयस्तथा
तरंगगतिनिर्घोषा स्तेनराःपारयिष्णवः ११

केतेसूरमाजनगोधाके समाननिमीलननेत्रजैसेहोतेहैं के
ते सूरमालोकव्यवहारविषे मृदुप्रकृति दृष्टहोतेहैं और जो
तैसे सूरमालोक तरंगके समान गतिवालेहैं और तरंगस
मानही वाणीकेस्वरवालेहैं ऐसेनरभीरणकर्मके पारगामी
होते हैं ११ ॥

संहताःस्तनवो शूराःतसंस्थिताः

प्रवादिनेषुकुप्यंति हृष्यंतिकलहेषुच १२ ॥
जौनसे सूरमा लोकदेहकी आकृतिकरके ही दृढरूपहै ओर
सुंदर स्वरूपहै जिह्नका उरस्थल दृढहै विशालहै जिह्नकी
स्थितिसुंदरसंयमयुक्तहै जो अयुक्तकार्योंकरकै वाधाकरतेतो प्र
तिकोपकरतेहै ओर कलहकार्योंविषेहर्षकों प्राप्तहोतेहैं १२
गंभीराक्षाविस्रस्ताक्षाः पिंगाक्षाभ्रकुटीमुखाः
नकुलाक्षास्तथाचैव सर्वेशूरास्तनुत्यजः १३
(ओर जिलाक्ष कुटिल दृष्टिवालेजोहे ओर कुंचनमस्तकजोहे ओर
निर्मांसशरीरजोहैं ओर वज्रकेसमानदृढजिह्नकी भुजाहे ओर
जिह्नकी अंगुलिविषे चक्राकाररेखाहे ओर कृशशरीरहै नाडी
जालके विस्तारवाले हैं १४) हे राजन् जौनसेयोधालोक गंभी
रनेत्रहैं ओर नेत्रस्थानके संपुटसेवाहिर्गतजैसेहे ओर पीनव
र्णनेत्रवालेजोहै ओर सदावक्रभ्रकुटी मुखहे ओर नकुलने
त्रसमान जिह्नकेनेत्रहै ऐसेसभही सूरमारणकर्के देहत्या
गके निश्चयकों करतेहैं १३ ॥
जिलाक्षाःप्रललाटाश्च निर्मांसहनवोपिच
वज्रबाहंगुलीचक्राः कृशाधमनिसंततः १४
ओर जिलाक्ष कुटिल दृष्टिवालेजोहे ओर कुंचनमस्तकजोहे ओ
र निर्मांसशरीरजोहैं ओर वज्रके समानदृढजिह्नकी भुजाहे
ओर जिह्नकी अंगुलिविषे चक्राकाररेखाहे ओर कृशशरीरहै
नाडीजालके विस्तारवाले हैं १४ ॥
प्रविशंतिचवेगेन संपराये≀पस्थिते
वारणाइवसंमत्ता स्तेभवंतिदुरासदाः १५
ओर रणग्रामीमोरणमंडलमो वेगकर्के प्रवेशकरतेहै ओर
हस्तीके समान उन्मत्तसदावनेहै ऐसे सूरमारणविषे महा
उग्रहोतेहै १५ ॥
दीप्तस्फटिककेशांता स्थूलपार्श्वहनूमुखाः
उन्नतांसाःपृथुग्रीवा विकटाःस्थूलपिंडिकाः १६
ओर जिह्नकेकेशोके अग्रभाग स्फटिकसमानचमकवालेहै
ओर जिह्नकेपासे ओर वडीमुखस्थलहै ओर जिह्नकेस्कंधोके
स्थानउन्नतहै ओर ग्रीवास्थानविशालहै ओर विकटशरीरके
अंगहै स्थूलजिह्नकी पिंडीहे जानुस्थानसे अधोभागस्थूल
जिह्नकाहे १६ ॥

उड्डनाइवसुग्रीवा विनताविहगाइव
पिंडशीर्षालिवक्त्राश्च वृषदंशमुखास्तथा १७
जौनसे सूरमालोकरणविषे अप्सराविषेजैसे देवता उड्डनहो
करजायपडतेहे और विनताकेपुत्र गरुडजैसेवेगकर्के शत्रु
रूपी सर्पोविषेजापडतेहे और पिंडाकार जैसेगोलकार शिरो
वालेहे और विशालमुखवालेहे और अनेकवीरोकोमालापं
क्तिको अपनेसन्मुखकरलेतेहे और जैसेवृषदंशजोमार्जार
भूषागणकेसन्मुखमुखकी आकृतिकरलेताहे तैसेसूरमा
जनोविषे मुखकोदिषावतेहैं १७ ॥
उग्रस्वरामन्युमंतो युद्धेषारावमारिणः
अधर्मज्ञानलिप्ताश्च घोरारौद्रप्रदर्शिनाः १ ८
हे राजन् जौनसे जोधालोक अतिभयानक उग्रस्वरवालेहे
और रणविषे अतिक्रोधवालेहैं और युद्धविषे सभकोभयका
रीशब्दकरणेहारेहे और युद्धधर्मविना अन्यधर्मको नही
जानतेहे और ऐसेघोरहतिहे सभकोजिन्हका अतिरौद्रदर्शी
नप्रतीतहोताहे १८ ॥
त्यक्तात्मानःसर्वएते अंत्यजानातिवर्तिनः
पुरस्कायास्सदामैत्रे हन्यंतेघ्नंतिचापिये १९
हे राजन् इस प्रकारके यह सभही सूरमालोक उत्तमकुलके
अभिमानीहोवे तो कदापि रणसेफिरनही आवतेहे यह अप
नी सेनाके आगेही कर्तव्यहे जौनसेयहरणमेमरतेहैं और
शत्रुसेनाको आपभीमारतेहैं १९ ॥
अधार्मिकाभिन्नवृत्ता सांत्वेनैषांपराभवः
एवमेवप्रकुप्यंति राज्ञोप्येतेह्यभीक्ष्णशः २०
इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणि॰राजध
र्मेविजिगीषमाणवृत्ते १०१ युधिष्ठिरउवाच
जौनसे अंत्यजनीचजातिहे सोसदा अधर्मीहोतेहे जिन्हका
चारवर्णोसे भिन्नआचारवृत्तहे और सांत्ववचनविषे जिन्हको
आदर अनादर नहीहे इसी प्रकारस्वभावसेही कोपकोकर
तेहे और राजालोकोकी अत्यंतप्रेमसेसेवाधर्मका पालनक
रतेहे २० इतिश्रीम॰ भा॰ शां॰ प॰ राजधर्मएकाधिकशततमो
ध्यायः १०१ युधिष्ठिरउवाच ॥

जयिष्याः कानिरूपाणि भवंतिभरतर्षभ
पृतनायाः प्रशस्तानि तानिवेछामिवेदितं १

हे भरतर्षभ पितामहजी जयकरणेहारी सेनाके क्यास्वरूप लक्षणहोतेहे जो नसेसेनाके शुभलक्षण शकुनहोतेहै तिन्हकोंमें जानाचाहताहूं आपमोकोस्फुटकहदेवो १ ॥

भीष्मउवाच जयिष्यायानिरूपाणि भवंतिभरतर्षभ पृतनायाः प्रशस्तानि तानिवक्ष्यामिसर्वे

भीष्मउवाच हे भरतर्षभ युधिष्ठिर जयकारिणीसे शः २
नाकेजोशुभकारीलक्षणस्वरूपहे तिन्हकोंमेआपको कहताहूं आपसावधानतासेंसुनो २ ॥

दैवेपूर्वंप्रकुपिते मानुषेकालचोदिते
तद्विद्वांसोनुपश्यंति ज्ञानदिव्येनचक्षुषा ३

पूर्वजब दैवकुपित होताहे मानुषलोककालगती सेप्रेरित होतेहे सो मानुष अशुभ शुभकर्मोको करतेहे उन्हके अशुभ शुभ फलपरिपाककों पंडितलोक जोहे सो शास्त्रज्ञान रूपी दिव्यदृष्टिकर्के जानतेहे ३ ॥

प्रायश्चित्तविधिंचात्र जपहोमाश्चतद्विदः
मंगलानिचकुर्वंति शमयंत्यहितानिच ४

जौनसे अशुभकर्मोके अशुभफलपरिपाकहे उसकीप्राय श्चित्तविधीकोशास्त्रविचारसे करतेहे जपहोमादिविधीकों जानतेहे शांतिकविधिकोमंगलकार्यकोकरतेहें सो अशुभ परिपाकोंकीशमनकरतेहे ४ ॥

उदीर्णमनसोयोधा वाहनानिचभारत
यस्यांभवन्तिसेनायां ध्रुवंतस्यांपरोजयः ५

हे राजन् जिससेनाकेमन उत्साहसंपन्नहे और अश्वादिवाहनभी उदारचेष्टावालेहे विजय उससेनाकों अवश्यहीहोताहे ५

अन्वेतान्वायवोयांति तथैवेंद्रधनूंषिच
अनुप्लवन्तेमेघाश्च तथादित्यस्यरश्मयः ६

गोमायवश्चानुकूला बलगृध्राश्चसर्वशः
अर्हयेयुर्यदासेनां तदासिद्धिरनुत्तमा ७

जिससेनाकेपीछेसेपवनचलतेहै और इंद्रधनुषदर्शन
भीहोतेहै मेघगर्जनाभी जिससेनाके पीछेहोतेहै और सू
र्यकी किरणाभी निर्मलदृष्टहोतीहै और शृगालादि मृग
भी अनुकूलगतीफलकारी होतेहै यह सभही जिससेना
के अनुकूलहोतेहै तब उससेनाको निश्चयकरकें जयसिद्धि
होतीहै ७ ॥

प्रसन्नभाःपावकश्चोर्द्धरश्मिः प्रदक्षिणा
वर्तशिखोविधूमः पुण्यगंधश्चाहुतीनां
भवति जयस्यैतद्भाविनोरूपमाहुः ८

और होमकाअग्निप्रसन्नआभावानहोवे और ऊर्ध्वरश्मिवान
होवे और प्रदक्षिणावर्तशिखावानहोवे और धूमघटारहि
तहोवे और आहुतीकी गंधहो मकालविषे शुभपुण्यका
रीहोवे जिसकाभाविकालजयकोस्वरूपलक्षणोकों कह
तेहै ८ ॥

गंभीरशब्दाश्चमहास्वनाश्च शंखाश्चभेर्य
श्चनदंतियत्र पुष्टालवश्चाप्रतिमाभवंति
जयस्यैतद्भाविनोरूपमाहुः ९ ॥

जिससेनाके शंखभेरी आदिकबाजेबजंनेरगंभीरशब्दहैं औ
र महाघोषशब्दवालेहोतेहै और योधालोकभी असत्यउर्ति
रीसदर्शनवालेहोतेहै यहभीभावीकालजयकेस्वरूपकों
कहतेहैं ९ ॥

इष्टामृगाःपृष्ठतोवामतश्च संप्रस्थितानां
चगमिष्यतांच जिगीषतांदक्षिणाःसि
द्धिमाहुः यैत्वग्रतस्तेप्रतिषेधयंति १०

इष्टसिद्धिवालेमृग पृष्ठविषेहोये अथवा वामभागविषे
होवे प्रस्थानकालविषे अथवा यात्राकालविषेहोये और
मारणेहारेमृग दक्षिणभागविषेहोवेतो भीजयसिद्धीको
कहतेहै जोकदाचित्मांसाहारी मृगआगेसेमिलेतो या
त्रानिषेधकोंकहतेहैं १० ॥

मांगल्यशब्दाननुलोमावदंति हंसाःक्रौं

चाःशतपत्राश्चचाषाः स्वनाःयोधाःसत्ववं
तोभवंति जयस्यैतज्ज्ञाविनोरूपमाहुः ११
और शकुन सभही मंगलशब्दवालेहोवे हंसपक्षीक्रौंचपक्षी
शतपत्रपक्षी चाषपक्षी यहसभही जिसको मंगलसूचक
शब्दोंको सुनावे और जोधालोकप्रसन्नमनहोवे बलबुद्धिकी
चेष्टावालेहोवे यहभी भावीकालके जयकास्वरूपकहते
शस्त्रैर्यैःकवचैःकेतुभिश्च सुभानु हे ११
भिर्मुखवर्णैश्चयूनो भ्राजिष्णवीदुःप्रतिवी
क्षणीया येषांचमूस्तेभिभवंतिशत्रून् १२
जिन्हकेशस्त्रोकीप्रभा और कवचोकी और ध्वजापताकोकी प्र
भा अपनी चमककरकें स्वरकर्के और वर्णस्वरूपोके आका
रोकर्के अतिअधिकतेजवालीहे और युवानवीरलोकोकी
भी प्रभाभी अतितीव्रतेजवालीहोये एसीजिन्हवीरोकी से
ना होवे सो वीरलोकशत्रुवीरोको जयकरतेहे १२ ॥
शुश्रूषवश्चानभिमानिनश्च परस्परंसौहृ
दमास्थिताश्च येषांयोधाःशौचमनुष्ठिता
श्च जयस्यैतज्ज्ञाविनोरूपमाहुः १३ ॥
और जिन्हकेयोधालोकसर्वप्रकारकी रणयज्ञकी शुश्रूषा
को प्राप्तकरतेहे और अन्योन्यविषे निरभिमानहे परस्पर
प्रीतिसे सुहृदवनेहे और अपने धर्म कर्म की शुद्धिवाले
हें यहभी भाविकाल जयके लक्षणोकोकहतेहैं १३ ॥
शब्दाःस्पर्शास्तथागंधा विचरंतिमनःप्रियाः
धैर्यंचाविशतेयोधान् विजयस्यमुखंचतत् १४
जिससेनाकेशब्दस्पर्शगंध सभको मनप्रियहोतेहे और यो
धागणोको महाधैर्य आनप्राप्तहोताहे यहभीभावीकाल
जयका मुखलक्षणहैं १४ ॥
इष्टोवामःप्रविष्टस्य दक्षिणःप्रविविक्षतः
पश्चात्संसाधयत्यर्थं पुरस्ताच्चनिषेधति १५
हे राजन् काकजोहे सो प्रवेश करणेकोंवामभागमेंश्रेष्ठ

हे और यात्राकरणेवालेको दक्षिणभागमो श्रेष्ठहे और पृ
ष्ठभागविषे सर्वसिद्धीकोंकर आगेसे ग्लानप्राप्तहोवे तो
सर्वकार्योंकानिषेधकारीहे १५ ॥

संभृत्यमहतींसेनां चतुरंगांयुधिष्ठिर
साम्नैवववर्तयेत्पूर्वं प्रयतेथास्ततोयुधि १६

हे युधिष्ठिर विजयवांछाकारी राजा प्रथम महतीसेना
का संग्रहकरहोवे और सामोपाय कर्के ही जयसिद्धीकों
करे जोसामउपाय प्रथम जयको सिद्धनहीकरे तव यु
द्धकरणेका विचारकरे १६ ॥

जघन्यएषविजयो यद्युद्धंनामभारत
यादृच्छिकोयुधिजयो दैवोवेतिविचारणे १२

हे भारत जो नसायुद्धकरणेका जयप्रकारहे सो खोटाहे
प्रतिउग्रहे युद्धमोजयजोहेसो अपनी अविनीतिके बलका
हे इसकेविचार निश्चयको दैवही जानतेहैं मनुष्यनही
जानता जोश्रवजयकारही वनेगा १७ ॥

अपामिवमहावेगः त्रस्ताइवमहामृगाः
दुर्निवार्यतमाश्चैव प्रभग्नामहतीचमूः १८

प्रथम तम युद्धकरणेविषे यही विचमाजानोजैसेतीमे स्था
नको जानेहारेजलोंका महावेग होताहे सोकिसीसेभी स्थि
तनहीहोता और भयभीत मृगभीकदापिस्थितहोते तैसेर
णसेभगनभई महासेनाभी कदापिस्थितनहीहोती १८

भग्नाइत्येवभज्यंते विद्वांसोपिनकारणं
उदारसारामहती रुरुसंघोपमाचमूः १९

जवसेनाके पुरुषोकोऐसा शब्दमात्रश्रवणहोवे जोहमा
रेलोग भागेहें उसीकालमोसभभाजजातेहे उहांचतुर
लोकोकीवुद्धिमत्ताभी कछुकारणनही वनती सोसेना
उदारधैर्य पराक्रमादि संपन्नभीहे अतिभारीभीहे तोभी
हरिणीके समानजैसी भागजातीहे १९ ॥

परस्परज्ञाःसंहृष्टा त्यक्तप्राणाःसुनिश्चिताः
अपिपंचाशतेशूरा मर्दंतिपरवाहिनीं २०

अथवा ऐसे योधाजन पांचहोवे छेवीहोवे सातहोवे परस्पर
संमतिवान् होवे मरणमारणविषे कृतनिश्चयहोवे कुलीन
होवे मानसत्कारसे सत्कृतहोवे सो शत्रुजनोकोजय करतेहे २१
हे राजन् जोनसे जो योधालोक परस्परविषे रणकर्मके अभिप्रा
यजानकर एकसंमती संपन्नभयेहे ओर अपनी वीरताद्दर्शन
विषे हर्षसंपन्नहे प्राणत्यागकरणेमो दृढनिश्चयवानहे ऐ
से योधाजन पवास भी होवे तोपराईसेनाको मर्दनकरतेहे २'

अपिवापंचषट्सप्त संहता: कृतनिश्चया:
कुलीना: पूजिता:सम्य ग्विजयंतीह शात्रवान् २१

अथवा ऐसे योधाजन पांचहोवे छेवीहोवे सातहोवे परस्प
रसंमतिवानहोवे मरणमारणविषे कृतनिश्चयहोवे कुली
नहोवे मानसत्कारसे सत्कृतहोवे सो शत्रुजनोकोजयकरतेहे २१

सन्निपातोनमंतव्य: शक्येसतिकथंचन
सांत्वभेदप्रदानानां युद्धमुत्तरमुच्यते २२ ॥

हे राजन् जबलग अपना नीती बलबुद्धिबलसामादि उपा
यविषेशक्यहोवे तबलग युद्धकरणेका सन्निपातकदापि
नही सामभेदप्रधान जो राजालोकहे तिन्होको अवश्यकर्तव्य
ताविषे युद्धकरके विजयकरणा अत्यंतअंतकालकी उत्तरक्रि
यावनतीहे २२ ॥

संदर्शनेनैवसेनाया भयंतीव्रप्रवायते
वज्रादिवप्रज्वलिता दिपंकद्रुपतिष्यति २३

हे महा राज सेनाके दर्शन करणे करकेही भी रुलोकोणो म
हाती अभय वाधाकरताहे जैसे वज्रपातसे भयहोताहे तैसे
शत्रुसेना कोभी तिनकोदेखकर कोनसन्मुखजापडताहे २३

अभिप्रयातोसमितिं त्वान्वायेप्रतियोन्यथ
तेषांस्यंदंतिगात्राणि योधानोविजयस्य च २४

अव ओर विजयकेचिन्हहनो जोनसे योधाजनरणभूमिका
जबप्राप्तभई तबहीवेगसेजाइ प्राप्तहोतेहे ओर अंगभी उन्ह
के प्रस्वेदयुक्त चंचल होतेहे यह भी विजयकाएकाचिन्हहे २४

विषयोवाय्यनेराजन् सर्वा:सस्थाणजंगमा:
अस्वप्रतापनमानां मज्जासीदंतिदेहिनां २५

हे राजन् युद्धके विक्षेपकर्के स्थावरजंगम जीवजाति से युक्त संपूर्ण देशव्यथाको प्राप्तहोताहै और संग्रामदेही अस्त्रप्रताप कर्के संतप्तहोतेहे उनके देहकी मज्जा अंत र्गत गलजातीहे २५ ॥

तेषांसांत्वंक्रूरमित्रं प्रणीतंचपुनःपुनः
संपीड्यमानाहिपरै र्योगमायांतिसर्वतः २६

जौनसे शत्रुदेशके लोकहे उनकी सांत्वना क्रूरकर्मसे मित्रनही वारं वार विचारसे करनीजो शत्रुजसको शत्रु होवे उसके द्वारापीडाकरा इसलेती आपसांत्वना करणीजो शत्रुलोक शत्रूनकर्के पीडितहोवेतो अपनेसाथ संधि योगको करते हैं २६ ॥

अंतरानांचभेदार्थं चारानभ्यवचारयेत
यश्चतस्मात्परोराजा तेनसंधिःप्रशस्यते २७

शत्रुजनोंकेसाथ जिनकाभेदहे उनकेभेदवास्तेचाररहल कारे अपने पठानेयोग्यहैं जौनसाशत्रुराजासेपरराजाहे उसके अपनी संधिकर्तव्यहे २७ ॥

नहितस्मान्यथापीडा शक्याकर्तुंतथाविधा
यथासार्द्धममित्रेण सर्वतःप्रतिबाधते २८

अन्यथा शत्रुराजाकोपीडानहीहोती जैसीपीडा शत्रुरा जाके अमित्र कर्के शत्रु राजाकोपीडाहोतीहे ताते उसके द्वाराही पीडाकर्तव्यहोतीहे २८ ॥

क्षमावैसाधुमायाति नह्यसाधुंक्षमासदा
क्षमायाश्चाक्षमायाश्च पार्थविद्धिप्रयोजनं २ ९

क्षमाजोहे सोसाधुकेप्रतियोग्यहोतीहे असाधुकेप्रतिक्ष मायोग्यनहीहोती हे पार्थ क्षमाकी औरक्षमाके प्रयोज नकोतुमसुनो २९ ॥

विजित्यक्षममाणस्य यशोराज्ञोविवर्द्धते
महापराधेष्वप्यस्मि न्विश्वसंत्यपिशात्रवः ३०

शत्रु को जय कर्के क्षमाकरणेसेराजाकी यशोवृद्धि हो तीहे महा अपराधकियाहोवे तोभीक्षमावालेविषे श त्रु जनविश्वासकोप्राप्तहोतेहे ३० ॥

मम्मतेकर्षयित्वातु क्षमासाधीतिशांबरः
असंतप्तेनयदारु अत्येतिप्रकृतिंपुनः ३१
हे राजन् शत्रुकों बलकर्के क्षीण कर्के क्षमाकरणेको शांब
राम्हर मानताहै संतापविनाकाष्ठभीटेढाही रहताहै पीडा
कियेविना क्षमाकरणेको आचार्य लोकनही मानते सभ
ही लोक अक्रोध कर्के अविनाश कर्के पुत्र समान अपने
वश्यकर्नेयुहे ३१ ॥

नैतत्प्रशंसंत्याचार्याः नतत्साधुनिदर्शने
अक्रोधेनाविनाशेन नियंतव्याःस्वपुत्रवत् ३२
हे युधिष्ठिर उग्रराजा जोहोवे सो सर्वभूतोको द्वेष्यहोताहै
और मृदुराजाकों मानतेनहीहे सभही अवमान करतेहै
ताते दोनोंका अयोग शुभदे शकाल योगसेहोताहे ३२

द्वेष्योभवतिभूतानां उग्रोराजायुधिष्ठिर
मृदुमप्यवमन्यंते नस्मादुभयमाचरेत् ३३
प्रहरिष्यन्प्रियंब्रूयात् प्रहृत्यापिभारत
प्रहृत्यचकृपायीत शोचन्निवरुदन्निव ३४
प्रहारकरणेकी वांछा सोभी प्रियवचन कहे प्रहारकरणेमों
भी प्रियवचनकहे वलकर्केभी पश्चात् विजयके अनंतर
शोचनाकरना जैसारोदनकरना जैसाकृपाकरे ३४ ॥

नमेप्रियंयन्निहताः संग्रामेमामकैर्नरैः
नचकुर्वंतिमेवाक्यं मुच्यमानाःपुनःपुनः ३५
इसप्रकार अपने मनकल्पना सभकों श्रवण करावे यह
जो मेरे पुरुषोने संग्रामविषे सूरमालोक मारेहे ऐसावि
जयमोको प्रियनहीहै वारं वार मेने इन्हाको कहा ३५ ॥

अहोजीवितमाकांक्षे नेदृशोवधमर्हति
सुदुर्लभाःसुपुरुषाः संग्रामेष्वपलायिनः ३६
जो संग्रामविषे पलायननही करे ऐसे सूरमा लोकदुर्ल
भहोतेहै अहोमहाखेदहै ऐसे सूरमालोकवधजोग्यनही
होतेमे ऐसे पुरुषोंकासदाजीवनाचाहताहूं ३६ ॥

कृतंममाप्रियंतेन येनायंनिहतोमृधे
इतिवाचावदन्हंतॄन् पूजयेतरहोगतः ३७

जिसमूढनेथाने ऐसावीरयोधारणमोमाराहे उसने मेरावहोत
अप्रियकियाहे इसप्रकारसे मारणोहारेवीरोको सभाविषे सभ
कोसुनाइकरकहे और एकांतमो अपने पुत्र अमात्यादिद्वारसे
सन्मान करके सत्कारकरावे ३७ ॥

हेरणामाहतानांच यत्कुर्युरपराधिनः
क्रोशेद्बाहुप्रगृह्यापि चिकीर्षन्जनसंग्रहं ३८

और रणविषे अपने योधामारेजावें उनकेरणविषे मारणोके
अपराधोकोंजो आनकर श्रवणकरावे तो अपने बंधुजनोकी
न्याईतिन्हकी शोचनाकरे बाहुउठायकरशोचनाकरे इसप्रकार
लोक संग्रहकरे ३८ ॥

एवंसर्वास्ववस्थासु सांत्वपूर्वंसमाचरेत्
प्रियोभवतिभूतानां धर्मज्ञोवीतभीर्नृपः ३९

हे राजन् इसप्रकार संपूर्ण अवस्थामोंसांत्वनापूर्व सभसे
लोकसंग्रहकरेतबराजा सभकाप्रिय होताहे जो यहराजाम
हाधर्मज्ञहे और अतिनिर्भयहे ३९ ॥

विश्वासंचात्रगच्छंति सर्वभूतानिभारत
विश्वस्तःशक्यतेभोक्तुं यथाकाममुपस्थितः ४०

तब सभही भूत इसविषे विश्वासको करतेहे विश्वासवाला
राजासमग्रपृथिवी को यथाकामना पूर्वं सर्वकालमो भोगने
कों योग्यहोताहे ४० ॥

तस्माद्विश्वासयेद्राजा सर्वभूतान्यमायया
सर्वतःपरिरक्षेच्च योमहींभोक्तुमिच्छति ४१
इतिश्रीम॰शां॰रा॰राजधर्मेसेनोत्पत्तिः ८२

ताते हे राजन् राजासर्वभूतोको अकपटता करके विश्वासकरा
वे सभकेरक्षाकरेजो समग्रपृथिवीकोभोगनेचाहे सो सभको
सांत्वपूर्वतासे विश्वासकरे ४१ इतिश्रीम॰भा॰शां॰राजधर्मे॰शा
ताधिकद्वितीयोध्यायः ८२ ॥

युधिष्ठिरउवाच कथंमृदौकथंतीक्ष्णो महापक्षेच
पार्थिव आरोवर्तेतनृपति स्तन्मेब्रूहिपितामह १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी कोमलतावालेदयापूर्वकमृदु आ
चारके उपायमो और युद्धप्रधानतीक्ष्णमार्गविषे और उभयप्रथा

नपरस्परविरुद्धकार्यमों जो राज धर्मकामहायत्नसे उसविषेरा
जा आदविषेकैसे प्रवृत्तहोवे यहमोकोआपकहो १ ॥

भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासंपुरात
नं बृहस्पतेश्चसंवाद मिंद्रस्यचयुधिष्ठिर २ ॥

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर इस अर्थविषे भी पुरातनइतिहासको
उदाहरणकहतेहे बृहस्पतिका ओर इंद्रकासंवादभया उसको
कहतेहें २ ॥

बृहस्पतिंदेवपति रभिवाद्यकृतांजलिः
उपसंगम्यपप्रच्छ वासवःपरवीरहा ३ ॥

हे राजन् परवीरोको मारणेहाराइंद्रजोहे सो अंजलि करके
बृहस्पतिकोप्रणाम करके समीपस्थानमों प्राप्तहो करप्रश्नक
रताभया ३ ॥

इंद्रउवाच अहितेषुकथंब्रह्मन् प्रवर्तेयमतंद्रि
तः असमुच्छिद्यचैवैना न्नियच्छेयमुपायतः ४

इंद्रउवाच हे प्रभुजी अपने शत्रुजनों विषे मेंसावधानतासेकै
सेप्रवृत्तीकरो शत्रुकोंविनासकियेविनाकैसे अपने कल्याण
को प्राप्तहोवों यहमोको आपकहो ४ ॥

सेनयोर्व्यतिषंगेण जयःसाधारणोभवेत्
किंकुर्वाणंनमांजह्या ज्ज्वलिताश्रीःप्रतापिनी ५

जो मेंयुद्धकाआरंभ अपने जयवास्ते करोंतो उभयसेना यु
द्धकरणे कोरणभूमिविषेपरस्पर जुडतीहे तो विजय दोनो
का साधारणहोताहे प्रथमजयप्राप्तिकानिश्चय किसीकोन
ही होताहे सोतोदैवगती करके किसीएकपक्षकाहोताहे ता
ते मोको यहअखंडसंपदाकैसेकर्म की प्रवृत्तिमोनही त्या
गेगी उसकर्मको आपनिश्चयकर कहो ५ ॥

ततोधर्मार्थकामानां कुशलःप्रतिभानवान्
राजधर्मविधानज्ञः प्रत्युवाचपुरंदरं ६ ॥

हे राजन् इंद्रनेप्रश्नकिया तों बृहस्पतिजीजोहे सो संपूर्ण
उपायज्ञानमोंचतुरबुद्धिहे नीतिविधानकावेत्ताहे सोइंद्रको
उत्तरवचनको कहताभया ६ ॥

बृहस्पतिरुवाच नजातुकलहेनेच्छे न्नियंतुमप

कारिणः बालैरासेव्यतेह्येन यदमर्षीयदक्षमा ७
बृहस्पतिरुवाच हेदेवराज शत्रुकेजयकरणेको कलह क
कै वांछानहीकरे जौनसाक्रोधकरणाहै क्षमानही करणी
ऐसाजोमूढप्रधान कलहमार्गहै सो मूढबुद्धिप्रधान का
लचेष्टाजैसाहै ७ ॥

नशत्रुर्विहनःकार्यो वधमस्याभिकांक्षता
क्रोधंभयंचहर्षंच नियम्यस्वयमात्मनि ८

जो पुरुषशत्रुकेवधकोंचाहताहै उसने शत्रुको प्रति शत्रुभा
वको प्रगटनहीकरने क्रोधको भयको हर्षको अपनेविषे
संयमकर्तव्यहै ८ ॥

अमित्रमुपसेवेत विश्वस्तवदविश्वसन्
प्रियमेववदेन्नित्यं नाप्रियंकिंचिदाचरेत् ९

सोराजा अमित्रजो शत्रु उसको सेवनकरे विश्वस्त जैसे अवि
श्वासकोंकरे नित्यप्रतिप्रियवचनकोहीकहै अप्रिय उस
को कछुभी नहीदिखावे ९ ॥

विरमेच्छुष्कवैरेभ्यः कंठायासांश्चवर्जयेत्
यथावैतंसिकोयुक्तो द्विजानांसदृशस्वनः १०

शुष्क वैरके कार्योसे उपरतहोवे दुखकारी कंठक उपायों
को वर्जदेवे जैसेपंछीवांधनेहाराफंदकी पंछीयोकी भाषा
को वोलताहै तैसेप्रियवचनोकोकहै १० ॥

तान्द्विजान्कुरुतेवश्यां स्तथायुक्तोमहीपतिः
वशंचोपनयेच्छत्रू न्निहन्याच्चपुरंदर ११ ॥

हे वासवजी नित्यप्रतिशत्रु जनको अनादरकरकै सुखकी
निद्राको राजाकदापिनही पावताहै जैसेकाष्टोविषे अग्नि
काचमत्कार सदाजाग्रतहोताहै तैसेदुष्टात्मा पुरुष भी
सदादुष्टताकरणेको जाग्रतहोताहै ११ ॥

ननित्यंपरिभूयारीन् सुखंस्वपितिवासव
जागर्तीवहिदुष्टात्मा संकरेग्निरिवोत्थितः १२

विजयतोनिश्चयाविना एकजैसासाधारणहै तातेआपही
शत्रुकेप्रतिचढाईकर्के नहीजापडना विरोधकार्यकी समी

श्री· रा·य· टी· ११८

116

पत्नाविषेविश्वास करकें वशकरेप्रियहोकर अप्रियताकोकरे १२

नसन्निपातः कर्तव्यः सामान्येविजयेसति
विश्वासैवोपसन्नार्थो वशीकृत्वाप्रियःप्रभो १३

मंत्रवेत्ता जो महात्मामहामंत्री तिन्हकेकर्तव्यताकोनिश्चयकर लेवे शत्रूके अनादर अपराधको उपेक्षाकरे ह्रदयविषे अपका रनिश्चयका त्यागनहीकरे १३ ॥

संप्रधार्यमहामात्यै र्मंत्रविद्भिर्महात्मभिः
उपेक्षमाणोवज्ञातो ह्रदयेनापराजितः १४

ऐसाकरके जबप्रहारकाल अवश्य प्राप्त होवे तबप्रहारकरे जिस करकें शत्रूका पदचलजावेतो अपने विश्वासकारी ज नोंकरकें उसकी सेनाकी क्षीणतारूपी दंडको हषणकरे वि नाशयोगकोकरे १४ ॥

अथास्यप्रहरेत्काले किंचिद्विचलितेपदे
दंडंचदूषयेदस्य पुरुषैराप्तकारिभिः १५

दीर्घदर्शीविचारसे आदअंतमध्यकालकेविचारकावेत्ताहोवे गुप्तमंत्र करकें जयकेविचारको निश्चयकरे अपने पराये बल के प्रमाणज्ञानसे शत्रुसेनाके बलहानिके प्रकारोंकोदूषणकरे १५

आदिमध्यावसानज्ञः प्रछन्नंचविचारयेत्
बलानिदूषयेदस्य जानन्नेवप्रमाणतः १६

भेदरूपी उपायको छलमाया प्रधानहीकरे विषप्रधान औषधी प्रकारोंसे दोषकृत्यवाले प्रयत्नोंकोंकरे जोनसे खोटे कपटका री विश्वासी जनहै तिन्हकेसाथ शत्रुसंबंधकी रुचि नकरे १६

भेदेनोपप्रदानेन संसृजेदोषधैस्तथा
नत्वेवाखलसंसर्गं रोचयेदरिभिस्सह १७

हेवासवजी इंद्र दीर्घकालभी शत्रुविजयके उपायको विचा रकरकें शत्रुजनोंअवश्यही मारेकालसमयकी आकांक्षा आ शाकरे जैसे शत्रुलोकविश्वासको प्राप्तहोवे उपायचिंताको नही त्यागे १७ ॥

दीर्घकालमपीक्षेत निहन्यादेवशात्रवान्
कालाकांक्षीहिक्षिपये यथाविस्रंभमाप्नुयुः १८

और शत्रुसमूहसे एकही पुरुषको नही मारे यह ऐसे विचा

रकरे जो एकके मारणेसे दृढनिश्चयवाला विजयप्रगटकनही
हे एककेवधकर्के विरोधशांतनहीहोता केवलवचनमात्रसे
व्रणदोषजो छिद्रदोष सोशांतनहीहोता १८ ॥

नसंधात्विनिहन्याश्च दृष्टबोविजयोभवः
नशांतंवाचटयति नवावाऊकृतेव्रणं १९

जोप्राप्तकालमो प्रहारकरे तो वहोउदोषप्राप्ती वर्त्तमाननही
होती हेदेवेंद्र जो पुरुष शत्रुजन प्रतिवधकामना करताहे
उसकोसमय प्राप्तीमोही प्रहार कर्त्तव्यता वनतीहे इसप्रकार
एसे देशकालविचार अपने उपायका कर्त्तव्यहे १९ ॥

प्राप्तेचप्रहरेत्काले नचसंवर्त्ततेपुनः
हंतुकामस्यदेवेंद्र पुरुषस्यरिपुन्प्रति २०

जब अपना बलपौरुषउपायका कालग्रासहोवे तसको जो
प्रतिक्रमकरे तब उस पुरुषको अपना अनुकूलऐसोदेश
कालका समागम अपनी इछासेकरणा दुर्लभहे २० ॥

योहिकालोव्यतिक्रामे त्पुरुषकालकांक्षिणं
दुर्लभःसपुनस्तेन कालःकर्मचिकीर्षुणा २१

अपना जो सामर्थ्यबलदृढहोवेतोविजयको अवश्यकरताहे
इसवास्ते देशकालविचारवाले साधुसंगमके संग्रहको वांछा
करताहे ताते जब देशकालनहीवने तवशत्रुकोभी मित्रसं
ग्रहकरे देशकाल बलसामर्थ्य प्राप्तिविना शत्रुपीडाको नही
करे २१ ॥

ओजश्चविजयेदेव संग्रहणंसाधुसंमतं
अकालेसाधयेन्मित्रं नचप्राप्तेप्रपीडवत् २२

ताते कामक्रोधको अहंकारको त्यागकर्के युक्तिकर्के शत्रुज
नोके छिद्रदर्शनको वारंवारविचारणकरे २२ ॥

विहायकामंक्रोधंच तथाहंकारमेवच
युक्तोविवरमन्विछे दहितानांपुनःपुनः २ ६

हेशक्र हेइंद्र मार्दवजोहे सौम्यता ओर केवलदंड ओर आल
स्य ओर प्रमाद असावधानता यहचारो जहां होवे तहांमाया
विधिसे कीनीहोवे तोमंत्रहीन राजाको पीडाकरतेहे २३

मार्दवंदंडआलस्यं प्रमादश्चसगोजम

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
११७

117

मायासविहिताशक्त साद्यम्पविचक्षणः २४
राजा ब्रह्मचारीकोत्यागकरे मायाकोभीत्यागकरे मंत्रकर्के अपने
बलकरणेकेकालकोंपाइकर शत्रुगणको प्रहारकरणेकाविचा
रनहीकरे उसकालविषे अवश्यप्रहारकरे २४ ॥
निहस्यैतानिचत्वारि मायांप्रतिविहायच
ततःशक्नोतिशत्रूणां प्रहर्तुमविचारयन् २५
हेदेवराजजो नृप गुह्यमंत्रका कार्यएक कर्के हीवनजावे तो
बहोत मंत्रीजनोको प्रकाशनही करणा मंत्रीलोक प्रथम मंत्र
केमर्मकों ग्रहणकरनेहै पश्चात् अन्योन्यकहकर्के करणेकी
इच्छाकोंनहीकरने २५ ॥
यदेवैकेनशक्येत गुह्यंकर्तुंनतच्चरेत् य
त्नेनसविवारोहं मिथोविश्रावयन्नपि २६
जोजानलेवेयहमंत्रीकार्यको नहीकरेगे तब उनको मंत्रभेद
नहीकहै अवरविश्वासापन्नमंत्रीजनोकेसाथ मंत्रसंमतिकोंकरे २६
ब्रह्मस्वामिनिकृत्वावा ततोन्यैःसविदंचरेत्
बलदंडसदृष्टेषु दृष्टेषुचतुरंगिणी २७ ॥
जो अदृष्टरूप विघ्नदोषहोइतो बलदंडप्रयोगपुरोहितादि वि
प्रहारसे अभिचारादिमंत्रतंत्रविधिका शांतिप्रयोगकरे दृष्टदो
षहोवेतो चतुरंगिणीसेनाप्रयोगके प्रयत्नसेनिहतकरे २७ ॥
भेदंचप्रथमंयुञ्ज्यात् तूष्णीमाप्नुतथैवच
कालेप्रयोजयेद्राजा तस्मिंस्तस्मिंस्तदातदा २८
प्रथमतोभेदबुद्धिके उपायकोकरे तूष्णीहोइकर देशकालपाइ
कर उपायप्रयोगकरे जिसजिसदेशकालमो प्रयत्नबने उसी
उसी देशकालमों यथायोग्य उपायचिंतनसेकरे २८ ॥
प्रणिपातंचगच्छेत कालेशत्रोर्बलीयसः
युक्तोस्यवधमन्विच्छेदप्रमत्तःप्रमाद्यतः २ ९
जो शत्रुका देशकालबल अधिकहोवे प्रणाम कर्के भी शत्रुको
वशाकरे और सावधानसे उसकेवधकोचिंतनकरे आपप्रमाद
नहीकरे शत्रुकेप्रमादकोदेषकर वधकेप्रयत्नकोकरे २९ ॥
प्रणिपातेनदानेन वाचामधुरयाब्रुवन्
अमित्रमपिसेवेत नचजातुविशंकयेत् ३०

हेदेवराज शत्रूकोप्रणाम करकें दानकरकें मधुरवाणी करकें
भी सेवाकरे अपनेविषेवधादिचिंताकी कर्तव्यताकी शंकाकों
उदेनहीकरे ३० ॥

स्थानानिशंकितानांच नित्यमेवविवर्जयेत्
नचतेष्वाश्वसेद्राजा जाग्रतीहनिराकृताः ३१

जोजो प्रबलशत्रूके अविश्वासकेस्थानहे सो सो स्थान सभही
वर्जनकरे तहांतहांमैत्रीविश्वासनही करे जौनसे प्रबलराजा
ने अनादरकियेहे उन्हकी मैत्री करकें प्रबलशत्रूहे अविश्वा
सघ्नजाग्रतहोतहे ३१ ॥

नह्यतोदुष्करंकर्म किंचिदस्तिसुरोत्तम
यथाविविधवृत्तानां मैश्वर्यममराधिप ३२

हे सुरोत्तम हे अमराधिप ऐसे कर्मसे और दुसकरकर्मनहीहे
अनेकवृत्तिवालेराजालोक अस्थिरचित्तहोतेहे उन्हके चित्तकी
अस्थिरता असाध्यरोग जैसीविषम होतीहे ३२ ॥

तथाविविधनाशाना मपिसंभवउच्यते
यत्नेयोगमास्थाय मित्रामित्रेविचारयेत् ३३

तैसेही चित्तकी अस्थिरतासे विविधप्रकारकेनाशलक्षणोका
भी संभवहोताहे प्रीतियोगको दृढस्थिती करकें शत्रुवशक
रणेको यत्नकरे उसके मित्रअमित्रोको विचारकरे ३३ ॥

मृदुमप्यवमन्यंते तीक्ष्णादुद्विजतेजनः
मातीक्ष्णोमामृदुर्भूस्त्वं तीक्ष्णोभवमृदुर्भव ३४
यथावप्रेवेगवति सर्वतःसंस्तृतोदके नि
त्यंविवरणाद्बाध स्तथाराज्यंप्रमादतः ३५

परंतु अतिमृदु और अतितीव्रताको त्यागकरे अति मृदुको
सभअनादरकरतेहे तीव्रवृत्तिसे सभही उद्विग्नचित्तहोते या
हीते तीक्ष्ण नही होवो मृदुनहीहोवो देशकालविचारकेती
क्ष्णभीहोवो मृदुभीहोवो जैसेजलकाप्रवाहवेगवानहोवे
उसकासेतुबंध दृढनही होवेतो छिद्रोके प्रवेशकरकें सर्वदे
शजलमय होजाताहे तैसेनीति विचारकी उपायचिंताका प्र
मादहो जावे तोसर्वप्रकारसे शत्रुराजा जयकरलेताहे ३५

श्री॰ रा॰ य॰ टी॰ ११८

118

नवह्ननभियुंजीत यौगपद्येनशात्रवान्
साम्नादानेनभेदेन दंडेनचपुरंदर ३६ ॥
और हेवासव जो शत्रुलोक वहोत होवे तो एकवारही सभक
जयकायोगनहीकरे क्रमकर्के साम कर्के भेद कर्के दान कर्के
दंड कर्के जयके योगकोकरे ३६ ॥

एकैकमेषांनिष्पिष्य शिष्टेषुनिपुणंचरेत्
नत्वशक्तोनिमेधावी सर्वानेवारभेन्नृप ३७
एक एक को क्रमसेमर्दनकरे स्वल्पशेषरहे तो दंडकीनिपु
णताकों भीकरे यह पुरुष महाचतुरभीहे तोभी सभको एक
वारही जयका आरंभनहीकरे ३७ ॥

यदास्यान्महतीसेना हयनागरथाकुला
पदातियंत्रबहुला अनुरक्ताषडंगिनी ३८
हे वासव जोसेना हाथी घोडा रथ पेदल संपन्नहोवे तोपदा
ती जंत्र संपन्न अनुरागवाली कोशवाणिज्य युक्तभी ऐसी
अपनासेना सर्वसाधनसंपन्नहो वे शत्रुसे अपनीबहोतबल
वृद्धिजानेतो खरेखोटेकछुविचारनहीकरे प्रगटहोकर प्रहार
करे ३८ ॥

यदाबहुविधांवृद्धिं मन्येतप्रतिलोमतः
तदाविवृत्यप्रहरे दस्यूनामविचारयन् ३९
नसामदंडोपनिषत्प्रशस्यते नमार्दवंशात्रु
षुयात्रिकंसदा नसस्यघातोनचसंकरक्रि
या नचापिभूयःप्रकृतेर्विचारणा ४० ॥
अबसर्वप्रकारके अर्थसंग्रहकों कहतेहै हे वासव बलवान
शत्रुविषे सामदंडका उपाय नहीचले मृदुतानिभी नहीचले
और उसके सस्यखेती आदिक घातनहीचले और सदाकटक च
ढाईभी नहीचले और विष औषधी प्रयोगसे जलाशय दूषणा
दिप्रयोगभी नही चले तोजय अपनी कोशवृद्धिआदिक समी
ग राज्यविचारवने तवजैसेवने तैसेकपट पूर्वक उपायविं
ताही देखवनताहे ४० ॥

मायाविभेदानुपसर्जनानि तथैवपापंन
यशःप्रयोगात् आभैमेनुष्यैरुपचारयेत्

पुरेषु राष्ट्रेषु च संप्रयुञ्ज्यात् ५१ ॥
अब मायादंडके भेदोंको कहतेहै नानाप्रकारके मायाभेदो
को प्रयुक्त और भी परस्परभेदवाले शत्रुलोकोंको उत्साह
कारी यत्नोंकोकरे और तैसेही शत्रु जनोविषेपापकपटको
भी प्रयोगकरे और शत्रुकेतियेरूप उपकारयशको भी ना
शनहीकरे विश्वासकरावणेवाले उसकेगुणोकाकीर्तनक
रे वहोउ जयके उपचारकोकरे अपने विश्वासापन्नजोपु
रुषहैं तिन्हके शत्रुराजाकेदेशोविषे नगरोविषे अपने
सामदानादि उपायभेदोकोकरे ५१ ॥

पुराणि चैषामनुसृत्य भूमिपाः पुरेषु भो
गानखिलानजयंति परेषु नीतिं विहितां
यथाविधि प्रयोजयंतो बलवृत्रसूदन ५२

राजालोकजोहै सो शत्रुराजोंके पुरोविषे प्रवेश करकै पुर
वासी लोकोके भोगपदार्थोंको निपुणताकी उदारतासे अ
पने अधीनकरतेहैं अपने पुरोंविषे यथाविधिनीतिकोप्र
हणकरे ५२ ॥

प्रदाय गूढानि वसूनि राजन् प्रछिद्य भो
गानवधार्य च स्वान् दुष्टान् स्वदोषैरिति
कीर्तयित्वा पुरेषु राष्ट्रेषु च योजयंति ५३

तहांकेप्रधान पुरुषोंको भोगपदार्थोंके प्रदानकरे गूढ
उपाय करकै धनप्रदानकरे उन्हके भोगपदार्थोंको अपने
अधीनहीकरे इस प्रकार उन्हलोकोंको अपने करकै जब
जाने तब उन्हलोकोंको राजाके दोषोंका कीर्तनकरावें य
हहमारेमंत्री महादुष्टहै हमको त्यागकरकै दूसरेराजाको
प्राप्तभयेहै एसे प्रकारसे लोकोंके मुखसे कीर्तनकराइ
करकै अपने लोकोंको परायेपुरोंविषे योजनकरावतेहैं ५३

न चैव चान्यैरपि शास्त्रवेदिभिः स्वलंकृतैः
शास्त्रविधानदृष्टिभिः सुशिक्षितैर्भाष्य
कथाविशारदैः परेषु कृत्यामुपधारये
त ५४ ॥

श्री· रा· ध· टी· ११९

119

तैसेही और भी शास्त्रविधीको जाननेहारे पंडितोंको सुंदरअलंका
रो करके प्रसन्नशोभा संयुक्त करके शास्त्रविधानकी दृष्टि करके
शिक्षित करके और भी भयानककथा विशारदजनों करके कृत्या
जोहै मन्त्रकारणी देवता उसके प्रयोगसाधनाविधीकों करें ५४

इंद्रउवाच कानिलिंगानिदुष्टस्य भवंतिद्विजस
त्तम कथंदुष्टंविजानीया मेतन्मेब्रूहिमे ५ ५

इंद्रउवाच हेद्विजसत्तम शत्रुरूपदुष्टपुरुषकों कैसेजाने उस
केलक्षणकैसेहैं एसेमैने आपको प्रश्नकियाहै आपमोको
निर्णयकरके कहो ५५ ॥

बृहस्पतिरुवाच परोक्षमगुणानाह सद्गुणानभ्य
सूयते परैर्वाकीर्त्यमानेषु तूष्णीमास्तेपराङ्मुखः ५६

बृहस्पतिरुवाच जो नरा पुरुष परोक्षमें अगुणोंही कीर्तनक
रताहै और सबगुणोंकीनिंदाही करताहै जोकोई और अपने
गुणोंकोकीर्तनकरेतो तूष्णीभूतस्थितहोताहै मुखको फेरदेता

तूष्णींभावेपिविज्ञेयं नचेद्भवतिकारणं है ५ ८
निःश्वासंचोष्ठसंदंशं शिरसश्चप्रकंपनं ५७

जोतूष्णीभावहोजावे तोजानना कछु अपने अपराधकाकारण
जानयहे जोनहीभी अपराधकाकारणहोवे तोनिश्वासकावेग
भी लक्षितजानयहे और ओष्ठोंकादांतोकरकेचावना ५७ ॥

करोत्यभीक्ष्णंसंसृष्ट मसंसृष्टश्चभाषते
अदृष्टितोपिकुरुते दृष्टोनैवाभ्यभाषते ५८

और शिरकाकंपावनाभी क्रोधका विरक्तिकाकारणभी जान
यहे परोक्ष अदृष्टिमोभी जोकार्यकरणे कहाहै उसकोनही
करताहै दृष्टकार्यविषे उत्तरकों नहीकरताहै ५८ ॥

पृथग्गतिसमश्नाति नेदमद्ययथाविधि
आसनेशयनेयाने भावालक्ष्याविशेषतः ५९

जो कार्यकी आशासे समीपप्राप्तहोवेंतो तहांसे पृथग् हो
जाताहै जोभोगपदार्थको भोजनकरताहै तोकहताहै यह
यथाविधि आजनहीवना इसी प्रकार आसनविषे शय्यावि
षे यात्रा प्रयाणके कार्यविषेभी अप्रसन्नताकेभावविशेष
सें जानयहें ५९ ॥

भ्रतिरार्तेप्रियेप्रीति रेतावन्मित्रलक्षणं
विपरीतंतुबोद्धव्य मरिलक्षणमेवतत् ५०

हेवासव जो दुखप्रापतीमो दुखीहोवे प्रियकार्यविषे प्रीतीकरे
यह मित्रकेलक्षण है ओर विपरीतहोवेतो अरिलक्षण यही
जानयहे ५० ॥

एतान्येवयथोक्तानि बुद्धेनत्रिदशाधिप
पुरुषाणांप्रदुष्टानां स्वभावोबलवत्तरः ५१

हे त्रिदशाधिप एतेलक्षण यथारूप मेनेकहेहैं सो दुष्ट पुरु
षोके लक्षणहे ऐसे लक्षणोका स्वभाव बलवानहे ५१ ॥

इतिदुष्टस्यविज्ञान मुक्तंतेसुरसत्तम नि
शाम्यशास्त्रतत्वार्थं यथावदमरेश्वर ५२ ॥

हे सुरसत्तम हे अमरेश्वर इसप्रकारकादुष्ट पुरुष केलक्ष
णोकाविज्ञानकहाहे शास्त्रतत्वकेविज्ञानको विचार करके
कहाहे सो यथार्थरूपतासेतानयहे ५२ ॥

भीष्मउवाच सतद्वचःशत्रुनिबर्हणोरत स्तथा
चकारावितथंबृहस्पतेः चचारकालेविजया
यचारिहा वशंचशत्रूननयत्पुरंदरः ५३ इति
श्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मेइंद्रबृह
स्पतिसंवादः शताधिकत्रितीयोध्यायः ३

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर पुरंदरजोइंद्रहै सो शत्रुजयविषेरत
होकर इस प्रकारके बृहस्पतिके वचनको श्रवण करके यथा
विधीसे सत्यही आचारणकरताभया सोई विनाशकारी इंद्र
जोहै से विजयवास्ते उद्यमकरताभया सकलशत्रू जनोको
अपने वशमोकरताभया ५३ इतिश्रीम॰ भा॰ शां॰ पर्वणि॰ राज
धर्मे॰ इंद्रबृहस्पतिसंवादः शताधिकत्रितीयोध्यायः १०३ ॥

युधिष्ठिरउवाच धार्मिकोर्थानसंप्राप्य राजामात्यैः
प्रबाधितः च्युतःकोशाच्चदंडाच्च सुखमिच्छन्कथं
चरेत् १ भीष्मउवाच ॥

युधिष्ठिरउवाच हेपितामहजी धार्मिकजोराजाहे सो अर्थ से

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
१२॰

120

पदाको नही प्राप्तभया और अमात्यलोकोने बाधाकों प्राप्तकि
याहे राज्यसे भ्रष्टहोगयाहे और अपने कोशसंग्रहसेभी रहित
भयाहे दंडनीती करणेसे भी रहितभयाहे सो अपने सुखको
चाहे तो कैसे आचरणोसे सुखको प्राप्तहोवे आपमोको इसवि
धिकों कहो १ भीष्मउवाच ॥

अत्रायं क्षेमदर्शीय इतिहासोनुगीयते ते
तेहं संप्रवक्ष्यामि तन्निबोधयुधिष्ठिर २ ॥

हे युधिष्ठिर इसअर्थमो क्षेमदर्शीराजाके पुत्रकाइतिहास
उत्तमलोकोनेगायनकियाहे उसकोतुह्मारेप्रतिकहतेहे आ
पउसको विचारसेजानो २ ॥

क्षेमदर्शीन्नृपसुतः प्रक्षीणबलःपुरा
मुनिकालकवृक्षीय माजगामेतिनःश्रुतं
तंपप्रच्छानुसंगृह्य कृच्छ्रामापदमास्थितः ३

क्षेमदर्शीराजपुत्रराजाभयाहे सो शत्रुपीडाकर्कै क्षीणबलभ
याहे पूर्वलेकालमो कालकवृक्षी मुनिको आनप्राप्तहोताभ
या यहहमनेसुनाहे सो राजामहाकष्ट आपदामों स्थित
होकर कालकवृक्षीयमुनिकोसमीपजाइकर प्रणामकर्जाक
र्कै पृच्छाकरताभया ३ ॥

राजोवाच अर्थेषुभागीपुरुष ईहमानःपुनः
पुनः अलब्धामद्विधोराज्यं ब्रह्मन्किंकर्तुमर्हति ४

राजोवाच हेब्रह्मन् जो पुरुषहै सो अर्थप्राप्तविषेभागीहोताहे
वारंवार अर्थभोगकोही वांछाकरताहे मेरेजैसो दुःखीराजा
राज्यकोंअप्राप्तहोकर क्याकर्मकरणेकोसमर्थहोताहे ४

अन्यत्रमरणाद्दैन्या दन्यत्रपरसंश्रयात्
क्षुद्रादन्यत्रचाचारा त्तन्ममाचक्ष्वसत्तम ५

मरणप्राप्तिके उद्यमविना और परसेवाविना और भी क्षुद्रपाप
के आचारविना कछुकर्मकर्नेयहे इसको आपमेरेप्रतिकहो ५

व्याधिनाचाभिपन्नस्य मानसेनेतरेणवा
धर्मज्ञस्यकृतज्ञस्य त्वद्विधःशरणंभवेत् ६

जो कोईराजा अथवा और पुरुषहे सोमानसव्याधी कर्कै अथवा
शारीरकव्याधीकर्कै पीडितभयाहे धर्मज्ञहे और कृतज्ञभी हे उ

सको आप जैसेसर्ववेत्ता पुरुषही शरणागत तारक है ६

निर्विद्यतिनरःकामा न्निर्विद्यसुखमेधते
त्यक्ताप्रीतिंचकामंच लब्धाबुद्धिमयंसुखं ७

जो विचारवान पुरुष हे सो कामभोगसे विरक्तहोताहे सो
निर्वाणपाइकरसुखीहोताहे स्नेहप्रीतिकोत्यागकर्के औेर
पुरुषार्थ प्राप्तिकोभीत्यागकर्के बुद्धिज्ञानका तत्वविश्रांति
कोपाइकर परमसुखीहोताहे ७ ॥

सुखमर्थाश्रयंयेषां मनुष्याणामिनानहे
ममत्वर्थाःसुबहवो नष्टाःस्वप्नइवागताः ८

औेर जिन्हपुरुषोंको अर्थप्राप्तिके आश्रयमो सुखहे ऐसेदी
न पुरुषोंकोमेशोकनाऊं मेरेको अर्थपदार्थ बहुप्रकारके
प्राप्तभयेरहे सो सभही स्वप्नपदार्थोंकी प्राप्तीकेसमानसभ
ही चलेगएहे ८ ॥

दुष्करंबतकुर्वंति महतोर्थांस्त्यजंतिये
वयंत्वेतान्परित्यक्तु मसतोपिनशक्नुमः ९

सो पुरुष महादुसकरकर्मको करतेहे जोमहासंपदाके
अर्थोंको त्यागकरतेहे हमतो असत अर्थोंकोभी त्यागनही
करसकते ९ ॥

इमामवस्थांसंप्राप्तं दीनमार्तंश्रियाच्युतं
यदन्यत्सुखमस्तीह तद्ब्रह्मन्ननुशाधिमां १०

हे ब्रह्मन् मेंऐसी दीन अवस्थाको प्राप्तभयाऊं दानमानसे
वर्जितभयाऊं संपदासे रहितभयाऊं अबजोकछुअर्थविना
सुखकासाधनकर्तव्यहे उसको आपकृपासेकहो १० ॥

कौशल्येनैवमुक्तस्तु राजपुत्रेणधीमता
मुनिःकालकवृक्षीयः प्रत्युवाचमहाद्युतिः ११

हे युधिष्ठिर महामति कौशल्यराजाके पुत्रणेऐसाजबक
हा तबकालकवृक्षीयमुनीमहाबुद्धिहे सोराजाको उत्तरव
चनकोकहताभया ११ ॥

मुनिरुवाच पुरस्तादेवतेबुद्धि रियंकार्याविजा
नता अनित्यंसर्वमेवेद दहंचममचास्तियत् १२

मुनिरुवाच हे राजपुत्र यहबुद्धितेने प्रथमही विचारणीवहै यहसभही जगतका पदार्थ अनित्यहै अहंता औ्रर ममता य हभी नाशी रूपहै १२ ॥

यद्धिभूतंभविष्यच सर्वंतन्नभविष्यति
एवंविदितवेद्यस्त्व मथमैर्भ्यःप्रमोक्ष्यसे १३

जो कछुअविचारसे सत्यप्रतीतहोताहै सो सभही नाशवानहै जानोऐसे जान कर प्राज्ञपुरुष महा आपदाके कष्टकोप्राप्त होवे तोभी शोकव्यथाकोनही प्राप्तहोताहै १३ ॥

यत्किंचिन्मन्यसेस्तीति सर्वंतन्नास्तिविद्धितत्
एवंनव्यथतेप्राज्ञः कष्टामप्यापदंगतः १४

जो प्रथमवनाहै जो भविष्यतमोहै जोहोताजाताहै सो सभही स्थितनहीहोवेगा चलाही जावेगा इस प्रकार तूं विदितवेद्य होवेगा तोअसतपदार्थोंकेशोकमोहादि अ्रथर्मोसे मुक्तहोवेगा १४

यत्रसर्वेसमाहारे यत्रसर्वेपरेपरे सर्वे
तत्रास्तितेचैव तत्रानाकोनुसंज्वरेत् १५

जोकछु अवसे सर्वराजालोकोकेसमाजविषेवताहै जोकछु धनधान्यादिसर्वसर्वेलसे भी परेपरे होगयाहै सो सभही तेरा कछुवनतानहीहै ऐसे जाननेहारा पुरुषकौनगतपदा र्थोके पश्चात् संतापज्वरकोप्राप्तहोताहै १५ ॥

भूत्वाचनभवत्येत दभूत्वाचभविष्यति
शोकेनत्वास्तिसामर्थ्यं शोकंकुर्यात्कथंचन १६

यहसभही जगतकाविलास सिद्धहोकर्के नही विद्यमानहै जोनही वना सोवनजावेगा शोककरणेमोकिसीकीस्थिरता कासामर्थ्यनहीहै तातेशोकको किस प्रकारसेकरेगा १६

कतेपितेरापितराजन् कतेपितामहः
नत्वंपश्यसितानद्य नत्वापश्यंतितेनच १७

हे राजन् अबतेरा पिताकहाहै और पितामहतेरा कहाहै ना तूं उन्हकों अबदेखताहै वोहभी तोको नही देखतेहै १७ ॥

आत्मनोप्यध्रुवतांपश्य तांत्वंकिमनुशोचसि
बुद्ध्यावेवानुपश्यस्व ध्रुवोहनभविष्यसि १८

अपने शरीरकी भी तूं ध्रुवताकोदेख जो उन्हको तूं शोकक

रेगा बुद्धी करके विचार देख तूं भी इस शरीर करके अवस्थि
तीकरके नही होवेगा १८ ॥
अहं च त्वं च नृपते सुहृदः शत्रवश्च ते
अवश्यं न भविष्यामः सर्वं च न भविष्यति १ १९
हे राजन् अहं और तुमे और तुम्हारे सुहृद लोक शत्रुजन भी
तुम्हारे अवश्य हमने अटल नही होता है सभही जगत् वि
द्यमान नही होवेगा १९ ॥
ये तु विंशति वर्षा वै त्रिंशद्वर्षाश्च मानवाः
अर्वागेव हि ते सर्वे मरिष्यन्ति शरच्छतात् २०
चौवीस वर्षसे तीस वर्षसे अरे ही नही रहेगे शतवर्षसे अं
दरही सभ नही रहेगे २० ॥
अपि चेन्महतो वित्ता त्प्रमुच्येत पुरुषः
नैतन्ममेति तन्मत्वा कुर्वीत प्रियमात्मनः २१
हे राजन् यह पुरुष महावित्त की प्राप्ति अप्राप्ति से हर्ष शो
क करके कदापि मोह को नही प्राप्त होवे यह मेरा नही है इस
प्रकार सभसे असंगतारूपी अपने प्रिय हित को करे २१
अनागतं यन्न ममेति विद्या दतिक्रान्तं यन्न
ममेति विद्यात् दिष्टं बलीय इति मन्यमा
ना ये पण्डितास्ते सतां स्थानमाहुः २२ ॥
जो नही आया उसको जोसे मेरा करके नही जाने तैसे ही जो
बीत गया उसको भी मेरा नहि जाने भवितव्यता का दृष्टांत
जान करके ममता अहंता त्याग करकेही संतजन अपने स्व
रूपका स्थान जानते है २२ ॥
अनाढ्या अपि जीवन्ति राज्यं चाप्यनुशासति
बुद्धिपौरुषसंपन्ना स्त्वया तुल्याधिका जनाः २३
संपदा रहित मनुष्य भी जीवते है और राज्य शासन करणे
हारे भी जीवते है बुद्धि पौरुष संपन्न जन भी जीवते है तेरी
तुल्यतावाले जन भी जीवते है तुमसे अधिक जन भी जीवते
है सभही लोक तुल्यता अधिकतावाले जन देवगती विषे
समान अवस्थावाले हैं २३ ॥

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१२२

122

नत्वत्समित्वशोचेति नस्मात्समपिमाश्रवः
किंन्वत्वंनैनेरःश्रेयो त्वत्तोवाबुद्धिपौरुषैः २४
आपदासंपदा कर्के तेरेसे अधिकतुल्यअधिकहीन इसलो
कविषे अनेकमनुष्यहे परंतुतेरेन्याई शोचनानही करते
ताते तू भीकिसी कीशोचनामनकरे इन्हो कर्के तोको क्या
कल्याणहे बुद्धिपौरुष कर्के तुल्यहे अथवा समानहे इन्हो
कीशोचनेकी योग्यतानहीहै २४ ॥
राजोऽवाच यादृच्छिकंसर्वमासी तद्राज्यमितिं
चिंतये ह्रियतेसर्वमेवेदं कालेनमहताद्विज २५
राजोवाच हे तपोधन जोराज्यमोको प्राप्तवनारहा सोकालग
ती कर्के अयत्नसेप्राप्तभयारहा यहतोमेजानताहुं और महा
बलीकाल कर्के सभही यह हरागयाहै २५ ॥
तस्येवह्रियमाणस्य स्रोतसेवतपोधन
फलमेतत्प्रपश्यामि यथालब्धेनवर्तयन् २६
सो राज्यजलके प्रवाह जैसाकालगती कर्के हरागयाहै फलइ
सके जानेकायहमेदेखताहुं अबयथालब्ध आहारविहार
कर्के वर्तमानहोताहुं राज्यतोकालगती कर्के प्राप्तभया और
कालगती कर्के गयाहै परंतुमेरेजीवनेही राज्यदेवगतीक
र्के गयाहै शोकजोहै सो नष्टनहीहोता इसकारणसेप्राप्त
प्राप्तिवास्ते मोको आप उपाय मोको बहोउभीकहो २६ ॥
मुनिरुवाच अनागतमतीतंच यथायथाविनि
श्चयात् नानुशोचेतकौशाल्य सर्वार्थेष्वतथाभ
मुनिरुवाच हे राजन् जो नही आया राज्यभोग ॥ व २७
जोबीतगया राज्यभोग इसकोतुम कालक्रम कर्के अवश्य
भवतव्यताजानकरे शोचनही करणा इसी प्रकारसर्वका
र्योकी प्राप्ति अप्राप्ति मे शोकरहितनही होवो २७ ॥
अवाप्यान्कामयन्नार्थो नानवाप्यान्कदाचन
प्रत्युपस्थानानुभवन् माशुचस्त्वमनागतान् २८
हे राजन् तुमप्राप्तभय अर्थोंको कामनाकरो जोकदाचित्
सोईप्राप्तभय देवीगतीसे विह्वल होजावे तो अनागतजेसे
जानकरमतशोचकरो २८ ॥

यथालब्धोपपन्नार्थं तथाकौशल्यरंस्यसे
कच्चिच्छुद्धस्वभावेन श्रियोहीनोनशोचसि २ ५
हे राजन् कौशल्य जोतुम जैसी दैवगतीकर्के अर्थप्राप्तभये अर्थकर्के अपने भोगकोंमाननेहो तो संपदाहीनजो शुद्धस्वभावमनहै उसकर्के कछुशोचतोनहीकरोगे २९ ॥

पुरस्तादुन्नतःपश्चाद्वा हीनभाग्योहिदुर्मतिः
धातारंगर्हतेनित्यं लब्धार्थश्चनमृष्यते ३०
हे राजन् दुर्मतिजो पुरुषहै प्रथमही उसकीदैवगती हीन वनीहै सो जबमंदभाग्यसेसंपदाही नहोताहै तोविधातकों निंदाकरताहै जो अर्थप्राप्तहोताहै तोसंतोषकों नहीमानताहै ३०
जो नसेसंपदा योग्यनहीहै ऐसेम्लेछादिकनीचजनहै जो संपदायुक्तहोवे तव उन्हकोभी संहर्ता लोकमानताहै ऐसेकारणसेभी अभिमानीलोकोंको संपदाको देषकर वहोदुखउदेहोताहै ३० ॥

अनर्हानपिचैवान्या न्मन्यतेश्रीमतोजनान्
पतस्मात्कारणादेतत् दुःखंभूयोनुवर्तते ३१
जोसंपदावानहोतेहै ईर्षाअभिमानकर्के संपन्नहोतेहै अपनेकोसोलोक महाश्रेष्ठ पुरुषमानतेहै उन्हकोदेष कर्के तोकोईर्षाको होतीहै वानही होतीहै ३१ ॥

ईर्षाभिमानसंपन्ना राजन्पुरुषमानिनः
कच्चित्त्वंनतथाराजन् मत्सरीकोसलाधिप ३ २
तुम और जनोकी संपदाको देषकर ईर्षाको सहारताबी जद्यपि सो संपदा तुम कों नहीहै तोभी कुशल पुरुष जोहै सो और विषेभी लक्ष्मीकों विद्यमानदेषतेहैं उपायकुशलतासे उसकोभी आपभोगतेहैं ३२ ॥

सहस्वश्रियमन्येषां यद्यपित्वयिनास्तिसा
अन्यत्रापिसतीलक्ष्मी कुशलाभुञ्जतेसदा
अभिनिष्पंदतेश्रीर्हि सत्यपिद्विषतोजनम् ३३
हे राजन् जोपुरुषजनविद्वेषकरताहै और उपायकल्पनातानरहितहै उसकोंलक्ष्मीत्यागजातीहै इसीकारणसेजो

श्री॰
ग॰प॰
टी॰
१२३

पुरुष संपदाको पुत्रपौत्रसंतानकों चाहतेहै सोईथीअभिमान कोंत्यागकरके धर्मकर्मकारीहोनेहैं २३ ॥

श्रियंचपुत्रपौत्रंच मनुष्याधर्मचारिणः
योगधर्मविदोधीराः स्वयमेवत्यजन्त्युत २४

जौनसे योगधर्मकेवेत्ता धीरजनहै सो आपही धनसंपदाको त्यागकरतेहै ओर मूढलोकजोहै सोनानाप्रकारकी क्रियाजाल की विधीको समाप्तीको नहीजानते ऐसेहेत उसक्रिया जाल के साधनको अस्थिरदेषतेहे २४ ॥

बहुसंकुसकेदृष्टा विधित्साधनमेवच
तथात्मेसन्त्यजन्तेच मत्वापरमडुलेमे २४
त्वंपुनःप्राज्ञरूपःसन् कृपणंपरितप्यसे
अकाम्यान्कामयन्वर्षी न्पराधीनानुपद्रवान् २५

नित्यनवेनयेआरंभकोदेषकर उदासहोकर आपही धनसंप दाको त्यागकरतेहै हेकौशल्य तू आपही प्राज्ञरूपहै चतुर पुरुषहै महा दीनतासें संतापको करताहै २५ ॥

तांबुद्धिस्वपनिज्ञात्य त्वमेवेनात्मरित्यज
अनर्थाश्चार्थरूपेण ह्यर्थाश्चानर्थरूपिणः २६

अर्थजेतेहे अकाम्यहै कामनाम्यागयोग्यहै पराधीनताप्रकना शके उपद्रववालेहै इन्की कामनाको करताहे जोतेको सु खबुद्धिकीजिज्ञासाभईतो आपही इन्के त्यागकोंकर २६ ॥

अर्थाएवहिकेषांचि द्धननाशोभवत्युत
आनन्त्यंतत्सुखंमत्वा श्रियमन्यःपरीप्सति २७

अनर्थही अनर्थरूप कर्के भासतेहै ओर जेते अनर्थहै सोइ अर्थरूपभयेहे केतेप्राज्ञरूपोको धननाशभी अर्थरूपहोताहै जिस कर्के दोषसहित अर्थोकात्यागवनताहे ओर केते पुरु षकामभोगको अनंतसुखमानकर्के संपदाकी वांछाकों करतेहै २७ ॥

रममाणाःश्रियाकश्चि न्नात्मच्छ्रेयोभिमन्यते
तथातस्येहमानस्य समारंभोविनश्यति २८

ओर कोईपुरुष संपदा कर्के विलासकरणेहारा अपने सुख कों वांछाकरताहे तथाप्रकारही कार्यारंभकोंकरताहे उ

सका कार्यारंभविनष्टहोताहे ३८ ॥

कृच्छ्राल्लब्धमभिप्रेतं यदिकौशल्यनश्यति
नदातिविंयतेसोर्थान् परिभ्रश्यक्रमोनरः ३९

हे कौशल्यराजन् कष्टक्रियाकर्के अभिप्रायके अर्थको पाइ
कर किसी पुरुषका अर्थ दैवगतीसेनष्टहोजाताहे तबसो
पुरुष अर्थप्रारंभसे परिभ्रष्टमनोरथहोकर विरक्तहोताहे ३ ५

धर्ममेकेभिपद्यंते कल्याणाभिजनानराः
परत्रसुखमिच्छंतो निर्विद्यश्चलौकिकान् ४०

एकजीश्रेष्ठसहायसंपदासंपन्ननर जोहे सो धर्मकोंहिबहो
नकल्याणरूपमानतेहे परलोकके सुखकीवांछाकरतेहे सो
इहलोकके कार्य प्रारंभसे विरक्तहोते हैं ४० ॥

जीवितंसंत्यजंत्येके धनलोभपराजनाः
नजीवितार्थमन्यंते पुरुषाह्मिधनादृते ४१

एक पुरुष धनलोभपरायणहो कर्के अपनेजीवनेकोत्याग
करतेहैं अपने जीवनेसेभीधनप्राप्तिको बहोतमानतेहे ४१

पश्यतेषांकृपणतां पश्यतेषामबुद्धितां
अध्रुवेजीवितेमोहा दर्थदृष्टिमुपाश्रिताः ४२

हे राजन् देखो इन्हकी दीनताको और इन्हकी अबुद्धिताकों
भी विचारदेखो जीवनातो अध्रुवहे और दुर्लभहे उसकोत्या
गकर्के अविचारमोहसे अर्थदृष्टिकोंही बहोत प्राप्तिनहोतेहे ४२

संचयेचविनाशांते मरणांतेचजीविते
संयोगेचवियोगांते कोनुविप्रणयेन्मनः ४३

जो धनकासंचयहहे सोविनाशकालके अंतवालाहे जीवना
जोहे सो मरणकालके अंतवालाहे संयोगजोहे सो वियोग
कालके अंतवालाहे इन्हविषे मनको कौन दृढप्रेरणाकर
ताहे ४३ ॥

धनंवापुरुषोराज न्पुरुषंवापुनर्धनं
अवश्यंप्रजहात्येव तद्विद्वान्कोनुसज्वरेत् ४ ४

हे राजन् कोई पुरुष कदाचित् धनकोत्यागकरताहे और कि

सी पुरुषको धनही त्यागजाताहे अवश्यही एकको एकत्या
गजाताहै ताते इसधनविषे कौन पुरुष विचारसे प्रसंगक
रता है ४४ ॥

अन्येषामपिनश्यंति सुहृदश्चधनानिच
पश्यबुद्धिमनुष्याणां राजन्नापदमात्मनः
नियच्छयच्छसंयच्छ इंद्रियाणिमनोगिरं ४ ५

तुमअपनी बुद्धिकासेनही आपदाकोविचारकरो तुम्हारे देख
ने अवरलोकोंके धनसंपदा मित्रसहृत् लोकोंको नष्टहो
तेदेखनेहो सभमनुष्योंको अपनी बुद्धिकरके आपदा बनी ४ ५

प्रतिषेज्ञानचान्येषु दुर्बलेष्वहितेष्वपि
प्राप्तिस्नेहेषुभावेषु वापक्लेशेषुसंभवे
प्रत्तानन्तमोविक्रान्त स्वहितोनोनुशोचति ४६

ताते अपनी बुद्धीको संयमकरो मनकोसंयमकरो इंद्रियोंको
संयमकरो प्राप्तय अर्थोंको दर्शनमात्रविषेही प्रतिषेधकरे
और समही वर्तमानपदार्थ अप्रतीतिको दिखावनेहैं जो दे
शकालदोषसे नष्टहोजावे भूतभविष्यनमो जोदर्शनवि
षेनहीहोवे तब तुम्हारे ऐसहातातापुरुष इष्टानिष्टोंसे योग
वियोगविषे हर्षशोकके वशनही होताहै ४६

अल्पाभिछन्नचपलो मृदुदान्तःसुनिश्चितः
ब्रह्मचर्योपपन्नश्च तद्विधोनैवशोचति ४७

हेकोशल्यराजन् तुम्हारेजैसाउत्तम पुरुष जो अल्पसत्वको
इच्छाकरताहै उसविषेचंचलवृत्तिनहीहोता और सौम्यस्वभा
वहोताहै और इंद्रियोकेजयसंपन्नहोताहे और भूतभविष्यत
ज्ञानदृष्टिसेनिश्चयवानहोताहै ब्रह्मचर्यव्रतसंपन्नहोताहै
सोइसप्रकार शोचनायोग्यनहीहोता ४७ ॥

नत्वेवजाल्मिकापाली वृत्तिमेषितुमर्हसि
नृशंसवृत्तिंपापिष्ठां दुष्टांकापुरुषोचितां ४ ८

ताते हे राजन् तत्वविचारविनातुम मूढत्यागवाली कापा
ली वृत्तिको प्राप्तहोवनेयोग्यनहीहै ऐसी कापालीवृत्तिक्रू
रस्वभाववालीहै पापिष्टहै अतिदुष्टहै कायरपुरुषोंको
उचितहै ४८ ॥

अपिमूलफलाजीवो रमस्वैकोमहावने
वाग्यतःसंगृहीतात्मा सर्वभूतदयान्वितः ४९
जो तोको पहीहानि हाविकरतीहै तो एकाकी होयकर महा
वनविषे अपनी इछासे विचरपरंत वाणीके संयमकोकर
लोकसंग्रहयुक्तहो सर्वभूतो विषे दया संपन्नहो ४९॥
सदृशंपंडितस्यैत दीषादंतेनदंतिना य
देकोरमतेरण्ये धारण्येनैवतृप्यति ५०
हे राजन् पंडितजनजोहै उसकास्वभाव अरण्यके हस्तीस
मानहै जैसे हस्तीकादांतहलकेदंडसमान महादीर्घ होता
है तैसेपंडितको अपनी इछाहीदांतकेन्याई ग्रहणत्याग
विचार संपन्नहोतीहै उसकर्के एकाकीवनविषे विचरता
है और अरण्यकेफलमूलकर्के जीवकाकरताहै ५० ॥
महाहृदःसंक्षुभितः आत्मनैवप्रसीदति
एतदेवंगतस्याहं संपश्यामिजीवितं ५१
जैसे महाजलाशयक्षोभको प्राप्तहोताहै सो आपही काल
गती कर्के निर्मलस्वछजलहोताहै इसी प्रकारवनवासी
भये तुमको भी अपने विचारसेही प्रसंगप्रसन्नजीवने
कों चाहताहूं ५१ ॥
असम्भवेश्रियोराजन् हीनस्यसचिवादिभिः
दैवेप्रतिनिविष्टेच किंश्रेयोमन्यतेभवान् ५ २
इतिश्रीम·भा·शां·प·राजधर्मेकालकवृ
क्षीयेशान्ताधिकस्त्रयोध्यायः १०४ ॥
हे राजन् तोको अबसंपदाकीहीनता भईहै और अमात्यस
हित सचिवादिवियोगभयाहै अबतोको दैवगतिकी निष्टाहीकल्या
णरूपहै अबइससे और क्याउपायमानताहै ५२ इतिश्रीम·
शां·राजधर्मेशान्ताधिकस्त्रयोध्यायः १०४ ॥
मुनिरुवाच अथवेत्पौरुषंकिंचित् त्वयिपात्म
निपश्यसि ब्रवीमितांततेनीतिं राज्यस्यप्र
तिपत्तये १ ॥

मुनिरुवाच हेराजन् तूं आपह्नहीहे जोतो अपने विषे कछु
बलपौरुषकरणा जानताहे तो तोको मेएसी नीतिकों राज्य
प्राप्तिवाले कहताहूं जिसकर्के तूं बहोउ राज्यको प्राप्तहो
वेगा १ ॥

तोचेत्त्वंकोषनिर्माने कर्मचैवकरिष्यसि
शृणुसर्वमशेषेण यथावक्ष्यामितत्त्वतः २

जो तूं इसनी तिको करसकताहे और बलपौरुष कर्के राज
नीतिके कार्यकों करेगा तो अशेष कर्के नीतिकों श्रवण क
रमे लोको मे नीतिको तत्वविचारसें कहताहूं २ ॥

आचरिष्यसिचेत्कर्म महतोर्थानवाप्स्यसि
राज्यंराज्यस्यमंत्रंवा महतींवापुनःश्रियं
अथैतद्रोचतेराजन् पुनर्ब्रूहिब्रवीमिते ३

जो तूं राजनीतिके कर्मकों आचारणकरेगा तो महा संपदा
के अर्थोंकों प्राप्तहोवेगा राज्यकों प्राप्तहोवेगा राज्यमंत्रकों
जानेगा बहोउ महासंपदाकी लक्ष्मीकों पावेगा अबजो तो
को मेरावचन रुचिको करताहे बहोउप्रश्नकरके कहो त
बमेकहताहूं ३ ॥

राजोवाच ब्रवीतुभगवान्नीति मुपपन्नोस्म्यहं
विभो अमोघोयंभवत्वद्य त्वयासहसमागमः ४

राजोवाच हेभगवन् आपमोकों नीतिको कहोमे आपकोश
रणागतभयाहूं जोआपकेसाथमेरा समागमभयाहे सो अ
बही सफल होजावे ४ ॥

मुनिरुवाच हित्वादंभंचकामंच क्रोधंहर्षंभयं
तथा अपिमित्राणिसेवस्व प्रणिपत्यकृताञ्जलिः ५

मुनिरुवाच हे राजन् अबतुमनीतिकोंसावधानतासे सुनो
तुमदंभकोत्यागकरो कामकोत्यागकरो क्रोधकोत्यागकरो
हर्षकोंत्यागकरो भयकोत्यागकरो और मित्रको भीप्रणाम
करके अंजलिकरो ५ ॥

तमुत्तमेनशौचेन कर्मणाचाभिराधय
दातुमर्हतितेवित्तं वैदेहःसत्यसंगरः ६

वैदेहराजाकोमित्रकरके उत्तम शुद्धमनके शौच कर्के और
मैत्रीभावकेकर्मकरके आराधनाकरो वैदेहराजा सत्यधर्म

के जयवालाहै सो तमको आपदाति हर्तिवालेबहोतसंप
दादेवेगा ६ ॥

प्रमाणंसर्वभूतेषु प्रग्रहंचभविष्यसि
ततःसहायान्सोत्साहा लप्स्यसेव्यसनान्प्रवीन् ७

जिस कर्के सर्वभूतोविषे प्रमाण होवेगा प्रधान होवेगा स
भभूतोविषेग्राह्यहोवेगा उसीसे उत्साहबलसहित सहाय
कारी पुरुषोंको प्राप्तहोवेंगा सहायतोको कैसेप्राप्तहोवेंगे
जोनसेव्यसनप्रसंगके दोषसेरहितहै और शुद्धमन कर्के से
वाकरणेहारेहै ७ ॥

वर्तमानःस्वशास्त्रेवै संयतात्माजितेंद्रियः
अभ्युद्धरतिचात्मानं प्रसादयतिचप्रजाः ८

ऐसी संपदाको पाइकर अपनेस्वत्रधर्मकेशास्त्रमों वर्तमान
होवेगा जितचितहोवेगा जितेंद्रियहोवेगा ऐसा राजा अप
नेको आपदासमुद्रसे उद्धारकरताहै प्रजालोकोंको प्रसन्न
करताहै ८ ॥

तेनैवत्वंधृतिमता श्रीमताचाभिसत्कृतः
प्रमाणंसर्वभूतेषु गत्वाप्रग्रहणंमहत् ९

हे राजन् कौशल्यविदेहराजा धैर्यवानहै और संपदावाला
है उस कर्के ही तू सत्कारको प्राप्तकिया सर्वभूतोविषे प्र
धानहोवेगा सभकोहीसेवाकरणे योग्य आदरको प्राप्तभया
महाप्रधानताको प्राप्तहोवेगा ९ ॥

ततःसुहृद्बलंलब्ध्वा मंत्रयित्वासुमंत्रिभिः
आन्तरैर्भेदयित्वारीन् बिल्वंबिल्वेनभेदय
परैर्वासंविदंकृत्वा बलमप्यस्यघातय १०

तदनंतर सुहृत बलको प्राप्तहोकर्के मंत्रीलोकोंकेसाथ
मंत्रविचार कर्के छिद्रज्ञान कर्के शत्रुगणोंको अंतरंग उपा
य कर्के भेदन कर्के जैसे बिल्वफलको फोडदेतेहैं तैसेश
त्रुजनोंकी मैत्रीकर्के शत्रुगणोंकोघातकरो १० ॥

अलभ्यायेशुभाभावाः स्त्रियश्चाच्छादनानिच
शय्यासनानियानानि महार्हाणिगृहाणिच १ १

120

शत्रुगणसे परे जो मित्र है तिन्को कर्के शत्रुसेनाके बलको बा
नकरो जोजोराजसंपदाकेभाव तमको अलभ्यभयेहै स्त्रियाव
स्त्रभूषणादिकतिन्को ११ ॥

परिणोम्यग्जातानि रम्यगंधाःफलानि च
वैदेहसंबंधेनाप्ते यथा नश्येत्स्वयंपरः १२

और शय्या आसन गजतुरंगादिसवारीके वाहनजोहै और म
हासंपदावाले मंदिरगृह जोहै और क्रीडा विलासकेपंक्षीग
ण और मृगजाती और सुगंधद्रव्य और अनेक प्रकारकेफल
भेफलभेदजोहै तिन्को प्राप्तहोवेंगा ताते तुमविदेह रा
जाके साथ संबंधको करेण जिसकर्के शत्रुगणोने आप
ही नाशको प्राप्तहोताहै १२ ॥

यद्येवंप्रतिषिद्धो मे यद्युपेक्षणमर्हति
नजातुविहितःकार्यः शत्रुःस्वनयमिच्छता १३

जौनसा कार्यमार्गनिषेध करणे योग्यहै और जो उपेक्षाकर
णेयोग्यहै यहमेराशत्रुहै ऐसामंत्रजोहै सो कदापि शत्रुज
नोविषे अपनानीतिमार्गकरणेहारेणे कदापिविदितनही
कर्तव्यहै १३ ॥

रमस्वपरमामित्रे विषयेप्राज्ञसंमतः
भजस्वश्वेनकाकीयै मित्रधर्ममनर्थकैः १४

हे परमगुणसंपन्नकौशलराज तूप्राज्ञजनोकी संमतिसे
पन्नहोकर अमित्रजोहै उन्केसमीपविषे ऐसे नीतिधर्म
कर्के रमनेरहो श्वेनकाकीय मित्रधर्मको भजो जैसे श्वान
और पक्षहारिण काकजोहै सो सदाजाग्रत भयभी नचाकि
तहोतेहै तैसेतुमभी शत्रुके समीप सदाजाग्रतहोना और
भयकरणा और चकितनचपलहोना एसेनीति प्रकारके अ
नर्थकारी छलकारी धर्मोमे प्रवृत्तिकर्तव्यहै १४ ॥

आरंभांश्चासमहतो दुस्साध्यांश्चप्रयोजय
नदीवश्चविरोधांश्च बलवद्भिर्निरुध्यतो १५

और इसके महाकठिनइच्छा प्रयोगवाले यज्ञदानादिविस्तार
कर्तव्यहै देवद्रव्य ब्रह्मद्रव्यके विरोधविना बलवान पुरु
षो कर्के द्रव्यागमविधीकाविरोधकर्तव्यहै १५ ॥

उद्यानानिमहार्हाणि शयनान्यासनानिच

प्रतिभोगसुखेनैव कोशमस्यविवर्द्धय १६
और महाद्रव्यखरचवाले उद्यानवागवगीचा आदिकविधा
नकर्तव्यहै शय्यासनादिविधानके प्रारंभकर्तव्यहै इसी
प्रकारभोगसुखके सामग्रीसाधनकर्के इसकेकोशकादाय
कर्तव्यहै १६ ॥

यज्ञदानेप्रशंसाथैस्मै ब्राह्मणानतुवर्णनात्
तेत्वांप्रतिकरिष्यंति तेभ्योस्यतिहकारव १७
हे राजन् ब्राह्मणोको अनुमंत्रणकर्के यज्ञदानोकाप्रारंभक
रायकरके इसकेद्रव्यकाव्ययकर्तव्यहै ब्राह्मणजोहै सोतो
को स्वस्त्ययनादिविधिकर्के उपकारकरेंगे द्रव्यलोभ कर्के
हकजातिकेमृगोकी न्याई त्यागनहीकरेंगे १७ ॥

अनेधायेपुण्यशीलः प्राप्नोतिपरमांगतिं
त्रिविष्टपेपुण्यतमं स्थानंप्राप्नोतिमानवः १

८

जोकोई पुण्यशीलपुरुष होताहै अवश्यपरमगतिकोप्रा
प्तहोताहैस्वर्गविषेभी अतिपुण्यफलकेस्थानकोप्राप्तहोता
कोशनयेनवमित्राणां वशंकोशलगच्छ है १८
ति उभयत्रप्रमत्तस्य धर्मंवाधर्मपत्रव १९
हे कौशल्य जिसकेकोशकाक्षयहोताहै सो अवश्य शत्रुके
वशहोताहै तातेद्रव्यकोशकाक्षय धर्मकर्मविषेभी अधर्म
कार्यमोभीहोताहै १९ ॥

फलार्थमूलंवृद्धिये तेनतंदंतिशात्रवः
नवासैमानुषंकर्म दैवमस्योपवर्णय २०
स्वर्गादिफलसिद्धिका और शत्रुविजयका मूलकारणकोश
हुडीही वनीहै उसकोक्षयवास्ते धर्म अधर्मकर्मके उपाय
कर्तव्यहै इसको तुमनेमनुष्यलोककीकर्तव्यताबहोत
उपदेशनही करणी केवलदैवकर्मही वहोतवक्तव्यहै २०

अनेधायेदैवपरः क्षिप्रमेवविनश्यति
याजयेनविश्वजिता सर्वस्वेनविपुज्यतो २१
यह पुरुष केवलदैवयोगपरायण होताहै तोशीघ्रही को
शक्षय कर्के विनाशकोप्राप्तहोताहै इसी हेतुसे इसको
तुमसर्वस्वदक्षिणावाले यज्ञकर्के यजनप्रारंभमे सर्वस्व

श्री· रा·ध· टी· १२७

127

संपदाकेसाथवियोगकराइदवो २१ ॥

ततोगछत्यसिद्धार्थः पीड्यमानोमहावने

योगधर्मविदंपुण्यं किंचिदस्योपवर्णये: २ २

तवयहराजा यज्ञादिप्रयोजन करकें कृतकृत्यहोवेगा कोशछ
यरूपी अर्थजयसिद्धभयातो महाजनोकीपीडाका उपदेश
भी इसको द्रव्यसंग्रह वास्ते उपदेशकरणा इस करकें सभके
साथ इसका विरोधवनेगा तव आपही महावनको जावे
गा तव इसकोयोगधर्मका कछुपुण्यकर्मका वर्णनक
र्तव्यहे २२ ॥

अपित्यागंप्रभूतेन कुश्चिद्रुछेदनामयं

सिद्धेनौषधियोगेन सर्वशत्रुविनाशिना

नागानश्वान्मनुष्यांश्च कृतकैरुपघातये: २३

इसकर्के यहत्यागको भी अंगीकरेगा वनको जाइयकर मो
क्षमार्गको प्राप्तहोवेगा अथवा औषधी दानादिकों कर्के इ
सकेहस्ति तुरगादिघात भी कर्तव्यहे एसे उपाय प्रकार
कर्के तुह्मारीकर्तव्यतासर्व शत्रुविनाशकोकरणेहारेहोवेगी २४

एतेचान्येचबहवो दंभयोगाःसुचिंतिताः

शक्याविसहताकर्तुं पुरुषेणकृतात्मना २४

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजध

र्मेकालवृत्तीये·पंचाधिकशततमोध्याय: ५

हे राजन् यहमेने तुमको कपटयोगकेदंभकार्य उपदेश
कियेहै इस प्रकार और भीदंभयोगचिंतनकियेसेसमही
कुशलबुद्धि पुरुषने हास्यविलासद्वारा क्रोधाभिमानादित्या
गसे करणेकोशक्यहोतेहै २४ इतिश्रीम·शां·प·राजधर्मे
कालवृत्तीये·पंचाधिकशततमोध्याय: १०५ ॥

राजोवाच नतिकृत्यानदंभेन ब्रह्मन्निच्छामिजी

वितुं नाधर्मयुक्तानिछेय मर्थान्सुमहतोप्यहं १

राजोवाच हे ब्रह्मन् मेकपटमायादंभयोग कर्के जीवनेको इ
छानही करता और अधर्मयुक्त कार्यके अर्थोंकी महासंपदा
कर्कें भी अपनी जयसंपदाकी वांछानही करता १ ॥

पुरस्तादेवभगव न्मयैतदपवर्जितं

येनमांनाभिशंकेन येनकृत्स्नंहितंभवेत् २
हे भगवन् अधर्मकार्यतोमेने प्रथम ही त्यागकियाहे
जिस कर्के मोकों अधर्मशंकानही होवे और सर्व प्रकार
काहितहोवे २ ॥

आनृशंस्येनधर्मेण लोकेह्यस्मिञ्जिजीविषु :
नाहमेतदलंकर्तुं नैतत्त्वय्युपपद्यते ३
हिंसारहितधर्म कर्के मेइसलोकविषे जी वनाचाहताऊं
ऐसे अधर्मकार्यको मेनही करसकता ये साउपदेशाकर
ण तुह्मारेविषे उचितनही बनताहे ३ ॥

मुनिरुवाच उपपन्नसमेतेन यथावत्क्षत्रियभा
षसे प्रकृत्याह्युपपन्नोसि बुद्ध्याबहुदर्शन : ४
मुनिरुवाच हेक्षत्रिय जोतूंधर्ममर्यादाको कहताहे इस
कर्के तूयोग्य पुरुषबनाहे धर्म प्रकृतिसंपन्न तू आपब
नाहे और बुद्धि कर्के उत्तरकालमोभीशुभफलके ज्ञानसंप
न्नभयाहे ४ ॥

उभयोरेववामर्थे यतिष्येतववस्यच
संश्लेषंवाकरिष्यामि शाश्वतंह्यनपायिनं ५
हे राजन् विदेहराजा भी धर्मचिंतकहे और तुमभी धर्म
चिंतकहो ताते मेतुह्मारेदोनोकेहितवास्तेयतनकरता
ऊं तुह्मारे समागमको मे सदाकाल अविरही कराइदेताऊं ५

त्वादृशंहिकुलेजातं मनृशंसंबहुश्रुतं
अमात्यंकोनकुर्वीत राज्यप्रणयकोविदं ६
तुह्मारे जेसे उत्तम कुलवाले धर्मज्ञबहुश्रुत मित्रसहा
यकरणेको कौनवांछानही करे जिसको शाश्वत अचे
उ यशासंपन्न जीवनेको चाहताहे केसाहे तुमजैसा स
हाय राज्यसंपदाकी अखंडता प्रीतिमो कुशलहे ६ ॥

यस्त्वंप्रव्राजितोराज्याद् व्यसनंचोत्तमंगतः
आनृशंस्येनवृत्तेन क्षत्रियेच्छसिजीवितुं ७
हे राजन् जौनसा तूं राज्यसे गिरादियाहे महाआपदाको
प्राप्तभयाहे तोभी अहिंसाधर्मकेव्यवहारसेप्रवृत्तहो कर

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१२८

128

जीवनाचाहताहै इसहे तूसे उत्तमतत्री कुलीनहै ७ ॥

आगंतामहमद्येनान वैदेहः सत्यसंगरः
अथाहंतंनियोक्ष्यामि तत्करिष्यत्यसंशयम् ८
हेतात धर्ममर्यादाका पालक राजाविदेह मेरेग्रहविषे
आवेगा मे उसको जिसकार्यकानियोगकरेगा उसकार्यको
विदेहराजा संशयत्यागकरके अवश्यकरेगा ८ ॥

ततआहूयवैदेहं मुनिर्वचनमब्रवीत्
अयंराजकुलेजातो विदितात्मानरोमम ९
हे युधिष्ठिर सो मुनिपेसी वचनको शाल्व राजा को कहकर
विदेहराजाको अपने ग्रहमो बुलाइकर वचनकोकहताभ
या यहको शाल्वराजा उत्तमराज कुलमो जन्मवालाहै मो
को इसकाअंतरगीत धर्महानिकाशुद्धभाव विदितभया ९

आदर्शाइवशुद्धात्मा शारदश्चंद्रमायथा
नास्मिन्पश्यामिवृजिनं सर्वतोमपरीक्षितः १०
जैसे दर्पण तला शुद्धनिर्मलहोताहै तैसाशुद्धविनाहै और
शरत्कालकेचंद्रमाजैसा अमलशीतलहोताहै इसमो छल
कपटादिदोषको मेकछुनहिजाननाऊं मैनेयहसम्यक्प
रीक्षितकियाहै १० ॥

तेनतेसाधिवासस्तु विश्वसास्मिन्यथामयि
नराज्यमनमात्येन शक्यंशास्तुमपिव्यहं ११
तातें तेरेसाथ इसकोसापिअवश्यहोवे इसमो ऐसा विश्वास
करो जैसामेरेविषेविश्वासतमकोबनाहै हेविदेह राजन्
अमात्यसहायविना तीनदिनभी राज्यशासनाकरणी अशक्य
है ११

अमात्यःशूरएववा बुद्धिसंपन्नएववा
ताभ्यांचैवोभयंराजन् पश्यराज्यप्रयोजनं १ २
राजा को अमात्यसहाय बुद्धिसंपन्नशूरमा पुरुषही उचित
है बुद्धिसंपन्न और शूरमता जोहै इनदोनो करकै संपन्नहोवे
तबराज्यशासनाका प्रयोजनसिद्धहोताहै १२ ॥

धर्मात्मनांकविलोके नान्यास्तिगतिरीदृशी
महात्माराज्यपुत्रोयं सतांमार्गमनुष्ठितः १ ३

हे राजन् बुद्धिज्ञानकीसंपदा ओर सूरत्वधर्म की संपदा जो
हे इन्द्रके समान धर्मात्मा राजालोकोको ऐसे धर्मकार्यकी
सिद्धिवास्ते ओर उत्तमगती नहीहे १३ ॥

ससंगृहीतस्तेवैष त्वयाधर्मपुरोगमः
संसेव्यमानःशत्रूंस्ते ग्रहीष्यत्यमहतोगणान् १४

हेविदेहेराजन् सोयहकोशलराजा तने मित्रभाव करके सं
ग्रह किया तो धर्मकर्मका अग्रवर्ती होवेगा जो तमने मान
सत्कारसे सेवनकियातो तो तेरे शत्रुलोकोकोवशकरेगा
ऐसायह राज पुत्रधर्म की निष्ठावालाहे १४ ॥

यद्ययंप्रतियुद्धेत्वा स्वकर्मत्वाविधस्ततत्
जिगीषमाणस्त्वांयुद्धे पितृपैतामहेपदे १५

जोयहतेरेसाथयुद्धकरे तो अपनाक्षत्रियधर्महे जो तोको
भी युद्धविषे जयकरेतो तेने प्रथमही पितृपितामह पद
विषे आयही प्राप्तकर्तव्यहे १५ ॥

त्वंचापिप्रतियुद्धेथा विजिगीषुव्रतेस्थितः
अयुद्धेवनियोगान्मे वशेकृत्वहितेस्थितः १ ९

पश्चात् इसकेसाथ विजयवांछाकी व्रतनिष्ठाकरके युद्धक
तेव्यहे मेरे नियोगसे अयुद्धियोगवास्तेही इसको अपनेव
शकरके अपनेहितकार्यमोस्थितहो १६ ॥

सत्वंधर्ममवेक्षस्व हित्वालोभमसांप्रतं
नचकामान्नचद्रोहात् स्वधर्मंहातुमर्हसि १७

हे राजन् आपत्वंधर्ममार्गमोस्थितहे अपने धर्मकोदेख इ
सकालमो लोभकरणा उचितनहीहे लोभकोत्यागकरके
धर्ममार्गको प्रवर्तकर काममेधर्मत्यागनहीकरो द्रोहसे
भी धर्मत्यागकरणेको योग्य नही हो १७ ॥

नैवनित्यंजयस्तात नैवनित्यंपराजयः
तस्माद्भोजयितव्यश्च भोक्तव्यश्चपरोजनः १८

हेतात जयकिसीकानित्यनही हे पराजयभीनित्यनहीहे
ताते जोशरणागत अपने सन्मुखहोवे उसकोभोगी करके
भोक्ताकर्तव्यहे ओर सेवा करके मित्रताकरके आपभी उसज
नकोभोक्तव्यहे १८ ॥

129

आत्मन्यपिचसंदिग्धा वुभौजयपराजयौ
निःशेषकारिणांतात निःशेषकरणाद्भयं १९
राजानेविजयकार्यमो अपने विषेभी जयविजयकाविचार
कर्तव्यहे निशेषता शत्रुकी जोकरतेहै उह्नकोनिशेषता
करणेसे धर्महानिकाभयहोताहे १९ ॥

इत्युक्तःप्रत्युवाचेदं वचनंब्राह्मणर्षभं
प्रतिपूज्याभिसत्कृत्य पूजार्हमनुमान्यच २॰
हे युधिष्ठिर विदेहराजाको ब्राह्मणश्रेष्ठजो कालकवृक्षीय
मुनि उसनेजवऐसा वचनकहा तबराजा उसको उत्तरवच
नकोंकहताभया मुनिको पूजासत्कार कर्कै और कौशल्यरा
जपुत्रकोभी पूजायोग्यमान कर्कै मुनिको वचनकहताभया २॰

यथाब्रूयान्महाप्राज्ञो यथाब्रूयान्महाश्रुतः
श्रेयःकामोयथाब्रूया दुभयोरेवतत्क्षमं २१
हे ब्रह्मन् आपजैसा महाप्राज्ञ पुरुष जैसा हितवचन कहे
जैसावचनबहुश्रुत महा पुरुष कहे और जैसेवचनकोहि
तकारी उत्तमजनकहे सो वचनवक्ताको श्रोताकोदोनोको
एकजैसा समान हितकारी होताहे २१ ॥

ययद्वचनमुक्तोस्मि करिष्यामिचतत्तथा
एतद्धिपरमंश्रेयो नमेत्रास्तिविचारणा २२
जोजो वचनकरणेकोमोको आपने कहाहे उस उसवचन
को तथा प्रकारही करोगा यहीमेने अपने विषे परमकल्या
णमानाहे इसमोविचारकल्पना नहीहे २२ ॥

ततःकौशल्यमाहूय मैथिलोवाक्यमब्रवीत्
धर्मतोनीतितश्चैव लोकश्चविजितोमया २
हे युधिष्ठिर इसीकालमो विदेहराजाकौशल्यराजाको बुला ३
इ कर्कै धर्मज्ञराजा आपही वचनकहताभया सो राजाधर्म
ज्ञहे नीतिवेत्ताहे एसेवचनकहताभया मेनेइहधर्मसे औ
र नीतिसे विजयकियाहे २३ ॥

अहंत्वयाचात्मगुणै जितःपार्थिवसत्तम
आत्मानमनवज्ञाय जितवद्वर्ततांभवान् २४
हेकौशल्यराज्य मोको तेने अपनेपवित्रगुणो कर्कै जीता

हे त्वं राजसत्तमहैं अपने अवज्ञाकोत्याग करके अपने विज
यश्रीजैसेहर्ष करके अब आप वर्तमानहोवो २४ ॥

नावमन्यामितेबुद्धिं नावमन्येचपौरुषं
नावमन्येजयामीति जितवद्वर्ततांभवान् २५

मैअब आपकी बुद्धिको अवमाननही करताहूं और तेरेपौ
रुषपराक्रमकोभी अवमाननही करता मैंनेविजयकिया
है ऐसेभी अवमाननहीकरता तुम अपने विजयजैसेहर्ष
करके वर्तमानहोवो २५ ॥

यथावत्पूजितोराजन् गृहंगन्तासिमेप्रभो
ततःसंपूजितौविप्र विधिवज्जग्मतुर्गृहान् २ ९

हे राजन् यथाविधिसे पूजामानपाइकरके मेरेगृहको तुम
प्राप्तहोकर अपने गृहको जावोगे हेपार्थ तदनंतरदोनो
राजे मुनीको यथाविधि पूजा करके विदेह राजाके गृहको
जातेभये २६ ॥

वैदेहस्त्वथकौशल्यं प्रवेश्यगृहमंजसा
पाद्यार्घ्यमधुपर्कैस्तं पूजार्हंप्रत्यपूजयत् १२

विदेह राजा जोहै सो कौशल्यराजाको अपनेगृहको तत्का
लही प्रवेशकराकरके पूजायोग्यमान करके पाद्यअर्घ्यमधु
पर्कादिविधानसे पूजा करताभया २७ ॥

ददौदुहितरंचास्मै रत्नानिविविधानिच
एषराज्ञांपरोधर्मो नित्यौजयपराजयौ २८

कौशल्यराजाको अपनी पुत्री पुत्रीको विवाहविधीसेदे
ताभया अनेकरत्नोकोभी देताभया अपनेराज्यदेशको प्रा
प्तकरताभया हेयुधिष्ठिर राजालोकोकायही उत्तमधर्महै
जो जयपराजयकदापिनित्यनहीहै धर्मकर्मवाले मित्रका
सर्वप्रकारसेसंग्रहकर्तव्यहै २८ ॥

इतिश्रीम·भा·शांतिप·राजधर्मे·कालकवृ
क्षीयेशताधिकषष्ठोध्यायः १०६ युधिष्ठिरउ
वाच ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणांचपरंतप
धर्मंवृत्तंचवित्तंच वृत्त्युपायाःफलानिच १

इतिशांतिपर्वणिराजधर्मेकालकवृक्षीये ८८ युधिष्ठिरउवाच
हे परंतप आपनेमेरेप्रति ब्राह्मणोके क्षत्रियोके वैश्योके शू
द्रोके धर्मकहेहे और विप्रजोधनसोकहाहे और उपजीवका
को कहके उपाय भीकहेहे १ ॥

राज्ञोवृत्तंचकोशंच कोशसंजननंजयः
अमात्यगुणवृत्तिंच प्रकृतीनांचवर्द्धनं २

और राजा लोकोका आचारवृत्तांत भीकहाहे और कोशसंग्र
हकहाहे और कोशवृद्धिकी उपायकल्पनाभी कहीहे और
विजयकरणेके प्रकारभीकहेहे और अमात्यादि अधिकारी
जनोके शुभअशुभलक्षणगुणकहेहे और अमात्यलोकोकी
उपजीवनवृत्तिकहीहे और अधिकारीलोकोकी और प्रजालो
कोकी वृद्धिकल्पनाभी कहीहे २ ॥

षाड्गुण्यगुणकल्पंश्च सेनावृत्तिंतथैवच
परिज्ञानंचदुष्टस्य लक्षणंचसतामपि ३

और राज्यके षड्गुणवृत्तिका विधानयोगका कल्पभीकहाहे
और सेनाकल्पनाकी वृत्तिकहीहे और दुष्ट पुरुषोकापरिज्ञा
नकहाहे और संतजनोकेमित्रोके लक्षणभी कहेहे ३ ॥

समहीनाधिकानांच यथावल्लक्षणंचयत्
मध्यमस्यचतुष्टयर्थं यथास्थेयंविवर्द्धनं ४

जो नसे लोकधर्मकेही नहे और जो अधिकहे उनकेभी य
थाप्रकारकेलक्षणहे सोभी कहेहे और मध्यमजोराजाहे
उसकी तुष्टीवास्तेयथाप्रकारस्थिति और उसकी वृद्धि प्रका
रकी कल्पनाभीकहाहे ४ ॥

क्षीणग्रहणवृत्तिश्च यथाधर्मंप्रकीर्तितं
लघुनादेशरूपेण ग्रंथयोगेनभारत ५

हे भारतक्षीणवृत्ति जनकासंग्रहकरणा और उसकी उपजी
वनवृत्तिभीकहीहे यथाप्रकारधर्मकर्म भीकहाहे और दे
शकालके लघुताप्रकारकर्के धर्मकर्मके ग्रंथयोग कर्के
जैसा उपायवर्त्तमानहे सोभी प्रकार कहाहे ५ ॥

विजिगीषोस्तथावृत्तं उक्तंचैवतथैवते
गणानांवृत्तिमिच्छामि श्रोतुंमतिमतांवर ६

जैसे विजयकी इच्छावाले राजाका आचारहमनेकहाहै
हेमतिमनोवर अबगणोकीवृत्तिको मै श्रवणकरणेको
इच्छाकरताहूं ६ ॥

यथागणाःप्रवर्द्धंते नभिद्यंतेचभारत
अरींश्चविजिगीषंते सुहृदःप्राप्नुवंतिच ७

हेभारत जिस प्रकारसेगणवर्तमानहोतेहै और जैसेभेद
कोनही प्राप्तहोतेहै और जैसेगणकरके शत्रुजनोको वि
जयकरणेकी वांछा करतेहै और जिस प्रकारसे सुहृद
मित्रोको प्राप्तहोतेहै ७ ॥

भेदमूलोविनाशोहि गणानामुपलक्षये
मंत्रसंवरणंदुःखं बहूनामितिमेमतिः ८

हे पितामहजी राजाकेगणोका विनाश भेदमूलही होता
है मै इसको इसीप्रकारजानताहूं और मंत्रका जोगोपनक
रणा सोबहो उत्तमगणोका मूलहै यहमेरी मति जानती
है ८

एतदिच्छाम्यहंश्रोतुं निखिलेनपरंतप
यथाचतेनभिद्येरं स्तच्चमेवदपार्थिव ९

हेपरंतप हेमहाराज इसविधानको मै संपूर्णताकरके श्र
वणकियाचाहताहूं जैसेमंत्र और गणभेदको नही प्राप्त
होवे उसप्रकारको मेरेप्रति आपकहो ९ ॥

भीष्मउवाच गणानांचकुलानांच राज्ञांभरतस
त्तम वैरसंदीपनावेतौ लोभामर्षौनराधिप १०

भीष्मउवाच हे नराधिप भरतसत्तम राजाकेगणोको और
कुलोको वैरको दीपनकरणेहारे लोभ और क्रोधही मूल
कारणवनेहै १० ॥

लोभमेकोहिवृणुते ततोमर्षमनंतरं
तौक्षयव्ययसंयुक्ता वन्योन्यंचविनाशिनौ ११

एकलोभही सर्वगणोको जीतलेताहै उसकेपाछेक्रोधा
दिकभी गणोको जीतलेतेहै सोईलोभक्रोधजोहै सोदो
नोही क्षयको और विनाशको सर्वगण संयुक्तराजालो
कोको परस्पर विनाशकरदेतेहै ११ ॥

श्री॰
ग॰ प॰
टी॰
१३१
131

चारमंत्रबलादानैः सामदानविभेदनैः
क्षयव्ययभयोपायैः कर्षयंतीतरेतरं १२

हे राजन् लोभक्रोधसंयुक्त राजालोक जोहै सो चारो कर्के मंत्र कर्के बलकर्के द्रव्यदान कर्के सामदानभेदो कर्के और भी सेनाकाक्षय होर संपदाकाक्षय और भयकरणेके उपाययोग तिन्हो कर्के राजालोकपरस्पर खेचा खेची आकर्षणको करतेहैं १२ ॥

तत्रादानेनभिद्यंते गणाःसंघातवृत्तयः
भिन्नाविमनसःसर्वे गच्छंत्यरिवशंभयात् १३

हे राजन् जहांलोभ कर्के दानजो नही करणा कृपण अभिमान वृत्तिकरणेकर्के सभही गणसमूह भिन्नवृत्तिहोतेहै उस कर्के राजालोकभी मंत्रादि उपायहीणता कर्के व्याकुलमन होतेहै भयभीतहोकर शत्रुकेवशहो जातेहै १३ ॥

भेदेगणाविनश्यंति भिन्नास्तुसुजयाःपरैः
तस्मात्संघातयोगेन प्रयतेरन्गणाःसदा १४

हे राजन् मंत्रभेदविषे अपने सेना अमात्यादिभेदसे सभही गणसमूहविनाशको प्राप्तहोतेहै और भिन्नवृत्तिराजालोक शत्रुलोकके सर्वेण विजय करणेकोशक्यहोतेहैं ताते सभही मंत्रीलोकसेनाकेयोधालोकअन्योन्यमंत्रकी एकता कर्के एकमतीनिश्चय कर्के एकत्रहोवेतो तबसभही गणविजयकार्यविषे यत्नसंपन्न होतेहै १४ ॥

अर्थाश्चैवाधिगम्यंते संघातबलपौरुषैः
बाह्याश्चमैत्रींकुर्वंति तेषुसंघातवृत्तिषु १५

हे राजन् संघातकोसेनासमूहकी एकता उसके बलपौरुषो कर्के संपूर्ण अर्थ प्राप्त होतेहै और बाह्यलोक भी मैत्रीकोकरतेहै सेनागणोकी एकमतिवृत्ति विद्यमानहोवेतब १५ ॥

ज्ञानवृद्धान्प्रशंसंति शुश्रूषंतःपरस्परं
विनिवृत्ताभिसंधानाः सुखमेधंतिसर्वशः १६

जो सेनासमूहकेगण परस्परएकमतीसे शुश्रूषा सेवा करेतोज्ञानवृद्धलोक उन्हकी प्रशंसाकरतेहै जिन्हका ए

कमती संचार निहननही होवे ऐसेसेनाकेगणसर्व प्रकार से सुखवृद्धीको प्राप्तहोनेहे १६ ॥

धर्मिष्ठान्व्यवहारांश्च स्थापयन्तश्च शास्त्रतः
यथावत्प्रतिपश्यन्तो विवर्द्धन्ते गणोत्तमाः १७

जो नसे धर्मिष्ठव्यवहारीका शास्त्रविधीसे परस्परसंमतिसे स्थापनकरतेहे सो सभही यथाधिकार अपनी कार्यसिद्धि को एकमनीसेविचारकर प्रयत्नकरे तबसेनासमूहके उत्तम गुण अर्थ संपदाकीवृद्धी को प्राप्त होनेहैं १७ ॥

पुत्रान्भ्रातॄन्निगृह्णन्तो विनयन्तश्च तान्सदा
विनीतांश्च प्रगृह्णन्तो विवर्द्धन्ते गणोत्तमाः १८

अविनीत जो अपने पुत्रभ्राताहे उन्हको विग्रह करके उन्ह को विनयसंपदा युक्त करतेहे जबविनयसंपदाको पुत्रभ्राता अपने प्राप्तभये तब उन्हको मित्रकीन्याईं संग्रहकरतेहे ऐसे सेनासमूहके उत्तमगुण परस्पर अर्थसंपदाकी वृद्धिसंपन्न होनेहैं १८ ॥

चारमंत्रविधानेषु कोशसन्निचयेषु च
नित्ययुक्ता महाबाहो वर्द्धन्ते सर्वतो गणाः १९

हे राजन् जो नसे सेनाकेगण चारमंत्रकेविधानविषेकुशलहे और कोशसंग्रहविषे निपुणहे स्वामीकार्यविषे नित्यही प्रयत्नसंपन्नहे एसेउत्तमसेनागण यशकीर्तिकी वृद्धिसंपन्न होनेहैं १९ ॥

प्राज्ञान्शूरान्महोत्साहान् कर्मसु स्थिरपौरुषान्
मानयन्तः सदा युक्ता विवर्द्धन्ते गणा नृप २०

हे महाबाहो जौनसेसेनागण प्राज्ञलोकोंको शूरमालोकोंको महाउत्साहसंपन्नलोकोंको और रणकर्मोविषे स्थिरपौरुषकारीलोकोंको सदाही युक्तिकरके मानसत्कारपूजा को करतेहे सोसेनाकेगण जयसंपदाकीवृद्धिसंपन्नहोनेहे २० ॥

द्रव्यवन्तश्च शूराश्च शास्त्रज्ञाः शास्त्रपारगाः
कृच्छ्रास्वापत्सु संमूढान् गणाः संतारयन्ति ते २१

जौनसे सेनागण द्रव्यगणहे शूरमाहे शास्त्रविधीके ज्ञाताहै
शां. रणविद्याकेशास्त्रके पारगामीहे राजाप्रजाको महा आपदा
रा. ध. करकें मूढभयेको महाकष्टसेभी तारदेतेहै २१ ॥
टी. द्रव्यवंतश्च शूराश्च शस्त्रज्ञाः शास्त्रपारगाः
१३२ कृच्छ्रास्वापत्सु संमूढान् गणाः संतारयंतिते २१
क्रोधोभेदोभयंदंडः कर्षणंनिग्रहोवधः
132 नयत्यरिवशंसद्यो गणान्भरतसत्तम २२
हेभरत सत्तम एतेदोषविकारसेनागणविषे विद्यमान
होवेतो शत्रुकेवशकरदेतेहै क्रोध और परस्परकाभेद औ
र भय और शास्त्रकोपकरकेवध और परस्परविषे अभि
मानका संघर्ष और कलह करकें परस्परकानिरोध और प
रस्परविषे मरण मारण एतेदोषगणोके विनाशको त्व
रेतही करतेहै २२ ॥
तस्मान्मानयितव्यास्ते गणमुख्याःप्रधानतः
लोकयात्रासमायत्ता भूयसीतेषुपार्थिव २३
हे राजन् ताते सेना समूहकेगणमुख्यजोहे सो प्रधानता
से सत्कारसवेमाननेयोग्यहे जेती अनेक प्रकारकी लोक
यात्राहे सो सेनासमूहके मुख्यगणोके एकमती संबंधके
अधीनही वनीहे २३ ॥
मंत्रगुप्तिःप्रधानेषु चारश्चामित्रकर्षण
नगणाःकृत्स्नशोमंत्रं श्रोतुमर्हंतिभारत २ ४
हे राजन् अमित्रोको आकर्षणकरणेहारे मंत्रगुप्तिजोहे
सो प्रधानजनोंविषेजोकीनीहे उसको चारजोहे श्रवण
करणे योग्यनहीहे और सेनाकेगणोकोभी श्रोतव्यनहीहे २४
गणमुख्यैस्तुसंभूय कार्यंगणहितंमिथः
पृथग्गणस्यभिन्नस्य विततस्यततोन्यथा २५
सेनागणकेमुख्यलोकोने परस्परसंमतिकरकें सेनागण
का हितकार्य आपही विचारसेकर्तव्यहे और जौनसासे
नागण अपने सेभिन्नहे पृथकभयाहे अन्यथाविस्तारको
प्राप्तभयाहे उसको सेनागणकीमंत्रगुप्ति विदितहोये तो

कार्यसिद्धीको अन्यथाकरतीहै बिगाड़देतीहै २५ ॥

अर्थाःप्रत्यवसीदंति तथानर्थाभवंतिच
तेषामन्योन्यभिन्नानां स्वशक्तिमनुतिष्ठतां २ ९

संपूर्ण कार्योंके अर्थ बिगड़जातेहैं उलटे अनर्थभी प्राप्त होतेहैं जौनसेसेनागण अन्योन्यभेदसंपन्नहोतेहैं सो अप ने अपने सामर्थ्यको भिन्नभिन्न अनुष्ठानकरतेहैं २६ ॥

निग्रहःपंडितैःकार्यः क्षिप्रमेवप्रधानतः
कुलेषुकलहाजाताः कुलवृद्धैरुपेक्षिताः २७

इसकालविषे पंडितजनोने प्रधान प्रधान सेनागणके मुख्यजनोको निग्रहदंड तुरंतही कर्तव्यहै जो अपनेसेना के कुलविषे कलहविग्रहपरस्पर होवे उसको कुलवृ द्धजनों कर्के उपेक्षाहोजावे विचारविधिपूर्वक निग्रहदं डका उपायनहीवने २७ ॥

गोत्रस्यनाशंकुर्वंति गणभेदस्यकारकं
अभ्यंतरंभयंरक्ष्यं असारंबाह्यतोभयं २८

तब सभही सेनागणकेमुख्यलोक अपने गोत्रकेनाशको करतेहै ताते गणभेदकोकरणेहारा भयजोहै अपने अं तर्गतदोषकाहै महाभारी सारसंपन्नहै अतिअसाध्यहै जौनसा बाह्यकाभयहै सो असारहै सुखसाध्यहै २८ ॥

अभ्यंतरेभयेराजन् सद्योमूलानिकृंतति
अकस्मात्क्रोधमोहाभ्यां लोभाद्वापिस्वभावजा

जौनसा अपना अंतर्गतभेदभयहै अनेकराजालो त् २९
कोको समूलक्षयकारीहै सो अकस्मातही दैवगतीसे सभ को क्रोधसे और मोहसे और लोभसेवा अपने स्वभावसेही होजाताहै २९ ॥

अन्योन्यंनाभिभाषंते तत्पराभवलक्षणं
जात्याचसदृशाःसर्वे कुलेनसदृशास्तथा ३०

जिसकर्के सभही नहीके प्रधानलोकपरस्परसंभाषणभी नहीकरतेहै यही उससेनाके पराजयका लक्षणहै सभ ही सेनाकेलोक जाति कर्के एकसमानहै कुलकर्के भी समानहै ३० ॥

शी·
रा·ध·
टी·
१३३

133

नचोयोगेनबुद्ध्यावा रूपद्रव्येणवापुनः
भेदाच्चैवप्रदानाच्च भिद्यंतेरिपुभिर्गणाः ३१
तस्मात्संघातमेवाहु र्गणानांशरणंमहत्
इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणिराजधर्मे १० १
परंतुयोगके पुरुषार्थकर्के बुद्धिज्ञानविचारकर्के औररू
पद्रव्य संपदा कर्के समकाभेदवनाहै प्रधानता भीवनीहै
इस कर्के सेनाके समूहगण शत्रुलोकोंके युक्तिन्याय कर्के
भेदकों प्राप्तहोतेहैं ३१ ताते हे राजन् सेनासमूहगणोंको
अपनी जयकल्याण संपदावास्ते अपनाएकमतीका संघात
ही परमगतीका शरणबनाहै ३२ इतिश्रीम·शां·पर्व·राज
धर्मेसप्तोत्तरशततमोध्यायः १०७ ॥
युधिष्ठिरउवाच महानयंधर्मपथो बहुशाखश्च
भारत किंस्विदेवेहधर्माणा मनुष्ठेयतमंमतं १
युधिष्ठिरउवाच हे भारतपितामहजी यहधर्मकर्मकामार्ग
से महा उत्तमहै और इसकीकईप्रशाखावहोतहैं जेतेध
र्मकर्मकेमार्गहै तिन्होंकामुख्यमार्गक्याहै उसविषे कमक
र्के मुख्य प्रथमक्या मार्ग कर्तव्यहै १ ॥
किंकार्यंसर्वधर्माणां गरीयोभवतोमतं
यथाऽयंपरमंधर्म मिहचप्रेत्यचाप्नुयां २ ॥
सर्वधर्मोविषे आपने कौनश्रेष्टधर्ममानाहै जिस कर्के मै
भी इहलोकपरलोकविषेपरमधर्मके यशाको स्वर्गलो
ककों प्राप्तहोवों उसयुक्तिको आपमेरेप्रतिकहो २ ॥
भीष्मउवाच मातापित्रोर्गुरूणांच पूजाबहुमता
मम इहयुक्तोनरोलोका न्यशश्चमहदश्नुते ३
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर प्रथम धर्मकर्मकायही मुख्यका
र्य है जोमातापिताकी गुरोकी शुश्रूषासेवाकरणी यहीम
नेबहोतकल्याणकारीमानीहै मातापितागुरोकी सेवायु
क्तजो पुरुषहैसो इहां यशसंपदाकों प्राप्तहोताहै और प
रलोकविषे अक्षयस्वर्गसुखकों प्राप्तहोताहै ३ ॥
यचतेऽभ्यनुजानीयुः कर्मतातसुपूजिताः
धर्माधर्मविरुद्धंवा तत्कर्तव्यंयुधिष्ठिर ४

जिसकर्मकरणेकों मातापिता गुरुआज्ञाकरे उसको संदरअ
हाविधिसंयुक्त करकें धर्महोय अधर्महोय धर्मकर्मसें विरुद्ध
होवे तोभी तुरत अविचारसे कर्नाहै ४ ॥

नचतैरभ्यनुज्ञातो धर्ममन्यंसमाचरेत्
यंयंतेऽभ्यनुजानीयुः सधर्मइतिनिश्चयः ५

जो नसाधर्मकर्म मातापिताने आज्ञानहीकीता ऐसे और ध
र्मको आचरणनहीकरे जोपितामाता आज्ञाकरे उसकोही
धर्मनिश्चय करकें करे उसीकोकेवलधर्मकर्मका सारमाने ५

एतएवत्रयोलोका एतएवाश्रमास्त्रयः
एतएवत्रयोवेदा एतएवत्रयोग्नयः ६

हेपार्थ माता पिता और गुरु एहीतीनलोकहै एहीसंन्या
सविनातीन आश्रमहै एहीतीनोवेदहै एही तीनो अग्निहै ६

पितावैगार्हपत्योग्नि र्माताग्निर्दक्षिणःस्मृतः
गुरुराहवनीयस्तु साग्नित्रेतागरीयसी ७

पितागार्हपत्यअग्निहै पिता दक्षिणाअग्निकहाहै और गुरुजो
हैसो आहवनीयअग्निहै ऐसी यहअग्नित्रयी जोहैसोश्रौतध
र्मकी अग्नित्रयीसे श्रेष्ठहै ७ ॥

त्रिष्वप्रमाद्यन्नेतेषु त्रींल्लोकान्विजेष्यति
पितृवृत्यात्विमंलोकं मातृवृत्यातथापरं ८

इस प्रकारकी अग्नित्रयीकों जो प्रसन्नकरताहै सो तीनो लो
कोको जीतलेताहै पिताकीपूजा करकें इसलोकको जयक
रताहै माताकीपूजाकरकें परलोकको अन्तरणतासे जयक
रताहै ८ ॥

ब्रह्मलोकंगुरोर्हत्या नियमेनतरिष्यति
सम्यगेतेष्ववनेस्व त्रिषुलोकेषुभारत ९

और ब्रह्मलोकको गुरुसेवाकी वृत्तिकरकें जीतेगा हेभारत
एहीत्रैलोक्यजयसिद्धिकेमूलकारणहै इन्होंविषेसम्यक
विधीप्रकारसेसेवापरायणहो ९ ॥

यशःप्राप्स्यसिभद्रंते धर्मंचसमहत्फलं
नैतानतिशयेजातु नात्यश्नीयान्नदूषयेत् १०

इन्होतीनोकी पूजासेवासे अधिकयशको प्राप्तहोवेगा स

134

दा कल्याणपावेगा धर्मकर्मकोमहाफलकोंपावेगा इ
न्द्रोंसे अधिक अपने गौरवकों कदापि नहीमाने इन्द्रा
केविना भोजन नहीकरे इन्द्रकी आज्ञाको दूषणनही
माने १० ॥

नित्यं परिचरेच्चैव तद्धि सुकृत मुत्तमं ॥
कीर्तिं पुण्यं यशो लोकान् प्राप्स्यसे राजसत्तम

इन्द्रके नित्यसेवा जोकरे सोईपरम उत्तमसुकृतहे इ
न्द्रकी सेवाकर्के कीर्तिकोपावेगा पुण्यकेयशको पावे
गा और उत्तमलोकोकोपावेगा लोकविषे श्रेष्टताको
पावेगा ११ ॥

सर्वे तस्यादृता लोका यस्यैते त्रय आदृताः
अनादृतास्तु यस्यैते सर्वास्तस्याःफलाक्रियाः १२

हे राजन् जिसपुरुषने इन्द्रतीनोकी अवज्ञाकीनीहै
उसनेतीनोलोकोकीअवज्ञाकीनीहै जिसने इन्द्रोतीनो
काअनादरकियाहै उसकी संपूर्ण क्रिया निष्फलहोतीहै १२

नचायं न परोलोकस्तस्य चैव परंतप
अमानिता नित्यमेव यस्यैते गुरवस्त्रयः १३

उसको इहलोकविषे शुभनहीहै परलोकविषेशुभ
नहीहै जिसनेमातापिताइन्द्र तीनोको देवता जान
करनहीमानहै १३

नचास्मिन न परे लोके यशस्तस्य प्रकाशते
नचान्यदपिकल्याणं परत्र समुदाहृतम् १४

इहलोकविषे उसकायशनही व्याप्तहोता और परलो
कविषे उत्तमगतीका स्याननहीहै औरभी धर्मकर्मक
रणेसे उत्तमस्थान प्राप्तनहीहोता १४

तेभ्य एवहि यत्सर्वं कृत्वा च विसृजाम्यहं
तदासीन्मे शतगुणं सहस्रगुण मेवच १५

जो पुरुष आपअैसे माने जोमे माता पिता गुरोकी से
वाके अनंतर और धर्मकर्मदानयज्ञादिकरोगा माता

मातापिताउरोकेसंतोषकरके जोधर्मकर्मकियाहै सो शतगु
ण सहस्रगुण उस धर्मकर्मका पुण्यफलहोताहै १५

तस्मात्ते संप्रकाशंते त्रयोलोका युधिष्ठिर
दशैवतु सदाचार्यः श्रोत्रियानतिरिच्यते १६

हे युधिष्ठिर ताते यह तीनोहिलोका भूलोक भुवोलोक स्व
र्लोक जैसेहि प्रतीतहोतीहै आचार्यजोहै सो दशश्रोत्रिय
ब्राह्मणोसे पूजादानमो अधिकहोताहै १६

दशाचार्यानुपाध्याय उपाध्यायान्पितादश
पितृन्दश तु मातैका सर्वां च पृथिवीमपि १७

दशआचार्योसे उपाध्याय वेदविद्याका अध्यापक अधिकपू
ज्यहोताहै दशउपाध्यायोसे पिताअधिकमान्यहोताहै और
दशवारपिताकीपूजासे माताकीपूजा अधिकहोतीहै सो
माता पृथिवीसेभी अधिकपूजनीयहोतीहै १७

गुरुत्वे नातिभवति नास्तिमातृसमोगुरुः
गुरुर्गरीयान्पितृतो मातृतश्चेति मे मतिः १८

गौरवतासे माता पृथिवी समान होतीहै माता समानपा
लनेहारा गुरुनहीहै परंतु धर्मोपदेष्टा गुरुमातासे पि
तासे अधिकपूज्यहोताहै १८

उभौ हि मातापितरौ जन्मतस्तौपयुज्यतः
शरीरमेवसृजतः पिता माता च भारत १९

यह माता पिताजो गुरुहै सो देहके जन्मसे उपकारीहै
शरीरकोहिसृजतेहै पिता माता इसकारणसे आचार्य
गुरुपूजामो अधिककहीहै १९

आचार्यशिष्टा या जातिः सा दिव्या साजरामरा
अवध्या हि सदा माता पिता चाप्यपकारिणौ २०

आचार्यनेधर्मकर्मकीजातीसृजीहै सो धर्मकर्मकीप्रधानता
सेदिव्यगतीकोदेतीहै अजर अमर पदको देतीहै ताते मा
ता अवध्यहै अत्याज्यहै पिताभी अवध्यअत्याज्यहै दोनोही
जन्मके उपकारीहै २० ॥

नसंज्वलन्ति तत्कृत्वा नचते ह्यर्पयन्ति तम्
धर्माययतमानानां विदुर्देवा महर्षिभिः २१
पिता माता और गुरु इन्हकी पूजा वचनकरणेसे पुरुषको
दोषप्राप्तिनही होती यह तीनोही अपने पुत्रको शिष्यको
कदापि दोषप्राप्तिनहीकरते जो कोई धर्मकर्मको यतमा
नहोवे उन्हको देवताभी ऋषिलोकोंके समानमानतेहै २१
यश्चावृणोत्य वितथेन कर्मणा ऋतं ब्रुवन्नमृतं
संप्रयच्छन् तं वै मन्येत पितरं मातरं च तस्मैन
द्रुह्येत्कृतमस्य जानन् २२ ॥
जौनसा हितकारी सत्यधर्म कर्मके अधिकारीकरदेताहै
सत्यधर्मप्राप्तीके मार्गकारी वचनकों कहताहै और मोक्ष
पदकी प्राप्तिके मंत्ररूप महावाक्य रूपवचनको ग्रंथवि
धिसंयुक्त कहताहै उसको माता माने पितामाने उसके उ
त्तम उपकारको जानने वाला पुरुष ऐसे गुरुके प्रतिद्रोह
कदापि नहीकरे २२
विद्यां श्रुत्वा ये गुरुं नाद्रियंते प्रत्यासन्ना मन
साकर्मणावा तेषां पापं भ्रूणहत्या विशिष्टं
नान्यस्तेभ्यः पापकृदस्तिलोके २३
हे राजन् विद्या अध्ययनको गुरुसे श्रवणकर्के जौनसे पुरु
षगुरोके प्रति आदरनहीकरते तुरंत तत्कालही मनवा
णी कर्मकर्के विपरीतआचरणकरतेहै ऐसे अधर्मी
पापीजनौको ब्रह्महत्या गर्भहत्यासे अधिक विशेषवा
ला पापहोताहै ऐसे अधर्मीजनोसे अधिकपापी इसलो
कविषे नहीहै २३
यथैवतेगुरुभिर्भावनीया स्तथातेषां गुरवोप्यर्चनीयाः २४
जैसे माता पिता गुरुपूजा योग्यहोतेहै तैसे माता पिता गुरोके २४
गुरुभी पूजनीयहै भावनाकर्के गुरुसे अधिक पूजा योग्यहै
तस्मात्पूजयितव्याश्च संविभज्याश्च यत्नतः
गुरवोर्चयितव्याश्च पुराणं धर्ममिच्छता २५

ताते यह सभ गुरुजनपूजासे मान्यकर्तव्यहै और अन्नवस्त्रा
दिभागदेनेसे सत्कारसंपन्नकर्तव्यहै जोकोई आदिकालप्र
वृत्तपुराणधर्मकी मर्यादाको पालने चाहै सो अपने धर्म
कर्मको स्थितगुरुजनोको अवश्यही पूजासत्कारसेमाने

येन प्रीणाति पितरं तेन प्रीतः प्रजापतिः
प्रीणाति मातरं येन पृथिवी तेन पूजिता २६

जिसप्रकार विधीसंपन्न पूजाकर्कै पिताकों पूजातर्पणसे
प्रसन्नकरताहै उसकर्कै प्रजापति देवताको तृप्तिहोतीहै
और माताको तृप्तकरताहै उसकर्कै पृथिवीको तृप्तिहो
तीहै २६

येन प्रीणात्युपाध्यायं तेन स्याद्ब्रह्मपूजितं
मातृतः पितृतश्चैव तस्मात्पूज्यतमो गुरुः २७

जिसविधिसे विद्याके अध्यापक गुरुको तृप्तकरताहै उसक
र्कै साक्षात्परंब्रह्मचैतन्य देवतापूजितहोताहै २७

ऋषयश्च हि देवाश्च प्रीयंते पितृभिः सह
पूज्यमानेषु गुरुषु तस्मात्पूज्यतमो गुरुः २८

हे राजन् ऐसे उत्तम गुरोके पूजन करणेमो ऋषिदेवता
सभही पितरोंकर्कै संयुक्त तृप्तहोतेहै ताते गुरुदेवता
सभसे अधिक पूजनीयहोताहै २८

केन चिन्नचवृत्तेन ह्यवज्ञेयो गुरुर्भवेत्
नच माता नच पिता मन्यते यादृशो गुरुः २९

हे महाराज उत्तमजो गुरुलोकहै लोभक्रोधादि आचारण
कर्कै गुरोको अवज्ञाकदापि नहीकर्तव्यहै ऐसा मानपि
ताको नहीबनता माताकोभी नहीबनता जैसा मानको
गुरु महाराज इहलोक परलोकमो अधिकारी शिष्यको
करदेतेहै २९

ननैव मान मर्हंति न तेषां हृदये त्वृतम्
गुरूणा मेव सत्कारं विदुर्देवा महर्षिभिः ३०

ऐसे गुरुलोक अवमानयोग्यनहीहै उन्हकी आज्ञाकृत

वचनको दूषणनहीकरे उन्नमगुरोके सत्कारको देवता
लोकभी ऋषिगण संयुक्त होकर अधिकमानतेहैं ३०
उपाध्यायं पितरं मातरं च येऽभिद्रुह्यन्ते मनसा कर्म
णा वा तेषां पापं भ्रूणहत्या विशिष्टं तस्मान्ना
न्यः पापकृदस्तिलोके ३१
हे राजन् जोदुष्टपुरुष अपने अध्यापक गुरुको माताको
पिताको दोषप्रसंगवालेकोभी मनकर्के वाणीकर्के कर्म
चेष्टाकर्के द्रोहकरताहै इन्हकी अवज्ञापापब्रह्महत्यासे
भी विशेषदोषापन्निवालाहै ऐसे पापकारीजनसे और
और पापकारी पुरुषनहीहै ३१
भृतो वृद्धो यो न बिभर्ति पुत्रः स्वयोनिजः पितरं मा
तरं च तद्वै पापं भ्रूणहत्या विशिष्टं तस्मान्नान्यः
पापकृदस्तिलोके ३२
जिन्होसे यहपुरुष पुत्रहोकर उत्पन्नभयाहै वहोउ उन्हके
पालनप्रयत्नसे बडाभयाहै युवाशुणसंपदायुक्तभीभया
है और उन्हकीही योनिसंबंधके जन्मवालाहै उन्हके अ
वज्ञाका पापब्रह्महत्यासे अधिकविशेषहै ऐसे मातापि
ताके विरोधीसे अधिकपापकारी और कोईमनुष्यनहीहै ३२
मित्रद्रुहः कृतघ्नस्य स्त्रीघ्नस्य गुरुघातिनः
चतुर्णां वयमेतेषां निष्कृतिं नानुशुश्रुमः ३३
हे राजन् जो मित्रद्रोहकारीपुरुषहै जो कृतघ्नपुरुषहै
जो स्त्रीहत्याकारी पुरुषहै और जो गुरुघातकारी पुरुष
है यह जो चार महापापकारीपुरुषहै इन्हके पापक
र्मके प्रायश्चित्तकीविधी हमने आपभी कहीनही है
ही श्रवणभी नहीकीनीहै ३३
एतत्सर्वमनिर्देशेनैवमुक्तं यत्कर्तव्यं पुरुषेणे
हलोके एतच्छ्रेयो नान्यदस्माद्विशिष्टं सर्वा
न्धर्माननुसृत्यैतदुक्तम् ३४ इतिश्रीशांति
पर्वणि राजधर्मे १०८ ॥

हे राजन् यह मैने धर्ममार्गका मूलकारण संक्षेपसे सू
चनामात्रकहेहे इसलोकविषे आत्महितकारी पुरुषने
मातापिता गुरोंकी आज्ञासे सभही धर्मकर्मकर्तव्यहे
इन्ह तीनोंकी सेवाशुश्रूषा पूजाभी कर्तव्यहे यह धर्मतो
संपूर्ण धर्मकर्मोंसे विशेषफलमत्तावालाहे सर्वधर्म
कर्मोके अनुसारहोकरमैनेकहाहे सभही धर्मइस
के अनुसारहे ३४ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि
राजधर्मे अष्टोत्तरशततमोध्यायः १०८ ॥

युधिष्ठिरउवाच कथंधर्मे स्थातुमिच्छ न्नरोवर्तेत
भारत विद्वज्जिज्ञासमानाय प्रब्रूहि भरतर्षभ १

हे भारत पितामहजी यहपुरुष धर्ममार्गविषे स्थिती
करणेकीवांछाकरणेद्वारा किसप्रकारसे वर्तमानहोवे
आपसर्वधर्मवेत्ताहो आपसे धर्मस्थितीकी जिज्ञासा
वाले मोको आपअवश्यासेकहो १

सत्यं चैवानृतं चोभे लोकानावृत्य तिष्ठतः
तयोः किमाचरेद्राजन् पुरुषोधर्मनिश्चितः २

किंस्वित्सत्यं किमनृतं किंस्विद्धर्मं सनातनं
कस्मिन्काले वदेत्सत्यं कस्मिन्कालेनृतंवदेत् ३

हे भरतसत्तम सत्यक्याहै असत्यक्याहै सत्यकैसेवक्तव्यहे
असत्यकैसे वक्तव्यनहीहै कौनकालविषे सत्यकहना ब
नताहै और कौनकालविषे धर्मवेत्ता पुरुषने असत्यक
हना बनताहै ३ भीष्मउवाच

सत्यस्य वचनं साधु न सत्याद्विद्यते परम्
यत्तुलोकेषु दुर्ज्ञानं तत्प्रवक्ष्यामि भारत ४

भीष्मउवाच हे भरत सत्यधर्मकावचन परमउत्तमहै

सत्यधर्मसेपरे और धर्मकोई नहीहे परंतु सत्यधर्मका
इसलोकविषे विज्ञानकठिनहे उसकोमै तेरेप्रतिविचा
रसे कहताहूं ४

भवेत्सत्यं न वक्तव्यं वक्तव्यमनृतं भवेत्
यत्रानृतं भवेत्सत्यं सत्यंचाप्यनृतं भवेत् ५

किसीकालविषे सत्यकहना नही बनताहे तहा असत्यही वक्तव्यहोताहे जहां सत्यबोलना धर्मको असत्यकरे तहा असत्यवचनही सत्यरूपहोताहे और सत्यवचनभी तहां असत्यहोताहे ५

तादृशो बध्यते बालो यत्र सत्यमनिष्ठितम्
सत्यानृते विनिश्चित्य ततो भवति धर्मवित्

हे राजन् सत्यवचनके असत्यवचनके धर्माधर्मपरिपाकफलका अज्ञाना जो बालबुद्धि पुरुषहे सो सत्यवचनकरकैही अधर्मबंधको प्राप्तहोताहे ताते सत्य असत्यके फलपरिपाकको जाने तो यह पुरुष धर्मवेत्ताहोताहे ६ ॥

अप्यनार्यो कृतप्रज्ञः पुरुषोप्यतिदारुणः सुमहत्प्राप्नुयात्पुण्यं बलाकोंधवधादिव ७ ॥ ॥

हे राजन् जौनसा पुरुष महादुष्टबुद्धिहे और शास्त्रज्ञानरहितहे महादारुणकर्मकरणेहाराहे सो पापकर्मकरकैही महापुण्यफलको प्राप्तहोताहे जैसे वनविषे अजगरजोहे अथवा नासिका इंद्रियकी गंधज्ञान हनिकरकै अनेकजीवोके घातकरणेहारे सिंहादिकोंर मृगमारणेकरकै बलाकनामजोव्याधहे सो अंधव्याघ्रको प्राप्तभयाहे ७ ॥

किमाश्चर्यंच यन्मूढो धर्मकामोप्य धर्मवित्
सुमहत्पापमाप्नुयात् गंगायामिव कौशिकः ८
जोनसा मूढ सत्यवादी पुरुष है सो चोरोंको धनसंपन्न
पथिकोंका यात्रा मार्गका सत्यवचन करके चोरोंसे प
थिकोंका वध कराइ करके सत्यवचनसेही पापफलको
प्राप्त होता है यह क्या आश्चर्य है कौशिक जो उल्लूपती
सो हिंसाशून्यनिर्दो उसने गंगातीर विषे एक सर्पिणीके
एक शत अंडे भक्षण कीनी है जिन्हसे सर्पोने उत्पन्न
होकर अनेक प्राणी विनाश करणेथी ऐसे कर्म करके सो
उल्लूभी महापुण्यफलको हिंसा धर्म करके प्राप्त भया है ८
नाहंशाय मनुप्रश्नो यत्र धर्मः सुदुर्लभः
दुष्करः प्रतिसंख्यातुं तत्केनात्र व्यवस्यति ९
हे राजन् यह तुम्हारा प्रश्नभी तैसाही है जिस विषे धर्म
का निर्णय महादुर्लभ है इसका उत्तर करना दुष्कर है
यह इस प्रकारके धर्मकी व्यवस्था कहनी दुष्कर है ९
प्रभवार्थाय भूतानां धर्मप्रवचनं कृतम्
यः स्यात्प्रभव संयुक्तः स धर्म इति निश्चयः १०
सर्वभूतोंके कल्याणवास्ते धर्मशास्त्रका प्रवचन कहा है
जोनसा कर्म सर्वभूतोंका कारणकारी होवे सोई धर्म
का निश्चय है १०
धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मेण विधृताः प्रजाः
यः स्याद्धारण संयुक्तः स धर्म इति निश्चयः ११
धारणसेही धर्मको धर्मनामसे कहते है धर्म करकेही सं
पूर्णप्रजा धारण कीनी है जो सर्वभूतोंकी रक्षाधारणमों
युक्त होवे सोई धर्मका निश्चय कहा है ११
अहिंसार्थाय भूतानां धर्मप्रवचनं कृतं
यः स्यादहिंसा संयुक्तः स धर्म इति निश्चयः १२
हे राजन् सर्वभूतोंकी अहिंसावास्ते धर्मका उपदेशव

ना है जोनसा कर्म अहिंसा संयुक्त होवे सोई धर्मका नि
श्चय स्वरूप कह्या है १२

श्रुतिधर्म इति ह्येके नेत्याहुरपरे जनाः
न च तत्प्रत्यसूयामो न हि सर्वं विधीयते १३

जो वेद विषे कह्या सो धर्म है एक तत्ववेत्ता जन ऐसे कहते
है एक कहते है श्येनयागादि यज्ञ हिंसा प्रधान है सो
धर्म नहीं है अहिंसारूपही यज्ञधर्म शुभ है १३

येऽन्यायेन जिहीर्षन्तो धनमिच्छन्ति कस्यचित्
तेभ्यस्तु न तदाख्येयं स धर्म इति निश्चितः १४

जोनसे चोरादिक अधर्मकर्के परद्रव्यहरणें चाहते है सो कि
सी पुरुषको धनसंपन्न लोकोंके गृहकी वार्ता पूछे तव धा
र्मिक पुरुषने असत्य वचन कहकर वहाउ दृष्टनीति
वास्ते असत्यही शपथभी कर्तव्य है ऐसा असत्य वचन
भी धर्म होता है और भिक्षुक लोकोंसे धनी पुरुषका नाम
कहना ऐसा सत्य वचन धर्मरूप होता है १४

अकूजनेन चेन्मोक्षो नावकूजेत्कथंचन
अवश्यं कूजितव्ये वा शंकेरन्वाप्यकूजनात् १५

जहां नहीं सत्य वचन कहनेकरके अपना परका अध
र्मसे मोक्ष होजावे तहां नहीं सत्य कहना और सत्य नहीं
कहनेकर्के जहां शंका निवृत्त नहीं असत्य वचन मो हि
सत्य जैसे विश्वास वास्ते असत्य कहकर्के शपथ सौगं
धकर्के दृढविश्वास करादेवे १५

श्रेयस्तत्रानृतं वक्तुं सत्यादिति विचारितं
यः पापैः सह संबंधान्मुच्यते शपथादपि १६

तहां असत्यही सत्यसे अधिक कल्याणको करता है य
ह विचार धर्मरहस्यविषे सिद्ध होता है जो पुरुष पापोंका
साथ अधर्म संबंधसे असत्य कहनेसे मुक्त होजावे
तहां शपथभी असत्य करे १६

न तेभ्योपि धनं देयं शक्ये सति कथंचन
पापेभ्योपि धनं दत्तं दातारमपि पीडयेत् १७

हे राजन् पापी लोकोंको धनदानके वचनको असत्यहीक
रे तहां असत्यवचन धर्मरूपहोताहै पापीजनोंको धनदा
नजोहै सो दाताकोभी अपकीर्तिकरताहै परलोकविषे
नरकको प्राप्तकरताहै १७

स्वशरीरोपरोधेन धनमादातुमिच्छतः
सत्यं संश्रुतिपर्य्यर्थं यद्ब्रूयुः साक्षिणः क्वचित् १८

जहां दो पुरुष ऐसी संमतिको परस्परकरतेहै हे साथो धनतु
म्हारा लगेगा और पुरुषार्थ प्रयत्नमेराहै ऐसे व्यवहारकार्यसे
जो लाभमिलेगा उसकोहमदोनो परस्पर विभागलेकर
लेवेगे एसीमर्यादाकर्के ऋणीपुरुष व्यवहारकार्यमोप्रवृत्त
भयाहै जो कदाचित् चोरादि उपाधिकर्के समग्रधनकोना
शहोजावे तव धनीपुरुष ऋणीपुरुषसे ऋणीपुरुषके स्व
शरीर निरोधकर्के दासीभावकरणेकर्के अपने धनको
लेनेचाहै औरऋणीपुरुष दासभावकर्केभी धनदेनेको स
मर्थनहीहोता तहां दोनोका विवादहोताहै उन्हके सत्यव्य
वहारकी सिद्धीवास्ते साक्षीबुलायेजातेहै तहां साक्षीलो
कवक्तव्य योग्यवचनकों नहीकहें जो प्रातरजनमुद्राऋणी
पुरुषने धनेपुरुषसे उधारलीनीहै ऐसे जवकहदेवे १८

अवक्ता तत्र तद्वाक्ये सर्वे ते ऽनृतवादिनः
प्राणात्यये विवाहे च वक्तव्यमनृतं भवेत् १९

जो तो धनीपुरुष धनसंपन्नहै ऋणीपुरुष निर्धनहै क्षीणश
रीरहै दासभावके परवशताकर्के अपने कुटुंबकीभी पोष
णनहीकरसके तहां साक्षी लोकने उसके रक्षावास्ते कछुअस
त्य वचनजैसे असत्यवचनकहनेसे ऋणीपुरुषकी रक्षाकी
नी तव असत्यवचन कहना दोषोंको नही करताजाते
प्राणांतकालमो प्राणरक्षावासते और विवाहके आचार
व्यवहारकी प्रवृत्तिवास्ते मिथ्यावचन धर्मरूपहोताहै १९

अर्थस्य रक्षणार्थाय परेषां धर्मकारणात्
परेषां सिद्धिमाकांक्षन्नीचः स्यात् धर्मभिक्षुकः २०

हे राजन् अपनी सर्वस्व अर्थकी रक्षावास्ते परोपकारकी

श्री.
रा. ध.
टी.
१३५

139

रक्षावास्ते और अपने धर्मकर्मकी रक्षावासते असत्यवचन
कहना धर्महीहोताहै और परोपकारकी सिद्धीवास्ते धर्ममा
र्गका भिक्षुक जोहै सो सत्यवचनकहनेसे नीचहोताहै र
हितहोताहै असत्यवचन कहताहै २०

प्रतिश्रुत्य प्रदातव्यः स्वकार्यस्तु बलात्कृतः
यःकश्चिद्धर्म समयात् प्रच्युतो धर्मसाधनः २१

जिहा व्यवहारविषे लाभ अलाभ दोनोने समभागकरलेने
ऐसा मर्यादा धर्मकियाहै तहां ऋणीने धनेको जो कहाहै
सो यथाभागहै देना अथवा धनके व्यवहारकरणेहारा
ऋणी धनी पुरुषने बलसे अपना दास कियाहै सोई धनी
उस ऋणीके साथ कपटकरे नष्टभये धनको अनष्टनही
कहताहै तहां जो धनी दुर्बले धर्ममर्यादासे भ्रष्टभयाहै
अधर्मव्यवहारको साधनकरताहै २१

दंडेनैव सहंतव्य स्तेपंथाने नमाश्रितः
च्युतः सदैव धर्मेभ्यो मानवे धर्ममास्थितः २२

जो राजाने दंडकरके ताडनकर्तव्यहै अधर्ममार्गको आश्रि
तभयाहै सो देवमार्गके धर्मसे भ्रष्टभयाहै अमानुषध
र्मको असुरभावको प्राप्तभयाहै महाशूद्रहै वंचनावृत्ति
मो स्थितभयाहै स्वधर्मको त्यागकर शूद्रधर्मको प्राप्तहो
कर अपना उपजीवनकराचाहताहै २२

शूद्र स्वधर्म मुत्सृज्य नमिच्छे उपजीवितं २२
सर्वोपायै र्निहंतव्यः पापो निकृतिजीविनः
धन मित्येव पापानां सर्वेषा मिह निश्चयः २३

ऐसा पापीहै निकृष्टधर्मके जीवनवालाहै सर्वप्रकारके
दंडके उपायधर्मोकर्के सर्वस्व हरणादि वधदंडयोग्यहै १२

अविषह्याह्यसंभोज्या निकृत्या पतनं गताः
च्युता देव मनुष्येभ्यो यथा प्रेता स्तथैवते २४

पापीलोकोको धनहीन पापकर्मका मूलकारणहै पापी
लोकजोहै अपराधत्तमा योग्यनही भोजनव्यवहारके यो

ग्यनहींहै जिसस्थानमोहै तहांसे निवासकरके जीविकारहित कर्तव्यहै २४

निर्यज्ञास्तपसाहीना मास्मतैः सहसंगमः

धननाशा दुःखतरं जीविता द्विप्रयोजनम् २५

देवकर्म मनुष्यव्यवहारसे भय कर्तव्यहै जैसे प्रेतका स्पर्शनहीं तैसे पापीलोकभी धर्महानिसे भ्रष्टरूपहै ऐसी पापीलोा के यज्ञयागादि संबंधरहितकर्तव्यहै उन्हके साथ तुम्हारा संगमनहीहोवे धननाशसेभी अति दुखकारी जीवनधर्म से वियोगकरणा महाकठिनहै २५

अयं ते रोचतो धर्म इति वाच्यः प्रयत्नतः

नकश्चिदस्तिपापानां धर्मइत्येष निश्चयः २६

हे राजन् ऐसा यह तुमको निश्चयहोवे पापीजनोके मध्यविषे ऐसा उपदेशके योग्यकोईनहींहोता सभही पापीलोक अपने अधर्म आचरणकोही कुलपरंपराका धर्ममानतेहै सो कैसे पापीलोकोको धर्मकोटि स्मरणका अभावसदा बनाहै २६

तथागते च यो हन्या नासौ पापेन लिप्यते

स्वकर्मणा हतं हंति हत एव स हन्यते २७

हे राजन् तथा प्रकारके पापधर्मरतको जो मारे सो हत्यापापक के लिप्तनहीहोताहै पापीजन पापकर्मकर्के आपमराहै सो आगेही हतहै उसको जोमारताहै सो मृतमयेकोही मारताहै ताते पापीके मारणेसे हत्यादोषनहीहोता २७

तेषु यः समयं कश्चित् कुर्वीत हतबुद्धिषु २८

ऐसे पापीजनोविषे जो कोईपुरुष मारणेका नियमव्रतकरे सो असंदेहकरके अवधूपकरे पापीजनोके वधविषे पुण्य फलप्राप्तहोताहै २८

यथा काकश्च गृध्रश्च तथैवोपदि जीवनः

ऊर्ध्वं देह विमोक्षांते भवन्त्येतासु योनिषु २९

जैसे काकगृध्र इत्यादिजीवनीचयोनिहै तैसे पापीलोकभी काकगृध्रादिकोके रूपभेदहीहै जीवतेहै सो पापीजन देहां तकालसे उपरंत काकगृध्रादि योनिको प्राप्तहोताहै २९

यस्मिन्यथा वर्तते यो मनुष्य स्तस्मिं स्तथा वर्तितव्यं

श्री
रा.धं.
टी.
१४०

सधर्मः मायाचारो मायया बाधितव्यः साध्वाचारः
साधुना प्रत्युपेयः २९ इति श्री राजधर्मे सत्यानृत
के शान्ताधिके नवमः १०९

हे राजन् जो पुरुष जिस प्रकारके धर्म अधर्मके मार्गमो प्रवृ
त होताहै उसविषे उसीधर्म अधर्ममार्गके मान सत्कार दं
डदमनादि आचारसे प्रवृत्तहोना सोई धर्ममार्गहै मायाकारी
छलकपटके आचारवाला पुरुष मायाछलवृत्तिकरकेंही
बाधापीडा युक्तकर्तव्यहै साधु आचारवाला पुरुष साधु आ
चारकर्के सेवितव्यहै २९ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि
राजधर्मसत्यानृतके शांताधिको नवमोध्यायः १०९ ॥

युधिष्ठिरउवाच क्लिश्यमानेषु भूतेषु तैस्तै र्भावैः त
तस्ततः दुर्गाण्यति तरेयेन तन्मेब्रूहि पितामह १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामह जेते यह मनुष्य लोकोके पुरु
षरूपी प्राणीजनहै सो लोभमोहादि अनेकप्रकारोके भावो
कर्के क्लेश कल्पनाकर्के पीडितहोतेहै तिन्होविषे धर्मवेत्ता
पुरुष जिसप्रकारके आचारकर्के अति दुस्तर संकटको
तरजावे उसआचारकों मेरेप्रति आपकहो १

भीष्मउवाच आश्रमेषु यथोक्तेषु यथोक्तं ये द्विजात
यः वर्तंते संयतात्मानो दुर्गाण्यति तरंतिते २

भीष्मउवाच हे राजन् जोनसे यथोक्त द्विज संस्कारवाले
द्विजातिलोकहै तीनवर्णोके सो शास्त्रोंविषे जैसा आश्रमों
विषे धर्महै जितात्मा जितेंद्रियहोकर सेवतेहैं सो दुस्तरक्ले
शोकों तरजातेहै २

येदंभा न्नाचरंतिस्म येषां वृत्तिश्च संयता
विषयांश्च निगृह्णंति दुर्गाण्यति तरंतिते ३

जोनसे नरदंभपाखंडसे धर्मका आचारनहीकरते तिन्हकी
वृत्ति नियमसंयुक्तहै विषयोंका भोगवासनाकर्के ग्रहण
नही करतेहै सो दुस्तर दुःखोंकों तरजातेहैं ३

प्रत्याहुर्नोच्यमानाये नहिंसन्तिचहिंसिताः

प्रयच्छंति नयाचंते दुर्गाण्यति तरंतिते ४
जौनसे नर सदैव मूढजनोंकर्के निंद्यमानहे हिंसाकोनही
करते निंदाप्रहारकोभी नहीकरते आपसभकोदानभोगदे
तेहे याचनानहीकरतेहे सो दुस्तर संकटको तरजातेहे ४
वासयंत्यतिथी न्नित्यं नित्य मेवाप्यसूयकाः
नित्यं स्वाध्याय शीलाश्च दुर्गाण्यति तरंतिते ५
जौनसेनर अतिथिलोकों नित्यं प्रति निवासदेतेहे पूजनक
रतेहे सो ऐसे पुरुष दुस्तर आपदाकों तरजातेहें ५
माता पित्रोश्च ये वृत्तिं वर्तंते धर्मकोविदाः
वर्जयंति दिवास्वप्नं दुर्गाण्यति तरंतिते ६
जौनसे नर माता पिताकी नित्यसेवा वृत्तिको करतेहे ऐ
से धर्ममार्गके वेत्ताहे दिनविषे निद्राको वर्जनकरतेहे सो
नर दुर्गमार्गको तरजातेहे ६ ॥
येवा पापं न कुर्वंति कर्मणा मनसा गिरा
निक्षिप्तदंडा भूतेषु दुर्गाण्यति तरंतिते ७
जौनसे पुरुष पापकर्मकर्मको मनकर्के कर्मकर्के वाणीकर्के
नहीकरतेहे भूतोंविषे अधर्मशासनाके दंडकोस्थापनकरते
हे ऐसे नरदुस्तर आपदाको तरजातेहे ७
येन लोभा नयं त्यर्थान् राजानो रजसान्विताः
विषयान्परि रक्षंति दुर्गाण्यति तरंतिते ८
जौनसे राजालोक लोभकर्के अर्थ व्यवहारको नहीकरतेहें
राजाहोकर रजोगुणावृत्ति युक्तहोकर अपने राष्ट्रके विषयप्र
देशकों रक्षाकरतेहे ऐसे राजालोक दुस्तर आपदा क्लेशों
को तरजातेहे ८
स्वेषु दारेषु वर्तंते नान्यवृत्ति मृताहृतौ
अग्निहोत्र परास्संतो दुर्गाण्यति तरंतिते ९
जो पुरुष अपनी दाराविषे प्रति ऋतुकालविषे प्रहम और पर
दाराविषे जितमनो वृत्तिनहीहे नित्यंप्रति अग्निहोत्र पराय
णहे सो दुर्गमार्गको तरजातेहे १९

आहवेषु च ये शूरा त्यक्त्वा मरणजं भयम्
धर्मेण जय मिच्छंति दुर्गाण्यति तरंतिते १०
जो पुरुष रणकर्मविषे शूरमाहे मरणभयको त्यागकर धर्म
युद्धकर्के जयवांछाकरतेहे सो पुरुष दुस्तर संसारमार्गको
तरजातेहे १०
ये वदंतीह सत्यानि प्राणत्यागे प्युपस्थिते
प्रमाणभूता भूतानां दुर्गाण्यति तरंतिते ११
जो पुरुष धर्मरक्षावासते प्राणत्यागकालमोभी सत्यवचन
कहतेहे संपूर्णभूतोंकी दयाविषे प्रधान प्रमाणभूतहे सो
पुरुष दुस्तर संसारको तरजातेहे ११
कर्माण्यकुहकार्थानि येषां वाचश्च सूनृताः
येषां मर्थश्च संबद्धा दुर्गाण्यति तरंतिते १२
जिन्हके धर्मकर्म छलदंभ रहितहे वाणीके वचन धर्म मार्गके
निर्णयवालेहें जिन्हके सभही अर्थ व्यवहार धर्मसंबंधवालेहे
ऐसे जो पुरुषहे दुस्तर धर्ममार्गतरजातेहे १२
अनध्यायेषु ये विप्रा स्वाध्यायं नेहकुर्वते
तपो निष्ठा स्वतपसो दुर्गाण्यति तरंतिते १३
जोनसे विप्रलोक अष्टम्यादि अनध्यायदिनोविषे स्वाध्यायवेद
को अभ्यासनही करते तपोनिष्ठाको लखेनविधिसे तपकरते
हे ऐसे विप्रलोक दुस्तर वेदधर्मको तरजातेहे १३
येतपश्च तपस्यंति कौमार ब्रह्मचारिणः
विद्यावेद व्रतस्नाता दुर्गाण्यति तरंतिते १४
जोनसे ब्राह्मणलोक बालअवस्थामो उपनयनसंस्कारको
पाइकर कौमारब्रह्मचर्यके तपकर्के ब्रह्मचारीहोतेहे वेद
विद्याको अध्ययनकर्के समावर्त संस्कारसे स्नानकरतेहे
सो ब्राह्मण दुस्तर ब्रह्मधर्मको तरजातेहे १४
येच संशांत रजसः संशांत तमसाश्च ये
सत्वे स्थिता महात्मानो दुर्गाण्यति तरंतिते १५
जोनसे ब्राह्मण गृहस्थ धर्मविषे शांत रजोगुणवृत्तिहोतेहे

और शांततमोगुण वृत्तिहोतेहे सत्वगुणवृत्तिविषे स्थितभयाहे
ऐसे महात्मालोक दुस्तर गृहस्थ धर्मको तरजातेहे १५
येषां न कश्चित्त्वजति नयसंतिहि कस्यचित्
येषामात्म समोलोको दुर्गाण्यति तरंतिते १६
जोनसे पुरुष श्रेष्ठहोकर पराई संपदा देषकर्के ईर्षासीसंतप्त
नहीहोतेहे और इंद्रियग्रामके भोगार्थसें निवृत्तभयेहे सो पु
रुष दुस्तर धर्मकर्म मार्गको तरजातेहे १६
परश्रिया न तप्यंति येसंतः पुरुषर्षभाः
ग्राम्यादर्था निवृत्ताश्च दुर्गाण्यति तरंतिते १७
जिन्हके आचार विचार धर्मसे लोकत्रासको नहीकरतेहे ऐ
सेपुरुष आपभी लोकोसे कामक्रोध भयकर्के त्रासनही करतेहे
जिनको इसलोकविषे सभही भूत आत्मसमानही सुखदुःख
दशामोही ऐसे दयाधर्म संपन्न पुरुष दुस्तर परलोकमार्गमो
तरजातेहे १७ ॥
सर्वान्देवा नमस्यंति सर्वधर्मांश्च शृण्वते
येश्रद्दधाना शांताश्च दुर्गाण्यति तरंतिते १८
येनमानित्व मिछंति मानयंति च येपरान्
मान्यमाना नमस्यंति दुर्गाण्यति तरंतिते १९
जोनसे महात्मालोक संपूर्ण देवतागणको ईश्वरसमान नम
स्कार सदाकरतेहे संपूर्णधर्मोको शास्त्रसे श्रवणकरतेहे
और संपूर्ण धर्मकार्योविषे श्रद्धाको करतेहे शांतवृत्तिभये सो
पुरुष दुर्गम परलोक मार्गको तरजातेहे १९
येच श्राद्धानि कुर्वंति तिथ्यां तिथ्यां प्रजार्थिनः
सुविशुद्धेन मनसा दुर्गाण्यति तरंतिते २०
जोनसे पुरुष आश्विनमासके महालयपक्षमो तिथितिथि
प्रति प्रजासंतानवासते श्राद्धोंको विधिकर्के करतेहे सोदुर्ग
म परलोक मार्गको तरजातेहे २०
येक्रोधं संनियच्छंति क्रुद्धान्संशामयंति च

न च क्रुध्यंति भूतानां दुर्गाण्यतितरंति ते २१

जौनसे पुरुष आपक्रोधको संयम करतेहै क्रोधवालेजनोंके
क्रोधको शमनकरतेहै आपभी भूतोंके प्रति कोपनही कर
तेहै सो दुर्गम परलोकके मार्गको तरजातेहै २१

मधुमांसं च ये नित्यं वर्जयंतीह मानवाः
जन्मप्रभृति मद्यं च दुर्गाण्यति तरंति ते २२

जौनसे मधुमांसको शास्त्रज्ञानसे त्यागकरतेहैं और जन्मसेलेक
र मरणपर्यंत मद्यको वर्जनकरतेहै सो पुरुष दुस्तर दुखमा
र्गोको तरजातेहैं २२

यात्रार्थं भोजनं येषां संतानार्थं च मैथुनम्
वाक्सत्य वचनार्थाय दुर्गाण्यति तरंति ते २३

प्राणयात्रावास्ते जिन्हका भोजनहै और संतानार्थ जिन्हका
स्त्रीभोगहै वाणी जिन्हकी सत्यधर्मके वचनवास्तेहै सो पुरु
ष दुर्गम आपदामार्गोको तरजातेहै २३

ईश्वरं सर्वभूतानां जगतः प्रभवाप्ययं
भक्ता नारायणं देवं दुर्गाण्यति तरंति ते २४

हे राजन् जौनसा ईश्वर सर्वभूतोंका उत्पत्तिप्रलयकारीहै ऐ
से भगवानजीको भक्तिकर्के भजतेहै सो पुरुष दुर्गम जन्म
मरणके संसारमार्गको तरजातेहै २४

य एष पद्मरक्ताक्षः पीतवासा महाभुजः
सुहृद्भ्राता च मित्रं च संबंधी च तथाच्युतः २५

जौनसा यह कृष्णभगवान पद्मपत्रके समान रक्तवर्णनेत्रवा
नहै पीतवस्त्रधारीहै महाविशालभुजा संपन्नहै तुम्हारा
सुहृदहै भ्राताहै मित्रहै जातिसंबंधवालाहै और सर्वदिन
अच्युत प्रभावशक्तिसंपन्नहै २५

य इमान् सकलान् लोकान् चर्मवत्परिवेष्टयेत्
इच्छन् प्रभुरचिंत्यात्मा गोविंदः पुरुषोत्तमः २६

जो यह भगवान कृष्णभगवान अपनी सत्ताकर्के सर्वलोको
कोके समान अंतर्गतके व्याप्तकरताहै अपनी इच्छासे पालन

करताहै ऐसा अचिंत्यस्वरूप गोविंदनामकरकें पुरुषोत्तम भ
गवानहै २६

स्थितः प्रियहिते जिष्णोः स एष पुरुषोत्तमः
राजंस्तवच दुर्धर्षो वैकुंठः पुरुषर्षभः २७

एही अर्जुनके प्रियहित करणेमो सदास्थितभयाहै सो यह स
र्वपुरुषविषेश्रेष्टहै हे राजन् तेरेभी प्रियहित करणेविषे स
दा एकाग्रनिष्ठासंपन्नहै महादुर्द्धर्षहै सदाअकुंठितप्रभाव
शक्ति संयुक्त सकलपुरुषोंका स्वामीहै २७

यएनं संश्रयंतीह भक्त्या नारायणं हरिम्
ते तरंतीह दुर्गाणि नचात्रास्ति विचारणा २८

जोनसे पुरुष ऐसा नारायण हरिकों भक्तिकरकें शरणाग
तहो करतेहै ऐसे पुरुष दुस्तर भवसागरके सकलभयकार्यो
को तरजातेहै इसविषे विचारणा नहीकर्तव्यहै २८

दुर्गातितरणं येच पठंति श्रावयंति च
कथयंतिच विप्रेभ्यो दुर्गाण्यति तरंतिते २९

हे राजन् दुर्गातितरणका कीर्तन मेने तमकोकहाहै इसको
जो पुरुष आपपाठकरतेहै भक्तजनोंकोश्रवणकरावतेहै
और ब्राह्मणोंकोकथनकरतेहै सोपुरुष सर्वप्रकारकी दुर्ग
तीकोतरजातेहै २९

इतिकृत्य समुद्देशः कीर्तितस्ते मयानघ
तरंति येन दुर्गाणि परत्रेहच मानवाः ३०

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे
दुर्गातितरणं नाम शतोत्तरोदशमोध्यायः ११०

हे राजन् यह मेने तुम्हारेको अवश्यकर्तव्य कृत्यका एक
देशमात्र लेशकहाहै हे अनघ जिसके आचरणकरकें सभ
ही मनुष्यलोक इहलोकविषेपरलोकविषेभी संपूर्णदुर्गम
दुःखसमुद्रोकोंतरजातेहै ३० इतिश्री राजधर्मे दुर्गाति
तरणं शतोत्तरोदशमोध्यायः ॥ १०॥

युधिष्ठिरउवाच अशौम्याः सौम्यरूपेण सौम्याश्चासौ
म्यदर्शनाः ईदृशान् पुरुषांस्तात कथं विद्यामहे वयं १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी इसलोकविषे असौम्यजन
सौम्यरूपकर्के दृष्टहोतेहे और सौम्यरूपजनजोहे असौम्यरूप
रूपकर्के दृष्टहोतेहे हेतातऐसे लोकोंको हमवास्तव सौम्यरू
प असौम्यरूपतासे वास्तवधर्मसे कैसें जानेगे ऐसे विचारत
त्वको आपमेरेकों कहो १

भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनं
व्याघ्रगोमायुसंवादं तन्निबोध युधिष्ठिर २

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर इस अर्थविषे एक पुरातन इति
हासकों उदाहरण कहतेहे व्याघ्रका और शृगालका परस्पर
संवादभयाहे उसको आपश्रवणकरो २

पुरिकायां पुरि पुरा श्रीमत्यां पौरिको नृपः
परहिंसारतिः क्रूरो बभूव पुरुषाधमः ३

हे राजन् पुरिका नामवाली श्रीमतीपुरीविषे एक पौरि
क नामसे प्रसिद्धराजा भयाहे सो राजा परहिंसारतिभया
हे अतिक्रूरभयाहे सो राजा परहिंसारतिभयाहे अतिक्रूर
भयाहे पुरुषोविषेमहानीच प्रकृतिभयाहे ३

स त्वायुषि परिक्षीणे जगामानीप्सितां गतिं
गोमायुत्वं च संप्राप्तो दूषितः पूर्वकर्मणा ४

सो राजा जब उसकी आयुषाक्षीणभई तबसो राजा अपनी
अनीप्सित मरणावस्थाकीगतिको प्राप्तहोताभया पूर्वले
पापकर्मके दोषसे शृगालरूपताकों प्राप्तहोताभया ४

संस्मृत्य पूर्वभूमिं च निर्वेदं परमं गतः
न भक्षयति मांसानि परैरुपहृतान्यपि ५

अपने पूर्वले जन्मकी कर्मभूमिकाकों स्मरणकर्के परमवैरा
ग्यकों प्राप्तहोताभया उस वैराग्यकर्के आपमांसभक्ष्यके उ
द्यमको नहीकरताभया और परशृगालोंभी मांसउसको प्रा
प्तकिये उन्हकोभी नहीभक्षणकर्ताभया ५

अहिंसः सर्वभूतेषु सत्यवाक्य दृढव्रतः
स चकार यथाकाल माहारं पतितैः फलैः ६

ऐसा अहिंसावृत्ति सर्वभूतोंविषे होताभया सत्यवचनके ध
र्मविषे दृढव्रतहोताभया सो शृगाल अपनी आहारवृत्तिको
यथाकालवृत्तोसे आपही पतितफलोंकर्के करताभया ६

श्मशाने तस्य चा वासो गोमायोः सततं भवेत्
जन्मभूम्यनुरोधाच्च नान्यं वास मरोचयम् ७

हे राजन् ऐसे शृगालको अपना निवासश्मशानविषेही
जन्मभूमिके प्रतिवंधसे संमतहोताभया और स्थानविषे
उसको निवासनही रोचताभया ७

तस्य शौचम मृष्यंत स्ते सर्वे सहजातयः
चालयंति स्मतां बुद्धिं वचनैः प्रश्रयोत्तरैः ८

जोनसे उसकी जातिके शृगालहै सो उसकी शौचवृत्तिको
उचितनही मानतेभये जोनसे अशुद्धवृत्ति सहायहोतेहै
सो संतजनोंकी शुद्धवृत्तिको अपनी कल्पनाको प्रश्नोत्तर
वचनोकर्के बुद्धिकी चपलतासे चलितकरदेताहै शृगाल
सभही उसको अपनी जाति मानकर्के वचनकहतेभये ८

वसन्पितृवने रौद्रे शौचे वर्तितु मिच्छसि
इयं विप्रति पत्तिस्ते यथा त्वं पिशिताशनः ९

हे भाई तूं आप इस महारौद्र श्मशानविषे वासकरताहै
और ऐसी अहिंसाप्रधान शौचवृत्तिसे प्रवृत्तिकरणेको
वांछाकरताहै यह तोको विपरीतबुद्धि कहां सो भईहै
जाते तूं अपनी जातिके जन्मसे मांसाहारीहो उत्पन्नभयाहै ९

तत्समानो भवास्माभि र्भोज्यं दास्यामि देवयम्
भुंक्त्व शौचं परित्यज्य यद्धि भुक्तं तदस्तु ते १०

हे साधो तूं हमारे समानवृत्तिहो तोको मांसभोजन हमदेवे
गे अवसे इस शौचवृत्तिको त्यागकर्के जो तेरे भुक्तिहै उस
को भोजनकर यही योग्य तेरी वृत्तिहोवे १०

इति तेषां वचः श्रुत्वा प्रत्युवाच समाहितः
मधुरैः प्रश्रितैर्वाक्यैः हेतुमद्भिरनिष्ठुरैः ११
हे राजन् तं इस प्रकारके अपने जातीके शृगालोके वच
नोको श्रवणकर्कें सो सृगालसावधाननासे अपनी जाती
के सृगालोके मधुरयुक्ति विस्तारवाले हेतुवादसंयुक्त वा
क्योकर्कें वचनको महाविनयसे कहताभया ११
अप्रमाणा प्रसूति में शीतलः क्रियते कुलं
प्रार्थयामि च तत्कर्म येन विस्तीर्यते यशः १२
हे भाई मोको अपनी जन्मकी चेष्टा प्रमाणनहीहे अपना
कुलमेने शुद्धवृत्तिकर्कें पवित्रकरणाहे ऐसे कर्मको मे प्रा
प्तहोताऊं जिसकर्कें हमारा पुण्यकर्मका यश विख्यातहोवे २२
श्मशाने यद्यपि मे वासो समाधिर्मे निशाम्यतां
आत्मा फलति कर्माणि नाश्रमो धर्मकारणम् १३
श्मशानमो जो मेरा निवासहे इसका समाधान मेरेसे श्रवणक
रो अपना आत्माकी फलपरिपाककों प्राप्तकरताहै इहां आ
श्रमजाति धर्मका कारणनहीहे १३
आश्रमे यो द्विजं हन्या नो वा दद्या दनाश्रमे
किंतु तत्पातकं न स्यात् तद्वा दत्तं वृथा भवेत् १४
जो कोई पुरुष आश्रम धर्मविषे ब्राह्मणको हननकरे औ
र आश्रमधर्म विना गोदानकरे कैसो उसको आश्रमधर्म
विषे ब्रह्मवधका पातकनही होवेगा और आश्रमधर्मवि
ना गोदानका पुण्यनही होवेगा पाप पुण्यका फल आ
श्रमविषेभी होताहे अनाश्रमविषेभी होताहे १४
भवंतः स्वार्थ लोभेन केवलं भक्षणे रताः
अनुबंधे त्रयोदोषा स्तान पश्यंति मोहिताः १५
तुम सृगालजातीहो स्वार्थ लोभकर्कें ही मांसभक्षणविषे
रसभयेहो अपने कार्यके परिणामविषे तीनदोषहोतेहे
उन्हको अपने मोहसे नही देषतेहो १५

अप्रत्यय कृतां गर्हा मर्थापनयदूषिताम्
इह चामुत्र चानिष्टां तस्माद्वृत्तिं नरोचये १६
अपनी जातिकी वृत्तिमो असंतोषसेकीनीजो निंदाहै और धर्म
हानिकी दूषणजातेहै और इहलोक परलोकविषे अप्रतिष्टा
जोहै इसकों तुमनही जानते तातेमे इस हिंसा वृत्तिकों मेरु
विनहीकरता १६
तं शुचिं पंडितं मत्वा शार्दूलः ख्यातविक्रमः
कृत्वात्म सदृशीं पूजां साचिव्ये वरयत्स्वयम् १७
हे राजन् ऐसे उस शृगाल शुचिवृत्ति नीतिमार्गके धर्मवेत्तापु
रुष जानकर विख्यातविक्रम संपन्न शार्दूल सिंहजोहै सो
अपने महत्वजैसे पूजाकर्के सत्कारसे मंत्रीभावविषेआपही
वरणकरताभया १७
शार्दूलउवाच सौम्यविज्ञात रूपस्त्वं गच्छयात्रां मया
सह व्रियंता मीप्सिता भोगाः परिहार्याश्च पुष्कलाः
शार्दूलउवाच हे सौम्य तुमने सौम्यवृत्तिजाताहै मेरे साथ
राजकार्यकी विचारयात्राको मंत्रीभावकों प्राप्तहो जो हमारे
को राजकार्ययात्राके उचितभोगहै उन्हको आपही वरले
वो कैसे भोगहै किसीसेनहीहोते और महासंपदाके विस्ता
रसंपन्नहै १८
तीक्ष्णाइति वयं ख्याता भवंतं ज्ञापयामहे
मृदुपूर्वं हितं चैव श्रेयश्चाधि गमिष्यसि १९
हे सौम्यशार्दूल जातीकर्के हम सर्व जगतविषे तीक्ष्णस्व
भावसे विख्यातभयेहै इस हेतुसे तुमको विज्ञापनाकरते
है हमारेसे तुम मृदु वृत्तिपूर्वक परमाहितरूपी कल्याण
संपदाको प्राप्तहोवेगा १९
अथ संपूज्य तद्वाक्यं मृगेंद्रस्य महात्मनः ॥
गोमायुः संश्रितं वाक्यं बभाषे किंचिदानतः २०
हे राजन् तदनंतर सो शृगाल मृगराजके वचनकहताभया
गोमायुरुवाच सदृशं मृगराजेन त्वद्वाक्यं मदंतरे

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१४५

145

यत्सहायान्मृगयसे धर्मार्थकुशलाञ्छुचीन्
गोमायुरुवाच हे मृगराज तुम्हारा वाक्य मेरे निमित्त विषे
तुमारे लायक उचित है जो नसे तुम धर्मार्थ विषे कुशल अ
तिशुद्ध बुद्धिवाले राजकार्यके सहायकारी पुरुषोंको तला
शकर्तेहों २१

नशक्यंह्यन मात्येन महत्व मनुशासितुं
दुष्टामात्येनवावीर शरीर परिपंथिना २२
यह महाभारी राज्यका व्यवहार अमात्यसहाय विनाशा
सन करणा अशक्यहै और दुष्टअमात्यसहायकारीबने
तोभी शासनाकरणा अशक्यहै हे वीर दुष्टअमात्य अपने
शरीरका शत्रुहोताहै २२

सहाया नतु रक्तोऽस्य न यत्रा न्नपसंहिता
परस्पर मसंस्पृष्टा व्विजिगीषून्लोलुपान् २३
राजाको राजकार्यके सहायकारी कैसेहोवे राजनीतिकेवेत्ता
होवे राजाकी आज्ञाविषे युक्तहोवे परस्पर विरोधरहितहो
वे राजाके विजयवांछावानहोवे लोभकर्के चंचलहत्मीनही
होवे २३

अनतीता पथान्प्राज्ञा न्हितेयुक्ता न्मनस्विनः
पूजयेथा महाभागा न्यथाचर्या न्यथापितॄन् २४
और छलमायारहितहोवे व्यवहारके ज्ञानकेवेत्ता होवे स
र्वभूतोके हितयुक्तहोवे धीर मनवालेहोवे ऐसे महाभा
ग्यवाली अमात्यलोकोको राजा अपनेगुरु पिताकीन्याई
मानसत्कारसे पूजाकर २४

नत्वेवं मम संतोषा द्रोचतेन्य न्मृगाधिप
नकामये सुखान्भोगा नैश्वर्यं च त्वदाश्रयं
हे मृगराज मोको अपने संतोषसे निश्चयकर्के एकविचार
और रुचिकरताहै तेरे आश्रयसेमे सुखभोगोको और ऐश्व
र्य्यको वांछानही करता जिसकारणसे २५

न यत्स्याति हि मे शीलं नवधूत्तैः पुरातनैः

ते त्वां विभेदयिष्यंति दुःशीलाश्च मदंतरे
न संश्रयं श्लाघनीयो ह्यन्येषामपि भास्वतां २८
मेरा स्वभाव शीले तुमारे पुरातन सेवकोंके स्वभावचरित्रों
केसाथ नहीयुक्तहोवेगा तेरे पुरातन अमात्यजोहे सो मोसे
भेदकरावेगा मेरे निमित्तविषे दुष्टशीलहोवेगे २८
कृतात्मा सुमहाभागः पापकेष्वप्यदारुणः
दीर्घदर्शी महोत्साहः स्थूललक्ष्यो महाबलः
कृती चाप्योच कर्तास्मि भोगेष्वसमलंकृतः २९
और वी जो तुमारे भृत्यजनजोहे उन्हको तेरेविषे मेराआश्रय
वनेगा सो सभको अग्राह्यहे अशक्यहे कुशलवृत्ति महाभा
ग्यशील पुरुषजोहे सो पापवृत्ति पुरुषोविषे महादारुण
होताहे ॥ अपनीवृत्तिके निश्चयवासते मे अपनेशीलको
कहताहुं और महाभारी स्थूलकार्यकी चिंताज्ञानसंपन्न
हुं दीर्घदर्शी दूरमदेशी महाउत्साहवालाहुं और महाभा
री स्थूलकार्यकीचिंताज्ञानसंपन्नहो महाबलसत्तासंपन्न
हो कार्यसाधनविषेकुशलहो कार्यआरंभकी सफलताका
रीहो और अपनेयोग्य भोगप्रकारोंकरकेंसंपन्नहो २९
न स्वल्पेनास्मि संतुष्टो दुःखावृत्ति रनुष्ठिता
सेवायां चापिनाभिज्ञः स्वछंदेन वनेचरः
राज्ञो पक्रोशदोषाश्च सर्वे संश्रयवासिनां
व्रतचर्या तु निःसंगा निर्भया वनवासिनां ३०
और स्वल्पपदार्थको पाइकर महाकार्यसिद्धिविना संतुष्टनरा
हीहोताहुं दुःखककें कार्यसे निवृत्तहोजाना और सेवासेहट
जाना ऐसी वृत्ति मेने नहीकेनीहे २९ तो भीमे सेवाविषे अ
भिज्ञनहीभयाहुं स्वछंदही वन विषे विचरणोहाराहुं जो रा
जाश्रयके वासिलोक उन्हविषे राजाके समीप निंदाकरणी
उसके दोषसभही होतेहे वनवासी जो लोकहे उन्हकोव्र
तचर्याकरणी निसंगतावृत्ति यह निर्भयहोतीहे ३०

नृपेणाहूयमानस्य यत्तिष्ठति भयं हृदि
नतु तिष्ठति तुष्टानां वने मूलफलाशिनां ३१

राजा जब किसी सेवककी बुलावे तब उसके हृदयमें जो भयहोताहै सो भयवनविषे मूल फलाहारी सदासंतुष्ट पुरुषको नहीहोताहै ३१

पानीयं वा निरायासं स्वाद्वन्नं वा भयोत्तरं
विचार्यखलु पश्यामि तत्सुखं यत्र निर्वृतिः ३२

वनवासी लोकोंको जलमात्रभी निरायास होताहै और भयरहित स्वादिष्ट अथवा स्वादरहित अन्न अनायास हीहोताहै मे अपने विचारसे यह निश्चय करताहूं सोई सुखहै जिसविषे अनायास आनंदहोवे ३२

अपराधैः नतावंतो भृत्याः शिष्टा नराधिपैः
उपचारैर्यथा भृत्या दूषिताः निधनंगताः ३३

और राज सेवाकारी लोकजेते अपराधकरतेहै तावत्संख्याके अपराधकर्के अनेकभृत्यजन राजालोकोंने कृतदंडभयेहै यथापराधदंडकर्के अनेकभृत्यजन दूषितकियेहै सो अनेकही मारणेको प्राप्तभयेहै ३३

यदि त्वेतन्मयाकार्यं मृगेंद्रयदि मन्यसे
समयं कृतमिच्छामि वर्तितव्यं यथा मयि ३४

हे मृगेंद्र जो मेने तुम्हारी अधिकार सेवाकरणीहै तो जो मेरी विज्ञापनाको मानतेहो तो मेरेसाथ मर्यादाकरो जैसे मेरेविषे आपवर्तमानहोवेगे सो मोको निश्चयहोजावे ३४ ॥

मदीया माननीयास्ते श्रोतव्यं च हितंवचः
कल्पितायाच मे वृत्तिः साभवे त्वयिसुस्थिरा। ३५

मेरे अज्ञानदोष आपने मानने और मेरा हितवचन अपने विचारसे श्रवणकरणा और जो आपने मेरीवृत्ति अपनी इच्छासे कीनीसो आपके अधीनही स्थिरहोवे ३५

न मंत्रयेय मत्र्येऽस्मिन् सचिवैः सह कर्हिचित्
नीतिमंत्रः परीक्षंतो वृथाहुः परे मयि ३६

और से सभका अज्ञात शीलकों जाने औरोंके साथ मेरा मंत्र कोई कालनहीहोवे आपनी इछाकीनीतिवाले पुरुष परीक्षाकरनेहे कछुमेरे निमित्तविषे दोषकल्पनानही करें ३६

एकएकेन संगम्य रहो ब्रूया हितं वचः
न च ते ज्ञानकार्येषु दृष्टोऽहं हिताहिते ३७

मे एकही एक आपकेसाथ समागमकर्के एकांतविषे हितवचनकों निवेदनकरों आपने अपने निश्चित ज्ञानकार्योंविषे हित अहित विचारमें मोको पूछानही कर्तव्यहै ३७

मया सम्मंत्र्य पश्चात्तु न हिंसा सचिवा त्वया
मदीया न्वाच कुपितो मां त्वं दंडं निपातयेः ३८

हे मृगेंद्र मेरे साथ मंत्रकर्के पश्चात् अमात्य लोकमारणेन ही और मेरेप्रति अपराधकोईकरे उसविषे दंडपातन तुमने नही किसीकोभी नहीकरणा ३८

एवमस्त्विति तेनासौ मृगेंद्रेणाभिपूजितः
प्राप्तवान्नाति सचिवं गोमायुर्व्याघ्रयोनितः ३९

हे राजन् उस शृगालके वचनको एवमस्तु कहिकर मृगेंद्रने गोमायु सत्कारसे पूजनकिया तब व्याघ्रयोनिजो मृगेंद्र उसको मंत्रकरणेको अमात्य अधिकारको प्राप्तहोताभया ३९

तं तथा सत्कृतं दृष्ट्वा पूज्यमानं स्वकर्मसु
प्राद्विषन्कृत संघाताः पूर्वभृत्या मुहुर्मुहुः ४०

उस शृगालकों अपने अधिकारके मंत्रकार्योंविषे सत्कारपूर्वक पूजितदेषकर्के जोनसे पूर्वली सेवाके मंत्रीलोक जो रहे सो सभही एकमती संघातकरके वारवार उसकों देषकरनेभये ४०

मित्रबुद्ध्या च गोमायुं सांत्वयित्वा प्रसाद्य च
दोषेषु समतां नेतु मैच्छन्नशुभबुद्धयः ४१

सभहो उस गोमायुको मित्र बुद्धिकर्के सत्कार सांत्ववचनो कर्के प्रसन्नकरके दोषज्ञानोकर्के अपने समान अप्रतीति करणेको इच्छाकरतेभये कपटकल्पनाकर्के अशुभहोतेभये ५१

अन्यथा भूषिता पूर्वं परद्रव्याभिहारिणः
असक्ताः किंचिदादातुं द्रव्यं गोमायुयंत्रिताः ५२

उस गोमायुके मंत्रभावसे पूर्वपरद्रव्यापकरणेकर्के स्वछंद विपरीतवृत्तिकर्के वासकरतेभये उस गोमायुमंत्रीके प्रतिबंधसे किंचित्स्वल्पमात्रभी परद्रव्यग्रहणेको समर्थन ही होतेभये ५२

आख्याने च विक्रांतद्भिः कथाभिः प्रतिलभ्यते
धनेन महता चैव बुद्धिरस्य विलोभ्यते ५२

उसके उच्चाटकरणेकी आकांक्षाकरतेभये उसको बहोत लाभकारी कथा प्रसंगोकर्के लोभीकरतेभये वहोडबहोत धनदान प्रयत्नकर्के उसकी बुद्धिको लोभायमान करतेभये ५२

न चापि स महाप्राज्ञस्तस्माद्धैर्याच्चचाल ह
अथास्य समयं कृत्वा विनाशाय तथापरे ५३

हे पार्थ महाप्राज्ञ सो गोमायुमंत्री उन्हके कपटलोभके प्रयत्नसेभी अपनी स्वाभाविक शुद्धधैर्यसे नही चलितहोताभया तब सभही एकत्व संमतीकर्के उसके विनाशवास्ते उपायचिंतनकरतेभये ५३

ईप्सितं च मृगेंद्रस्य मांसं यत्तत्र संस्कृतं
अपनीय स्वयं तद्धि तैर्न्यस्तं तस्य वेश्मनि ५४

हे राजन् जोनसा मृगराजको महाप्रीतिवाला उत्तमजो मांसहे उसको संस्कारकर्के उसके मंदिरविषे स्थापन करतेभये ५४

यदर्थं चाप्यपहृतं येन तच्चैव मंत्रितं
तस्य तद्विदितं सर्वं कारणार्थं च मर्षितं ५५

जिसके निमित्त उसने मृगराजसे प्रथमही मंत्रकियारहा मेरे
अज्ञान अपराध आपने क्षमाकर्नेवहे हे राजन् उसको सभ
कामंत्रविदितभया तोभी उसने अपनेबंध मोक्षवास्ते सभ
के कपटकार्यको क्षमाकरलीनी ४५

स मयोयं कृत स्तेन साविष्ठ मुपगच्छता
नोपघात स्त्वयाकार्यो राजन्मैत्री मिहेच्छता ४६

तब उसने मृगराजका मंत्रीभाव प्राप्तभया इसीकालविषे
उसने अपनी मर्यादाका वाचाबंध मृगराजके साथकियार
हाहै मृगेंद्रतेने मेरी साथ मैत्री करणेवास्ते मेरेनिमित्त कि
सीका घातनही करणा ४६

भीष्मउवाच क्षुधितस्य मृगेंद्रस्य भोक्त मभ्युत्थि
तस्य च भोजनायोपहर्तव्यं तन्मांसं नोपदृश्यते ४७

भीष्मउवाच हे राजन् जब मृगेंद्र क्षुधाको प्राप्तभया भोजन
करणेको तियारभया तब उसको मांसदृष्टनहीभया ४७

मृगराजेन चाज्ञप्तं दृश्यतां चोर इत्युत
कृतकै श्चापि तन्मांसं मृगेंद्रायो पवर्णितं ४८

तब उसने सभको सामान्य आज्ञासे कहा देखो मेरे भोजन
कामांस कहाहै तब कपटी जनोने गोमायु मंत्रीके गृहमा
जो मांस आपधरारहा सो आनकर मृगेंद्रको कहदियाहै ४८

सचिवे नापि नीतं ते विदुषा प्राज्ञ मानिना
सरोष स्तत्र शार्दूलः श्रुत्वा गोमायु चापलं ४९

जोनसा संपूर्णमंत्रीयोविषे प्राज्ञमानी चतुर मंत्रीरहा उससे
उसमांसका वृत्तांत आप आनकर्के वर्णनकिया तब मृगरा
ज जो है सो क्रोधयुक्तभया गोमायुकी चपलताको अपने म
नविषे दृढकरताभया ४९

बभूवा मर्षितो राजा वधं चास्य विरोचयेत
छिद्रं ते तस्य तद्दृष्ट्वा प्रोचुस्ते सर्वमंत्रिणः ५०

तुरतही कुपितहोकर उसगोमायुमंत्रीके वधकरणेको

आज्ञाकरताभया उसकालमो मंत्रीहे सो गोमायुमंत्रीके
छिद्रकों राजाके प्रत्यक्ष देषकर्के राजाकोवचन कहतेभये ५०

सर्वेषा मेव सोस्माकं वृत्तिभंगे प्रवर्तते
निश्चित्यै वं पुनस्तस्य तेनत्कर्माप्य वर्णयत् ५१

सभहीने अपने मनविषे विचारकिया यह तथा मंत्री हमा
रे सभके वृत्तिभंगमो प्रवृत्तभयारहा ऐसे निश्चयकर्के उस
के उसकर्मको बहोड वर्णनकरतेभये ५१

इदं तस्येदृशं कर्म किं तेन नकृतं भवेत्
कृतश्च स्वामिता पूर्वं यादृशो नैवतादृशः ५२

हे मृगराज जो राजा उसका यहकार्य निश्चितभया है तो उस
ने और क्या महा अपराध करणाहे जो स्वामीके भोजनका
उत्तममांस चोरीकीनाहे स्वामीने जैसा उत्तम अधिकारी श्र
वणकियारहा ऐसा तो यहनहीहे ५२

वांमात्रेणैव धर्मिष्टः स्वभावेणत्र दारुणः
धर्मछद्माह्य यं पापो ह्याचार परिग्रहः ५३

मधुरवचन मात्रकर्के यह धर्मिष्ट देषाहे और स्वभावकर्के
महादारुणहे धर्मवृत्तिकर्के कियाझवा यह महापापिष्ट
हुआही आचारग्रहणकर्के वंचकधर्मकालाहे ५३

कार्यार्थं भोजनार्थंश्च व्रतेषुव्रतवान्श्रमं
यदि विप्रत्ययोत्रेष तदिदं दर्शया मते ५४

अपने कपटकार्यके अर्थ और भोजनके अर्थइसनेव्रतनिष्टा
विषे श्रमकियाहे जो आपको इसवार्त्ताविषे विपरीतविश्वा
सहे तो हमइसका कपटकार्य आपको प्रत्यक्ष दिषाइदेतेहैं ५४

तन्मांसं चैव गोमायो स्तैःतणादाशु ढौकितं
मांसाप नयनं ज्ञात्वा व्याघ्रःश्रुत्वाच तद्वचः॥ ५५

हे राजन् ऐसे वचन कहकर्के सो मांस स्वामीके भोजनवाला
गोमायुके गृहसे मगाइकर स्वामीके सन्मुख पहुचाईदिया
हे मांसका अपने समीप प्राप्तहोना देषकर औरपूर्वले अ
मात्यके वचनको श्रवणकर्के व्याघ्रनिश्चयको प्राप्तहोताभ
या ५५

आज्ञापयामास तदा गोमायुं वध्यतामिति
शार्दूलस्य वचः श्रुत्वा शार्दूलजननी ततः ५६

तब आसीदेताभया इस गोमायुको मारदेवो ऐसे शार्दूलके वचनको श्रवणकर्के शार्दूलकी माता पुत्रके समीप प्राप्तहोतीभई ५६

मृगराजं हितैर्वाक्यैः संबोधयितु मागमत्
पुत्र नैतत्त्वया ग्राह्यं कपटारम्भसंयुतं ५७

मृगराजको शुभवचनोकर्के संयोजन करणेको आनप्राप्त होतीभई हे पुत्र यह वचन कपटारंभसंयुक्तहे सो तेने ग्रहणनहीकरणा ५७

कर्मसंघर्षजे दोषे दूष्यन्ता शुचिभिः शुचिः
नोज्झितं सहते कश्चित्प्रक्रिया वैरकारिका ५८

अन्योका कर्मस्पर्द्धादोषोकर्के मिलित भयाहै जिसकर्के शुद्धपुरुषभी अशुद्ध पुरुषोकर्के दोषोको प्राप्तभये पुरुषकोकोई सहारनहीकरणा ऐसी यह प्रक्रिया वैरसाधन करणे हारीहै ५८

शुची रपि हि युक्तस्य दोषएव निपात्यते
मुने रपि वनस्थस्य स्वानि कर्माणि कुर्वतः ५९

वैरीजनजोहै सो कर्मयोग युक्त पवित्राचार पुरुषकोभी दोषयुक्तकरतेहै जो वनवासी मुनीजनहै अपने तपश्चर्याके कर्मकरणे हाराहै ५९

उत्पद्यंते त्रयः पक्षा मित्रोदासीन शात्रवः
लुब्धानां शुचयो द्वेष्याः कातराणां तरस्विनः ६०

उसकोभी शत्रु मित्र उदासीनतावाले तीन भाव आन प्राप्त होतेहै लोभी पुरुषो निर्लोभ पवित्रजन द्वेषपात्र होतेहै कातरोके शूरमाजनद्वेष योग्यहोतेहै ६०

मूर्खाणां पंडिताः द्वेष्या दरिद्राणां महाधनाः
अधार्मिकाणां धर्मिष्ठा विरूपाणां स्वरूपिणः ६१

अधर्मीजनोको धर्मपुरुष मूर्खोके पंडित द्वेषयोग्यहोताहै

श्री
या. य.
टी.
१४८

249

देष योग्य होनेहे विद्रूपजनोको स्वरूपी पुरुष योग्यहोतेहे

बहवः पंडिता मूर्खा लुब्धा मायोपजीविनः
कुर्युर्दोषमदोषस्य बृहस्पति मतेरपि ९२

हे पुत्र वहोत पंडितजनभी लोभ प्रसंगकर्के मूढबुद्धिहोतेहे मायाकपट धर्मकर्के उपजीवनकरतेहे अदोष पुरुष बृहस्पति समान निर्मल बुद्धिहोवे उसकोभी दोषप्रसंगकरदेतेहे ९२ ॥

शून्यांनस्य गृहान्मांसं यदपूपहृतं तव
नेहृतं दीयमानं च साधुताव क्लिम्यते ९३

तेरे भोजनकामांस मेने शून्य गृहमो स्थापनकिया तोभी इस गोमायुने तेरे दिये विना इस्का गोचर नही किया ताते इसकी निर्लोभता ऐसी परीक्षा कर्तव्यहे ९३

असभ्याः सभ्यसंकाशाः सभ्याश्चासभ्यदर्शनाः
दृश्यंते विविधा भावा स्तेषुयुक्तं परीक्षणं ९४

असभ्यपुरुष सभ्यपुरुष जैसे भासतेहे और सभ्यपुरुष असभ्यजैसे दृष्टहोताहे इसप्रकारसे अनेकभाव उलटपुलट दृष्टहोतेहे इसप्रकारसे अनेकभाव तिन्होविषे तत्वविचारवास्ते परीक्षाकर्तव्यहे ९४

जलवद्दृश्यते व्योम खद्योतो हव्यवाडिव
न चैवास्ति तले व्योम्नि खद्योते न हुताशनः ९५

जलके समान आकाश दृष्टहोताहे और खद्योतकीट अग्नि समानदृष्टहोताहे आकाश जलविषे नहीहे और खद्योत जोहे पुगमूसो अग्नितुल्यनहीहोताहे ९९५

तस्मात्प्रत्यक्षदृष्टोपि युक्तो ह्यर्थः परीक्षितुम्
परीक्ष्य ज्ञानयन्नार्थो न पश्चात्परितप्यते ९६

हे पुत्र ताते जो व्यवहारका अर्थ प्रत्यक्षभी दृष्टहोवे तोभी परीक्षा कर्तव्यहे जो अर्थ परीक्षासे शुद्धहोवे उसको वहो उपश्चात् तापनही होता ९६

नदुष्करमिदं पुत्र यत्प्रभुः वाचये त्परं
श्लाघनीया यशस्या च लोके प्रभवतां क्षमा ९७

हे पुत्र यवहार दुःसकर कठिन नहीहै जो प्रभुस्वामी मालक होकर अपने अपराध करताको बात कराइदेवे तोभी विचार परीक्षाकर्के समर्थ पुरुषोविषे क्षमाजोहोतीहै सोस्तुतियोग्यहोताहै और यशोप्राप्तिवाली होतीहै ९७

स्थापितो यं त्वया पुत्र मांसे नेष्व पि विश्रुतः
दुःखेनासाद्यते पात्रं धार्यतामेषते सुहृत् ९८

हे पुत्र यह गोमायु मंत्री तैने आपही अधिकारविषे स्थापन कियेहै और प्रसादसे संपूर्ण राजमंडलविषे विख्यातः भयाहै विद्यासंपन्न उत्तमपात्र अधिकारी दुःखकर्के प्राप्तहोताहै ताते ऐसे धर्मगुण संपन्न इस गोमायु मंत्रीको मित्रकर्के जानकर संग्रह कर्तव्यहै यह तुम्हारा सभसे उत्तमसुहृदहै ९८

दूषिते परदोषैर्हि गृह्णीते यो न्यथा शुचिम्
स्वयं सन्दूषितो मात्यः क्षिप्रमेव विनश्यति ९९

जौनसा पुरुष परकृत दोषकल्पनाकर्के दूषणाकियाहै और योह अपने स्वामी धर्मकर्के शुद्धहै उसको जो स्वामी राजा अन्यथा विपरीत कल्पनासे दंडादि पातनकरताहै सो आपही अमात्यजनोकर्के दोषापन्नहोकर्के शीघ्र विनाशको प्राप्तहोताहै ९९

तस्मादपरि संचाता होमायोः कश्चिदागताः
धर्मात्मा तेन चाख्यातं यथैतत्कपटं कृतम् १००

हे पुत्र ताते यह गोमायु स्रगाल अपने दोषसे सर्वसमूहके दोषकर्के कपट दोषको प्राप्तभयाहै वास्तव धर्मविचारसे धर्मात्माहै ताते मैने तोको बोधनकियाहै इसकेविषे सभलोकोने कपट चरित्र कियाहै १००

ततो विज्ञात चारित्रः सत्कृत्य सविमोहितः
परिष्वक्तश्च सस्नेहं मृगेन्द्रेण पुनः पुनः १०१

हे राजन् युधिष्ठिर ऐसा मानाने शार्दूलको कहा तव शार्दूल
राजा कपटचरित्रको जानताभया इस प्रकार गोमायुको शु
द्धजानकर शार्दूलने संस्कार पूजाकर्के वधकरणेकी आज्ञा
से मुक्तकरदिया मृगेंद्रसे स्नेहकर्के वारवार कंठविषे ल
गाइकर छोडदिया ७०

मृगेंद्रे तु अनुप्राज्ञाप्य गोमायुः नीतिशास्त्रवित्
तेनामर्षेण संतप्तः प्रायमासितु मैच्छत ७१

गोमायु मृगेंद्रको आज्ञालेकर्के नीतिमार्गमो परमकुश
लहै वृथा दोषारोपकर्के अति संतापको प्राप्तभयाहै व
होडतहां वासकरणेको त्यागदेताभया आपनिरसन व्रत
कर्के प्रायोपवेशकर्के प्राणत्यागकी वांछाकरताभया ७१

शार्दूलस्तं तु गोमायुं स्नेहात् स्नोत्फुल्ललोचनः
अवारयत् सधर्मिष्ठं पूजयाप्रति पूजयत् ७२

शार्दूलजोहै सो उस गोमायुको शुद्धजानकर स्नेहकर्के प्रोत्फु
ल्लनेत्रभयाहै उस गोमायुको निरसन व्रतके प्रायोपवेशसे
निवारणकरताभया और मान सत्कारके पूजनकरताभया ७२

तंस गोमायुरालोक्य स्नेहादागत संभ्रमं
उवाच प्रणतो वाक्यं वाष्पगद्गदया गिरा ७३

सो शार्दूल उस शृगाल मंत्रीको शुद्धि हानि देषकर स्नेहकर्के
आश्चर्यवेगके स्नेहकोप्राप्तभयाहै प्राणांतजैसा होकर गद
गदवाणीसे वचनकोकहताभया गोमायुजोहै सो शार्दूल
को वचनकहताभया ७३

पूजितोहं त्वया पूर्वं पश्चाच्चैव विमानितः
परीक्षा मास्पदं नीतो वस्तुं नार्हाम्यहं त्वयि ७४

हे मृगेंद्र तेने मोको प्रथमसत्कारसे पूजनकियाहै और प
श्चात् अवमानको प्राप्तकियाऊं शत्रुभावके पदको प्राप्तकि
याऊं अवतेरे समीपविषे वासकरणेको इच्छानहीकरताऊं ७४

असंतुष्टाः च्युताः स्थाना त्मानाप्रत्य वरोपिताः
स्वयं वापहृता भृत्याः येचाप्युपहिताः परैः ७५

हे मृगराज जौनसे पुरुष अप्रतीतिसे असन्तुष्टहोजातेहे
स्थानसे भ्रष्टहोजातेहे मानप्रतिष्ठासे उतारदियेहे आपही
कपटवृत्तिकर्के वचनकियेहें अथवा अपने समानलोको
कर्के वंचनकियेहें ७५

परिक्षीणाश्च लुब्धाश्च क्रुद्धाः भीताः प्रतारिताः
हृतसामानिनो ये च त्यक्तादाना महेप्सवः ७६

वृत्तिसे क्षीणभयेहे और लोभीहे क्रोधसे व्याप्तभयेहे भय
भीतहे और कठोरवचनोकर्के पतारहे जिनका सर्वस्वह
राहे अतिमानवालेजोहे इच्छदानको ग्रहणनहीकरते
महासंपदाकी वांछावालेहे ७६

संतापिताः च ये केचि व्यसनैाच प्रतीक्षिणः
अंतर्हिताः सो पि हिता स्ते सर्वे परसाधनाः ७७

और जौनसे संतापकों प्राप्तकियेहे सो आपदाके व्यसनआ
पदा समूहवास्ते समयको देषतेहे इसीहेतुसे अंतर्भूत
हे रहतेहे दिखाई नहीदेते और कपट औरकपटवृत्तीजो
हे सोभी अंतर्भूत जैसे कपटवृत्ती वालेहें ऐसे जो भृत्यसे
वकहे अपरस अधनहोतेहे प्रीतिरहित होतेहे निर्धन
भी होतेहे ७७ ॥

अवमानेन युक्तस्य स्थानभ्रष्टस्य वा पुनः
कथं यास्यसि विश्वास महं तिष्ठासि वा कथं ७८

हे मृगेंद्र तुमने अवमानयुक्त कियाहे बहोड स्थानभ्रष्टभी
कियाहे अब मेरेविषे विश्वासको कैसे प्राप्तहोवेगा मेभी
तुमारेविषे कैसे स्थितीकरेंगा ७८

समर्थ इति संगृह्य स्थापयित्वा परीक्षितः
कृतं च समयं भित्वा त्वयाहमवमानितः ७९

मोको प्रथम अपने कार्यविषे समर्थ जानकर परीक्षाकर्के
अधिकारविषे स्थापनकरलिया पश्चात् मर्यादा भेदनकर्के
अवमानकियाहे ७९

प्रथमं यः समाख्यातः शीलवानिति संसदि
न वाच्यं तस्य वैगुण्यं प्रतिज्ञा परिरक्षिता ८०
हे महाराज प्रथम जिस पुरुषको निजमुखकर्के सभाविषे
शीलवान गुणवान विख्यातकियाहै अपनी प्रतिज्ञारक्षा
करणेहार स्वामीनेउसको वैगुण्यकीर्तन प्रकर्तव्यहै ८०
एवं चावमतस्येह विश्वासं मे नयास्यसि
त्वयि चापेतविश्वासे मम द्वेगो भविष्यति ८१
इसप्रकार अज्ञातही मोको अवमानकियाहै बहोडभी
मेरेविषे विश्वासनहीपावोगे जो कदाचितगतविश्वासक
रोगे तब मोको अवश्य उद्वेग होवेगा तुमाराविश्वासदृ
ढनहीहोवेगा ८१
शंकितस्त्वं मद्भीतः परैश्छिद्रानुदर्शिनः
अस्निग्धा श्चैव दुःखोषाः कर्मचैतदुपस्थितं ८२
मेंतो सदाही शंकासे भयभीतहोवेंगा जो आसे परछिद्रद
र्शीजनहै सो उभयके असनेहहोवे दुःखसेही संतुष्टहोवे
गे ताते अब यह हमारा समागम बहोतप्रकारसे खल
प्रधानभयाहै ८२॥
दुःखेनाश्लिष्यते भिन्नं श्लिष्टं दुःखेन भिद्यते
भिन्नाश्लिष्टा तु या प्रीतिः न सा स्नेहेन वर्तते ८३
जो अप्रतीतिसे भिन्नहुतिभया उसको मिलना दुखसेव
नताहै जो दृढप्रतीतसे मिलितभयाहै सो दुखसे भिन्नहो
ताहै जोनसे प्रीतिभेदसे मिलितहोतीहै सो कदापि स्ने
हकर्के वर्तमाननहीहोती ८३
कश्चिदेव हिते भर्तुः दृश्यते न परात्मनोः
कार्यापेक्षा हि वर्तन्ते भावाः स्निग्धास्तु दुर्लभाः
हे महाराज भर्ताकेहितविषे कोई पुरुषदृष्टनही होता
पने पराये लाभको अर्थवनाहै केवलस्वामीभावके स्नेह
वास्ते नहीवनता एकांगस्वामीभावके स्नेह इसलोकविषे
दुर्लभहै ८४

स्तुतः स्वं पुरुषज्ञाने चित्ते होषां बलाबले
समर्थो वाप्यशंकोवा शतेष्वेकोधिगम्यते ८५
राजा लोकोंका उत्तमपुरुषोंका ज्ञानदुर्लभहै इन्हका चित्तब
लऔर अचलसदाबनाहै एकाग्र अचलहै तिकदापिनहीडोल
ता और जोनसा सर्वसामर्थ्य संपन्नहै और भेदशंकारहितहै
सो शतसहस्र पुरुषो विषेभी एक विरलाहोताहै ८५
अकस्मात्प्रक्रियान्नृणा मकस्मा च्चापकर्षणम्
शुभाशुभे महत्त्वं च प्रकर्तुं बुद्धिलाघवम् ८६
अकस्मात् अविचारसे पुरुषको महात्मा संपन्नकरणा
अकस्मात् पुरुषको अपने वशकरणा अकस्मात् परास्त
निकरणा क्षणमात्रमोंही शुभ अशुभ महत्वकरणा ऐसी
राजालोकोंविषे बुद्धिलाघव होताहै सोई बुद्धिविचारकी
तच्छता होतीहै ८७
एवं विधं सांत्व युक्तं धर्मकामार्थ हेतुमत्
प्रसादयित्वा राजानं गोमायुर्वनमभ्यगात् ८७
हे राजन् युधिष्ठिर सो गोमायु शृगाल धर्मकामार्थ तत्वका
हेता हेतुन्याययुक्ति युक्तवचनोंकर्के मृगराजकों प्रस
न्नकर्के आज्ञालेकर्के वनको जाताभया ८७
अगृह्यानुनयं तस्य मृगेंद्रस्य च बुद्धिमान् गोमा
युः प्रायमास्थाय त्यक्त्वा देहं दिवं ययौ ८८
इति श्री राजधर्मे व्याघ्रगोमायुसंवादोनामसर्गः
सो मृगराजका जो प्र
सा बुद्धिमान गोमायु शृगाल जोहै उसको नहीं मानकर्के वनको
समता करणेका अनुमोदन उसको नहीं मानकर्के वनको
प्राप्तहोकर प्रायोपवेश निरशन निराहार व्रतधारणकर्के
देहको त्यागकर देवलोककों जाताभया ८८ इतिश्री शां
तिपर्वणि राजधर्मेषु व्याघ्रगोमायुसंवादोनाम शताधिक
एकादशः १११ ॥ युधिष्ठिरउवाच ॥
किं पार्थिवेन कर्तव्यं किंच कृत्वा सुखी भवेत्
तन्मे ब्रूहि यथातत्वं सर्वधर्मभृतांवर १
एतदाचक्ष्व तत्वेन सर्वधर्मोंकेवेत्ता जनोंवि
युधिष्ठिरउवाच हे पितामह आप सर्वधर्मोंकेवेत्ता जनोंवि

शां॰
रा॰ प॰
टी॰
१५२

152

षे श्रेष्ठहो यह आपकहो राजाने अवश्यएकही कर्तव्यहै क्या
कृत्यकरके राजा सुखीहोवे उसको आप तत्वविचारसेकहो १
भीष्मउवाच हंत तेहं प्रवक्ष्यामि शृणुकार्यैकनिश्च।
यं यथा राज्ञेह कर्तव्यं यच्चकृत्वा सुखी भवेत् २
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर अब मै तोको परम उत्तम एककार्य
के निश्चयको कहताहूं तुमसावधानमनसे श्रवणकरो राजाको
जिसप्रकारकर्तव्यहै जिसकार्यको करके राजासुखीहोवे २
नचैवं वर्तितव्यं स्म यथेदमनुशुश्रुम
उष्ट्रस्य च महद्वृत्तं तन्निबोध युधिष्ठिर ३
और जोनसे एवंजानकरे अकर्तव्यहै जैसे हमने श्रवणकिया
है सोकहतेहैं एक उष्ट्रको जो वृत्तांतभयाहै उसको आपभी
विचारकरके निश्चयकरो ३ ॥
जातिस्मरो महानुष्ट्रः प्राजापत्ययुगे भवत्
तपः सुमहदातिष्ठ दरण्ये संशितव्रतः ४
हे राजन् एक उष्ट्र पूर्वले प्राजापत्य युगविषे पूर्वजन्मकी
स्मृतिवाला भयाहै सो महाअरण्यविषे व्रतनिष्ठाकरके
महातपको करताभया ४
तपसस्तस्य चांतेथ प्रीतिमान भवद्विभुः
वरेणच्छंदयामास ततश्चैनं पितामहः ५
उसके महाव्रतनिष्ठाके तपश्चर्याके अंतमो सर्वभूतोकाप्रभु
पितामह ब्रह्मा प्रसन्नहोताभया वरदानवास्ते उसको कह
ताभया हे उष्ट्र तेने व्रतनिष्ठाका तपकियाहै वरयाचनाकर ५
उष्ट्रउवाच भगवंस्त्वत्प्रसादान्मे दीर्घा ग्रीवा भवेदियं
योजनानां शतं साग्रं गच्छामि चरितुं विभो ६
उष्ट्रउवाच हे भगवन् आपके प्रसादसे यह मेरी ग्रीवा अति
दीर्घहोवे और सपादएक शतयोजनप्रमाण मार्गको मै अ
पनी इच्छाकरके विचारणकरो यही वरमोको वांछितहै ६
एवमस्त्विति चोक्तः स वरदेन महात्मना
प्रतिलभ्यवरं श्रेष्ठं ययाउष्ट्रः स्वकं वनं ७

वरप्रदानकर्ता ब्रह्मासे उसको एवमस्तुकहा तब सो उष्ट्रवरको
प्राप्तहोकर्के यथेच्छहोकर्के वनको विचारताभया ७
स चकार तदालस्यं वरदानात्सुदुर्मतिः
नचैच्छच्चरितं गन्तुं दुरात्माकालमोहितः ८
सो दुर्मतिउष्ट्र ब्रह्माजीके वरदानसे उन्मत्तहोकर्के विचरणे
विषे आलस्यको करताभया कालगतीकर्के मोहितहोता
भया ८ ॥
स कदाचित्प्रसार्यैव तां ग्रीवां शतयोजनां
चचार श्रान्तहृदयो वातश्चागात्ततो महान् ९
हे राजन् सो उष्ट्र शतयोजन ग्रीवाको विस्तारकर्के विचार
ताभया एककालविषे आलसकर्के श्रान्तचित्तहोगया उसका
लविषे उसवनविषे महावातका वेगस्थानप्राप्तहोताभया ९
स गुहायां शिरोग्रीवां निधाय पशुरात्मनः
आस्तेत्त वर्षमभ्यागात्सुमहत्प्लावयज्जगत् १०
सो उष्ट्र पशुबुद्धिकर्के अपनी ग्रीवाको पर्वतकी गुफाविषेस्था
पनकरताभया तब महावर्षाहोतीभई १०
अथ शीतपरीताङ्गो जम्बुकः क्षुच्छ्रमान्वितः
सदारस्तां गुहामाशु प्रविवेश जलार्दितः ११
हे राजन् अथवा उसीकालमों एक शृगाल वात वर्षाकर्के शी
तसे सर्वांगपीडितभया ऐसा सो शृगाल अपनी दारा जो
शृगाली उसकर्के संयुक्त क्षुधाकर्के पीडितभयाहै उष्ट्रकी
ग्रीवाको भक्षण सदारही तत्कालही पर्वतकी गुफाको प्रवेश
करताभया ११
स दृष्ट्वा मांसजीवीतु सुभृशं क्षुच्छ्रमान्वितः
अभक्षयत्ततो ग्रीवामुष्ट्रस्य भरतर्षभ १२
सो शृगाल अपने जाति स्वभावकर्के मांसाहाराकरणेहाराहै
क्षुधाकर्के पीडितभयाहै उष्ट्रकी ग्रीवाको भक्षणसदारही कर
ताभया १२ ॥
यदात्वबुध्यतात्मानं भक्ष्यमाणं स वै पशुः
तदा संकोचने यत्नमकरोद्भृशदुःखितः १३
जब पशुबुद्धि सो उष्ट्रभक्ष्यमाणभये अपने आपको जानताभया

तव ग्रीवाअपने संकोचकरणेको यत्नकरताभया १३
यादा हर्षमथ श्चैव ग्रीवा संक्षिप्यते पशुः
तावत्तेन सदारेण जंबुकेन सभक्षितः १४
जबलग अपनी ग्रीवाकों अधऊर्ध फेरकर्के फटकताहै तब
लगही सदारशृगालने उष्ट्रके भक्षणकर लेता भया १४
सहत्वा भक्षयित्वा च तमुष्ट्रं जंबुक स्तदा
विगते वातवर्षेत निश्चक्रामगुहामुखात् १५
सो जंबुक उष्ट्रको मारकर्के भक्षणकरके वातवर्षा निवृत्तभ
ईतो गुफाके मुखसे बाहिर निकसजाताभया १५
एवं ऊर्ध्वहिनाप्राप्त मुष्ट्रेण निधनं तदा ॥
आलस्यस्य क्रमात्पश्य महांत दोषमागतं १६
हे राजन् ऊर्ध्वहि उष्ट्रने अपने आलस्यके क्रमयोगसे अपना
मरण पायाहै सो ऐसा आलस्यका महादोषप्राप्तभयाहै १६
त्वमप्येवं विधं हित्वा योगेन नियतेंद्रियः
वर्तस्व बुद्धिमूलेन विजयं मनुरब्रवीत् १७
हे राजन् ताते तूं भी इसप्रकारके आलस्य दोषके त्यागकर्के
अपने बुद्धियोगकर्के वर्तमानहो मनु महाराज प्रजापति जो
है सो विजयको बुद्धियोगमूलही कहताभया १७
बुद्धिश्रेष्ठानि कर्माणि बाहुमध्यानि भारत
तानिजंघा जघन्यानि भारप्रत्यवराणि च १८
हे भारत जेते विजयके कर्महै सो बुद्धियोगकर्के श्रेष्ठफल
वालेबनेहै सो अपने भुजाबलके मध्यमोस्थितहै और जाच
ने जंघाके पादचारविषे निकृष्टफलकहेहै जंघासेचार
विषे भारके उठावनेके साधनही कर्मबनेहै १८
राज्यं तिष्ठति दक्षस्य संगृहीतेंद्रियस्य च
प्राप्तस्य बुद्धिमूलंहि विजयं मनुरब्रवीत् १९
राज्यनीच कर्मजोहै सो बुद्धियोगविषे दक्षजो पुरुषहै उ
सके भुजाबलकी अधीनही स्थितही जोनसो पुरुष आल
स्यादि त्यागकर्के जितेंद्रियपुरुषहै उसके अधीनभीहै
ताते विजयको बुद्धियोगबलहीन महाराजभीकहताभ
या १९ ॥

गुह्यं मंत्रं कृतवतः ससहायस्य चानघ
परीक्ष्यकारिणोह्यर्था: तिष्ठंतीह युधिष्ठिर
सहाययुक्तेन मही कृत्स्नाशक्या प्रशासितुं २०
हे युधिष्ठिर जो राजा गुह्यमंत्रकों करताहै सुहृदमंत्री संपन्नहै
और परीक्षाकर्के राज्यकर्मकोंकरताहै उसके वशवर्ती सभही
कार्यार्थ सदास्थितहोतेहै १९ जो राजा सुहृतमंत्री लोकोके
सहाययुक्तहै बुद्धियोग पुरुषार्थ संपन्नहै उसने संपूर्णपृ
थिवी शासनाकरणेके शक्यहै २०
इदं हि सद्भिःकथितंविधिज्ञैः पुरामहेंद्रप्रतिमप्रभा
व मयापिचोक्तं तवशास्त्रदृष्ट्या यथैवबुद्ध्याप्रचरस्व
राजन् २१ ॥ इति श्री महाभारते शांतिपर्व
णि राजधर्मे उष्ट्रग्रीवोपाख्याने शताधिके द्वादशः ११२
हे राजन् तूंभी प्रव इंद्रके संपदा संपन्नहै यह बुद्धियोग सहा
यसंपदाजोहै सो जेते राज्यविधिके ज्ञाताजनहै तिणीनेपुरा
कालसेही कहीहै ताते मेनेभी तोको कहाहै ताते तूंभी शास्त्रा
विधिकेज्ञानकर्के बुद्धियोगकर्के राज्यकर्मको आचरणकर २१
इति श्री राजधर्मे उष्ट्रग्रीवोपाख्याने शताधिके द्वादशोध्यायः ११२
युधिष्ठिरउवाच राजा राज्यमनुप्राप्य दुर्लभं भरतर्ष
भ अमित्रस्यातिवृद्धस्य कथं तिष्ठेदसाधनः १
युधिष्ठिरउवाच हे भरतर्षभ पितामहजी राजा जोहै सो परम
दुर्लभ राज्यको पाइकर जो उसका शत्रुराजा अतिवलकर्के
समृद्धहोवे और आपराजा साधन संपदासेही न होवे तब
अतिवक्र शत्रुकेसाथ कैसे वर्तमानहोकर स्थितहोवे ऐसे नी
तिमार्गको आपमेरेप्रतिकहो १
भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरात
नं सरितां चैव संवादं सागरस्य च भारत २
भीष्मउवाच हे राजन् इहांभी एक पुरातन इतिहासको उदा
हरण कहतेहै हे भारत सागर जो समुद्र और नदीयांजोहै
तिन्हका संवादभयाहै २ ॥

सुरारि निलयः शश्वत् सागरः सरितां पतिः
पप्रच्छ सरितः सर्वाः संशये जात मात्मनः ३

समुद्रजोहै सो सदाकालही सुरारिजोहै दैत्यदानव उन्हके
निवासस्थानहै और सकलनदी गणोंका पतिहै सो जो अपने
को संशयभया उसको नदी समूहको पूछताभया ३

सागर उवाच समूलशाखा न्पश्यामि निहतान् कायि
नो द्रुमान् युष्माभि रिह पूर्णाभि नैयस्तत्र न वेतसं ४

सागर उवाच हे नद्य तुह्मारे योगकर्के जो महाविस्तार देहवाले
वृक्षहै सो नाशप्राप्तभयेहै तिनको सदावहै उसको देषताहूं ४

अकायश्चा ल्पसारश्च वेतसः कूलजश्च वः
अवज्ञयावानानीतः किंचवातेन वः कृतं ५

और जोनसा वेतकावृक्षहै सो स्वल्पसारहै और सरीरहै स्वल्प
सारहै और तुह्मारे तीरविषेही उत्पन्नहोताहै तुमसभही वृ
क्षोको लेआवतीहो और वेतको नहीलेआवतीहो वेततुमने
स्वल्पसारही अवज्ञाकर्के नहीलेआवतीहो अथवा तुह्मारांक
छु वेतने उपकारकीनाहै ५

तदहं श्रोतु मिच्छामि सर्वासा मेव वोमतम्
यथा चेमानि कूलानि हित्वा नायाति वेतसः ६

जो वेतके नहीसे आवनेकाकारणहै उसको तुमसे सभसे
श्रवणकिया चाहताहूं जिसकारणसे वेतजहां जहां तुमारे
तीरोविषे होताहै सो जन्मस्थानकैसी येको त्यागकर्के वेत मेरे
समीपनही आवताहै ६

तत्र प्राह नदी गंगा वाक्य मुत्तम मर्थवत्
हेतुमद्ग्राहकं चैव सागरं सरितां पतिम् ७

हे राजन् ऐसे सागरके वचनको श्रवणकर्के संपूर्णनदी समू
हविषे श्रेष्ठजो गंगाभगवतीहै जो अर्थयुक्ति सम्पन्नहेतु उदा
हरणसे ग्रहणकरणेयोग्य वाक्यको नदीवर्गका स्वामी जो स
मुद्र उसको वाक्य कहतीभई ७

गंगोवाच तिष्ठंत्येते यथास्थाने नगाह्येक निकेतनाः
ते त्यजंति ततः स्थानं प्रातिलोम्या न्नवेतसः ८ ॥

श्रीगंगोवाच हे नदीपते यह जेते वृक्ष हैं सो अपने एकस्थानकी
स्थितिको दृढकरती है और हमारी अनुकूलताको नहीकरते
स्तब्धहोनिकर्के प्रतिकूलताके अभिमानको करते हैं ताते अप
नेस्थानको त्यागको प्राप्तहोता है और वेत ऐसी होनिनहीकरता ८
वेतसो वेगमायातं दृष्ट्वा नमति नापरे
सरिद्वेगे ह्यतिक्रान्ते स्थानमासाद्य तिष्ठति ९
वेत जो है हमारा वेग जब आवता है उसको देखकर नमता
है तव अपने स्थानको और कोनहीं नमता जवनदीवेग
निवृत्तहोता है दृढकर्के स्थितहोता है ९
कालज्ञः समयज्ञश्च सदा वश्यश्च नोद्धतः
अनुलोमस्तथा स्तब्धस्तेन नाभ्येति वेतसः १०
ताते यह अपने आपदाकालको जानता है ताते सभके वश
होता है और उद्धतनहींहोता हमारा अनुकूल है और उद्धत
नहीं है ताते तुमारे समीपनहीं आवता है १०
मारुतोदकवेगेन येन मन्ये नमन्ति च
ओषध्यः पादपा गुल्मा न ते यान्ति पराभवं ११
जोनसे विनीतपवनके जलके वेगकर्के नम्रहोता है उन्नत
भीहोते हैं ऐसे ही औरभी ओषधी छूटेलता है सो अपनेस्थान
त्यागके अनादरको नहीप्राप्तहोती है ११
भीष्मउवाच यो हि शत्रोर्विवृद्धस्य प्रभोर्वाधविनाश
ने पूर्वं न सहते वेगं क्षिप्रमेव विनश्यति १२
भीष्मउवाच हे राजन् जो राजा प्रभावसंपन्न शत्रुकी वाधा
को पूर्वनहीं सहारसके सो पुरुष शीघ्रही नष्टहोता है १२
सारासारं वलं वीर्यमात्मनो द्विषतश्च यः
जानन्विचरति प्राज्ञो न स याति पराभवम् १३
हे राजन् जो पुरुष अपने और शत्रुके सार असार वलवीर्य
को जानकर विचरता है ऐसा प्राज्ञपुरुष कदापि शत्रुके
अनादरको नहीप्राप्तहोता है १३
एवमेव यदा विद्वान् मन्येतेति वलं रिपुम्

संश्रये हैतसौ हृत्ति मेतत्प्रज्ञान लक्षणं १४
इति राजधर्मे सरित्सागरसंवादः त्रयोदशः ११३
इसीप्रकार जो पुरुष शत्रूको अनेसे अतिवलजाने सो पुरुष
वेताकी नम्रवृत्तिको आश्रयकरे येही बुद्धिवलके ज्ञानका प्र
त्यक्ष लक्षणहै १४ इति श्री महाभारते राजधर्मे सरित्साग
रसंवादः शताधिक त्रयोदशोध्यायः १३

युधिष्ठिरउवाच विद्वान्मूर्ख प्रगल्भेन मृदुनीक्ष्णे
नभारत आक्रम्यमाणः सदसि कथं कुर्यादरिंदम १
युधिष्ठिरउवाच हे भारत हे अरिंदम आपभीशत्रुजेताहो
जो पुरुष विद्वानहै सकलनीतिवेत्ताहै सो पुरुष मूर्खजो
सभामे प्रगल्भ उसने अथवा मृदुतीक्ष्णहृत्ति संपन्नपुरुष
ने सभाविषे कटुवचनोकर्के अनादरको प्राप्तकियाहै उ
सी सभाविषे अपनेको कैसे वर्तमानकरे यह निश्चयसेकहो
भीष्मउवाच श्रूयतां पृथिवीपाल यथैषोर्थोनुगी
यते सदा सचेताः सहते नरस्येहाल्पमेधसः २
भीष्मउवाच हे पृथिवीपाल जैसे इस अर्थका व्याख्यानकहा
है जो पुरुष सदाउदारचित्तहै सो अल्प बुद्धिवाले प्रगल्भपु
रुषके अनादर वाक्यको सदासहारताहै २
अक्रुध्यन्क्रुध्यमानस्य सुकृतं नाम विंदति
दुष्कृतं चात्मनो मर्षी रुष्टस्यैवापमार्ष्टि वै ३
जो आपक्रोध वाक्यकहो तो क्रोधवाक्यवाले मूढपुरुषके
पुण्यको प्राप्तहोताहै ऐसा क्षमावानपुरुषहै सो अपनेपाप
को क्षमाकरके अनादरकरी पुरुषविषे अपनेसे प्रक्षालन
कर्के स्थापनकरताहै ३
टिट्टिभं तमुपेक्षेत वाचमान मिवातुरम्
लोके विद्वेष मापन्नो निष्फलं प्रतिपद्यते ४
उसपुरुषको टिट्टिभपक्षीकीन्याई टीटीशब्द जैसे अतिवि
लिम वोलनेको क्षमाकर्के उपेक्षाकरे सो दुष्टपुरुष अपने
हलवोलकर्के लोकविषे विद्वेषको प्राप्तहोकर अपने व
चनकी निसफलताको प्राप्तहोताहै ४
इति संश्लाघते नित्यं तेनपापेन कर्मणा

इद युक्तो मया कश्चित् संमतो जनसंसदि ५
सो धृष्टपुरुष अपने पापकर्मकर्के नित्यंप्रति अपने आपको
प्रशंसाकरताहै मेने कोई अमुकपुरुष सभामो प्रतिष्ठित
ऐसे उरुक्तवचनोकर्के दुरकाराहै ५

स तत्र व्रीडितः कृत्वा मृतकल्पो वतिष्ठते
श्लाघते श्लाघनीयेन कर्मणा निरपत्रपः ६
सो जो क्षमावानपुरुषहै सो उरुक्तवचनको सभाविषे ल
ज्जाकोपाइपर मृतप्रायजैसा स्थितहोताहै और धृष्टपुरु
षअपने निंद्यवचनके पापकर्मकर्के निर्लज्जहोकर अपा
नीस्तुतीकरताहै ६

उपेक्षितव्यो यत्नेन तादृशः पुरुषाधमः
यद्यद्ब्रूया दल्पमतिः तत्तदस्य सहेद्बुधः ७
हे राजन् ऐसा सो नीच पुरुष यत्नकर्के उपेक्षाकरणेयो
ग्यहै तुच्छबुद्धि सो पुरुष जोजो अवाच्यवचनकहे बुधज
नउसके उस उस वचनको सहारलेवे ७

प्राकृतोपि प्रशंसन्वा निंदन्वा किं करिष्यति
वने काक इवाबुद्धे र्वाचमानो निरर्थकम् ८
जोनसे मूढ दुष्टपुरुषहै स्तुतिकरेगा निंदाकरेगा तो
करलेवेगा सो मूढबुद्धि वनविषे काकजैसा जोजो कहे
गा सो सो सभही निरर्थकहै ८

यदि वाग्भिः प्रयोगः स्यात् प्रयोगे पापकर्मणः
वागेवार्थो भवेत्तस्य नह्येवार्थो जिघांसतः ९
जो किसीकी खोटी वाणीकर्के पापकर्मका फलहोजावे
तो और शास्त्र प्रयोगादियत्न कोवनेसे शास्त्रप्रयोगप्रयत्न
शत्रुमारणेकों कैसों करणाहै ९

निषेकं परिवीतं च आचष्टे व्रतचेष्टया
मयूरइव कौपीनं नृत्यन्सन्दर्शयन्निव १०
तातें जो दुष्टवचन कहनेवाला जो पुरुषहै सो अपने पा
पसूचक वचनोकर्के अपने उत्पत्तीके वीजगर्भके दोषको
प्रगटकरताहै उसकोजानना यह खोटे वीजगर्भसे उ

श्री
रा.प.
नी.
१५६

156

त्मनभयाहै अपने दोषको आपही प्रगटकरताहै जैसे मयू
रनृत्यकरताहै सो अपने कौपीनस्थानको दिषावताहै १०

यस्यवाच्यं न लोकेस्ति नाकार्यं चापि किंचन
वाचं तेननसन्दध्या व्हविः संश्लिष्टकर्मणा ११

हे राजन् जिस पुरुषको इसलोकविषे अवाच्यवचनका
दोषज्ञाननहीहै और अकार्यकरणेकाभी दोषभयनहीं
है ऐसे पुरुषकेसाथ पवित्रकुलाचारवाला बुधजन जोहै
सो वर्णसंकर कर्मवाले साथ वाणीका उत्तरका संसर्ग
नहीकरे ११

प्रत्यक्ते गुणवादीयः परोक्षे चापि निंदकः
समानवः श्ववल्लोके नष्टलोक परावरः १२

जो पुरुषप्रत्यक्तवादीहै अथवा परोक्तविषे निंदाकारीहै
और गुणपुरुषार्थसेही नहै सो तुच्छबुद्धि पुरुष श्वानके
समान वृथावादीहै उसका इह लोक परलोकका सभ
कल्याण नष्टहोताहै १२

तादृग्जनशतस्यापि यद्ददाति जुहोतिच ।
परोक्षेण पवादीयः तमाशयति तत्क्षणात् १३

तैसा जो पुरुषहै परोक्तविषेभी निंदाकरणेहाराहै पात्र
ब्राह्मणजनोंको दानकरताहै होमकरताहै उसके पु
ण्यको परनिंदाकर्के सभकोनाशकरताहै १३

तस्मात्प्राज्ञो नरः सद्य स्तादृशं पापचेतसं
वर्जयेत्साधुभिर्वर्ज्यं सारमेयामिषं यथा १४

ताते प्राज्ञ पुरुषजोहै ऐसे पापचित्त पुरुषको त्वरतही
त्यागदेवे जैसे श्वानके मांसको त्यागदेतेहैं कैसाहै सो पु
रुष साधुजनोंने वर्जनीयहै १४

परिवादं ब्रुवाणोहि दुरात्मावै महाजने ॥
प्रकाशयति दोषांस्त्व सर्पः फणमिवोछ्रितं १५

जो दुरात्मा पुरुष महाजनोंविषे निंदावचनको कहताहै
सो अपने दोषको आप प्रगट जैसे सर्प अपणी फणाको
आपही उंचीकर्के दिषावताहै १५

ते स्वकर्माणि कुर्वाणं प्रतिकर्तुं यइच्छति
भस्मकूट इवाबुद्धिः खरो रजसि मज्जति १६
ऐसा दुर्जन अपने दोषकर्मोंको प्रगटकरताहै उसके दुष्ट
वचनोंका प्रत्युत्तर कराचाहताहै सो पुरुष अबुद्धिहै जैसे
गदाभस्म राशिविषे लोटताहै तैसे उसकी पापराशिविषे
आपभी मग्नहोताहै १६
मनुष्यशाला वृकमप्रशांतं जनापवादे सततं
निविष्टं मातंगमुन्मत्त मिवोन्नदंतं त्यजेत्तं
श्वान मिवाति रौद्रम् १७ जो पुरुष परनिंदाकारी
है सो मनुष्योंविषे शालावृकहै श्वानहै अप्रशांतहै
परापवादविषे सदानिरतहै जैसे उन्मत्तहस्ती अपने सिर
विषे खाकडारताहै ऊर्द्धदंत दिखाइकर उन्मत्तगर्जनाकर
ताहै तैसे अतिदारुणहोरे श्वानको दूरकारकर्तेहैं तैसे
उसदुर्जनका प्रसंगत्यागने योग्यहै १७
अधीरजुष्टे पथिवर्तमानं दमादपेतं विनयाच्च
पापम् अरिव्रतं नित्य मभूतिकामं धिगस्तुतं
पापमति मनुष्यम् १८ ऐसा परनिंदाकारी पुरुष
पापमति मनुष्यम् १८ ऐसा परनिंदाकारी पुरुष
अधीरजनोंके सेवितखोटमार्गविषे वर्तमानहै इंद्रियसंय
मसे रहितहै नीतिमार्गके विनयसेभी रहितहै शत्रुभावके
व्रतवालाहै नित्यही असंपदापात्रहै ऐसा पापमति पुरुषर
को धिग्कारहोवे १८
निशाम्य माभूस्त्व
प्रत्युच्यमानः त्वभिभूयपापैः उच्चस्यनीचे नहिसंप्रयोगं विग
मथानेवृपः ईर्ष्यंति स्थिरबुद्धयोये १९ हे राजन् ऐसे दुष्टजनोंके
अवाच्य वाक्योंकर्के निरादरको कियाहै तोभी इन्हके क्रूर
वचनको अनादरकर्के उन्होंके प्रत्युत्तरकर्के दानयोग्यम
तहोवे उच्चकर्मवाले पुरुषको नीचकर्म पुरुषोंके साथ
प्रसंगको जो स्थिरबुद्धिजनहै सो निंदाकरतेहैं १९
क्रुद्धोदहत्यार्थनहि ताडयेद्वा मर्पास्मभि वीविकिरे
न्नषेवी विहत्यदंतांश्च विभेदयेद्वा सिंहेहि मूढे

ऊपितेन्दशंसे २९ जो दुष्टपुरुष पंचअंगुलीवाले हस्तकर्के ताडनकरे लोकपुष्टिकर्के वर्षाकरे दांतदिषाइकर भयकारभी दिषावे यह ऐसे विकार क्रोधी क्रूर हृति मूढपुरुषोंविषे स्वभावसिद्धवनेहैं ३०

विगर्हणं परमदुरात्मनाकृतो सहेतनः संसदिदुर्जनात्नतः पठेदिदं चापिनिदर्शनंसदा नवांमयं लभति स किंचिदप्रियम् ३१

जो उत्तमपुरुषहै सो परम दुरात्मा पुरुषोंने निंदाकीनीहै उसको सभाविषे दुर्जनस्वभावसे ज्ञानसे सहारलेवे जो मैंने यह तुमको दुर्जन प्रकृतिका उदाहरण कहाहै इसको जो पठनकरे विचारकरे सो पुरुष दुर्जनपुरुषोंके वाक्यजालके दोषसे कछुभिन्न अप्रियको प्राप्तनहीं होता है ३१ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे डिंडिभकोनाम शतोत्तर चतुर्दशोऽध्यायः ११४

युधिष्ठिरउवाच पितामह महाप्राज्ञ संशयो मे महानयं संछेत्तव्यस्त्वया राजन् भवान्कुलकरोहितः १

युधिष्ठिरउवाच हे पितामह महाप्राज्ञ यहमोको संशयभया है हे राजन् तुमने संछिन्नकर्तव्यहै आप हमारे कुलको यशोवृद्धि करणेहारे हितकारीहो १

पुरुषाणामयं तात दुर्वृत्तानां दुरात्मनां कथितो वाक्यसंचार स्ततो विज्ञापयामिते २

जौनसे दुरात्मा दुर्वृत्तपुरुषहैं उन्हका यह तुमनेवाक्यसंचारका शांतिविधानकहाहै अबमे बहोड विज्ञापनाकरताहूं २ ॥

यद्धितं राज्यतंत्रस्य कुलस्यच सुखोदयं आयत्यांचतदात्वे च क्षेमवृद्धिकरंचयत् ३

जो कछु राज्यतंत्रका हितकर्तव्यहै परिणाम कालमो कुलके सुखका उदयकारीहै उसको मेरे प्रतिकहो जौनसा राज्यविषे क्षेमवृद्धिकरणेहाराहोवे ३

पुत्र पौत्राभिरामं च राष्ट्रवृद्धिकरंचयत् अन्नपाने शरीरेच हितंयत्तद्ब्रवीम्यहम् ४

पुत्रपौत्रादि संतानको सुखकारीहोवे औरजो कछुराष्ट्रवृद्धि
करहोवे अन्नपानशरीरविषे हितकारहोवे उसके संदेहकी
निवृत्तियोग्यसोहोवे उसको मे आपसे ब्रह्मवचनसे कहताहूं ४
अभिषिक्तो हि यो राजा राष्ट्रस्थो मित्र संवृत:
असुहृत्समये तोवा सकथं रंजये त्प्रजा: ५
जो राजा राज्यमों अभिषेककों प्राप्तभयाहै राज्यविषे स्थित
भयाहै अमित्रोकर्के वेष्टितभयाहै उसके मित्रसुहृतभी उ
सके उपकारविना उदासीन जैसेहै ताते शूरसत्वभावसेभी
हीनभयाहै सो राजा अपनेप्रजासे कौनविधीसे रंजनकरे ५
योसत्यसंग्रहरति: स्नेहरागवलात्कृत:
इंद्रियानामनीशत्वा दसज्जनवभूषक: ६
और जो राजा स्नेहरागबलसे असंतजनोके संग्रहरतिवाला
कियाहै और विनयविना असज्जनजैसाहोने चाहताहै ६
तस्य भृत्या विगुणतां यांति सर्वे कुलोद्भता:
नचभृत्य फलैरर्थै: स राजा सप्रभुज्यते ७
इसके कुलपरंपरागत भृत्यजन विगुणताकों प्राप्तहोतेहै
ऐसा जो सो भृत्यजनोकर्के कर्मवालोके अर्थ सिद्धीकर्के क
दापि संयुक्तनही होताहै ७
एतन्मे संशयस्यास्य राजधर्मा न्सदुर्विधान्
बृहस्पति समोबुद्ध्या भवासंशित महसि ८
ऐसा यह मेरा संशयहै और राजधर्मभी महा दुर्ज्ञेयहै मेरे
संशयको आपनिवृत्तकरणेयोग्यहो बृहस्पति समान नीति
ज्ञानकी बुद्धिकर्के संपन्नहोता आपने कहने योग्यहो ८
संशित: पुरुषव्याघ्र त्वां.. कुलहितेरत:
तनात्वेको महाप्राज्ञो योन: संसति सर्वदा ९
हे पुरुषव्याघ्र जो मेने प्रश्नकिया इसको निश्चयपूर्वक कहो
आपही अवहमारे कुलके हितकरणेविषेरतहो और एक विदु
रभी ऐसा महाप्राज्ञहै सो हमको सभको सदाही कुलरताका
हितकहताहै ९
त्वत्त: कुलहितं वाक्यं श्रुत्वा राज्य हितोदयं

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ १५८

अभ्यतस्या वयस्येव त्वमः स्वशम्पहे स्तवे १९
हे पितामहजी तुमसे मेभी कुलका हितकर वचनको सुनकर राज्यके हितकारी इदयवचनको श्रवणकरके अमृतपानजैसी अविडतृप्ति पाइकर स्वस्थहोकर सुस्वशुयाकी विश्रांतिको प्राप्तहोवेंगा १०

कीदृशाः सन्निकर्षस्था भृत्यासर्वगुणान्विताः
कीदृशैः किंकुलीनैर्वा सहयात्रा विधीयते ११
जोनसे समीपस्थभृत्यहे सो कैसे सर्वगुणसंपन्नहोवे और कैसे लक्षणसंपन्न कैसे कुलीनलोकोके साथ राजाको व्यवहारयात्रा योग्य कर्तव्यहे ११

नह्येको भृत्यरहितो राजा भवति रक्षिता ११
राज्यं चेदं जन सर्व स्तत्कुलीनोभिकांक्षति १२
एकाकी राजा भृत्यजन सहायरहितहोवे तो राज्य रक्षाविषे समर्थनही होताहे यह राज और राजकुल सभही कुलीन गुणी जनोकीआ कांक्षाकरतेहे १२

भीष्मउवाच नचप्रशास्तुं राज्यं हि शक्यमेकेनभारत असहाय वतातात नैवार्थाः किंचिदप्युत १२
भीष्मउवाच हेभारत यह राज्य कर्मजोहे सो एककरकै शासनाकरणेको शक्यनहीहे असहायवाले पुरुषने कोई अर्थभी सिद्धकरणा शक्यनही होता राज्यलाभको प्राप्तहोकरकैभी राज्यकरणेको एकसे अशक्यहोताहे १२

लभ्येल्वात्प्यपिसदा रक्षितुं भरतर्षभ
यस्य भृत्यजन सर्वो ज्ञानविज्ञानकोविदः १४
हितैषी कुलजः स्निग्धः सराज्यफलमश्नुते
जिसराजाका सभहीभृत्यजन राजनीतिका ज्ञानविज्ञान विषे कुशलहे हितचिंतकहे कुलपरंपरासे चित्तहे स्निग्धतासंपन्नहे सो राज्यफलको अविड भोगताहे १४

मंत्रिणो यस्यकुलजाः असंहार्याः सहोषिताः
नृपते मंत्रिदाः संतः संबंधज्ञानकोविदाः १५
जिसके मंत्रीलोक कुल परंपरासे मंत्रकुशलहे और अन्या

य द्रव्यमें निर्लोभहै और विश्वास सिद्धिसे सहवासीहै
राजाको सन्मंत्रके दाताहै और देशकालवस्तु संपदाके का
र्य ज्ञानके संबंधमो विज्ञहै १५

अनागत विधातारः फलज्ञान विशारदाः
अतिक्रांतमशोचंतः सराज्य फलमश्नुते १६

और दूरदर्शीविचारकरके भावीकालके कार्यविधानकरणेहा
रे परिणामफलके ज्ञानमो प्रवीणहै जो विकृतहोकर वीत
गया उसको अपने नीतिज्ञानके विधानसे शोचनानहीक
रते सो राजा राज्यफलको अखंडप्राप्तहोताहै १६

समदुःख सुखायस्य सहायाः प्रियकारिणः
अर्थचिंता परास्सत्याः सराज्य फलमश्नुते १७

जिसराजाके सहायकर्ता पुरुष सुखदुःखप्राप्तिमो हर्षशो
कके वशनहीहोते सदानीतियोगसे पुरुषार्थप्रयत्नविषे
सदा एकजैसे उद्यमहै स्वामीके प्रियहितकारीहै सदासद
र्थचिंतापरायणहै स्वामीसेवाके सत्यपथमेमो सदास्थितहै
भोग॰ सो राजा राज्यफलको देताहै १७

यस्यनार्तो जनपदः सन्निकर्षे गतस्सदा
अक्षुद्रः सत्पथालंवी सराजाराज्यभाग्भवेत् १८

जिसराजाका जनपददेश रक्षापालनविधिकर्के सदासंप
दासंपन्नहै और समीपवर्ती जो मंत्रीसेवकजनहै सो तुच्छ
स्वभावनहीहै और सन्मार्गजोहै सत्यधर्मउसको आश्रित
है सो राजा राज्यफलका भागीहोताहै १८

कोशाख्य पटलंयस्य कोशवृद्धि करैर्नरैः
आप्तैः तुष्टैश्च सततं चीयते सन्रपोत्तमः १९

और जिसराजाका कोशखजानेका स्थानजोहै सोकोशवृ
द्धिकरणेहारे विश्वासापन्न संतोषापन्न जनोकर्के धर्ममा
र्गके द्रव्यसमुदायकर्के सदासंग्रहकर्के भराजाताहै
ऐसा सो राजा राज्यसत्तमहोताहै १९

कोष्ठागार समंहार्यै राप्तैः संचय तत्परैः
पात्रभूतैर्वं लब्धैश्च पाल्यमानं गुणीभवेत् २०

हे राजन् राजाको कोष्ठागारजोहै सोजोनसे भदहतिरहि

शां.
रा.ध.
टी.
१५९

159

त विश्वासकेपात्र और संग्रहविषे तत्परहोवे अधिकारके
कुलपरंपरासे पात्रभूतहै लोभरहितहोवे तिन्होंकरके रक्षि
तहोवे सो राजा संपदावृद्धिके गुणसंयुक्त होताहै २०

व्यवहारश्च नगरे यस्य कर्म फलोदयः
दृश्यते शंखलिखितः स धर्मफलभाङ्नृपः २१

और जिसराजाके नगरका व्यवहार निर्णयजोहै सो यथायो
ग्यकर्मफलके उदयवाला दृष्टहोताहै फलमात्र चोरी
विषे शंखलिखितमुनिजनोंके हस्तछेदजैसा दंडनीति
संपन्न होताहै सो राजा धर्मदंडके उत्तमफलका भागी
होताहै २१

संगृहीत मनुष्यश्च यो राजा राजधर्मवित्
षड्वर्गं प्रतिगृह्णाति स धर्म फलमश्नुते २२
इति श्री राजधर्मे शतोत्तर पंचदशोऽध्यायः ११५

हे राजन् जौनसा राजा उत्तमगुणी मनुष्योंके संग्रहवालाहै
और राजधर्मकाजानताहै और संधि विग्रहादि षड्वर्ग संग्रहवि
चारवेताहै सो राजा राजधर्मके फलको प्राप्तहोताहै २२
इतिश्री राजधर्मे शतोत्तर पंचदशोऽध्यायः ११५ ॥

भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरा
तनं निदर्शनं परेलोके सज्जनाचरिते सदा १

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर उत्तम मध्यम अधम कार्यस्थानो
विषे उत्तम मध्यम अधम पुरुष यथाधिकार युक्तकर्तव्य
है इस अर्थविषेभी एक पुरातन इतिहासको उदाहरण
कहतेहैं सो इतिहास इसलोकविषे सज्जनोंके आचारवि
षे सदापरम उत्तमदृष्टांतरूपहै १

अस्यैवार्थस्य सदृशं यच्छ्रुतं मे तपोवने
जामदग्न्यस्य रामस्य यदुक्तं ऋषिसत्तमैः २

इसी अर्थके समान तपोवनविषे जो मेने श्रवणकियाहै
जो कछु ऋषि सत्तमोने जमदग्निके पुत्रको रामको कहाहै
उसको कहतेहैं २

वने महति कस्मिंश्चित् अमनुष्य निषेविते
ऋषिर्मूल फलाहारो नियतो नियतेंद्रियः ३

हेराजन् किसी मनुष्यरहित एकवनविषे मूलफलाहारकारी
एक तपस्वी महातपको करताभया कैसाहै नियमकर्के
संयुक्तहै जितेंद्रियहै ३

दीक्षाक्रमपरः शांतः स्वाध्यायपरतः शुचिः
उपवासविशुद्धात्मा सततं सत्वमास्थितः ४

व्रतदीक्षाविषे इंद्रियदमविषे तत्परहै शांतवृत्तिहै स्वाध्याय
पाठविषे परायणहै अतिपवित्रहै त्रिकालसंध्यास्नानपरा
यणहै उपवासव्रतोकर्के शुद्धचित्तभयाहै सदाही शुद्धसत्व
मनोवृत्तिभयाहै ४

तस्य सन्दृश्य सद्भाव मुपविष्टस्य धीमतः
सर्वे सत्वा समीपस्था भवंति वनचारिणः ५

इसप्रकार सो मुनि अपनेस्वभावकर्के सद्भावतपविषे उप
विष्टभयाहै उसको देषकर सभही वनकेवासी जीव आसपा
ससमीपस्थितिवाले भयत्यागकर विश्वासापन्नहोतेभये ५

सिंहव्याघ्रगणाः क्रूराः पन्नाः चैव महागजाः
दीपिनः खड्गभल्लूका येचान्ये भीमदर्शनाः ६

जेते अतिक्रूर सिंहव्याघ्रादि जीवगण और मदमत्तहस्तिगण
हैं सो औरद्वीपिजोहै लघुव्याघ्रजाती जीव और खड्गजोहै गेंडे
और ऋक्ष भल्लूकादिक भीमदर्शनकारी जीवजातीहै ६

तेस्वप्रश्नदा सर्वे भवंति ततनाशनाः
तस्यैव शिष्यवच्चैव दासभूताः प्रियकारिणः ७

सो सभही स्वप्रश्नके उत्तरवाक्यवालेहोतेभये जैसे मांसा
हारी मृगहै सोभी उस ऋषिके शिष्यहुएजैसे दासभूतभये
है सदाप्रियकारीहोतेभये ७

दत्त्वा तेच स्वप्रश्नं सर्वे यांति यथागतं ।
ग्राम्यसेवकः पशुस्तत्र नाजहात्स महामुनिः ८

सो सभही वनचारी क्रूरजीव मुनिके दर्शनको आवतेहैं
मुनिको मनुष्यवाणीकर्के स्वप्रश्नका उत्तरकहकर्के य
थागतचलेजातेहैं तहां एकग्रामका पशुस्थानरहा सोमु
निके समीपस्थानको नहीं त्यागकरताहै तहांही सदावास
करताभया ८

श्री॰ रा॰ यं॰ टी॰ १६०

160

भक्तोनुरक्तः सततं मुपवास कृशोबलः ॥
फलमूलोदकाहारः शान्तः शिष्टाकृतिर्यथा ९
परमभक्त अनुरागवालाहै उपवासकर्के कृशहोताभया
अबलहोताभया फलमूल जलको आहारकरताभया शिष्ट
जनजैसे आहारवालाहोताभया ९

तस्योपं रुपविष्टस्य पादमूले महामते
मनुष्यवत्कृतो भावं स्नेहबद्धो भवदृशं १०
हे महामते महाराज सो स्वानपशु उसमुनीकेजहां सो मुनि
उपविष्टाहोताहै तहां उसके पादमूलस्थानविषे मनुष्यकी
न्याई सेवाभावको प्राप्तहोकर अत्यंतस्नेहके संबंधवालाहो
ताभया १०॥

ततो भ्याया न्महावीर्य्यो द्वीपीक्षतजभोजनः
स्वार्थं मत्यंत संहृष्टः क्रूरःकालइवांतकः ११
तहां एकमांस भोजनकारी एक लघुव्याघ्र आजाताभया अपने
भोजनवास्ते स्वानको देषकर संहृष्टभयाहै ऐसाक्रूरहै सा
क्षात् अंतकालकरणेहारा अंतकभगवानजैसाहै ११

लेलिह्यमान स्तृषितः पुच्छास्फोटन तत्परः
व्याधितास्यः क्षुधाभुग्नः प्रार्थयान स्तदामिषं १२
अपने ओष्टोको जिह्वाकर्के चाटताहै तृषाकुलभयाहै पुच्छके
पटकारमे तत्परहै मुखको विस्तारकर आवताहै क्षुधा
कर्के भग्नशरीर जैसाहै स्वानके मांसाहारको वांछाकरता
है १२ ॥ दृष्ट्वांत कारमायांतं जीवितार्थी नराधि
प प्रोवाच स्वामुनिं तत्र तद्भूणुष्व विशांपते १३
हे विशांपते राजन् ऐसे क्रूरमांसाहारी व्याघ्रको आवतीको
देषकर अपने जीवनेका अर्थी स्वानजोहै सो मुनिको वचन
कहताभया हे नराधिप उसवचनको श्रवणकरो १३

श्वशत्रु भगवन्नेष द्वीपी मां हंतु मिच्छति
त्वत्प्रसादाद्भयंनस्या त्तस्मान्मम महामुने १४
हे भगवन् यह व्याघ्र स्वानोका शत्रुहै मोको मारणेको इच्छा
करताहै तुम्हारे प्रसादसे मोको इससे भय नही होवे १४

तथा कुरु महाबाहो सर्वज्ञस्त्वं न संशयः
स मुनिस्तस्य विज्ञाय भावज्ञो भयकारणं १५
हे महामुने महाभाग तैसेही करो तुम सर्वसामर्थ्यसंपन्न स
र्वज्ञहो इसमो संशय नहीहै हे राजन् सो मुनि उस श्वानके
अभिप्रायको जान भयकारणको जानकर्के सर्वजीवोंकी भा
षाका वेत्ताहै अपने तपोबलके ऐश्वर्यसंयुक्तहै उस श्वान
को वचन कहता भया १५
कृतज्ञः सर्वसत्वानां तपैश्वर्यसमन्वितः
मुनिरुवाच न भयं द्वीपिनः कार्यं मत्सुतस्ते कथं
चन एष व्याघ्ररूपवर्हितो द्वीपी भवसि पुत्रक १६
मुनिरुवाच हे पुत्रक तेने अपने मत्सुरूप व्याघ्रसे भय
कदापि नही करणा अब तूं श्वानभावसे रहित होकर
व्याघ्ररूपही होवेगा १६
ततः श्वा दीपितां नीतो जांबूनद निभाकृतिः
चित्रांगो विस्फुरद्दंष्ट्रो वने वसति निर्भयः १७
हे राजन् सो श्वान उस मुनिने व्याघ्रभावको प्राप्त कियाहै
सुवर्णके समान आकृतिवाला भयाहै चित्र विचित्र जैसे
अंगरूपताको प्राप्त भयाहै दीप्तमान जिसके दंष्ट्रा भयेहै
वनविषे निर्भय होकर विचरताहै १७
तं दृष्ट्वा सम्मुखे द्वीपी आत्मनः सदृशं पशुं
अविरुद्धस्ततस्तस्य क्षणेन समपद्यत १८
सो जो चित्रव्याघ्रहै अपने समान चित्रव्याघ्रको आवते दे
खकर उसके साथ विरोधत्यागकर्के क्षणमात्रकर्के शां।
तरूप होकर्के फिर जाता भया १८
ततोऽभ्ययान्महारौद्रो व्याधितास्यः क्षुधान्वितः
द्वीपिनं लेलिहद्वक्रो व्याघ्रो रुधिरलालसः १९
तदनंतर किसीकालविषे तहां महाव्याघ्र आवताभया
महारौद्ररूपहै मुखविस्तारकरके क्षुधायुक्त होक
र जिह्वाको लयकरताहै रुधिरकी लालसावा
ला आनप्राप्त होताभया १९

व्याघ्रं दृष्ट्वा क्षुधाविष्टं दंष्ट्रिणं वनगोचरं ॥
द्वीपीजीवितरक्षार्थं ऋषिंशरणमेयिवान् २०
सो चित्रव्याघ्र महाव्याघ्रको क्षुधाक्रांतभयेको महातीक्ष्ण
दंष्ट्रावालेको वनगोचरभयेको देषकर अपने रक्षाके अर्थ
चित्रव्याघ्र ऋषीकी शरणको प्राप्तहोताभया २०
सवाससं परं स्नेहं ऋषिणा कुर्वता तदा
स द्वीपी व्याघ्रतां नीतो रिपूणां बलवत्तरः २१
उसऋषिने अपने सहवासके स्नेहकरणेकर्के सो चित्रव्या
घ्र ऋषीको शरणको प्राप्तहोताभया महाव्याघ्ररूपता
कों प्राप्तकिया तो अपने शत्रुजीवोको मारणेद्वारा म
हाबलवानहोताभया २१
ततो दृष्ट्वा स शार्दूलो नाहनत्तं विशाम्पते
सत्वस्था व्याघ्रतां प्राप्य बलवान्पिशिताशनः २२
तव सोशार्दूलव्याघ्र उसकों शार्दूलव्याघ्ररूपदेषकर्कें स्व
जातिरूप जानकरनही मारताभया सोभी शार्दूल व्याघ्र
रूपहोकर्के महाबलवान् मांसभोजनकर्ताहोताभया २२
न मूलफलभोगेषु स्पृहामप्यकरोत्तदा
यथा मृगपतिर्नित्यं प्रकांक्षति वनौकसः २३
तथैव स महाराजन् व्याघ्रः समभवत्तदा २४
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि श्वाऋषिसं
वादे शतोत्तरषोडशोध्यायः ॥ ११६ ॥
तबसे फलमूलभोगविषे इछानहीकरताभया जैसे मृग
पति मृगेंद्र वनजीवोके माराचाहताहै तैसे हेमहाराज सो
शार्दूल व्याघ्रभी जीवघाती होताभया २४ ॥ इति श्री
भाषार्थमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे श्वाऋषिसंवादे
शतोत्तर षोडशोध्यायः ११६ ॥
भीष्मउवाच व्याघ्रश्चोटजमूलस्थः तृप्तः सुप्तो हतैः
मृगैः गज श्वा गातमुद्देशं मत्तो मेघ इवोत्थितः १
भीष्मउवाच हे राजन् शार्दूलव्याघ्रजोहै सो ऋषिके पर्णशा
लाके समीपस्थितहोकर वनके मृगोकों हतकर्के तृप्तहोता
भया सदातृप्तहोकर तहांस्थित होताभया सदातृप्तहोकर

तहां स्थितहोताभया तहां एकवनकागज आवताभया मद
मत्तहै महामेघके महाशरीरवाला आवताभया १

प्रभिन्नकरटः प्रांशुः पद्मी विततकुंभकः
सुविषाणो महाकायो मेघगंभीरनिस्वनः २

सो वनगजकैसाहै मदप्रवाहकरके भिन्नगंडस्थलवालाहै पद्मवनकी क्रीडावालाहै विस्तारसंपन्नकुंभस्थलहै महादीर्घ दांतोवालाहै मेघगर्जना समान गंभीरध्वनिके गर्जनाका युक्तहै ॥ २॥

तंदृष्ट्वा कुंजरं मत्तमायांतं बलगर्वितम्
व्याघ्रो हस्तिभयात्त्रस्तस्तमृषिं शरणं ययौ ३

ऐसे बलगर्वित मत्तगजको आवते देषकर सो शार्दूलव्याघ्रहस्तीके भयसे मुनिको शरणागत होताभया ३

ततो नयत्कुंजरत्वं व्याघ्रं तमृषिसत्तमः
महामेघनिभं दृष्ट्वा सभीतोप्यभवद्गजः ४

तब सो मुनि उसशार्दूलव्याघ्रको गजभावको प्राप्तकरता भया मुनिकृत मत्तगजको महामेघसमान देषकर वनका हस्ती भयभीतहोकर भागजाताभया ४

ततः कमलखंडानि शालकीगहनानि च
व्यचरन्मदसंयुक्तः पद्मरेणुविभूषितः ५

तव सो मुनिकृत गज जोहै सो हस्तीभावकरकै कमलोके वन खंडोको और शालकी पारोके वनपुंजगहन स्थानो विषे मद मत्त महाप्रमोदयुक्त विचरताभया कमलपुष्पोके रजक रकै शोभितहोताभया ५

कदाचिद्भ्रममाणस्य हस्तिनः सन्मुखे तदा
ऋषेरस्यादजस्यस्य कालोगकमिशानिशं ६

हेराजन् सो मुनिकृत महागज ऋषीके आश्रमसमीपविषे प्रतिसावकरकै दिनरात्रक्रमकरकै कोईकाल वीतजाताभया ६

अथ जगाम तंदेशं केसरी केसराकृणः
गिरिकंदरजो भीमः सिंहो नागकुलांतकः ७

श्री॰ रा॰ य॰ टी॰ १६२

अथ केतेकाल वीतगयेसे एक महाबली सिंहजोहै सोकेसरजो
है ग्रीवादिदेहके अंगोंके रोमजालकरके कमलअध्याके केस
रोकर्के अरुणवर्णतहां आवताभया पर्वतकी कंदरविषे
जन्मवालाहै हस्तिजातीके कुलका अंतकारीहै सो तहां
आवताभया ७ ॥

तं दृष्ट्वा सिंह मायांतं नागः सिंह भयार्दितः
ऋषिं शरण मापेदे वेपमानो भयातुरः ८

ऐसे सिंहको आवते देषकर्के सो गजसिंहके भयकरके पी
डितहोकर ऋषीकी शरणकों प्राप्तहोताभया ८

सततः सिंहतां नीतो नागेंद्र मुनिनातदा
वन्यंनागणय त्सिंहं तुल्यंजाति समन्वयात् ९

सो नागेंद्रमुनिने महाबली सिंहरूपताको तत्कालही प्राप्त
कियाहै सो मुनिकृत सिंहजोहै सो वनके सिंहको अपनी
जातिसंबंधसे तुल्यनहीं मानताभया ९

दृष्ट्वा च सो भवत्सिंहो वन्योभय समन्वितः
स चाशु मेव सत्सिंह स्तस्मिन्नेव महावने १०

उसकोदेषकर वनकासिंह भययुक्त होताभया कहांसे जाताभ
या मुनिकृत सिंह जोहै सो तहां महावनविषे मुनिके आश्र
म निवासकरताभया १०

तद्भयात्स्म शाचोनाम्ने तपोवन समीपतः ॥
अदृश्यंत तदारण्या जीविताकांक्षिणस्तथा ११

हे राजन् उसके भयसे औरजो वनके मृगपशुजोहै सो अपने
जीवनेकी आकांक्षवाली उसतपोवनके आसपाससमीपविषे
दृष्टनहींहोतेभये ११

कदाचित्काल योगेन सर्वप्राणि विहिंसकः
बलवान् शरभजाहारो नानासत्व भयंकरः १२

कदाचित्को कालवीतगया तहां सर्वप्राणि जातिको हिंसाकर
णेहारा महाबलवान शरभ मृगजोहै सो प्राणी गणके लो
हके आहारवाला नानाप्रकारके जीवगणोंके भयकारी
तहां आजाताभया १२ ॥

अष्टपादूर्ध्वनयनः शरभो वनगोचरः
तं सिंहं हन्तुमागच्छन्मुनेस्तस्य निवेशनं १३
अष्टपाद जिसकेहैं ऊर्ध्वदृष्टिहै ऐसा वनगोचर शरभजोहै
सो सिंहको मारणेको मुनिके आश्रमको आवताभया १३
तं मुनिः शरभं चक्रे बलात्क्रूरमरिंदम
ततः स शरभो वन्यो मुनेः शरभमग्रतः १४
हे राजन् मुनिजोहै सो उस अपने सिंहको शरभरूपही
करताभया तब वनका शरभजोहै मुनिके शरभको अति
वलिष्ठ अपने अग्रविषे देखकरके भयभीतहोताभया १४
दृष्ट्वा बलिनमत्युग्रं द्रुतं संप्राद्रवद्वनात्
स एवं शरभस्थाने सम्यस्तो मुनिना तदा १५
उस शरभको अतिउग्रदेखकरकें उसवनसे दूरभागजाताभया
हे राजा इसप्रकार सो स्थान मुनिने क्रमकरकें शरभकरदिया १५
मुनेः पार्श्वगतो नित्यं शरभः सुखमाप्तवान्
ततः शरभसंत्रस्ताः सर्वे मृगगणास्तदा १६
सो शरभमुनिकेपासही स्थितभयाही परमसुखको प्राप्तहो
ताभया तब सबही मृगगण शरभके भयकरकें अतित्रास
को प्राप्तहोतेभये १६
दिशः संप्राद्रवन्राजन् भयाज्जीवितकांक्षिणः
शरभोप्यति संहृष्टो नित्यं प्राणिवधेरतः १७
तहांसे दिशाको भागजाते भयसे अपने जीवनकी वांछाकरकें
उसवनको त्यागजातेभये सो शरभभी मुनेके प्रसादकरकें
हृष्टपुष्टहोताभया सर्वप्राणी जीतीके वधविषे उद्यमहोता
भया १७ फलमूलाशनं कर्तुं नैच्छत्सपिशिताशनः
ततो रुधिरतर्षेण बलिना शरभोन्वितः १८
फलमूलाशन करणेको इच्छानहीकरताभया तब रुधिरपा
नकी तृष्णाकरकें अति चंचल होताभया १८
इयेष तं मुनिं हन्तुमकृतज्ञः स्वयोनिजः
ततस्तेन तपःशक्त्या विदितो ज्ञानचक्षुषा १९
हे राजन् सो शरभ स्वानयोनिसे शरभकियाहै उस उपकार

का वेत्तानहीं ऐसा कृतघ्न सो मुनिको मारणेकी इच्छाकरते
भया तव उसमुनीने अपने तपोबलप्रभावसे ज्ञानदृष्टिक
कें जानलियाहै १९

विज्ञाय स महाप्राज्ञो मुनिः श्वानं तमुक्तवान्
श्वात्वं द्वीपित्वमापन्नो द्वीपी व्याघ्रत्वमागतः २०

ऐसे जानकर सो महाप्राज्ञमुनि उस श्वानको वचन कहता
भया हे नीच हे मूढ तूं प्रथम श्वानहोताभया श्वानयोनि
से मुक्तहोकर द्वीपिव्याघ्रके स्वरूपको प्राप्तभयाहै २०

व्याघ्रो नागो मदपटुः नागः सिंहत्वमागतः
सिंहत्वं बलमापन्नो भूयः शरभतां गतः २१

द्वीपिव्याघ्रसो वते वनगजभयाहै वनगजरूपत्यागसे सिं
हत्वको प्राप्तभयाहै सिंहताको पाइकर बलको प्राप्तभ
या वहोडशरभताको प्राप्तभया सो तूं अवमोको मारणे
को उद्यतभयाहै २१

मयास्नेह परीतेन विसृष्टो न कुलान्वयः
यस्मादेव मपापं मां पाप हिंसितु मिच्छसि २२

मैने स्नेहयोगकर्के तोको शरभकियाहै तेने अपनाकुलस्व
भावको त्यागनहीं कियाहै जिसकारणसे पापरहिततो
मैंहो तेराउपकारीभीहों अव कृतघ्नतासें तूं मारणेको उद्य
तभयाहै ताते तूं वहोडश्वानही होवेगा २२

तस्मात्स्व योनि मापन्नः श्वैवत्वंहि भविष्यसि
ततो मुनिजन द्वेष्य दुष्टात्मा प्राकृतो बुधः॥ २३

हे राजन् ऐसा शरभ मुनिनेदयासे शरभताको प्राप्तकिया
तो जाति स्वभावके मूढतासे मुनीजनोकाही द्वेषकारीभया
है ऐसा सो पशुरूपी अज्ञानीभया २३

ऋषिणा शरभः शप्त स्तद्रूपं पुनराप्तवान् २४
इति श्री राजधर्मे श्वानोत्तर सप्तदशोध्यायः ११७

तव मुनि शापदिया तो वहोडश्वानरूपताकोही प्राप्तभयाऊं
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भाषार्थटीका
यांश्वर्षिसंवादे सप्तदशोध्यायः ११७ ॥

भीष्मउवाच स्वांप्रकृति मापन्नः पर्वंदैत्य शुपाग
तः ऋषिणा हुंकृतः पाप स्तपोवन बहिष्कृतः १
भीष्मउवाच हे राजन् युधिष्ठिर सो श्वान अपने श्वानस्वभाव
के स्वरूपको प्राप्तभया परमदीनताको प्राप्तहोताभया ऋ
षीने हुंकारकर्के तिरस्कारकिया अपने तपोवनसे बाहि
र निकास दियाहै १
एवं राज्ञा मति मता विदित्वा सत्य शौचतां
आर्जवं प्रकृतिं सत्वं श्रुतं वृत्तं कुलंदमम् २
इसप्रकार बुद्धिविचार संपन्न राजाने प्रथमही पुरुषको सत्य
शौचताको विचारकर्कै शीलकी आर्जवताको स्वभावप्रकृ
तिको सत्यधर्मका शास्त्रश्रवणके ज्ञानको और आचारवृत्तिके
कुलको इंद्रियमनके दमको २
सत्वकोशं बलं वीर्यं प्रभावं प्रश्रयं क्षमाम्
भृत्या ये यत्रयोग्याः स्युः तत्रस्थाप्याः सुरक्षिताः
दयाभावको बलको पराक्रमको कुलाभिमानप्रभावको वि
नयको क्षमाको बुद्धिज्ञान विचारकर्कै जो जो भृत्यजन ज
हां जहां अधिकारमो योग्यहोवे सो सो तहां तहां स्थापनक
र्नेयहै और प्रयत्नकर्कै रक्षाकरणेयोग्यहै ३
नापरीक्ष्य महीपालः सचिवं कर्त्तु मर्हति
अकुलीन नराकीर्णो नराजा सुखमेधते ४
महीपाल जोहै ऐसा मे परीक्षा विना मंत्री सचिवको नहीं
करणे योग्यहै जो राजा अकुलीन नरयुक्तहोवे राज्यसुख
कोनही पावताहै ४
कुलजः प्रकृतो राज्ञा स्वकुलीन तयासदा
न पापे कुरुते बुद्धिं भिद्यमानोप्य नागसि ५
जो राजा कुलीन प्रकृतिसंयुक्तहै आपभीसदाकुलीनतासे
युक्तहै अपराध ज्ञानविना पापविषे बुद्धिको नहीकरताहै
तैसे भृत्यजोहै सोभी उत्तमकुलकाहोवे राजाने अपराध
विनाभी अनादरादि दंडकर्कै भिन्नवृत्तिकोभी प्राप्तकियाहै

तोभी अपने कुलीनताकर्के पापकार्यविषे बुद्धीको नहीकरताहै

अकुलीनस्तु पुरुषः प्राकृतः साधुसंश्रयात्
दुर्लभैश्वर्यतांप्राप्तो निर्मितः शात्रवंव्रजेत् ६

अकुलीनजो पुरुषहै सो आपमूढबुद्धिहै संतसमागमसे दु
र्लभ ऐश्वर्यताको प्राप्तहोकर्के राजासे किंचितमात्रभी निंदा
को प्राप्तहोवे तो परमशत्रुभावको प्राप्तहोताहै ६

कुलीनं शिक्षितं प्राज्ञं ज्ञान विज्ञान पारगम्
सर्वशास्त्रार्थ तत्वज्ञं सहिष्णुं देशजं तथा ७

जौनसापुरुष उत्तमकुलकाहै सो देशकालव्यवहारकी शि
क्षासंपन्नहोवे उसकी धारणाविषे प्राज्ञहोवे और विचारवृत्ति
वृत्तिकर्के ज्ञानविज्ञानका पारगामीहोवे सर्वशास्त्रोका तत्व
वेत्ताहोवे धीरतासे श्रमका और दोषका सहिष्णुहोवे और वि
ख्यातदेशकाहोवे ७

कृतज्ञं बलवंतं च दांतं दांतं जितेंद्रियः
अलुब्धंलब्ध संतुष्टं स्वामिमित्रबुभूषकं ८

उपकारका और धर्मव्यवहारका कृतज्ञहोवे और बलावल
ज्ञानमत्ता संपन्नहोवे क्षमायुक्तहोवे और देहचेष्टाकी चंचल
तारहितहोवे इंद्रियोमनकी वृत्तिको जीतनेहाराहोवे अति
लोभी न होवे लब्धमात्रकर्के संतुष्टहोवे स्वामीकार्यकी मि
त्रकार्यकी विभुताकी वांछा संपन्नहोवे ८

सचिवं देशकालज्ञं सत्व संग्रहणे रतम्
सततं युक्तमनसं हितैषिणमतंद्रितम् ९

ऐसा मंत्रकरणेहारा मंत्रीहोवे औरकैसा मंत्रीहोवे देशका
लस्वभावका वेत्ताहोवे सत्यधर्मवाली जनोके संग्रहकर
णेमोरतहोवे सदाहीकार्यसिद्धीविषे युक्तमनहोवे स्वामी
काहितचिंतकहोवे सत्यधर्मवाले जनोके संग्रहकरणेमो
रतहोवे आलस्यरहितहोवे ९

शक्ताचारं स्वविषये संधिविग्रहकोविदम्
राज्ञा त्रिवर्गवेत्तारं पौरजानपदप्रियम् १०

अपने देशकुल अधिकारविषे उपयुक्त आचारवालाहोवे

और शत्रुमित्रादि संधिविग्रहविषे विचक्षणहोवे राजधर्मके त्रिवर्गजोहे धर्म अर्थकाम तिनोंका गुणदोषोंकावेत्ताहोवे और पुरवासी देशराष्ट्रवासी लोकोंका प्रियकारीहोवे १०

खातकव्यूह तत्वज्ञं बलहर्षणकोविदम्
इंगिताकार तत्वज्ञं यात्राज्ञान विशारदम् ११

ऐसा मंत्री सर्वराज्य व्यवहारोंका द्रष्टाहोवे और दुर्गनगरादिकोंके खाते खाई आदिक कार्यजोहे और सेनाबलके व्यूहकार्यजोहे उन्हका तत्ववेत्ताहोवे और सेनाबलको खानपानबलपौरषादि उपदेशकर्के हर्षकरणेमो निपुणहोवे सभकी स्वरूपचेष्टा मनोवृत्तिका तत्ववेत्ताहोवे यात्राकालकी ज्ञानविधिका चतुरहोवे ११

हस्ति शिक्षाश्वतत्वज्ञं अहंकार विवर्जितं
प्रगल्भं दक्षिणं दांतं बलिनं युक्तकारिणं १२

हस्ति शिक्षा अश्वादि वाहनशिक्षामो तत्ववेत्ताहोवे अहंकार दोषवर्जितहोवे मानावमान शंकात्यागसे प्रगल्भहोवे चतुरहोवे मनवाणीदेहके वृथा चेष्टाका दमनशीलहोवे बलपौरुष संपन्नहोवे युक्तियुक्त अपने अधिकार कार्यको करणेहाराहोवे १२

चोक्षं चोक्षजनाकीर्णं सुमुखं सुखदर्शनं
नायकं नीतिकुशलं गुणश्रेष्ठ समन्वितं १३

आचार विचार शुद्धीसे चोक्षहोवे और चोक्षजनाकर्के युक्तहोवे सदैव सुखवक्ताहोवे और सुखकरणेहारा जिसका दर्शनहोवे जो नीति कुशलहोवे उत्तम गुणोंकी चेष्टा संयुक्तहोवे १३

अस्तब्धं प्रश्रितं श्लक्ष्णं मृदुवादिन मेव च
धीरं शूरं महर्द्धिं च देशकालोप पादकं १४

और हठवृत्ति नहीहोवे सर्वत्र जनोविषे व्यवहारो परिचयवानहोवे और सौम्यवृत्तिहोवे और मधुरवचनकावक्ता होवे धैर्यसंपन्नहोवे और सूरमाहोवे महाउदार संपदा युक्तहोवे देशकालोचित कार्यसंपादकहाहै १४

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
१६५

165

सचिवं यः प्रकुरुते न चैनमवमन्यते
तस्य विस्तार्यते राज्यं ज्योत्स्ना ग्रहपतेरिव १५
हे राजन् जो राजा ऐसी मंत्रीकी परीक्षाकर्के मंत्रकुशलकरे व्यवहारदर्शनविषे युक्तकरे सेनापतिके अधिकारमोस्थित करे अपने अभिमानकर्के उसको अवमाननहीकरे उसराजाका राज्यविस्तारको जैसे ग्रहपतिजो प्राप्तहोताहै चंद्रमा उसकी चांदनी विस्तारकी प्राप्तहोताहै १५
एतैरेव गुणैर्युक्तो राजाशास्त्र विशारदः
पष्ठो धर्मपरमः प्रजापालन तत्परः १६
हे राजन् राजाभी ऐसेही गुणोकर्के युक्तहोवे राजतंत्रके शास्त्रका वेत्ताहोवे सोई राजामंतव्यहै धर्मनिर्णयपरायणहोवे प्रजापालनमो तत्परहोवे १६
धीरो मर्षशुचि स्तीक्ष्णः कालेपुरुषकारवित्
शुश्रूषुःकृतवां श्रोता ऊहापोह विशारदः १७
अतिधीरहोवे क्षमावानहोवे व्यवहारकार्यमो शुद्धहोवे तीक्ष्णहत्तिभीहोवे देशकालविषे पुरुषार्थ प्रयत्नवेत्ताहोवे और शास्त्रश्रवणसंपन्नहोकर बहोडवी श्रोताहोवे और २
कार्यकालविषे ऊहापोहजो विधिनिषेध उसकावेत्ताहोवे
मेधावी धारणायुक्तो यथान्यायोपपादकः
दांतः सदाप्रियाभाषी क्षमावांश्च विपर्यये १८
बुद्धि॰ शास्त्रज्ञानसंपन्नहोवे उसके विचारकी धारणायुक्तहोवे देह इंद्रियोकी वृथाचेष्टाकी दमनकरताहोवे प्रियवचन कर्के संभाषणउत्तरकरे और चपलहत्ति अपकारीहै उसविषे क्षमाकारी तत्कालहोवे उसके प्रति अपकार करणेविषे देशकालबल विचारसंपन्नहोवे १८
दानाछेदे स्वयंकारी प्रहास्तः सुखदर्शनः
आर्तहस्त प्रदोनित्यं समात्याहि रितेरतः १९
जहां दानकर्तव्यहै और उसको उछेदकरणा उसको आपविचारसंकरे प्रहासंपन्नहोवे और सुखकारी दर्शन होवे और दीनदुःखी जनोको आपदा मारणेको हस्तका

आलंबनदाताहोवे औरसभायोग्यहोवे सभके हितविषे र
तहोवे १९

नाहंवादीन निर्द्वंद्वो नियत्किंचन कारकः
कृते कर्मणि मात्यानां कर्ताभक्तजन प्रियः २०

सदा अभिमानसे अहंवादीनहीहोवे ग्रहणत्यागरहित निर्द्वंद्व
नहीहोवे और उपकार अपकार रहितहोवे अमात्यादि कर्म
करणेविषे आपकर्तावने भक्तजनोका प्रियहोवे २०

सङ्गृहीतजनःस्तव्यः प्रसन्नवदनः

सदाभृत्य जनापेक्षी नक्रोधी सुमहामनाः २१

सर्वजनोका संग्रह करणेका दृढइच्छितहोवे सदाप्रसन्न वद
नहीहोवे सदा भृत्यजनोको संग्रहकीइच्छाकरे क्रोधीस्वरूप र
हितहोवे सदाउदार मनहोवे २१

युक्तदंडो न निर्दंडे धर्मकार्यानुशासनः

चारनेत्रः प्रजावेक्षी धर्मार्थःकुशलःसदा २२

यथापराध युक्तदंडकारीहोवे साहसादि कार्यविषे निर्दंडन
हीहोवे धर्मकार्यके अनुसार शासनाकरे और चौरोंके संबं
धकानेत्रवानहोवे प्रजावृद्धिको अपेक्षावानहोवे सदाध
रमार्थविचारमो कुशलहोवे २२

राजागुणशताकीर्ण एष्टव्यस्ताद्दृशो भवेत्

योधाश्चैव मनुष्येंद्र सर्वेगुणगणैर्हताः २३

जो राजा गुणशत युक्तहोवे सोई कार्यराजविषे योग्यहो
ताहै हेराजन् कुलीनशिक्षा संपन्नत्वादि एक पंचाश
अमात्यगुणहै धर्मपरत्वादि एकचत्वारिंशत् राजाके
गुणसे संधिविग्रहकारकादि अष्टगुणसेनापतिके वि
शेषगुणहै इसप्रकार एकशतबराबरहोतेहै और यो
धालोकहै मनुष्येंद्र सभही अपने यथायोग्यगण ता
लाशकरके संग्रहकरके योग्यहै २३

अन्वेष्टव्यास युक्ताः सहाया राज्यधारणे

न विमानयितव्यास्ते राज्ञो वृद्धि मभीप्सिता २४

राज्यधारणेविषे सहायकारीहो
सोभी सुंदरकुलकेहोवे तो

तेहैं उन्हका अवमानभी देशकाल ज्ञानविना नहीकर्तव्य
राज्यवृद्धिकी कामनाकरके मंतव्यहैं २४

योधाः समरशौंडाराः कृतज्ञाः शस्त्रकोविदाः
धर्मशास्त्र समायुक्ताः पदाति जनसंहताः २५

समर्दी योधे रणविद्याके इच्छा संपन्नहोवे कृतज्ञहोवे रणशा
स्त्रके वेत्ताहोवे स्वामीभृत्य मर्यादा शास्त्रज्ञान युक्तहोवे
पेदल जनोकरकेहोवे २५

अभया गजपृष्ठस्था रथचर्या विशारदाः
इष्वस्त्रकुशलायस्य तस्येयं नृपते मही २६

जौनसे योधालोक भयशंकावालेहे गजपृष्टविषे स्थित
होवे रथचर्यामो कुशलहोवे धनुर्वाणादि प्रयोगविषे
अस्त्रविद्याविषे कुशलहोवे ऐसे राजाकी यहपृथिवी
महावशहे २६

सर्वसंग्रहणे युक्तो नृपः भवति यः सदा
उत्थानशीलो मित्राढ्यः सराजा राज सत्तमः २७

जो राजा सर्वसंग्रह करणेविषे युक्तहे सो राजा होताहे
उत्थानजो रणयात्रा उसका अभ्यासशीलहोवे मित्र अ
मात्य सहाय संपदायुक्तहे सो राजा राज्यलोकोंविषे श्रे
ष्ठहोताहे २७॥

शक्या चाश्व सहस्रेण वीरारोहेण भारत
संगृहीत मनुष्येण कृत्स्ना जेतुं वसुंधरा २८

इति श्री राजधर्मे ऋषिसंवादेऽष्टादशः ११८

हे राजन् जिसराजाके अश्वसहस्रकरके वीरके आरोह
नकरके युक्तहोवे और मनुष्योंके संग्रह युक्तहोवे उस
राजाने संपूर्णपृथिवी जयकरणेको शक्यहोतीहे २८
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे शततमअ
ष्टादशोध्यायः॥ ११८

भीष्मउवाच एवं शुना समान्भृत्या न्स्वेस्वेस्थाने
नराधिपः नियोजयति कृत्येषु स राज्य फ.
लमश्नुते १॥

भीष्मउवाच हे नराधिप इसप्रकारके शुभगुणयुक्त उत्तमभृ
त्योंकों अपने अपने स्थानविषे यथा योग्य अधिकारविषे नि
युक्तकरे सो राजा राज्यफलको प्राप्तहोताहै १
न श्वासं स्थान मुत्क्रम्य प्रमाण मभि सत्कृतः
आरोप्यः श्वासका स्थानादुत्क्रम्यान्य त्वमायति २
जो जो अपने स्थानके अतिक्रमकर्के युक्तकरे तो उसकाशास
नअप्रमाणनही होताहै ताते अधिकारी लोक अपने अपने
योग्यस्थानविषे आरोपण करणे योग्यहै क्रमके अतिक्रम
कर्के सभही अधिकारी लोकप्रमादको प्राप्तहोताहै २
स्वजाति गुण संपन्नाः स्वे स्वे कर्मण्यसंस्थिताः
प्रकर्तव्या ह्यमात्यास्तु नस्थाने प्रक्रियाक्षमाः ३
यह अमात्यलोकजोहै सो स्वजाति गुणसंपन्नहोवे अपने
कर्मोविषे स्थितहोवे सोई विधिसे अमात्यकर्तव्यहै अपने
स्थानविषे प्रक्रियासिद्धिविषे समर्थहोतेहै ३
अनुरूपाणि कर्माणि भृत्येभ्यो यः प्रयच्छति
स भृत्य गुणसंपन्नो राजाफल मुपाश्नुते ४
जो राजा कार्यविषे उचितभृत्योंको अधिकारदेताहै सो राजा
भृत्यजनोके गुणसंपदायुक्तहोताहै तब राज्यफलकों प्रा
प्तहोताहै ४
शरभः शरभस्थाने सिंहः सिंह इवोर्जितः
व्याघ्रो व्याघ्रश्च स्थाप्यो द्वीपी द्वीपो यथा तथा ५
शरभ जाति शरभस्थानविषे युक्तहोताहै सिंहजाति सिंह
स्थानविषे युक्तहोताहै शार्दूलव्याघ्रजाति शार्दूलव्याघ्रस्था
नविषे युक्तहोताहै और चित्रव्याघ्रजाति चित्रव्याघ्रस्थानवि
षे अपने कार्यविषे प्रमादनही करता और जातिका उस
अधिकारविषे होवे तो अवश्यप्रमादहोताहै जैसे श्वान
शरभ होनाभया ५ ॥
कर्मस्विहानुरूपेषु न्यस्या भृत्या यथा विधिः
प्रतिलोमं न भृत्यास्ते स्थाप्याः कर्मफलैषिणः ६

श्री रा.प. टी. १६७ हे राजन् ताते जिस राजाको अपने हितकी वांछाहोइ उ
सने भृत्योंको उचित अधिकार विचारकर्के स्थापनकर्तव्य
हे उलट पलटकर्के नही स्थापनकरणे ६

167

यः प्रमाणमतिक्रम्य प्रतिलोमं नराधिपः
भृत्यान्स्थापयते बुद्धिः नसरंजयते प्रजाः ७

जो राजा अधिकारप्रमाणको अतिक्रमकर्के उलट पलटक
र्के भृत्योंको स्थापनकरताहे सो राजा अबुद्धिसे प्रजाको
नही रंजनेकरताहे ७

न वालिशाः नचक्षुद्रा नाप्राज्ञा नाजितेंद्रियाः
नाकुलीना नराःसर्वे स्थाप्या गुणगणैषिणा ८

ताते हे राजन् जौनसे अज्ञानव्यवहारसे वालजैसेहे उन्ह
कोभी अधिकार नहीदेणा नातो तुच्छवृत्तिवालोंको देना
जो अप्राज्ञहो उन्हकोभी अधिकारदेना और अजितेंद्रियोंका
नहीदेना अधिकारविषे स्थापननही करणा जो राजा गुण
गणोंकी वांछावालाहे ८

साधवः कुलजाः शूराः ज्ञानवंतो नसूयकाः
अक्षुद्राः शुचयो दक्षाः स्युर्नराः पारिपार्श्वकाः ९

उस राजाने जो साधुवृत्ति पुरुषहे कुल परंपराके गुणशील
हे और शूरताका अभिमानवालाहे और परकी गुणसंपदा
के असूयकहे और क्षुद्रवृत्ति रहितहे आचार विचारसे शु
द्धहे और सर्वव्यवहार ज्ञान संपन्नहे सो अपने अपने आसपा
समो कार्यज्ञानके वेत्ताकर्तव्यहे ९

यथाभूता स्तत्पराः शांताः चोक्षाः प्रकृतिजैः शुभाः
स्वस्थाना नपकृष्टाये तेस्यू राज्ञोबहिश्चराः १०

जौनसे बाह्य व्यवहारके वेत्तापुरुषहे सो राजाके बहिश्चर
प्राणजैसे प्रियहोवे राजाकी आज्ञापरायणहोवे शांतचित्तजै
सेहोवे आचारविचारसे चोक्षेहोवे शुद्धहोवे और अपने स्वभा
वके गुणकर्के शुभहोवे अपने अपने अधिकारसे अवक्षा
तनहीहोवे ऐसे राजाके वाह्यव्यवहार वेत्ताहोवे १० ॥

सिंहस्य सततं पार्श्वे सिंह एवाग्रगो भवेत्
असिंहः सिंह सहितः सिंहवल्लभते फलं ११
हे राजन् सिंहके समीपविषे सिंहकी अग्रगामी होताहै आ
पसिंहनहीहै तोभी सिंहके साथ होवे तो सिंहके पराक्रम
के फलको पावताहै अजासिंह प्रसादेन आरूढागजमस्त
के ऐसा प्रमाण लोकवार्ताकाहै ११
यस्तु सिंहः श्वभिः कीर्णः सिंहकर्म फलेरतः
नससिंह फलं भोक्तुं शक्तः श्वभि रुपासितः १२
जोनसा आपसिंहहै परंतु श्वानमंडली संयुक्तहोकर सिंह
कर्मके फलकी वांछाकरे तब सिंहभावके फलको नहीभोग
शकताहै जाते सो आपही श्वानोकर्के उपासितहै सिंहता
के फलको कैसे पावेगा १२
एव मेतन्मनुष्येंद्रः शूरैः प्राज्ञैः बहुश्रुतैः।
कुलीनैः सह शक्नोति कृत्स्नाजेतुं वसुंधरां १३
हे मनुष्येंद्र इस प्रकार ऐसे गुणवान् शूरमा और प्राज्ञ औ
रशूरमा जो अधिकारी बहुश्रुत कुलीन पुरुषोकर्के युक्तजो
राजाहै सो संपूर्णपृथिवी जयकरणेको समर्थ होताहै १३
नाविद्यो नानृजुः पार्श्वे नाप्राज्ञो नामहाधनः
संग्रह्यो वसुधा पालैः भृत्यो भृत्यवतांवर १४
राजालोकोने विद्यारहित अपने समीपनहीकरणा और
आर्जव वृत्तिरहित अपनी नहीकरणा अप्राज्ञभी अपनान
हीकरणा महाधन सम्पदारहितभी अपनानहीकरणा
ऐसे निर्गुणपु
रुषभी भृत्यसंग्रहकारी पुरुषो विषे श्रेष्टहो ऐसे निर्गुणपु
रुष राजालोकोने अपने समीपवर्ती संग्रहनहीकरणेयोग्य
है १४ बाणवद्विसृता यांति स्वामिकार्य परान
राः येभृत्यापार्थिवहिता स्तेषांसांत्वं प्रयोजयेत्
जोनसे पुरुषबाणकीन्याईं प्रेषितकियेहै सोस्वामिकार्यपराय
णहोकर वेगसे चलेजातेहै राजकी जो परमहितकारीहै
उन्हको सांत्वहतिसे संपन्नकरणे योग्यहै १५

कोशश्च सततं रक्ष्यो यत्नमास्थाय राजभिः
कोशमूला हि राजानः कोशो वृद्धिकरो भवेत् १६
जो राजालोकोने कोशखजानाभी यत्नसे रक्षणीयहै राजा लोक कोश मूलराज्यको शासनकरतेहै राजालोकोको कोशही राज्यवृद्धिकरताहै १६

कोष्ठागारं च ते नित्यं स्फीतैर्धान्यैः सुसंवृतं
सदास्तु सत्सु संन्यस्तं धनधान्यपरो भव १७
हे राजन् तेरा कोशाकार सदाही धनधान्य समृद्धि संपन्न होवे इसीवासते तूंभी संतसंत्रीजनोके साथमंत्रकर्के धनधान्य संग्रह परायणहो १७

नित्ययुक्ताश्च ते भृत्या भवंतु रणकोविदाः
वाजिनां च प्रयोगेषु वैशारद्यमिहेष्यते १८
तेरे भृत्यगणभी नित्यपुरुष प्रयत्नविषे युक्तहोवे सदारण कर्मविषे निपुणहोवे इसी हेतुसे अश्वविद्याकी विचक्षणता श्रेष्ठकहीहै १८

ज्ञातिबंधुजनावेक्षी मित्रसंबंधिसंवृतः
पौरकार्यहितान्वेषी भव कौरवनंदन २०
तूं आपभी ज्ञातिबंधुजनोके पालने करणेका वेत्ताहोवे मित्रबंधुजनोके हितकरण रतहो और परोपकार्यके हितकार्यका चिंतक सदाहो २०

एषा ते नैष्ठिकी बुद्धिः प्रज्ञा चाभिहिता मया
श्वो निदर्शनं तात किंभूयः श्रोतुमिच्छसि २०
इति श्री राजधर्मे ऋषिसंवादः एकोनविंशः ११९
हे तात युधिष्ठिर यहमेने तोको राजधर्म निष्ठाकी शुभज्ञानवाली बुद्धिवृत्ति संक्षेप उदाहरण मात्रकहीहै वहोउ अब तेरा क्या श्रवणकरणेचाहताहै उसको करो २० इति श्री राजधर्मे राजनीत्याध्याय एकोनविंशोत्तरशततमः ११९

युधिष्ठिर उवाच राजन्वृत्तान्यनेकानि त्वया प्रोक्तानि भारत पूर्वैः पूर्वनियुक्तानि राजधर्मार्थवेदिभिः ॥१॥

युधिष्ठिरउवाच हे भारत पितामहजी तुमने अनेक राजाओं
कोकेहित आचार कहेहे पूर्वसेभी पूर्वले धर्मार्थ तत्ववेत्ता ज
नोंने कहेहे श्रवणकियेहे आचारणभी कियेहे १
तदेव विस्तरेणोक्तं पूर्वदृष्टं सतां मतम्
प्रणेयं राजधर्माणां प्रब्रूहि भरतर्षभ २
बहोउ सोई पूर्वला दृष्टकिया संतोका मतआपने विस्तार
करके कहाहे सोई राजधर्मोंका संपूर्णधारण करणविषे
जैसे शक्यहोवे तैसे संक्षेपकरकेभी आपमोको कहो २
भीष्मउवाच रक्षणं सर्वभूतानामितिक्षात्रं परं म
तं तद्यथा रक्षणं कुर्यात्तथा शृणु महीपते ३
भीष्मउवाच हे महीपते राजधर्मोकामूल क्षत्रधर्मकहाहे
उसका परमसार सर्वभूतोंका संरक्षण परमउत्तममानाहे
ताते जिसप्रकार सर्वभूतोंका संरक्षणकर्तव्यहे तैसे प्रकार
से तुमसंरक्षणको श्रवणकरो ३
यथा बर्हाणि चित्राणि बिभर्ति भुजगाशनः
तथा बहुविधं राजा रूपं कुर्वीत धर्मवित् ४
जैसा सर्वभूतोंकी सर्पोंसे रक्षावाले भुजगासनगरुड अथवा
मोरजोहै सो विचित्र प्रकार पुंखोंका धारणकरताहे तैसे रा
जाभी धर्मवेत्ताहोकर बहुप्रकारके स्वरूपकोकरे देशकाल
धर्मके अनुसारवृत्तिकोकरे ४
तैक्ष्णं जिह्मत्व मादान्त्यं सत्यमार्जव मेव च
मध्यस्थः सत्वमातिष्ठं स्तथा वै सुख मृच्छति ५
तीक्ष्णवृत्तिहोवे कपटवृत्तिभी होवे दानकोभीकरे मान
कोभीकरे सत्यभी कही साधारणवृत्तिहोवे मध्यस्थ उदा
सीनभीहोवे और बलकोभी धारे यथाकाल यथादेश
राजकार्यके अनुसार प्रवृत्तहोवे जैसा तैसा नानाप्रकार
व्यवहारकरे तब सुखको प्राप्तहोताहे ५
यस्मिन्नर्थे हितं यत्स्या त्तद्वर्णं रूपमादिशेत्
बहुरूपस्य राज्ञो हि सूक्ष्मो ऽप्यर्थो न सीदति
जिस अर्थविषे जैसे आचारसे हितहोवे तैसा सरूपकरलेवे

इसप्रकारके बकरूप राजाका सूक्ष्मअर्थभी क्षीणनहीहोता ६

नित्यं रक्षति मंत्रः स्या यथामूकः शरच्छिखी
श्लक्ष्णाक्षरतनुः श्रीमा भवेच्छास्त्र विशारदः ७

राजा अपने मंत्रकी गूढतायत्नकरे जैसे शरत्कालविषे म
यूरमूकहोजाताहे मौनकरलेताहे मधुर अक्षरवालीवाणी
को सत्यकहे अपने स्वरूपकोभी विनय संपदासे सूक्ष्मचेष्टा यु
क्तकरे और शास्त्रके विचार श्रवणविषे निपुणहोवे ७

आपद्द्वारेषु युक्तः स्या जलप्रस्रवणे ष्विव
शैलवर्षे दकामीव द्विजः सिद्धान्समाश्रयेत ८

आपदा आमिके मार्गोविषे नित्यप्रति प्रतिबंधकरणविषे उ
द्यतहोतेहे और पर्वतोविषे वृष्टिके जलशुद्ध निर्मलहोतेहे
युक्तहोवे तलस्रावके मार्गोविषे प्रतिबंधकरणविषे ॥
शुद्ध आचारवाले मंत्रसिद्ध तपस्वी ब्राह्मणोका संतसंगवासे
आश्रितहोवे अर्थकामहोकर अपनी उग्रवृत्तिको धर्मध्वज
कीन्याई अति विख्यातकरे ८

नित्यं उद्यत दंडः स्या दाचरेदप्रमादतः
लोके चाय व्ययौ दृष्ट्वा वृहद्वृक्ष मिवस्रवत् ९

और नित्यही दंडको दंडधर्मको प्रमादरहित आचरणकरे
लोकविषे लोकोके आय व्यय। जोहे लाभ खरच तिन्हको
देखकर वृहत् वृक्षजोहे ताडवृक्ष आम्रवृक्ष तिन्होसे रस
ग्राही पुरुष रसको लेताहे जोनसा रसका स्थानहे तहा
ही प्रहारकर्के रसको लेताहे सकलवृक्षको छेदनहीकर
ताहे तैसे प्रजासे धनको ग्रहणकरे इसदंडके रसग्रह
णकीन्याई समूलनाशकर्के धनको ग्रहणनहीकरे प्र
जाको पालन रक्षणकर्के धर्मग्राहीवने ९

मृजावा न्स्यात्स्वयूथेषु भौमानि चरणैः क्षिपन्
जातपक्षः परिस्पंदे त्सैते दैकल्य मात्मनः १०

हे राजन् अपने पक्षके जो हस्थसमूहहे तिन्होविषे मृजावा
नहोवे शुद्धवृत्तिहोवे और पक्षके जोहे तिह्नके देशके अन्न
के समूहे उनको अपनी सेनाकी असवारीसे अश्वचरण
कर्के विनाशकरे जो अपनामित्र सेनापत सिद्धसाधीनव

बनोतवरण यात्राको संदकोकरे जो अपनी विकलताहो
वे तो कालक्षेपकरलेवे १०

दोषाच्छिद्रगणयान्शत्रोः परपक्ष विधूनयेत्
काननेष्विव पुष्पाणि वहिरर्थान् समाचरन्

शत्रूके दोषोको छिद्रदर्शनकरे विख्यातकरे और शत्रुके
बलपक्षोको विकलकरदेवे जैसे वनविषे पुष्पोको ग्रह
णकीया [illegible]जाताहै तैसे बाह्यकार्योके अर्थोको ग्रहणकरे ११

उच्छ्रिता नाशयेत्स्फीता नरेंद्रा नचलोपमान्
आयेच्छायाम विज्ञातां गुप्त रण मुपाश्रयेत् १२

अतिउत्कट संपदावाले राजालोकहै उन्हकी संपदाकोना
शकरे पर्वतसमानहोवे तोभी नाशकरे दुर्गतिस्थानो प्रवे
शकरलेवे परजनोको अविज्ञातछायाको आश्रयकरे
इसप्रकार गुप्तहोकर्के रणकोंकरे १२

प्रावृषीवा सितग्रीवो मज्जेत निशि निर्जने
मायूरेण गुणेनैव स्त्रीभिश्चालीतितश्चरेत् १३

जैसे वर्षाकालविषे नीलग्रीवपंछी अदृश्यहोताहै तैसे रा
त्रविषे निर्जनस्थानविषे गुप्तवासकरे जैसे मयूरनृत्यकर
ताहै तैसे स्त्रीजनोके दृष्टिगोचरहोकर अंतःपुरविषेही
कालक्षेपकरे १३

नजह्याच्च तनुत्राणं रक्षेदात्मानमात्मना
चारभूमिष्वभिगतान् पाशांश्चपरिवर्जयेत् १४

अपने आत्माकी रक्षाको कदापि नही त्यागकरे अपने आ
त्माके अपनेयुक्ति प्रयत्नकर्के रक्षाकरे जो अंतःपुरविषे
भी धाई आदिक इस्त्रियां और अंतःपुरचारीलोक और अ
पने भोजन पाचक जो शत्रुलोकोचार संचारकर्के भेदलि
येहोवे विषदानकाशूरी आदिक प्रयोगकियाहोवे तो उन्ह
को अज्ञातयुक्ति प्रयोगसे त्यागकरे १४

प्रणयेद्दापितां भूमिं प्रणयेद्दहने पुनः
हन्यात्क्रुद्धाननिर्विषान्निलग्नतयोहितान् १५

श्री
रा॰ प॰
टी॰
१७॰
१७०

हे राजन् अंतःपुरगत राजाको फासी प्रयोग कहा बनता
है उसको श्रवणकरो जो अंधकारयुक्त गोप्यस्थान विषे
पाशज्ञानहोजावे ऐसी कपटभूमिकाकों प्राप्तहोकर आपही
नाशकों नही प्राप्तहोवे चारलोकोका औरभी भेदप्रकार
आत्मरक्षावासते राजाको कहतेहे शत्रुराजा लोकजोहे
विषकल्पनावाली कन्याकों बनाइकर चारोंके भेदद्वारसे
राजाके पास प्राप्तकरतेहे यह कन्या द्वीपांतरसे प्राप्तभई
हे पद्मनी नायकाहे इसके अंगसंगसे असीवर्षका पुरु
षभी षोडशवर्ष जैसाहोताहे यह कंन्यारत्न आपलिये
आनप्राप्तकीनीहे इसप्रकार शत्रुराजाके चारलोककहते
हे ऐसे वचनको श्रवणकर्के अपने चारलोकोसे कपट
सेकिया विषकन्यादी प्रयत्नको जानकर आप इसकप
ट प्रयोगकों विख्यातनही करे जोनसे विषकन्याहे प्र
योगिहे तिन्हको परपुरुषके प्रसंगमात्रकर्के कन्यारूपी
विषे प्रयत्नको भोजनादि पदार्थगत विषप्रयोगको
मशकमक्षिकादि मरणसे जानकर सभको तुरंग मारदेवे १५
नाशयेद्दलवद्दीप्ति मनिवासा निवासयेत्
सदावर्द्दिनिभःकामे प्रशस्तं कृतमाचरेत् १८
जोनसे शत्रुलोकोने राजाके विनाशवासते किसीस्थान
विषे कपटयुक्तिसे सेनाकाडेरा निवासस्थान वेश्यानटा
दिका पटायेहे उन्हकोभी अपने चारलोकादिसे जानक
र जैसे मयूरपंखी अपने पंखीकों उखाडदेतेहे तैसे सभ
को उच्चाटनकरे मारदेवे उसीस्थानविषें दृढमूलतावाले
अपने अमात्यादि सूरमा लोकोंका निवासकरादेवे १८
सर्वतस्या दृढेत्यज्ञो पतंगं गहनेष्वि व ॥
एवं मयूरवद्राजा स्वराज्यं परिपालयेत् १७
इसीप्रकार कपटध्यानी बगुलाजैसे नीतिमार्गकर्के अपने
कार्यकोचिंतनकरे सिंह जेसा होकर पराक्रमकोकरे इसी
प्रकार पतंगशलभादि जातिसेभी राजनीतिके धर्मका
ग्रहणकरे १८

आत्मवृद्धिकरीं नीतिं विदधीत विचक्षणः
आत्मसंयमनं बुद्ध्या परबुद्ध्यावधारणं १८
आत्मबुद्धिकरणेहारी नीतिकों प्रयोगकरे सो राजा अ
तिविचक्षणहोताहै अपनी बुद्धिकर्के अपना संयमजो आ
त्मरक्षा इसीप्रकार कर्तव्यहै ऐसे नियमको अवश्यकरे
५२ और बुद्धिकर्के दृष्टांतद्वारा निश्चयकरे यहीबुद्धीका परम उ
त्तमनिश्चयहै संपूर्णकार्योके बोधको सामर्थ्यहोवे १८
बुद्ध्याचात्मगुणप्राप्ति रेतच्छास्त्र निदर्शनं
परं विश्वासयेत्साम्ना स्वशक्तिं चोपलक्षयेत् १९
अपने विचारकर्के संपूर्ण भूतभावीकार्यका ऊहापोह वि
धिनिषेधज्ञानको उज्वलतावाली बुद्धिकर्के साधक बाध
कता कार्यभूमिकों विचारकरे पराईबुद्धिको सामभेदकर्के
विश्वासकरे अपनी बलशक्तिको विचारसे दृढजाने १९
आत्मना परिमर्षेण बुद्धिं बुद्ध्या विचारयेत् ॥
सांत्वयोगि मतिः प्राज्ञः कार्याकार्य प्रयोजकः २०
निगूढबुद्धेः धीरस्य वक्तव्यो व्याहृतं तथा २०
जौनसा प्राज्ञपुरुष सांत्वयोगमतिहोताहै सो कार्याकार्य
प्रयोगविज्ञहोताहै हे राजन् जौनसा गूढबुद्धि धीरपुरु
षहै उसको उपदेशको वक्तव्यता सूत्रवृत्तिके व्याख्यान
जैसेहै वक्तव्यकी अपेक्षा उसको नहीहोती २०
सनिकृष्टां कथां प्राज्ञो यदिबुद्ध्या बृहस्पतिः
स्वभाव मेषते तप्तं कृष्णायसमिवोदके २१
हे राजन् प्राज्ञपुरुष जोहै सो बुद्धिकर्के बृहस्पति समान
भीहै तोभी कार्यसंबंधकी उपदेशकथा श्रवणकरके
कार्यकालके दोषको त्यागकर्के बहोउकार्यज्ञानको प्रा
प्तहोताहै जैसे तप्तभया लोहपिंड जलविषे प्राप्तकिया
तो अपने स्वभावको पिंडाकारताकोही प्राप्तहोताहै २१
अनं प्रणीत कृत्यानि सर्वाण्येव महीपतेः
आगमे रूपदिष्टानि स्वस्यैव परस्य च २२

ताते राजा जोहै सो संपूर्णअपने तथा पराये कार्यको आगम शास्त्रोके उपदेशवाले यथाधिकार विधिसे प्रयुक्तकरे २२

मृदुशीलं तथा प्राज्ञं शूरं चार्थ विधानवित्
स्वकर्मणि नियुंजीत ये चान्ये बलाधिकाः २३

जोनसापुरुष मृदुशीलहै प्राज्ञहै शूरमाहै कार्यार्थविधानका वेत्ताहै ऐसे पुरुषको तिन्होकोभी और प्रकारके कार्यो विषे नियुक्तकरे २३

अथ दृष्टानि युक्तानि स्वानुरूपेषु कर्मसु
सर्वाल्लांननुवर्तेत स्वरांतंत्री रिवायता २४

आपही संपूर्ण अधिकारी जनोके अपने योग्यकर्मोविषे नियुक्तभयेको देषकर उन्हके अनुसार होकर आपभी विचारसे प्रवृत्तहोवे जैसे वीणा जोहै अपनेविषे स्वरोंकों धारणकरतीहै २४

धर्मानाम विरोधेन सर्वेषां प्रियमाचरेत्
ममाय मिति राजायः सपर्वत इवाचलः २५

वहोउराजा धर्मोके अविरोधकर्के संपूर्ण अधिकारी जनोके प्रियकोंकरे तो राजा सभको ममअयंप्रिय यह मेरा प्रियहै ऐसे प्रेमकों करताहै सो पर्वतकी न्याई अचल होताहै २५ ॥

व्यवसायं समाधाय सूर्यो रश्मी निवायतान्
धर्म मेवाभि रक्षेत कृत्वा तुल्ये प्रिया प्रिये २६

संपूर्णकार्योविषे राजा अपने विचारके व्यवसायको स्थापनकर्के जैसे सूर्यअपनी संपूर्ण किरणोको अपने तेजकर्के विस्तारकरताहै इस प्रकार प्रिय अप्रियकरके धर्ममर्यादाकोही रक्षाकरे २६

कुलप्रकृति देशानां धर्मज्ञान्मृदुभाषिणः
मध्ये वयसि निर्दोषा न्हितेयुक्तानि विक्लवान् २७

जोनसे पुरुष कुल धर्मवेत्ता प्रकृतिधर्मवेत्ता देशधर्मवेत्ताहै और मृदुवचनभाषीहै और देहकी मध्यम अवस्था

हे यौवनभावके कामविकारके दोषरहितहोवे और रा
जाप्रजाके हितविषे युक्तहोवे वैरकातरताकी आकुलता
रहितहोवे २७

अलुब्धान् शिक्षितान्दांतान्धर्मेषु परिनिष्ठितान्
स्थापयेत्सर्वकार्येषु राजा धर्मार्थ रक्षिणः २८

बहोउ कैसे पुरुष होवे लोभरहितहोवे अपने अधिकार शु
णोकी शिक्षासंपन्नहे देहकी मनकी तथा चेष्टाके दमन
शीलहोवे अपने वर्णाश्रमोकी धर्मनिष्ठा संपन्नहोवे धर्मा
र्थके रक्षाकारीहोवे ऐसे योग्यपुरुषोको सर्वकार्योविषे
युक्तकरो २८॥

एतेनच प्रकारेण कृत्यानामागतिंगतिम्
युक्तः समनुतिष्ठेत तुष्टैश्चारैरुपस्कृतः २९

हे राजन् इसी प्रकारकेही सर्वकार्योके आगमनिर्गम
गतिको राजा संतुष्ट चारोकर्के उपाधिन कियाकृत्या
उद्यम युक्तहोकर अनुष्ठान तोंकोकरे २९

अमोघ क्रोध हर्षस्य स्वयंकृत्यान्ववेक्षितुः
आत्मप्रत्यय कोशस्य वसुदेव वसुंधरा ३०

जिस राजाके क्रोधहर्ष वृथानहीहोते कार्योको आपविचा
रणकरताहे अपने धर्मविश्वासकी जिसकोकोशवृद्धिहे
उसराजाकोयहवसुंधरा पृथिवी वसुदानकरणेहारीहोतीहे

व्यक्तश्चानुग्रहो यस्य यथार्थश्चापि निग्रहः
गुप्तात्मा गुप्तराष्ट्रश्च स राजा राजधर्मवित् ३१

जिसका अनुग्रह धनदान संपदाकर्के प्रसिद्ध होताहे
और दंडनीतिकर्के निग्रह प्रसिद्ध होताहे और जिसने
आत्माकूभी उभय शत्रु
वाकृशत्रुदोषसे गुप्तकियाहे अपना राष्ट्रभी उभय शत्रु
दोषसे गुप्तकियाहे सो राजा राजधर्मका वेत्ताहे ३१

नित्यं राष्ट्रमवेक्षेत गोभिः सूर्य इवोदितः
चारान्स्वनुचरान्विद्यात्तथा बुद्ध्या स्वयंचरेत्

उदित सूर्य किरणोकर्के जैसे देखे अपने राष्ट्रको चारोकर्के सुंदर
अपने राष्ट्रकों चारोकर्के देखे जैसे सूर्य किरणोकर्के उदि
तहोकर जगतको प्रवेशकरताहे चारलोकोको सुंदर

श्री॰
रा॰ पं॰
टी॰
१७२

172

समाचारकरके जाने धर्मज्ञानकी वुद्धिकरके आपभी समाचारकरे ३२

कालं प्राप्तमुपादद्यान्नार्थं राजा प्रसूचयेत्
अहन्यहनि संदुह्यान्महीं गामिव बुद्धिमान् ३३

और धनसंपदाको यथाकाल प्राप्तग्रहणकरे अपनी धन संपदाकी संपन्नता सूचननहीकरे इस पृथिवीको गौके समान दिनोदिन दोहनकरे ३३

यथा क्रमेण पुष्पेभ्यश्चिनोति मधु षट्पदः
तथा द्रव्यमुपादाय राजा कुर्वीत संचयम् ३४

जैसे षट्पद भ्रमर संपूर्ण हृक्षोके पुष्पोंसे मधुहोकर्के संग्रह करताहै तैसे राजाभी संपूर्ण प्रजालोकोंसे द्रव्यको लेकर कोस संग्रहको करे ३४

यच्छुभावशिष्टं स्यात्तद्वित्तं धर्म कामयोः
संचयान्न विसर्गी स्यात्स राजा शास्त्रविदात्मवान् ३५

जो शुभकरणेसे शेषधनहै उसको धर्मकामके कार्योविषे खरचकरके संग्रहकियेहै दानप्रदाननहीकरे सो राजा शास्त्रवेत्ताहै आत्मसंरक्षणवेत्ताभीहै ३५

नार्थमल्पं परिभवेन्नावमन्येत शात्रवान्
बुद्ध्यावबुद्ध्येदात्मानं न चाबुद्धिषु विश्वसेत् ३६

शास्त्रवेत्ता पुरुष अल्प अर्थको परिहार नहीकरे त्यागनहीकरे अल्पजनको अवमानभी नहीकरे आत्मविचारकी वुद्धिकर्के अपने देहको विचारकरे और अज्ञान पुरुषोविषे विश्वासनहीकरे ३६

धृतिर्दाक्ष्यं संयमो बुद्धिरात्मा धैर्यं शौर्यं देशकालाप्रमादः
अल्पस्य वा बहुनो वा विवृद्धौ धनस्यैतान्यष्ट समिन्धनानि ३७

हे राजन् एते धनवृद्धिके साधनधैर्य और पुरुषार्थकी दक्षता देहेंद्रियोका संयम और वुद्धि विचार और आरोग्यअपनादेह और बलकावीर्य और सूरमत्व और देशकाल ज्ञानका अप्रमाद अल्प धन यवा बहुत धनहोय उसकी वृद्धिविषे यह अष्टगुण वृद्धिकारीहै ३७

अग्निस्तोको वर्द्धतेह्याज्यसिक्तो वीजं चैकं रोह
सहस्रमेति आयव्ययौ विपुलौ सन्निशाम्य
तस्मादल्पं नावमन्येत वित्तं ३८
अग्नि स्वल्पभी घृत सेचनकर्कै वृद्धिको प्राप्तहोताहै ए
कवीज अंकुर सहस्रताकों करताहै इसीप्रकार आयव्य
यजोहै तिन्हको अभ्यासकर्कै विस्तृत जानकर स्वल्पा
लाभके धनकौभी अवमाननहीकरे ३८
वालोप्यवालः स्थविरो रिपुर्यः सदा प्रमत्तं
पुरुषं निहन्यात् काले नाम्यस्तमूलं हरेत
कालज्ञाता पार्थिवानां वरिष्ठः ३९
जौनसा रिपुहै बालहोवे उसकोही ननहीं जानना स्थवि
रक्या वृद्धहोवे अल्पवीर्यनहीजानना जवप्रमादहोवे
गा तवही शत्रूके शत्रुभावसे मारेगा कालपाइकर
शत्रुजोहै शत्रूके मूलको हरेगा ताते जोकाल वलका
जाताहै सोई राजलोकोविषे श्रेष्टहोताहै ३९
हरेत्कीर्तिं धर्ममस्योपरुंध्यात् दर्थं दीर्घं वीर्यम
स्योपहन्यात् रिपुर्द्वेष्टा दुर्वलोवावलीवा ता
स्मात्क्रोधो नैवहीये यतात्मा ४०
ताते कालपायकर शत्रूकी कीर्तिकोंहरे और धनकोभी
रोकलेवे दीर्घवृद्धिवाले अर्थकोभीहरे और इसका वी
र्यपराक्रमभीहरे द्वेषकारी शत्रुहै सोदुर्बलहोयभावे
अतिवलहोवे ताते शत्रुजयविषे प्रमादी कदापि नहीहोवे
क्षयं वृद्धिं पालनं संचयं वा वुद्धाप्युभौ संहतौ
सर्वकामौ ततस्त्वान्यान्मतिमान्संदधीत ।
तस्माद्राजा वुद्धिमत्तां श्रयेत ४१
हे राजन् धनके क्षयको वृद्धिको पालनको संग्रहको
अपनी वुद्धिकरके जानकर ऐश्वर्य वुद्धिकी वांछावा
ले पुरुषको जान क्षयकामनावाले पुरुषको जानकर
दोनोकोही सर्वकामनावाले जानकर वुद्धिकर्कै संधा

कालमें संधिकों करे विग्रहकालमे विग्रहादिकभीकरे ५१

बुद्धिर्दीप्ता बलवंतं हिनस्ति बलं बुद्ध्या पाल्यते वर्द्धमानं शत्रुः बुद्ध्या सीदते वर्द्धमानो बुद्धेः पश्चात्कर्म यत्तत्प्रशस्तं ५२

बुद्धिजबदीप्तहोतीहे तो बलवान शत्रुकों मारतीहे जो बलक्षीणहोजावे उसकों विचार बुद्धिपालनकरतीहे जो शत्रुबल संपदाकर्के द्बद्धहोताहे बुद्धियोगकर्केही क्षीणहोताहे जो बुद्धि विचारके अनुसारी कर्महोवे सोई कार्यप्रशस्तफलको कहाहे ५२

सर्वान्कामान्कामयानो हि धीरः सत्वेनाल्पेनाप्नुते हीनदोषः यश्चात्मानं प्रार्थयतेऽर्थमानैः श्रेयः पात्रं पूरयते चनाल्पं ५३

यह पुरुष संपूर्णकामनाको वांछाकरताहे सो हीनदोषहोवे धीरहोवे तो स्वल्पबलकर्केभी कालपाइकर सर्वसिद्धिको प्राप्तहोताहे जो पुरुष अर्थहीनक्षीणसंपदावाले अर्थकी वांछावाले पुरुषोकर्के युक्तभया सो अपने कल्याणपात्रको पूर्णकरदेताहे पूर्णभयपात्रविषे अधिक द्रव्यकी प्राप्तिनही होती अर्थात उससे कल्याणसिद्धि निहत्तहोतीहे ५३

तस्माद्राजा प्रगृहीतः प्रजासु मूलं लक्ष्म्याः सर्वशो ह्याददीत दीर्घकालं ह्यपि संपीड्यमानो विद्युत्संपातमपि वानोर्जितः स्यात ५४

जाते राजा प्रजालोकविषे प्रीतिकरके सर्वसंग्रहकर्के अपना जो मूलभूत अर्थहे उसको सभसे ग्रहणकरे जो राजा सर्वदा स्वल्प ग्रहणक्रमसे नही संग्रहकरताहे अपने आपदा कालविषे सभसे एकवारही पीडाकर्के सर्वकालकाभी अर्थ सभग्रहणकिया चाहेतो वज्रपातजे सो आपभी नष्टहोजाताहै ५४

विद्यानपोवा विपुलंधनंवा सर्वंह्येतद्व्यवसायेनशक्यं बुद्ध्यायत्तं तन्निवसेद्देहवत्सु तस्मा

द्वियात् अवसायं प्रभूतम् ४५
हे राजन् विद्या और तप और धनवृद्धि यह सभही अवसा
यकर्केही सिद्धकरणे आयाहे सोअवसाय देहधारी मनो
विषे बुद्धि विचारके वशहे ताते बुद्धिको अवसायको सभसे
अधिककरताहे ४५
यत्रासते मतिमंतो मनस्विनः शक्रो विसर्यत्र
सरस्वतीच वसंतिभूतानिच यत्र नित्यं तस्मा
द्विधात्राव मन्येतदेहम् ४६
हे राजन् जिसविषे बुद्धि अवसायवाले अभिमान मन
स्वी सदाविचारकरतेहे और जिसविषे सभही बलपौरु
षगुणसंपदाकर्के उपकारद्वारावसतेहे जैसे अपने देह
को विचारवानपुरुष अवमाननहीकरे सदारक्षाकरे ४६
लब्धं हत्वा न्संप्रदानेन नित्यं लब्धस्तृप्तिं पर
वित्तस्यनेति सर्वोलब्धः कर्मगुणोपभोगी ये
यैर्हीनो धर्मकामौ जहाति ४७
हे राजन् लोभी पुरुषको धनदानकर्के वशकरे लोभीपु
रुष परवित्तहरणेमों तृप्तिको नहीप्राप्तहोताहे सभहे
लोककर्मगुण संपन्नभोगोकर्के लोभीहोताहे जो पुरुष
धनहीनहोताहे सो धर्मको कामको त्यागकरताहे ४७
धनं भोगं पुत्रदारं समृद्धं सर्वं लब्धः प्रार्थय
ते परेषां लब्धे दोषाः संभवंतीह सर्वे तस्माद्रा
जानप्रगृह्णीतलब्धं ४८
जो लोभी पुरुषहे धनको भोगको पुत्रको दारा कुटुंब
को पराये सर्वपदार्थको हरावाहताहे लोभी पुरुषविषे
सभही दोषवसतीहे ताते राजालोभी पुरुषको कदापि
विश्वासनहीकरे ४८
सन्दर्शनेन पुरुषं जघन्यमपि चोदयेत्
आरंभा न्द्विषतः प्राज्ञः सर्वांश्चांश्च प्रसूदयेत् ४

सर्वार्थ संपन्न उपदेशकर्के राजानीव पुरुषकोभी कार्यविषे
प्रवृत्तकरे शत्रुजनोके जेते कार्यप्रारंभहे उन्हको सर्वोपा
य यत्नकरेके नाशकरे ४९ जो राजा धर्म कर्म युक्तव्राह्म
णोके मंडलोविषे सत्संगसेवाकर्के ज्ञाततत्वहे और मंत्री
जनोके मंत्रकर्के गुप्ततत्वहे और विश्वासापन्न सभको
करताहे ऐसा कुलीनराजा राज्यसंग्रहविषे समर्थहोताहे ५०

धर्मान्विनेष विज्ञाता मंत्री गुप्तश्च पांडव
श्राक्षो राजा कुलीनश्च पर्याप्तो राजसंग्रहे ५०
नृपिप्रयुक्ता नरदेवधर्मा नुक्तान्समासेन नि
बोधबुद्ध्या इमा विदधा हि निश्चत्ययेवै राजाम
हीं पालयितुं स्वशक्तः ५१
हे पांडव जो राजा युद्धोपयोगी जो धर्मराजाके कहाहे
तिन्हको बुद्धिबोधकर्के जानलेवे पश्चात् निश्चयकर्के
उन्हके अनुसारहोकर वर्तमानहोवे सो राजा पृथिवी
पालनेको समर्थहोताहे ५१ ॥
अनीतिजं यस्य विधानजं स्याद् हठप्रणीतं विधि
वत्प्रदृश्यते न विद्यते तस्य गति र्महीपते नवि
द्यते राज्यसुखं ह्यनुत्तमम् ५२
जिसराजाका विधानसुख अनीति सेवनाहे हठ प्रणीत
सभही विधान जिसका होताहे ऐसा जो राजाहे उसकी इ
हलोककी शुभगति विद्यमाननहीहे और राज्यसुखभी
उसको अति उत्तमनहीहोता ५२
धने र्विशिष्टा न्मतिशील पूजिता न्गुणोपपन्ना न्यु
धि दृष्ट विक्रमान् गुणेषु दृष्टान् चिरादिवात्मवा
न्मतोभिसंधाय निहंति शात्रवान् ५३
हे राजन् ताते जो पुरुष धनसंपदाकर्के विशेष संपन्नहे
उत्तममतिशीलादि गुणसंपदासे पूजितहे गुणसंपदासं
पन्नहे युद्धविषे जनका पराक्रम दृष्टकियाहे गुणोविषे
जिनका परिचयदेखाहे ऐसे पुरुषोको अधिकार विषे

स्थापनकर्के शत्रुगणोंको मारदेताहै ५३
यश्चोपाया न्विविधैः क्रियापथैः नचाप्युपायेन
मतिं निवेशयेत् श्रियं विशिष्टां विपुलं यशोधनं
नदोषदर्शी पुरुषः समश्नुते ५४
वहोत क्रियायोगके मार्गोकर्के उपायगुणोंको विचारक
रे उपाय ज्ञानविना कहीभी बुद्धि इनीको प्रवृत्तनहीकरे
सो राजा विशेष संपदावाले समृद्धिको अतिविख्यात यश
को और भोगसंपदाको प्राप्तहोताहै जो पुरुष सर्वत्रदोष
दृष्टिहै सो पुरुष गुणसंपदाको प्राप्तनहीहोता ५४
प्रीति प्रवृत्तैः विनिवर्तितो यथा सुहृत्सुविज्ञाय
निवृत्यचोभयोः यदेव मित्रं गुरुभार माहवे न
देवस्त्वं स्निग्धमुदाहरेद्बुधः ५५
जौनसे कार्यविशेष सुहृतजनोंकर्के निश्चयसे प्रीतिपूर्व
क प्रवृत्त कियाहै उन्हदोनोके गुणदोषोंको विचारकर्के
जो अपनेको मित्रभावजैसे भारीकार्यभारको धारणकरे ५५
उसकोही बुद्धिज्ञान संपन्नपुरुष क्रियायोगसे उदाहरणकरे
एतां मयोक्तां नरराजधर्मा न्नृणां च गुप्तौ मतिमा
दधत्स्व अवाप्स्यसे पुण्यफलं सुखेन सर्वोहि
लोकोन्नृपधर्म मूलः ॥ ५६ इति श्री महाभारते
शतसहस्रसंहितायां राजधर्मे एकविंशतमः १२०
हे राजन् यहमेने तोको राजधर्मकहेहै इन्हको तुमप्रजा
जनोकी रक्षावासते अपनी बुद्धिविषे धारणकरके सम्य
क् राजधर्मोको आचरणकर अतिपुण्यफलको सुखकर
के प्राप्तहोवेगा हे नृप यह सभही लोकव्यवहार धर्म
मूलही बनाहै ५६ ॥ इति भाषार्थ शांतिपर्वणि राज
धर्मे शतोत्तरविंशोध्यायः ॥ १२० ॥
युधिष्ठिरउवाच अयं पितामहेनोक्तो राजधर्मः
सनातनः ईश्वरश्च महादंडो दंडे सर्वं प्रतिष्ठितं १

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
१२५

175

युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी आपने यह राजधर्म सनात
नकहाहै इसका ईश्वर महासामर्थवालादंडहै दंडविषै
ही संपूर्णराजधर्मप्रतिष्ठितकहाहै १

देवतानामृषीणांचपितॄणांच महात्मनां
यक्षरक्षः पिशाचानां साध्यानांच विशेषतः २

दंडजोहै सो संपूर्णदेवता गणोंका ऋषिगणोंका महात्मा
पितृगणोंकर यक्षराक्षस पिशाचोंका साध्यदेव गणवि
शेषोंका २ ॥

सर्वेषां प्राणिनां लोके तिर्यग्योनिनिवासिनां
सर्वव्यापी महातेजाः दंडः श्रेयानिति प्रभो ३

और सर्वप्रकारके प्राणिगणोंका और पशुयोनि विशेषोंका
सर्वप्रकारसे कल्याणहोनेका कारणहै सर्वव्यापीहै महा
तेजसमासंपन्नहै यही सभका रक्षकारीहै ३

इत्येव मुक्ता भवता दंडे वै सचराचरं ॥
पश्यतां लोक मासक्तं ससुरासुर मानुषं ४

आपने मोको ऐसाहीकहाहै दंडविषै चराचर जगत प्रतिष्ठि
तहै देवता असुर मानुषसहित सभही लोकव्यवहार
दंडविषैही आपने प्रतिष्ठितकहाहै ४

एतदिच्छाम्य हं ज्ञातुं तत्वेन भरतर्षभ
कोदंडःकीदृशोदंडः किंरूपःकिंपरायणः ५

हे भरतश्रेष्ठ अव मै कौनदंडके स्वरूपको तत्वनिश्चयकरकै जा
नाचाहताहूं यह दंड कौन बनाहै इसका क्या स्वभावहै
स्वरूपइसका कैसाहै इसका आश्रयक्याहै ५

किमात्मकः कथंभूतः कथं मूर्तिः कथं प्रभो
जागर्तिच कथं दंडः प्रजास्ववहितात्मकः ६

इसका आत्माकैसाहै हे आत्मा इसको कौनहै कैसे बनाहै
इसकी मूर्ति कैसीहै हे प्रभुजी कौनप्रकारकाहै यहदंड
सर्वभूताविषै कैसेजागृतहोताहै कौनसा सकलप्रजावि
षै सर्वदा सावधानतासे स्थितभयाहै ६

कस्य पूर्वापर मिदं जागर्ति प्रतिपालयन्
कस्य विज्ञायते पूर्वं को वरो दंड संज्ञितः ७
किं स्वरूपश्च भवेद्दंडः कावास्य गतिरुच्यते
पूर्वापर सकल विश्वको सर्वदा जाग्रत होकर्के पालनकर
ताहो ताते वहीहोउ आपयह कैसे स्थित होताहै पूर्व इसकी
उत्पत्तिकैसे विज्ञानहोतीहै दंडनामवाला इह कौन ईश्वर
सत्ता वनीहै कहा इसकी स्थिती वनीहै औेर इसकी गति कै
सेकहीजातीहै ७ ॥
भीष्मउवाच शृणु कौरव्य येदंडो व्यवहारो यथा
वसः यस्मिन्हि सर्वमायत्तं सदंड इव केवलः ८
भीष्मउवाच हे कौरव कुरुवंशीराजन् आपसुनो जोनसा
यहदंड वनाहै याट शुभ व्यवहाररूपवालाहै जिसविषे
सर्व विश्वनिपतहै सोकेवल दंडमयवनाहै ८
धर्मस्याख्या महाराज व्यवहारइतीष्यते ॥
तस्य लोपः कथं नस्या लोकेष्विव हितात्मनः ९
हे महाराज सर्वजगतकी धर्ममर्यादाकी स्थितीजोहै सो
व्यवहार नामकर्के कहाहै उसका लोपकैसीभी नहीहोवे
ऐसी सावधानता उसव्यवहारकी संज्ञावनीहै ९
ऐसी सावधानता उसव्यवहारकी संज्ञावनीहै ९
इत्येव व्यवहारस्य व्यवहारत्व मिष्यते
अपि चैतत्पुरा राजन् मनुना प्रोक्त मादितः १०
प्रिय अप्रिय सभही एकरूप जानकर्के संहारविधीके दंडप्र १०
योगकर्के प्रजाको रक्षाकरे सो केवलसाक्षात् धर्मरूपहीहै
सुप्रणीतेन दंडेन प्रियाप्रिय समात्मना
प्रजारक्षति यः सम्यग् धर्मएव स केवलः ११
प्रिय अप्रिय सभही एकरूप जानकर्के संहारविधीके दंडप्र ११
योगकर्के प्रजाकोरक्षाकरै सो केवलसाक्षाद्धर्मरूपहीहै
यथोक्त मेतद्वचनं प्रागेव मनुना पुरा
यन्मयोक्तं मनुष्येंद्र व्रह्मणोवचनं महत् १२
हे मनुष्येंद्र यह वचन जो मनु महाराजाने प्रथमही आ

श्री
रा॰ पं॰
टी॰
१२९

176

दियुगविषे कहाहे जो मेनेभी अब तोको कहाहे सो ब्र
ह्माजीकाभी महावाक्यरूप सत्यसारवचनहे १२

प्रागिदं वचनं प्रोक्तं मनः प्राग्वचनं विदुः
व्यवहारस्य व्याख्याता व्यवहार इहोच्यते १३

आदिसृष्टकालविषे प्रथम ब्रह्माजीने एहीवचनकहा
हे ताते प्राग्वचन धर्मप्रवचनकहतेहे व्यवहारकेव्या
ख्यानसे व्यवहार नामकहाहे १३

दंडे त्रिवर्गः सततं सुप्रणीते प्रवर्तते
दैवं हि परमो दंडो रूपतोग्निरिवोत्थितः १४

हे राजन् सुंदर अधिकार विधीसे दंडप्रयोगकरणेसे
धर्मअर्थ कामयह त्रिवर्ग मर्यादासे यहप्रवृत्तहोताहे
ताते यहदंड परमदेवता अधर्मकारी लोकोको अप
ने विधानसे संतापकरताहे ताते यह क्रूररूपतासे
अग्निजैसा उदयभयाहे १४

अष्टपाद्वैकनयनः शंकुकर्णोर्द्धरोमवान्
नीलोत्पलदलश्यामश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः १५

हे राजन् अबदंडके बाह्यव्यवहार योग्यस्वरूपकी क
हतेहे सो दंडका स्वरूप दंडाधिष्ठातृ धर्मनिर्णय दे
वताकाध्यान स्वरूपादि ज्ञानविना अदंड्य पुरुषविषे
दंडजोकरणा उसके दोषज्ञानवासते दंडाधिकारी
पुरुषोने ध्यानकरके अधर्मदंडकरणेसे भयकरणे
योग्यहे इस हेतुसे दंडदेवताका स्वरूपकहाहे जो
तो लौकिकजो दंडधर्मके व्यवहारके अंगदंड स्वरू
पविषे आरोपण करो तब उन्हकोभी कहतेहे यह
दंडा धात्रदेवतारूप कैसाहे नीलकमलेके दलस
मान श्यामवर्णहे चार इसकी दंष्ट्राहे सिंहको वक्रा
कार टेटेउलटे चारदांतहे चारभुजाहे आठ इसके च
रणहे अनेकनेत्रहे उर्द्ध जो लोहेका कीलहे ऐसे जिस
के कर्णहे उर्द्ध जिसके टाढेरोमहे और जटाधारीहे दो

जिसके जिह्वाहै रक्तवर्ण जिसका मुखहै और मृगराजसिं
ह उसका म्हगान जिसको वहहै ऐसे उग्ररूपको दंडदे
वता धारणाकरताहै जो पुरुष अधर्मकरतेहै और अधर्म
विधानका दंडकरतेहै तिन्हको महाभयंकरपीडाको क
रताहै नीलकमलदलसमान इसका स्वरूपकहाहै और
नीलवर्ण रक्तवर्णभी इसका व्याख्यानकहतेहै राजाको
अधर्मकारीजनहै करणेयोग्यहै राजाधनलोभसे उन्हसे
दोषनही धनमात्र ग्रहणकरे तव अधर्मदंड प्रसंगसे अप
यशाकी पापमता राजाको होतीहै इस हेतूसे नीलरक्तवा
र्णदंडकास्वरूपहै चार दृष्टांत दंडदेवताकी कहतेहै अप
राधी लोकोके चारप्रकारकी दंडरीति वनीहै कोई अपरा
धी मानभंगकर्के दंडयोग्यहै कोई धनहरणकर्के दंडयो
ग्यहै कोई अंगछेदकर्के दंडयोग्यहै कोई प्राणीवध दंडको
योग्यहै यहचारदंड देवताकीहै चारभुजा जिसकी व्यवहा
र निर्णयविषे धनग्रहणेको वनीहै प्रजालोकोसे सामउ
पायकर्के धनग्रहणकरणा जो अर्थात् असत्यवचनसे
द्रव्यका दावाकरे ताते द्विगुणधनग्रहणकरणा जो प्रत्यत
असत्यकहकर नहीमाने उसके अर्थीके धनसमान धन
ग्रहणकरणा यह चारभुजा दंडदेवताकीहै और अनेक
व्यवहारमार्ग दंडदेवताके अष्टवा यह सोक्याहै और कद
र्थ्यादिकोसे सर्वस्व धनग्रहणकरणा आवेदनभाषा संप्र
तिपत्ति मिथ्योत्तर कारणोत्तर प्राकन्याय प्रतिभूजा मनकि
या यह व्यवहारदंडदेवताके अष्टपादहै पश्चात् यथा
योग्य निर्णयकरेकी दंडकी फलसिद्धिहोतीहै इन्हके निमि
तोकर्के दंडदेवता प्रसन्नहोताहै अन्यथा निर्णय नहीहो
ना ताते यहदंडके अष्टपादवनेहै अब इन्हका व्याख्यान
करतेहै प्रथम आवेदनक्याहै जैसे अर्थीने सभलोकोजा
कर कहाजो देवदत्तजोहै सो मेरी सवर्णकी शानमुद्रिकाको
मध्यदेशविषे शीतकालमे यज्ञदत्ततहा सालीरहा तहा
लेकर अबमोको देतानहीहै ऐसा आवेदन प्रकारकीनी

तब अर्थीसे अर्थीकावचन लिखतकरणा पश्चात् प्रत्यर्थीको
बुलाइकर उसके सन्मुखभी अर्थीको लिखतकरावे यह
भाषाभईहै जो तबप्रत्यर्थीकहै अर्थी जो कहताहै सो सत्य
है मेने सवर्णकी प्रातशुद्धिका टीकलीनीहै ऐसा संप्रतिरू
प उत्तरहोताहै यह दंडका पादरूपनहीगएाहै जब प्र
त्यर्थीकहै मेने इसका कछुनही लिया मेने इसका कछुदे
नानही यह मिथ्याउत्तरही सो प्रत्यर्थीकहै मेने इसका शु
द्धिकाशत लियारहा सो मेने इसको बहोड दोदियाहै
यह कारणोत्तरहै जब प्रत्यर्थिकहै इस अर्थीने पूर्वलेन्या
यविषे इसकार्यविषे मोको रोकारहा नवमेने पूर्वलेन्या
यविषे जीतलियाहै यह प्राकन्यायउत्तरहै ऐसे उगर
विषे अर्थी प्रत्यर्थी दोनोने अपना प्रतिभू जामिनदियावा
हिये यह प्रतिभू पादसे बहोडदोनोने ऐसा लिखाचा
हिये जोमे इसवातमो झूठाभया हारा गया तो एता द्रव्य
सरकारको देवोगा यह क्रियापादभया इसके अनंतर
अपने मतको सिद्धकरणेहारे साक्षी लिखतपत्र भोगस्व
रूप दिव्यशपथ सौगंधादि दिखावनेसे जिसकापत्तबलि
तहोजावे उसकापराजयहोताहै तब फलसिद्धिहोतीहै
इसप्रकार अष्टपादोमे निर्णय जबभया तब अपराधीको
दंडहोताहै इसहेतुसे यहदंडके पादकहेहैं इहां दंडका
प्रमाण याज्ञवल्क्यजीने कहाहै जो प्रत्यर्थी प्रथमनहीमा
ने जब अर्थीकावचन सत्य निर्णयहोवे तब अर्थीको यथा
क्त प्रमाण द्रव्यदेवे उसके समान द्रव्य राजाको दंडदेवे
अथवा जय पराजय लिखितका समानदंडदेवे जो केवल
मिथ्याउत्तरकहा होवेतो अर्थाको यथोक्तप्रमाणदंडदेवे
राजाको द्विगुणप्रमाणद्रव्यदंडदेवे बहोडदेवताइपकेसाहै
नैकेनयनहै वहोतहै भेजोकेस्थान जिसकेनिर्णयकेदृष्टाहै
राजा अमात्य पुरोहित सभाके लोक जिसव्यवहारदंडको
कर्णा तीनणकर्णहै उईरोमवान होताहै अवश्यहै अवणक

रेणहारा उर्द्ध्वरोमदेहवालाहोताहै १५
जटी द्विजिह्वस्ताम्रास्यो मृगराजतनुच्छदः
एतद्रूपं बिभर्त्युग्रं दंडोनित्यं दुराधरः १६
वहोडकैसाहै दंडदेवता अनेक संदेहकलनाकी जटाकोधा
रणकरताहै वहोड कैसाहै अर्थी प्रत्यर्थीके दोप्रकारकेवच
न दंडदेवताकी दो जिव्हाहै यहव्यवहार दंडदेवताकाल
रूपकहाहै अब धर्म दंडरूप कालस्वरूपकहतेहै सोकैसाहै
ताम्रवर्णजो आहवनीयादि अग्निसो जिसका मुखहै वहोड
मृगराजकेसमसार मृग उसका चर्मजिसके देहका छादन
वनाहै ऐसास्वरूप यज्ञदानतपव्रत होमादिदीताकाल
विषे नियम निष्ठाको होताहै हे राजन् दंडदेवता ऐसे
स्वरूपको धारणकरताहै तिसही सभही वास्ते दुर्धरवना
है १६ ॥
असिर्धनुर्गदाशक्तिः त्रिशूलं मुद्गरः शराः
मुसलं परशुः चक्रं पाशोदंडर्ष्टितोमराः १७
अब दंडदेवताके दंडक्रियोचित शस्त्रको कहतेहै असित
रवार धनुष गदाशक्ति त्रिशूल मुद्गरशराबाण मुसल
परशुचक्र पाशादंड ऋष्टितोमर १७
सर्वप्रहरणी यानि सन्तियानीह कानिचित्
दंडएव ससर्वात्मा लोके चरति मूर्तिमान् १८
और जेतेकोई शास्त्रजातीहै सभको दंडदेवता धारणकर
ताहै जोनसा यहदंडहै सोही सर्वरूपहै लोकविषे अप
राधके अनुसार स्वरूपधारी विचरताहै १८
भिन्दन्छिन्दन्रुजन्कृन्तन् धारयन्पाटयंस्तथा
घातयन्नभिधावंश्च दंडएवचरत्युत १९
जिस दंडदेवताके यहलोकविषे कर्मप्रसिद्धहै अपराधी
लोकोके शरीरोको भेदकरताहै छेदकरताहै पीडाकर
ताहै कटदेताहै विदारणकरताहै पाटदेताहै घातकर
ताहै वेगसेधावताहै दोडजाताहै इसप्रकारसे सर्वत्र
विचरताहै १९

असिः विससनो धर्म त्तीक्ष्णवर्मा दुराधरः
श्रीगर्भो विजयः शास्ता ब्यवहारः सनातनः॥ २०
अब इसके कर्मगुणस्वरूप फलसिद्धि ब्यवहार पुण्य परि
पाकजैसे नामभीकहे असिनामहे विशसननामहे धर्म
नामहे तीक्ष्णवर्मानामहे दुराधरनामहे श्रीगर्भनामहे ब्राह्मणमंत्रना
महे शास्तानामहे प्रागवदत्तोवरनामहे २०
श्रीगर्भो विजयः शास्ता ब्यवहारः सनातनः
धर्मपालो नरो देवः सत्यगो नित्यगो यजः २१
श्रीगर्भनामहे विजयनामहे ब्यवहारनामहे सनातन
नामहे धर्मपाला नामहे अक्षरनामहे देवतानामहे
सत्यांगनामहे सत्यगनामहे अयजनामहे २१
असंगो रुद्रतनयो मनुर्ज्येष्ठः शिवंकरः ॥
नामाण्येतानि दंडस्य कीर्तितानि युधिष्ठिर २२
असंगनामहे रुद्रतनयनामहे मनुनामहे ज्येष्ठनामहे।
शिवंकरनामहे हे युधिष्ठिर एते दंडदेवताकेनामकहेहे
दंडो हि भगवान् विष्णु दंडो नारायणः प्रभुः
शश्वद्रूपं महद्बिभ्र न्महापुरुष उच्यते २३
एते नाम इसके कैसे बनेहे सो कहतेहे दंडजोहे सो
भगवान् विष्णुहे दंड नारायणप्रभुहे यह सदाकाल
महाप्रभावके स्वरूपको धारणकरताहे ताते महापुरु
षरूप दंडदेवताकहाहे २३
तथोक्ता ब्रह्मकन्येति लक्ष्मीर्वृत्तिः सरस्वती
दंडनीति जगद्धात्री। दंडो हि बहुविग्रहः २४
अब इसकी पत्नी उसकी उत्पत्तिकहतेहे इसकी पत्नी
ब्रह्माके कन्याहे सोभी क्रियायोगकर्के लक्ष्मीकहीहे
वृत्तिकहीहे सरस्वतीकहीहे दंडनीतिकहीहे जगद्धा।
त्रीकहीहे ताते दंडजोहे सोई बहुरूपकहाहे ताते उ
सकीपत्नीभी बहुरूपाकहीहे
अर्थानर्थौ सुखं दुःखं धर्माधर्मौ बलाबले
दौर्भाग्यं भागधेयं च पुण्यापुण्ये गुणागुणौ २५

अब दंडकी बहुरूपता विस्तारसे कहतेहै अर्थ और अनर्थ
सुख दुःख धर्म और अधर्म बल और अबल दौर्भाग्य और भा
ग्यदेय पुण्य अपुण्य गुण अगुण २५

काम कामा ऋतुर्मासः शर्वरी दिवसः क्षणः
अप्रमादः प्रमादश्च हर्षक्रोधो शमोदमः २६

काम अकाम ऋतु मास रात्रि दिन क्षण अप्रमाद प्र
माद हर्ष क्रोध शम दम २६

दैवं पुरुषकारं च मोक्षा मोक्षौ भया भये
हिंसा हिंसे तपो यज्ञः संयमोथ विषा विषे २७

हिंसा दैवतथा पुरुषकार मोक्ष तथा अमोक्ष भय तथा अभय हिं
सा तथा अहिंसा तप यज्ञ संयम तथा असंयम विष तथा
अविष २७ ॥

अंतमादिश्च मध्यं च कृत्यानां च प्रपंचनम्
मदः प्रमादो दर्पश्च दंभो धैर्यं नयानयौ २८

अंत आदि मध्य और कृत्योंका प्रपंचन मद और प्रमाद
दर्प और दंभ धैर्य और नय अनय २८

अशक्ति शक्ति विश्चैवं मानस्तंभौ व्ययाव्ययौ
विनयश्च विसर्गश्च कालाकालौ च भारत २९

अंत आदि मध्य और कृत्योंका प्रपंचन मद और प्रमाद
दर्प और दंभ धैर्य और नय अनय अशक्ति तथा शक्ति
ऐसेही मान और स्तंभ व्यय और अव्यय विनय विसर्ग
काल और तथा अकाल २९

अनृतं ज्ञानिता सत्यं श्रद्धा श्रद्धे तथैव च ॥
क्लीवता व्यवसायश्च लाभालाभौ जयाजयौ ३०

क्लीव
है भारत अनृत और ज्ञानिता सत्य और श्रद्धा अश्रद्धा क्लीव
ताका तवता व्यवसाय लाभ अलाभ और जय अजय ३०

तीक्ष्णा ता मृदुता मृत्यु रागमाना गमौ तथा
विरोधश्चा विरोधश्च कार्याकार्ये बलाबले ३१

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
१२९

179

तीक्ष्णता और मृदुता सत्व और आगम अनागम विरोध
और अविरोध कार्य और अकार्य बलतथा अबल ३१

असूया चानसूयाच धर्मा धर्मौ तथैव च
अपत्रपानपत्रये ह्रीश्च सम्पद्विपत्पदं ३२

असूया और अनसूया धर्म और अधर्म अपत्रपा अनपत्रपा
सोलज्जा अलज्जाके रूपहे ह्री देवता इन्हका भावाभाव
रूपहे संपदापद विपदापद ३२

तेजः कर्माणि पांडित्यं वाक्शक्तिस्तत्वबुद्धिता
एवं दंडस्य कौरव्य लोकेस्मिन्बहुरूपता ३३

तेजजोहे कर्मउपासनाके स्वरूप पंडिताई वाक्यशक्ति
तत्वबुद्धिता हे कौरव्य इसप्रकारसे दंडदेवताकी इस
प्रकारकी बहोत रूपता कहीहे ३३

न स्याद्यदेह दंडोवै प्रमथेयुः परस्परं
भयाद्दंडस्य नान्योन्यं घ्नंति चैव युधिष्ठिरः ३४

हे राजन् इसलोकविषे दंडदेवताका धर्मप्रवृत्तनही
होवेतो सभही लोक परस्पर बलाबल संघर्षकरके
नाशको प्राप्तहोजावे हे युधिष्ठिर दंडके भयसेही
प्रजा परस्पर मरण मारणेसे रहितभईहे ३४

दंडेन रक्षमाणाहि राजन्नहरहः प्रजाः
राजानं वर्द्धयंतीह तस्माद्दंडः परायणम् ३५

यह प्रजालोक दंडकरके संरक्षमाणहोवे तब राजाको
धनसंपदाके करदेतीहे ताते राजधर्मही दंडकी पर
मआश्रयहे ३५

व्यवस्था पयति क्षिप्र मिमं लोकं नरेश्वर
सत्येव्यवस्थितो धर्मो ब्राह्मणेष्वेव तिष्ठते ३६

हे नरेश्वर दंडजोहे सो इसलोकको धर्मकर्मविषे शीघ्र
स्थापनकरताहे सो सत्यधर्म ब्राह्मणेविषेहे स्थितहो
ताहे ३६

धर्मयुक्ता द्विजश्रेष्ठा वेदयुक्ता भवंति च
वभूव यज्ञो वेदेभ्यो यज्ञः प्रीणाति देवताः ३७
ब्राह्मणजोहै धर्मविषे स्थितहै सोश्रेष्टहै वेदयुक्त ब्राह्मण
स्थितहोतेहै वेदोसे यज्ञधर्मभयाहै सोयज्ञदेवता गणो।
कोतृप्तकरताहै ३७
प्रीताश्च देवता नित्य मिंद्रो परि वदंत्यपि
अन्नं ददाति शक्रश्चा प्यनुगृह्णानिमाःप्रजाः ३८
देवता जव प्रसन्न होतेहै तव इंद्रको जाइकर प्रार्थवचन ना°
कहतेहै इंद्रभगवान वर्षाकर्के अन्नसंपदाको देताहै अ
नकर्के सभही प्रजातृप्तहोतीहै ३८
प्राणाश्च सर्वभूतानां नित्य मन्ने प्रतिष्ठिताः
तस्मा त्प्रजाः प्रतिष्ठंते दंडोजागर्तितास्त्र च ३९
हे राजन् सर्वभूतोके प्राण अन्नविषे प्रतिष्ठितभयेहै
ताते प्रजा अपने धर्मविषे प्रवृत्तहोतीहै प्रजाकी रक्षाविषे
दंड सदा जाग्रतहोताहै ३९
एवं प्रयोजनश्चैव दंडः क्षत्रिय तां गतः
रक्षन्प्रजाः सजागर्ति नित्यं स्ववहितोत्तरः ४०
हे राजन् तेने सर्व अपर संपूर्ण जगतको पालनकर्ता दंड।
जाग्रतहै सोसर्वको नभयाहै उसका उत्तरक्षनो इस प्र
कारका प्रयोजनभूत यहदंड क्षत्रियभावको प्राप्तभया
है इस हेतुसे प्रजाको रक्षाकर्ताही सावधानतासे जाग्र
तहोताहै आप अक्षर अविनाशी ४०
ईश्वरः पुरुषः प्राणः सत्वं वित्तं प्रजापतिः
भूतात्मा जीव इत्येवं नामभिः प्रोच्यतेष्टुभिः ४१
यह सर्वजगतका ईश्वरहै प्राणरूपहै सत्व वल वित्तप्र
जापतिरूपहै सर्वभूतात्मा जीवरूप प्रपंचरूपहै धर्म
व्यवहार धर्म ईश्वर जीवभावको प्राप्तभयाहै सो पंच
तत्वरूप राजावनाहै ४१

अष्टदंडमेवास्मै ध्रुव मैश्वर्य मेव च ॥
बलेन यस्य संयुक्तः सदा पंच विधात्मकः ५२
उस राजाको प्रजापालना निमित्त प्रजापति प्रथमदंडको
ही देता भया पश्चात् अखंड ऐश्वर्य्यको देता भया जौन
सा यह राजादंड बलकर्के युक्त है पंचप्रकारकी प्रभाव
सत्ता कैसीहै सदा पंचप्रकारकी प्रभावसत्तायुक्तहै राज
धर्म व्यवहारधर्म ईश्वररूप जीवरूप इसप्रकार पंचप्र
कारका राजाका स्वरूपहै ५२
अले वहुधनामात्याः प्रज्ञा प्रोक्ता बलानि तु
आहार्य मष्टकैः द्रव्यैः बलमन्यद्युधिष्ठिर ५३
और वहोत धनवाले अमात्यजन तेज ओजसह नामसंज्ञा
वाले देह सामर्थ्य इंद्रियसामर्थ्य बुद्धिसामर्थ्य आठप्रका
रकी और भी इच्छेहै तिन्होंकर्के युक्तको शास्त्रद्धिरूप और
भी वलहै ५३
हस्तिनो श्वा रथाः पत्तिः नावो विष्टि स्तथैव च
दैशिकाश्चा विकाश्चैव तदष्टांगं बलं स्मृतम् ५४
हे युधिष्ठिर आठप्रकार और द्रव्यभी श्रवणकरो हास्ति
तुरंगरथ पैदल नौका विष्टि भारवाहक दैशिक मार्ग
दर्शिका और भेडवकी आदिक पशुसंग्रह यह अष्टप्रका
रका द्रव्यबलहै ५४
अस्यांगस्य युक्तस्य रथिनो हस्तिपायिनः
अश्वारोहाः पदाताश्च मंत्रिणा रसदाश्चये ५५
अश्वारोहण विद्यावाले पैदललोक मंत्रिजन और रसवि
द्याके वैद्यचिकित्सा निपुण। अर्थ अब औरभी श्रवणक
रो अंगजो सेनाबल उसका और राज्यका दंडही मुख्य
अंगकहाहै जो राजा रणके निमित्त सन्नद्धबद्धभयाहै
उसके शरीर सन्नाहरूप रथवाले हस्तीविद्यावाले ॥
भिक्षकाः शाद्विवाकाश्च माहूर्ता दैवचिंतकाः

कोशेणमित्राणि धान्यं च सर्वोपकरणानि च ४६
और भिन्नरूप चारलोक अर्थी प्रत्यर्थीके वादविवाद वच
नोकावेत्ता कोशसंग्रह मित्रसंग्रह धान्यसंग्रह और स
भही राज समाजके उपकरण ४६
सप्त प्रकृति चाष्टांगं शरीर मिहयद्विदुः
राज्यस्य दंडमेवांगं दंडः प्रभव एव च
और सप्तांग ग्रामनगरादिकोके अधिकारी प्रधानलोक
यह अष्टांगराज्यका शरीरकहतेहे राज्यका मुख्यदंडही
हे दंडही उत्पत्तिरूपहे ४७
ईश्वरेण प्रयत्नेन कारणात्क्षत्रियस्य च
दंडोदत्तः समानात्मा दंडोहीदं सनातनं ४८
ईश्वरके प्रयत्नकर्के दंडवनाहे क्षत्रधर्मके कारणसे
सो दंड ईश्वरणे क्षत्रीको दिषाहे सोदंडईश्वरके समा ४८
नहीहे ताते संपूर्ण जगत दंडाधीन सनातनकहाहे
राज्ये पूज्यतमो नान्यो यथा धर्मः प्रदर्शितः
ब्राह्मणा लोक रक्षार्थं स्वधर्म स्थापनाय च ४९
हे राजन् ताते राज्यविषे ऐसा पूज्यतम और कोईनहीहे
जैसे धर्ममार्गको दिषावनेहारे ब्राह्मणहे सो ब्राह्म
णलोकरक्षावास्ते स्वधर्मस्थापनवास्ते अवश्य पू
जनीयहे ४९
भर्तृप्रत्यय उत्पन्नो व्यवहारस्तथापरः
तस्मायः सहितो दृष्टो भर्तृप्रत्ययलक्षणः ५०
जहां एकदेशकालविषे एक द्रव्यके दो भर्ता होकर अ
न्योन्यवादतेहे सो भर्तृप्रत्ययउत्पन्नहोताहे तहां द्विती
यरूपकर्के व्यवहार प्रवृत्तहोताहे तव दोनो भर्ताजो
विवादकरतेहे दो विषे एकका स्वल्पनिश्चयलक्षण
मिलनेसे दूसरेका पराजयहोताहे जिसका व्यवहार
हितदृष्टहोवे उसको एकजोवादी उसके जयकरणे ५०
होता भर्तृप्रत्यय लक्षण व्यवहार सिद्धहोताहे

व्यवहारस्तु वेदात्मा वेदप्रत्यय उच्यते
मौलश्च नरशार्दूल शास्त्रोक्तश्च तथापरः ५१

यह धर्म व्यवहार वेदरूपहै ताते। इसका निश्चयको प्र
तीतिका कारणवेदहीहै वेदविषे जिसका दोषकहाहै
सो परदारगमनादिरूपहै उसकी निवृत्तिवास्ते धर्म नि
र्णयकरता पुरुषोंकी पर्षतमोजाइ प्राप्तभया तहांवेदका
ही हेतुमूलदंडकहाहै जहां कुलाचार संमतदोषनिर्णय
होताहै तहां शास्त्रोक्तही दंडहोताहै जैसे शूद्रजातिकोस्व
भावसेही सुरापानका प्रायश्चित्तनहीहै परंतु तहांभी
जब किसीशूद्र कुलविषेही ऐसा नियम कियाहोवे
जो हमारे कुलका शूद्र सुरापानकरेगा सो जातिबाह्य
होवेगा ऐसी नियममर्यादाके उलंघनमो शूद्रकोभी
सुरापान प्रायश्चित्तहोताहै तहां शास्त्रवेत्ता धर्मज्ञलोकों
की मर्यादा प्रमाणहै सो वेदमूलसेही बनाहै ५१

उक्तो यश्चापि दंडोसौ भर्तृप्रत्यय लक्षणः
ज्ञेयो नः स नरेंद्रस्य दंडप्रत्यय लक्षणः ५२

हे राजन् यह तीन प्रकारके दंडहै एक भर्तृप्रत्ययल
क्षणहै सो मालकी विवादकाहै द्वितीय परदारा गमना
दि व्यवहार प्रत्ययलक्षणहै तृतीय कुलमूलकमर्यादा
प्रत्ययलक्षणहै इन्हतीन प्रकारके दंडोविषे जोनसा
प्रथमभर्तृ प्रत्ययलक्षणहै सो राजाके अधीनहै राजा
के दंडप्रत्ययसे दृष्टहै तोभीवादीप्रत्ययादि भाषाउत्तर
निर्णयसे व्यवहार रूपबनाहै परंतु मनुप्रजापति आ
दिकोंमेकहाहै दंडप्रत्यय दृष्टोपि व्यवहारात्म
कः स्मृतः व्यवहारः स्मृतो यस्तु स वेद विषया
त्मकः ५३ ताते सोभी वेदमूलतासे प्रणीतहै इस
हेतुसे वेद विषयात्मकहै वेदगोचरहीहै ५३

यश्च वेद प्रसूतात्मा स धर्मो गुणदर्शिनः
धर्मप्रत्यय उद्दिष्टो यथाधर्मं कृतात्मभिः ५४

वाकीका दो व्यवहार जोहै सोभी वेदमूलहै जैसे मोको अ
धर्मप्राप्तभयाहै परदारा प्रसंगकर्के इसकर्के मेराधर्म
लोपनहीहोवे ऐसे पश्चात्तापसे प्रायश्चित्तजो वेदपुराणा
दि तत्ववेत्ता जनोनेकहाहै सो प्रायश्चित्तरूपदंडभी धर्म
हीहै तैसे कुलमर्यादाकी रक्षावासते शूद्रादिकोनेकि
या मद्यपान प्रायश्चित्त रूपदंड शिष्टसभाकी अनुकूल
तासे सोभी वेदपुराणवेत्ताजनोका प्रणीतहै सोभी
धर्महीहै ५४ ॥

व्यवहारः प्रजागोप्ता ब्रह्मदिष्टो युधिष्ठिर
त्रीन्धारयति लोकान्वै सत्यात्माभूतिवर्द्धनः ५५

हे राजन् युधिष्ठिर जौनसा व्यवहार निर्णय वेदप्रणीत
स्वरूपहै सो व्यवहारधर्मगुणदृष्टि संपन्नहै प्रजाकुल
नियमका रक्षाकरताहै शूद्रकोभी प्रायश्चित्तरूपतासे
धर्मवेत्ताजनोने यथाशास्त्रकहाहै सो धर्मप्रतीतिका
स्वरूपबनाहै व्यवहार धर्मप्रजाको रक्षकहै ब्रह्माजीने
कराहै तीनोलोकोको तारदेताहै सत्यरूपहै भूतिसंप
दाको बढ़ताहै ५५

यश्चदंडः सदृष्टोनो व्यवहारः सनातनः
व्यवहारस्य दृष्टोय स्सवेद इति निश्चितं ५६

हे राजन् जो दंडहै सो व्यवहारका मूलहै सनातनधर्म
है यो व्यवहारधर्म दृष्टहोताहै सो वेदधर्म यह सर्व
महात्माजनोका निश्चयसिद्धहै ५६

यश्चवेदः सर्वधर्मो यश्च धर्मः सयत्पथः
ब्रह्मापितामहः पूर्वं बभूवाथ प्रजापतिः ५७

जो वेदहै सो धर्महै जो धर्महै सो सन्मार्गहै हेराजन् प्र
थम ब्रह्मा प्रजापति प्रजाको सृजनेहारा भयाहै सो
वेदमूल धर्मका प्रवर्तक भयाहै ५७

लोकानां सहि सर्वेषां ससुरासुररक्षसां
समनुष्योरगवतां कर्ताचैव सभूतकृत ५८

श्री॰ रा॰ ध॰ टी॰ १८२

सो प्रजापतिब्रह्मा सर्वभूतोंका हितकारीभया सोकहता
भया यह मेरा स्वामीभावका भर्तृप्रत्ययलक्षण धर्मप्र
वृत्तभयाहै इसीप्रकार संपूर्णसृष्टिक्रमसे प्रवृत्तहोजावे
उससेही लोकविषेभी ब्रह्माके वचनसे भर्तृप्रत्ययलक्ष
ण व्यवहार प्रसिद्धभयाहै ५८

ततोऽन्यात्व्यवहारोयं भर्तृप्रत्यय लक्षणः
तस्मादिदमथोवाच व्यवहार निदर्शनं ५९

ऐसा व्यवहार सभही लोकोंको प्रमाणकरदेताभया हे
वतां अमर राक्षसो विषें मनुष्य सर्वयोनिवाले सर्वजी
वोंकाहितकारी ब्रह्मा धर्मदंड धर्मके मर्यादा करताभया ५९

माता पिता च भ्राता च भार्या चैव पुरोहितः
नादंड्यो विद्यते राज्ञो यः स्वधर्मेण तिष्ठति ६०
इति शांतौ राजधर्मे एकविंशतितमः १२१

उसी ब्रह्मवाक्यको प्रमाणसे कहतेहै हे राजन् माताहो
वे पिताहोवे भ्राताहोवे भार्याहोवे पुरोहितभी औरभी
किसीप्रकारहोवे जो स्वधर्मकर्के स्थितनहीहोवे तौ
राजाको अदंड्यनहीहोवे उसको राजाने दंडशासन
यथाधिकार कर्तव्यहै ६० इति श्री महाभारते शां
तिपर्वणि राजधर्मे भाषार्थ प्रश्नोत्तरैकविंशोऽध्यायः १२१

भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरा
तनं अंगेषु राजा द्युतिमान्वसुहोम इतिश्रुतः १

भीष्मउवाच हे राजन् इसदंडकी उत्पत्तिविषे एक पुरा
तन इतिहासको उदाहरणकहतेहै अंगदेशविषे
महातेजस्वी राजा वसुहोमनामकर्कै प्रसिद्धभयाहै १

स राजा धर्मविन्नित्यं सहपत्न्या महातपाः
मुंजपृष्ठं जगामाथ पितृदेवर्षि पूजितं २

सो राजाधर्मवेत्ताहै राज्यको धर्मसे नित्यप्रतिपालन
कर्कै अपने धर्मपत्नी संयुक्त महातपकरणेको देव
ता ऋषिपूजित मुंजपृष्ठतीर्थकोजाताभया २

तत्र शृंगे हिमवतो मेरोः कनक पर्वतं
यत्र मुंजा वटे रामो जटाहरणमाविशत् ३
तहां एक हिमालय पर्वतका शृंग है कैसा है मेरुपर्वत
कनकमय शिखर होवे जहां रामरघुनाथजी जटाधारण
रीताको प्रवेश करते भये ३
तदा प्रभृति राजेंद्र ऋषिभिः संशित व्रतैः
मुंजपृष्ठ इतिप्रोक्तः सदैव रुद्रसेवितः ४
उसीकालसे महातपस्वीजनोने मुंजपृष्ठ उसका नाम विख्या
तकिया है सो देश रुद्र भगवानजीने सेवन किया है ४
स तत्र बहुभिर्युक्त स्तदाश्रुतिमयै र्गुणैः
ब्राह्मणाना मनुमतो देवर्षिः सदृशोभवेत् ५
सो राजा तहां बहोत शास्त्रज्ञान प्रधान गुणोंकरके युक्तभया
ताते ब्राह्मणोने बहोत मान किया तब देवऋषि समान
होताभया ५॥
तं कदाचिददीनात्मा सखा शक्रस्य मानितः
अभ्यगच्छन्महीपालो मान्धाता शत्रुकर्षणः ६
हे राजन् ऐसे वसुहोम राजाको तहां करते कैज्ञानकर इंद्र
का सखा जो महात्मा मान्धाता राजा सो शत्रुजय करके व
सुहोमराजाको महातपस्वी देखकर उसके समीपविषे
जब प्राप्तभया ७
सोपसृत्य तु मान्धाता वसुहोमं नराधिपं
दृष्ट्वा प्रकृष्टतमसं विनतोग्रेभ्य तिष्ठति ७
सो मान्धाता राजा वसुहोमके समीप प्राप्त होकर वसु
होमराजाको महातपस्वी देखकर उसके समीपविषे
जब प्राप्त भया ७॥
वसुहोमोपि राज्ञो वै पाद्य मर्घ्यं न्यवेदयत्
सप्तांगस्य तु राज्यस्य पप्रच्छ कुशलाव्यये ८
जब वसुहोमराजा मान्धाता राजाको पाद्य अर्घ्य प्राप्त

न निवेदन करताभया सप्तांग राज्यके कुशल अखंड सु
खसंपदाके कुशलको पूछ्याकरके कहताभया हे राज
न् मे आपके आगमनका सत्कारकार्यकरो ८

सद्भिराचरितं पूर्वं यथावदनुयायिनम्
अपृच्छद्वसुहोमस्तं राजन्किंकरवाणिते ९

हे कुरुनंदन सो राजा मान्धाता राजसत्तमहे वसुहो
मराजाको आसनविषे वैठनेको देषकर महाप्राज्ञजा
नकर अतिप्रीति संयुक्त वचनकों कहताभया ९

सोब्रवीत्परमप्रीतो मान्धाता राजसत्तमः
वसुहोमं महाप्राज्ञ मासीनं कुरुसत्तम १०

मान्धातोवाच बृहस्पतेः संतं राजन्नधीतं सकलं
त्वया तथैवोशनसंशास्त्रं विज्ञातं तेनरोत्तम ११

मान्धातोवाच हे राजन् तेने बृहस्पति समान सकलशा
स्त्रको अध्ययन कियाहै हे नरोत्तम शुक्रप्रणीतभी राज
धर्मको जानाहै ताते तुमसे मे यहजानाचाहताहूं
दंडधर्मकैसे जाग्रतहोताहै इसका परम क्या धर्म कर्म
कहाजाताहै १२

तदहं ज्ञातुमिच्छामि दंडउत्पद्यते कथं
किंवास्यपूर्वं जागर्ति किंवा परम मुच्यते १२
कथंक्षत्रियसंस्थश्च दंडःसंप्रत्यवस्थितः
ब्रूहिमे समहाप्राज्ञ ददाम्याचार्यवेतनं १३

यह दंडधर्म क्षत्रिय कुलविषे कैसे सदास्थितहै हे महा
प्राज्ञ मोको दंडधर्मका विधानसमझीकहो मे आचार्य
वृत्ति देवूंगा १३

वसुहोमउवाच शृणुराजन्यथादंडः संभूतोलो
कसंग्रहः प्रजाविनयरक्षार्थं धर्मस्यात्मा सना
तनः १४ ॥ वसुहोमउवाच हे राजन् आपसुनो जैसे
दंडधर्मउत्पन्नभयाहै दंडधर्मलोक मर्यादाके संग्रहकर

ऐकोबनाहै प्रजाको विनयसंपदा रक्षावास्ते दंडस्वरूपबना
है यहसनातनें स्वरूपहै १४
ब्रह्मापियज्ञ भगवान्सर्वलोक पितामहः
ऋत्विजं नात्मना तुल्यं ददर्शेति हि नः श्रुतं १५
ब्रह्माभगवानप्रजापति आदियुगविषे सर्वलोकपिताभया
है सो यज्ञकरणेकी इच्छाकरताभया सोअपनेयज्ञकर्मक
रणेकी इच्छाकरताभया लाइक ऋत्विजकोनहीदेषताभ
या यह समाचारप्रथमहमनेसुनाहै १५
सगर्भे शिरसा देवो बहुवर्षाणि धारयन्
पूर्णेवर्ष सहस्रेतु सगर्भः क्षवते पतत् १६
सो ब्रह्मा इसवार्ताके संकल्पगर्भको समाधनकी इच्छता
से सो संकल्पगर्भ सन्मुख आनपडताभया १६
क्षुपो नामसंभूतः प्रजापति ररिंदम
ऋत्विगासीन्महाराज यज्ञेतस्य महात्मनः १७
तस्मिन्प्रवृत्ते सत्रेतु ब्रह्मणः पार्थिवर्षभ
इष्टरूप प्रधानत्वा दंडः सोंतर्हितो भवत् १८
सोब्रह्माका संकल्पवालविषेछींकसे प्रगटभयातो है अरिं
दम क्षुपनामवाला प्रजाका यज्ञ प्रावृत्त होगया तब इष्टि
प्रधानतासे सो दंडरूप ऋत्विज अंतर्भूत होनाभया १८
तस्मिन्नंतर्हिते चापि प्रजानां संकरोभवत्
नैवकार्यं नवाकार्यं भोज्या भोज्यं नविद्यते १९
उसदंडरूप ऋत्विजके अंतर्धान होनेसे प्रजालोकके
महा संघटका संकरहोताहै नकार्य जानते नअकार्य
विचारहै भोज्य अभोज्यका विधिनिषेध होताभया १९
पेयापेय कुतः सिद्धिः हिंसंतिच परस्परं २०
गम्यागम्य तदा नासी त्सर्वपरस्वंचवैसमं
नही' पेय अपेयका विचारहोताभया कोई मर्यादा सिद्धन
ही होतीभई २०

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ १८४

परस्परं विलुम्पंति सारमेया यथा मिषं
अबला न्बलिनो घ्नंति निर्मर्यादामवर्तत २१
सभही प्रजालोक परस्पर खैंचाखैंचीसे लूटतेभये जैसे श्वानगणपरस्पर मासकी लूटछीन करलेतेहे अबलजनोको बलवानजन मारतेभये ऐसा निर्मर्याद जगतका बवहारहोताभया २१

ततः पितामहो विष्णुं भगवंतं सनातनं
सष्ट्वावरदं देवं महादेव मथाब्रवीत् २२
हे राजन् तब ब्रह्मा पितामह सनातन विष्णुभगवानजीकों स्तुतिकरके वरदान करणेहारे देव देव महाविष्णुजीकों वचनकहताभया २२

अत्र त्व मनुकम्पां वै कर्तुमर्हसि केशव
संकरो न भवेदत्र यथा तद्वै विधीयतां
हे भगवन् केशव अब तुम कृपाकरणेको योग्यहो जैसे इहां सबकाधर्म संकरनहीहोवे तैसे विधानकरो २३

ततः सभगवा न्ध्यात्वा चिरंशूल वरायुधः
आत्मान मात्मनादंडं ससृजे देवसत्तमः २४
तब सो भगवान् विष्णु चिरकाल ध्यानकरके शूलादि दंडनीतिके आयुधसंपदायुक्त अपने तेजसत्ताकरके अपने स्वरूपकोही दंडरूपको सृजताभया ऐसे सर्व देवताके सत्तमहे २४

तस्माच्च धर्मचरणा नीतिदेवी सरस्वती
ससृजे दंडनीतिंतां त्रिषुलोकेषु विश्रुतां २५
तब ब्रह्माजीकी इछासे दंडदेवताके धर्मचरण निमित्तसे नीतिदेवी सरस्वती जोहे सो त्रिलोकीविषे विख्यातदंडनीतिकों सृजतीभई २५

भूयः सभगवा न्ध्यात्वा चिरंशूलं वरायुधः
तस्य तस्य निकायस्य चकारैकैक मीश्वरं २६

वहोइ सो भगवान् शूलवरायुध धारणेहार भगवान दंड
नीतिके विधानवासते एक एकस्थानके प्रत्येक एक एक
प्रधान ईश्वरको कल्पनकरताभया २६
देवाना मीश्वरं चक्रे देवं दशशतेक्षणं
यमं वैवस्वतं चापि पितॄणा मकरोत्प्रभुं २७
देवता गणोका ईश्वर सहस्रनेत्र इंद्रकोकरताभया सूर्य
भगवानका पुत्रजो यमदेवता उसको पितरगणोका ईश्व
रको करताभया २७
धनानां राक्षसानां च कुबेर मपिचेश्वरम्
पर्वतानां पतिं मेरुं सरितां च महोदधिं २८
और धनसंपदाका यक्षराक्षसोके ईश्वरकुबेरकों करताभया
पर्वतोका प्रतिमेरुको करताभया और धनसंपदाका य
क्षराक्षसोके ईश्वरकुबेरकों करताभया पर्वतोकाप्रतिमे
रुको करताभया नदीगणोके ईश्वर समुद्रकोकरतेभयेर
अपांराज्ये स्वराणां च विदधे वरुणं प्रभुम्
मृत्युं प्राणेश्वरमथो तेजसां च हुताशनं २९
और जलाशयोके देवताजोहै तिन्हके ईश्वरको वरुणको
करताभया प्राणीगणोके प्राणसत्ताका ईश्वर मृत्युदेवता
को करताभया और तेजसत्तावालेका ईश्वर अग्निदेवताको
करताभया २९
रुद्राणा मपि चेशानं गोप्तारं विदधे प्रभुं
महात्मानं महादेव विशालाक्षं सनातनं ३०
और रुद्रगणोकी रक्षाकरणेहारे महादेव महाप्रभुजीकों
सनातन विशालज्ञाननेत्रवालेको ईश्वर करताभया ३०
वसिष्ठ मीशं विप्राणां वसूनां जातवेदसम्
तेजसां भास्करं चक्रे नक्षत्राणां निशाकरं ३१
विप्रगणोके ईश्वर वसिष्ठजीको करताभया वसुगणोका
ईश्वरभी अग्निकोकरतेभये तेजः सत्ताके प्रधानताके

ईश्वरसूर्यको करताभया और नक्षत्रोकाराजा चंद्रमाको कर
नाभया और भूतगणजोहे

वीरुधामोषधीनां च भूतानां च प्रभुं वरं ॥
कुमारं द्वादशभुजं स्कंदं राजानमादिशत् ३२

और लता औषधीजोहे तिन्होंको ईश्वरभी चंद्रमाकों करता
भया और भूतगणजोहे तिन्हको श्रेष्ठप्रभुको द्वादशभुजा
वाले स्कंदकुमारको ईश्वरकरताभया ३२

कालं सर्वेशमकरोत् संहार विनयात्मकं
मृत्युश्चतु विभागस्य दुःखस्य च सुखस्य च ३३

हे राजन् सकलप्राणीसमूहका संहार अंतकाल विनयह
ष्टिकाल सुखकाल दुःखकाल यहप्रकारकालके विभाग
हे तिन्होविषे चतुर्थ जो आदिभागहे संहारभागसो मृत्यु
रूपहे उसका सुखभोग्यजो अंतकाल उसका ईश्वरकाल
भगवानही कियाहे जिसका उपायनही वनताहे ३३

ईश्वरः सर्वदेवस्तु राजराजो नराधिपः
सर्वेषामेवरुद्राणां शूलपाणिरितिश्रुतिः ३४

जो सर्वदेवमय ईश्वरहे सो राज राजा नराधिपहे संपूर्णरु
द्रोकोभी ईश्वरहे सोसंहारकरताहे सोईदंडकर्ताहे इसका
रणसे दंडदेवता शूलपाणिकहाहे ३४

तमेनं ब्रह्मणः पुत्रं अनुजातं क्षुपं ददौ
प्रजानामधिपं श्रेष्ठं सर्वधर्मभृतामपि ३५

सो दंडदेवता ब्रह्माका पुत्रहे क्षुपजिसकानामहे सकलप्र
जालोकोका ईश्वरहे सर्वप्रकारकी धर्ममर्यादाकाभी ई
श्वरहे उसको प्रथमसंहारकरणेहारी रुद्रमहादेवको
देताभया ३५

महादेवस्ततस्तस्मिन् वृत्ते यज्ञे यथा विधि
दंडं धर्मस्य गोप्तारं विष्णवे सत्कृतं ददौ ३६

तव ब्रह्माका यज्ञ यथाविधि निवृत्तभया तव महादेवजोहे
सो धर्मकर्मकी रक्षाकरणेहारेको सत्कारकर्के विष्णुभगवान
कोदेतेभये ३६

विस्नु रंगिरसे प्रादा दंगिरा मुनिसत्तमः
प्रादा दिंद्र मरीचिभ्यो मरीचि भृगवेददौ ३७
विस्नुभगवानभी अंगिरामुनिको दंडधर्मको देतेभये अंगिरा
मुनिश्रेष्टभी दंडधर्मको इंद्रको और मरीचिको देताभया मरी
चिभी दंडधर्मको भृगुमुनिको देताभया ३७
भृगुर्ददा वृषिभ्यस्तु दंडधर्म समाहितं
ऋषयो लोकपालेभ्यो लोकपालात्वपायच ३८
भृगुमुनिजोहे सो दंडधर्मको धर्मशास्त्र वक्ताजो ऋषिगण
तिन्हको दंडधर्मको देताभया धर्मशास्त्र ऋषिलोक दंडध
र्मको इंद्रोको लोकपालोको देतेभये लोकपालभी दंडधर्म
को ब्रह्माके पुत्रको त्वयको बहोड अर्पण करतेभये ३८
त्वपस्तु मनवे प्रादा दादित्यतनयायच ॥
पुत्रेभ्यः श्राद्धदेवस्तु सूक्ष्मधर्मार्थकारणात् ३९
त्वपजो ब्रह्माकापुत्रसो अपने दंडधर्मको मनुजोहे वैव
स्वतसूर्यकापुत्र उसको देताभया श्राद्धदेवजो वैवस्वत
मनुः सो दंडधर्मको अपने पुत्रोको धर्मार्थ सूक्ष्म विचारका
रणसे देताभया ३९
विभज्यदंडः कर्तव्यो धर्मेणाच यदृच्छया
दुष्टानां निग्रहो दंडो हिरण्यंवाह्यतः क्रिया ४०
हे राजन् दंडजोहे सो धर्मविचारके विभागसे कर्तव्यहे दु
ष्टोको अंगपीडा शृंखला बंधनादि दंडनिग्रहकरताहे
राजाको सुवर्णादि ग्रहणजोहे सो लोकभयवाले कोश
खजानाके संग्रहवासते नहीहे दंडधर्मके संबंधसे पापदो
षका संग्रहहोताहे उसधनका कोशनही कर्तव्यहे ४०
व्यंगत्वं च शरीरस्य वधो नाल्पस्य कारणात्
शरीरपीडा स्तास्ता देहत्याग विवासनं ४१
हे राजन् अंगकी विकलता और वधदंड अल्पदोषके कार
णनहीकर्तव्यहे जौनसे दंडकरके शरीरकीपीडा जैसेदेह
त्याग प्रयागादिकोविषे पुण्यफलको करताहे तैसे वधदं
डके प्रतिनिधिस्थान अपने देशसे निष्कासनकर्तव्यहे ४१

श्री
रा.ध.
टी.
१८६

186

तंददौ सूर्यपुत्रस्तु मनुर्वै रक्षणार्थकम् ॥
आत्मजः सर्वभूतानां दंडोयं प्रजाःजागर्ति पालयन्
सूर्यकापुत्र वैवस्वत मनुजोहै सो प्रजाके रक्षणार्थ दंडधर्मको
अपने पुत्रजो पृथिवीविषे जो राजा भयेहैं उन्हके देताभया इ
सीप्रकारसे परंपराक्रमकर्के दंडप्रजाको पालनकरताहै
सदा इसलोकविषे सदाजाग्रतहै ४२
इंद्रो जागर्ति भगवा निंद्रादग्नि विभावसुः
अग्ने जागर्ति वरुणो वरुणश्च प्रजापतिः ४३
प्रजारक्षाकरणेको सदाजाग्रतहै इंद्रसे अग्निसदा जाग्रतहै
अग्निसे वरुणसदा जाग्रतहै वरुणसे प्रजापति सदाजाग्रत
है धर्मसेभी ब्रह्मकापुत्र रूपनामवाला दंडदेवता सदा
जाग्रतहै सो सनातन विचारव्यवसायरूप सदावनाहै ४३
प्रजापति स्ततो धर्मो जागर्ति विनयात्मकः
धर्माश्च ब्रह्मणः पुत्रो व्यवसायः सनातनः ४४
व्यवसाया स्ततस्तेजो जागर्तिपरिपालयन्
औषध्य स्तेजसा स्तस्मादोषधीभ्यश्च पर्वताः ४५
उसी व्यवसाय विचारसे प्रजापालनसे राजधर्मका तेजस
दाजाग्रतहै औषध समूहसे धर्मसेभी ब्रह्मकापुत्र उसतेजसे
औषधीसमूह जाग्रतेहै औषधसमूहसे पर्वतजाग्रतहै ४५
पर्वतेभ्यश्च जागर्ति रसो रस गुणा स्तथा
जागर्ति निर्ऋति देवी ज्योतींषि निर्ऋते रपि ४६
पर्वतोसे रसा जो पृथिवी सो रसगुणोकी निवासभूतजाग्र
तहै पृथिवीसे निर्ऋतिदेवी मृत्युदेवता सोजाग्रतहै नि
र्ऋतिदेवीसे नक्षत्र तारागण सदाजाग्रतहै ४६
वेदाः प्रतिष्ठा ज्योतिर्भिः ततोहयशिरःप्रभुः
ब्रह्मपिता महस्तस्मा जागर्ति प्रभुरव्ययः ४७
नक्षत्रतारा ज्योतिगणोसे वेदसदाप्रतिष्ठितहै वेदोसेभीह
यग्रीव भगवानवेदोको समुद्रसे उद्धारकरणेहारा सदाजा
ग्रतहै हयग्रीवसे वेदनिधिब्रह्मा प्रजापति जाग्रतवनाहै
सो प्रजापति जगतकाप्रभु अविनाशीहै ४७

पितामहा न्महादेवो जागर्ति भगवाञ्शिवः
विश्वेदेवा शिर्वश्चापि विश्वेभ्यश्च तथर्षयः ४८
प्रजापतिसे महादेव प्रभु भगवान सदाजाग्रतहै शिवभग
वान सो विश्वेदेव सदाजाग्रतहै विश्वेदेवोसेभी ऋषि तपस्वी
लोकसदाजाग्रतहै ४८
ऋषिभ्यो भगवा न्सोमः सोमाद्देवाः सनातनाः
देवेभ्यो ब्राह्मणः लोके जाग्रती त्युपधारय ४९
ऋषिजनोसेभी सोमदेवता सदासनातनजाग्रतहै सोमदे
वतासेभी देवतालोक सदाजाग्रतहै देवगणोसेभी वेदवे
त्ता ब्राह्मणलोक जाग्रतहै यह तुमसदा दृढनिश्चय धा
रणकरो ४९ ॥
ब्राह्मणेभ्यश्च राजन्याः लोकात्र क्षांतिधर्मतः
स्थावरं जंगमं चैव क्षत्रियेभ्यः सनातनम् ५०
हे राजन् ब्राह्मणोसेभी राजा लोक धर्ममर्यादाकर्कें संपूर्ण
लोको रक्षाकरतेहै ताते स्थावरजंगम संपूर्ण सनातन क्षत्रि
योकी रक्षासे जाग्रतहै ५०
प्रजाजाग्रति लोकेस्मिं दंडो जागर्ति तास्त्र च
सर्वसंक्षिपते दंडः पितामह समप्रभुः ५१
हे राजन् ताते सकलप्रजा इसलोकविषे अपनेधर्मकर्मविषे
जाग्रतहै प्रजालोकोविषे दंडधर्महै सदा जाग्रतहै ताते दंड
सभकों मर्यादासे स्थापनकरताहै यह दंडपितामहके
समानजगताप्रभुहै ५१
जागर्तिकालः पूर्वेच मध्ये चांते च भारत
ईश्वरः सर्वलोकस्य महादेवः प्रजापतिः ५२
इसजगतकी सावेमे पूर्वविषे और मध्यविषे अंतविषेभी
सदाकालजागताहै सो काल सर्वलोकका ईश्वर महादेव
प्रभुप्रजापतिहै ५२
देव देव शिवः शर्वे जागर्ति सततं प्रभुः
कपर्दीशंकरोरुद्रः शिवस्थाणुरुमापतिः ५३
सो कालात्मा शिवजोहै सो देवदेवहै सो सदाजाग्रतहोताहै

भगवान शिवशंकरहे कल्याण सदा सर्वदा आपकल्याणरू
पहे स्थाणुहे रुद्रहे उमापार्वतीकापति ५३

इत्येष दंडो विख्यात आदौ मध्ये तथावरे
भूमिपालो यथान्यायं वर्ततानेन धर्मवित् ५४

हे राजन् मान्धाताजी इसप्रकारमेने दंडका प्रभावकहाहे
यह दंड जगतके आदिविषे मध्यविषे अंतविषे सदाजाय
तभयाहे हे राजन् ताते भूमिपालजो राजाहे सो धर्मवेत्ता
हे किसप्रकारसे प्रसन्नहोवे सो न्यायमार्गमे तुमसेंकहा
हे ५४ ॥ भीष्मउवाच

इतीदं वसुहोमस्य शृणुयाद्यो मतं नरः ॥
श्रुत्वा च सम्यग्वर्तेत सर्वान्कामानवाप्नुयात्

भीष्मउवाच हे राजन् राजा वसुहोमराजाका राजा मान्धा
ताके संवादके मतको जो राजा श्रवणकरके राजाधर्म
मार्गमो प्रसन्नहोके संपूर्णकामना समूहको प्राप्तहोताहे ५५

इति ते सर्वमाख्यातं यो दंडो मनुजर्षभ
नियंता सर्वलोकस्य धर्माक्रांतस्य भारत ५६

हे युधिष्ठिर इसप्रकार यह तुमको सभकहाहे जोनसा यह
दंडबनाहे हे मनुजर्षभ मनुष्यश्रेष्ठ धर्मकर्मके अधिकारवा
ले सर्वलोकका नियम मर्यादाकारी दंडही बनाहे ५६

धर्मार्थकामाः किंमूला त्रयाणां प्रभवश्च कः
अन्यान्यं चानुषज्जंते वर्तंते च पृथक् पृथक् ५०

इत्यार्षे राजधर्मे दंडोत्पत्तिर्नामद्वाविंशोध्यायः २२

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे दंडोत्पत्तिश्रोता
नव द्वाविंशोध्यायः ॥ १२२ ॥

युधिष्ठिरउवाच तात धर्मार्थकामानां श्रोतुमिच्छा
मि निश्चयं लोकयात्राहि कार्त्स्न्येन त्रिष्वेतेष्वप्र
तिष्ठिता १॥ युधिष्ठिरउवाच हे तात धर्म अर्थ काम
यह जो त्रिवर्गके तीनप्रकारहे तिन्होंके भेदनिश्चयको
मे श्रवणकिया चाहताहे जेती लोकयात्राहे सो सभही

इन्ह तीनोविषे प्रतिष्ठितभयेहे १
धर्मार्थकामाः किंमूला स्त्रयाणां प्रभवश्चकः
अन्योन्यं चानुषज्जंते वर्तंते च पृथक्पृथक् २
धर्मार्थ कामयहतीनजोहे इन्हका मूलकारण किस।
वासते कर्तव्यक्याहे कौनही उन्हकी उत्पत्तिकोबनीहे
इह तीनो अन्योन्यसंयुक्तकैसेहे कैसे पृथकपृथकहोतेहे २
भीष्मउवाच यदातेस्युः सुमनसो लोके धर्मार्थ
निश्चये कालप्रभव संस्थास्तु सज्जंते च त्रयस्तदा ३
भीष्मउवाच हे राजन् जैसे सूचीको लोहरूपजानेतो
कदाहमोभी लोहरूपता ज्ञानहोताहे ऐसे युक्तिन्याय
करके किंचितसाहित्य ज्ञानकरतेहे ज्ञानकरतेहे जे
व पुरुषलोक सुखसंपदा प्राप्तिसे सुंदरहृदयप्रसन्न
होतेहे तब इसभूमिलोकविषे धर्मपूर्वक अर्थनिश्च
यको करतेहे ऐसे कल्पनाकरते अहंक्या मे ऋतुका
लविषे होतेहै उन्ह तिनोकी उत्पत्ति जाया जो नाडी
इसके विषे सम्यक सिद्धहोतीहे जब सो पुरुष नारी
जनोविषे प्रसंगकरतेहे तबगर्भाधानविधिकायोनि
संस्काररूपधर्म उत्पन्नहोताहे पुत्रोत्पत्तिरूप अर्थसि
द्धहोताहे स्त्रीसंगरूप कामभीतहां सिद्धहोताहे ३
धर्ममूलः सदैवार्थः कामोर्थफलमुच्यते ४
संकल्पमूला स्ते सर्वे संकल्पा विषयात्मकः
हे राजन् अर्थसदा धर्ममूलहे उसका मूलधर्ममूलहे
काम अर्थका फलहे कामका अर्थमूलहे इन्हतीनोका
संकल्पमूलहे संकल्प विषयवासनामूलहे तबजेते
विषयहे सो इंद्रियोकी आहारसिद्धिवासतेहोतेहे ताते
धर्मअर्थकाम तीनोकी प्रवृत्ती त्रिवर्गका यह मूल इन्ह
की निवृत्तिमोक्षकहाहे हे राजन् संकल्पप्रवृत्ति त्रिवर्ग
कामूलहे संकल्प निवृत्तिमोक्षहे ४
विषयाश्चैव कार्त्स्न्येन सर्व आहार सिद्धये

मूलमेत त्रिवर्गस्य निवृत्तिर्मोक्षउच्यते ५

अब वहांउभी प्रथमप्रश्नजोहे त्रिवर्गमूलका द्वितीय
प्रश्न त्रिवर्गस्थानका उन्हके उत्तरकों कहतेहे जबदि
व्यदेवता देहकी प्राप्तिमा मानकर औरस्त्री सखादि
अर्थको मानकर धर्मकिया जाताहे देवकर्मसहित
अर्थजोहे सो धर्मका मूलहोताहे और अर्थको भोगार्थ
ताते लोकप्रसिद्धबनीहे ताते कामकामूल अर्थसिद्ध
हीहे ऐसाभी कहाहे धर्मनिष्ठसंतजनोको मानकस
त्कारदेनेहारे युधिष्ठिर यह प्रश्नजो तुमने कियाहे
इसका उत्तरतोको इहांदृष्टांतसे कहतेहे पूर्वसमय
विषे इहांहमारे देषतेही तुम्हारे राजसूय यज्ञमों
तुमको प्राप्तकामजोहे सो अर्थका फलहे कामका
मूल इंद्रियभोगोंकी प्रीति अर्थ सिद्धहे यह सभही
संकल्पमूलही संकल्पसे उत्पन्नहोतेहे दूसराजो प्रश्न
हे त्रिवर्गस्थानका उसके उत्तरकोभी यही सिद्धकरताहे
रूपादिविषय संकल्परूपहे सो भोगार्थ बनेहे ताते
यह संकल्पमूलहे मोक्ष इन्हसे विलक्षणहे निसंक
ल्परूपहे इहां प्रश्नहे त्रिवर्गजोहे धर्म अर्थकाम सो सर्व
जीवोने क्यानही सेवनीयहे उत्तरकहतेहे रजोगुणवृ
त्तिसे नही सेवनीयहे सत्वगुणवृत्ति प्रधानहोवेतो
सेवनेयोग्यहीहे ॥ ५

धर्मोव्यक्रीर संशुद्धिः धर्मार्थं चार्थउच्यते
कामोरति फलस्तत्र सर्वे ते च रजस्वलाः ६

इसी अर्थको कहतीहे शरीरकी अरोग्यता हिकहो धर्म
कामनाकर्तव्यहे और धर्मकर्मकेवासते अर्थकामनाक
र्तव्यहे इहां कामजोहे सो धर्मअर्थजोहे तिन्हके अन्यो
न्यकामनाविषे मिलितभयाहे सो निवृत्तिफलको कर
ताहे जोनसे केवलप्रवृत्तिफलका कामहे सो इंद्रि
यभोगफलरूपहोताहे ताते यह सभही धर्मादि त्रिवर्ग
त्यागकर्तव्यहे ॥ ६

सन्निकृष्टं श्रेयो देवा नचैता मनसा त्यजेत्
विमुक्तस्तपसा सर्वान् धर्मादीन्कामनैष्टिकान्
हे राजन् स्वर्गादिकफल त्रिवर्गका निकृष्टफलहे उसके संबं
धसे धर्मादिक सभनिकृष्टहोतेहे ओर आत्मज्ञानरूपफल श्रा
त्मचैतन्यका समीप संबंधी फलहे उसके संबंधसे धर्मादि
क श्रेष्ठ जानकर्के सेवनीयहे तहां धर्मचित्त शुद्धवास्तेहे
अर्थ निसकामकर्मवास्तेहे कामके वल देहधारणवास्तेहे
ऐसे निसकामनिष्ठावाले धर्मादिक मनकर्केभी कदापि नही
त्यागने जो इन्होंका त्यागकरणाहोवे तो कैसेकरे विचारह
पी तपकर्के इन्हसे मुक्तहोताहे अहंता ममताकों असं
गताकर्के धर्मादिकोंका अनुष्ठानकरे ७
श्रेष्ठे बुद्धि स्त्रिवर्गस्य यदयं प्राप्नुया नरः
बुद्धाबुद्धि विहार्थेन तदज्ञान निकृष्टया ८
ऐसे अनुष्ठानसे क्या सिद्धहोताहे सो कहतेहे धर्मादिकों
के असंगनिष्ठासे मोक्षही होताहे जो पुरुष ऐसाकरे तो
मोक्षकी प्राप्तहोताहीहे जो मोक्षकी वांछानहीकरे उस
कोधर्मादिकोंका उत्तमफल दुर्लभहे मोक्षसिद्धिविषे धर्म
से अर्थहे अर्थसे धर्महे यही बुद्धिविचार युक्तहे जोनसा
अज्ञाननिष्ठासे कामकेवास्ते धर्मार्थ निष्ठाहोताहे सो मू
ढबुद्धिहे धर्मार्थोके शुद्धकालको नहीप्राप्तहोताहे धर्मार्थो
के परस्पर संबंधविना व्यभिचारहोताहे ताते उत्तम फलकी
सिद्धिनही होतीहे इन्हके परस्पर सहाय मुक्तिविषे फल
काव्यभिचारनहीहोता ८
अपध्यान मलोधर्मो मलोर्थस्य निगूहनं
संप्रमोदमलः कामो भूयः स्वगुणवर्जितः ९
हे राजन्
अब धर्मार्थकामोकी रजोदोष मूलताकोकहतेहे
अपध्यानजोहे फलवांछामो धर्मविषे रजोमूलहे औरदा
नभोगका निरोध अर्थविषे रजोमलहे औरभागप्रीति
कामविषे रजमलहे यही धर्मादिकोके दुर्गुणहे संदर
प्रकारसे धर्मादिकोके दुर्गुणोकी वर्जनाहोवेतो भयात्
का बहोत चित्तशुद्धिद्वारा ब्रह्मानंदफलको यह त्रिवर्ग

श्री रा॰य॰ टी॰ १८९

189

सिद्धकरदेताहै ९
अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनं
कामंदकस्य संवादं सांगिरिष्टस्य चोभयोः १०
धर्मार्थकाम पृथक पृथक पृथक कैसेहोतेहै इसप्रकार
के चतुर्थप्रश्नको उत्तरको कहतेहै हे राजन् इस अर्थवि
षे एकपुरातन इतिहासको उदाहरणकहतेहै कामंदक
ऋषिका आंगिरिष्ट राजाका संवादकोभयाहै उसको श्र
वणकरो १० ॥
कामंद ऋषिमासीन मभिवाद्यनराधिपः
आंगिरिष्टोथ पप्रच्छ कृत्वासमय पर्ययं ११
कामंदकऋषि अपने आश्रमविषे निवासकरतेको आं
गिरिष्टराजा प्रणामपूजाकरके प्रश्नकरताभया ११
यः पापं कुरुते राजा काममोह बलात्कृतः
प्रत्यासन्नस्य तस्यर्षे किंस्यात्पाप प्रणाशनं १२
हे ऋषिश्रेष्ठ जो राजा काममोह केबलात्कारसे पापकर्मकोक
रताहै जब पश्चात्तापयुक्तहोवे तब उसको पापनाशकारी
क्या कर्मकर्तव्यहै उसको मेरेप्रतिकहो १२
अधर्मं धर्म इति च योज्ञाना द्दाचरे न्नरः
तं चापि प्रथितं लोके कथं राजा निवर्तयेत् १३
बहोउ अधर्मको धर्मजानकर मोहसे पुरुष आचारण सो
अधर्मा चरणही लोकविषे धर्मरूपसे प्रसिद्धभयाहै उसको
राजा कैसे प्रवृत्तकरे इसवातांको तुमकहो १३
कामंदउवाच योधर्मार्थौ परित्यज्य काममेवानुव
र्तते सधर्मार्थ परित्यागात् प्रज्ञानाश मिहार्च्छति
कामंदउवाच हे राजन् आंगिरजो राजा धर्मार्थको आचरणसे
त्यागकर कामके अर्थही आचारण करताहै सो धर्मार्थ वि
धिके त्यागसे प्रज्ञानाशको प्राप्तहोताहै १४
प्रज्ञा नाशात्मको मोह स्तथा धर्मार्थ नाशकः
तस्मान्नास्तिकता चैव दुराचारश्च जायते १५
प्रज्ञानाशसे मोहसे अज्ञान मूढता प्राप्तभई ताते मोहजोहै

सो धर्मार्थ नाशकारी होताहै धर्मार्थनाशकारी होताहै ध
र्मार्थ नाशकारी राजा नास्तिकता होतेहै नास्तिकतासे दु
राचार प्रवृत्तहोताहै १५

दुराचारो यदा राजा प्रदुष्टात्र नियच्छति ।
तस्माडुद्विजते लोकः सदावेश्म गतादिव १६

दुराचार राजा भयातो अधर्मकारी दुष्टजनोको दंडशासना
नहीकरता ऐसे राजासे प्रजालोक भयभीतहोतेही करता
ऐसे राजासे प्रजालोक भयभीतहोतेहै जैसे सर्पांतर्गत
मंदिरसे भयभीतहोतेहै १६

नं प्रजानानुवर्तंते ब्रह्मणा नच साधवः
ततः संशय माप्नोति तथा वध्यत्व मेति च १७

उस राजाकी आज्ञाशासनाको लोकनही मानते ब्राह्मण
साधुलोक सभही आज्ञाशासनानही मानते तदनंतर
सो राजा राज्य संशयको प्राप्तहोताहै शत्रुलोकोंके व
शहोकर वधबंधको प्राप्तहोताहै १७

अप्रमधस्तस्त्व वमनो दुःखंजीवित्त मच्छति
जीवेश्चयदप धस्त तच्छुद्धं मरणं भवेत् १८

वहोउ स्थानभ्रष्टहोताहै अवज्ञाको प्राप्तहोताहै जोनसा
स्थानभ्रष्टहोकर अनादर प्राप्तहोवना सो केवलमरा
णरूपहोताहै १८

अत्रैतदाह्र राचार्यः पापस्य परिगर्हणम्
सेवितव्यात्रयी विद्या सत्कारो ब्राह्मणेषु च १९

हे राजन् यह तोको धर्मार्थ भ्रष्टताका पापफलकहाहै
अब तोको उसकी उपाय कर्तव्यता कहतेहै राजाने अपने
पापफलकी निवृत्तिवासते वेदत्रयी विद्या यज्ञादिकर्म
वास्ते सेवनीयहै उसके विधिज्ञानवासते वेदवेत्ता ब्राह्म
ण सेवनीयहै ॥ १९

महामनाभवे दुःखे विवदेच्च महाकुले
ब्राह्मणं स्वा पि सेवेत समाश्रुका स्मनस्विनः २०

ब्राह्मणोके सत्संगसे धर्मज्ञान संपन्न महाविचार संपन्न मनवालाहोवे महाकुलके लोकके साथ धर्मविचारके संवादको सेवनकरे ओर क्षमायुक्तजो मनस्वी ब्राह्मणहे तिन्होकीसेवाकरे २०

जपेदुदक शीलःस्या त्सततं स्वासनमास्थितः
धर्मात्मिना न्संप्रविशेयत् वहिःकृत्वेद्दुष्कृतीन्

स्नानसंध्या तर्पणादि शीलहोवे पवित्रमंत्रोको जपकरे ओर सदैव स्वासनकर्के एकांतस्थानविषे स्थितहोवे धर्मात्माजनोको अपने रहस्यकार्यविषे नियुक्तकरे ओर दुष्टप्रकृति लोकोको दुष्टकार्यविषे दुष्टदंडविषे शत्रुविजयकार्यविषे युक्तकरे २१

प्रसादये न्मधुरया वाचावाप्यथकर्मणा
तवास्मीति वदेन्नित्यं परेषांकीर्तयन्गुणान् २२

हे राजन् जोनसे उत्तम धर्म कर्म निष्टतपस्वीजनहे तिन्हको मधुर वाणीकर्के प्रणामवंधना पूर्वकसेवावृत्तिकर्के सदाप्रसन्नकरे हेप्रभुजी हम तुम्हारे अधीनहे दासहे इसप्रकारस्तुतिकरे ओरभी उत्तमजनहे तिन्होके गुणकीर्तन करे ॥ २२ ॥

अपापो ह्येव माचारः क्षिप्रं बहुमतो भवेत्
पापाण्यपिहि कृच्छ्राणि शमयेन्नात्रसंशयः २३

हे राजन् ऐसे आचारवाला पुरुष अपापहोताहे पापरहितहोकर तुरतही बहुतजनोकामान्यहोताहे महाकष्टकारी पापकर्मभी कियेहे तिन्होकोभी तुरंतशांतकरताहे २३

गुरवो हि परं धर्मं यं ब्रूयुस्तं तथा कुरु
गुरूणां हि प्रसादाद्धि श्रेयः परमवाप्स्यसि २४

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे कामंदागरिष्टसंवादोनामत्रयोविंशतितमः १२३

जो तुमारे तुमको धर्मकर्मकहे उसकर्मको तथास्तु कहकर श्रद्धाभक्तिसेकर गुरोंकी प्रसादसेही परमकल्याणको प्रा·

महोवेगा २४ ॥ इतिश्री शांतिपर्वणि भाषार्थ राजधर्मे
शोतान्नव त्रयोविंशोध्यायः ॥ १२३ ॥
युधिष्ठिरउवाच इमेजनानरश्रेष्ट प्रशंसंति स
दाभुवि धर्मस्य शील मेवादौ ततो मे संशयो म
हान् १॥ युधिष्ठिरउवाच हे नरश्रेष्ट हे महाबाहो जेते
यह उत्तम मुनिलोकहे सो धर्मशील नरके वहोत प्रशंसा
करतेहे ताते मोको प्रथम अपनेशीलविषे महासंशय
भयाहे ॥ १
यदि तच्छक्य मस्माभि ज्ञातं धर्मभृतां वर
श्रोतु मिच्छामि तत्सर्वं यथैतदुप लभ्यते २
आपभी धर्मधारी जनोविषे परमश्रेष्टहो ताते मे आपको
प्रश्नकरताहूं जोयसाधर्मशील हमनेभी प्राप्तहोनेको
शक्यहे तोमेभी श्रवणकरणेकी इच्छाकरताहूं २
कथं तत्प्राप्यतेशीलं श्रोतु मिच्छामि भारत
किंलक्षणं च तत्प्रोक्तं ब्रूहि मे वदतां वर ३
हे भारत सो ऐसा शीलकेसे प्राप्तहोताहे उसका मेसुनाचा
हताहूं हे वचन वक्ता जनोविषे श्रेष्टजो सो धर्मकर्मका
शीलकीदृशलक्षण संपन्नहे उसको आपमेरे प्रतिकहो ३
भीष्मउवाच पुराडुर्योधनेनेह धृतराष्ट्रायमान
द आख्यातं तप्य मानेन श्रियं दृष्ट्वा तथागतां ४
भीष्मउवाच हेमानद धर्मनिष्ट संतजनोकोमानसत्कारदे
नेहारे युधिष्ठिर यह प्रश्नजो तमने कियाहे उसका उत्तर
तोको इहांके वृत्तांतसेकहतेहे पूर्वसमयविषे इहाहमारे
देषतेहो तुम्हारे राजसूय यज्ञमो तमको प्राप्तभई महासं
पदाको देषकर महासंतापको प्राप्तभया दुर्योधन उस
ने धृतराष्ट्रप्रति अपनासंतापजाइकहाहे ४
इंद्रप्रस्थे महाराज तव सभ्रातृकस्य ह
सभायां चावहसनं तत्सर्वं शृणु भारत ५
हे महाराज इंद्रप्रस्थविषेभीमादि भ्रातादि संयुक्त तुम्हा
रीसभाविषे दुर्योधनको उपहासका अवमानजैसे प्राप्त

श्री. रा.य. टी. १९१

191

भयाहे उसके संतापको संपूर्ण श्रवणकरो ५

भवतस्तां सभा दृष्ट्वा समृद्धिं चाप्यनुत्तमाम्
दुर्योधन स्तदासीनः सर्वैपित्रन्यवेदयत् ६
श्रुत्वाहि धृतराष्ट्रस्य दुर्योधनवचस्तदा
अब्रवीत्कर्णसहिते दुर्योधन मिदंवचः ७

जौनसी तमारी मयासुर कृत दिव्य सभाको देषकर और अत्यंतसमृद्धिवाली महासंपदाको देषकर उससभामे जबवेटाहे दुर्योधन महासंतापको प्राप्तभयाहे संपूर्णद्द तांतको संतापयुक्त अपने पिताको धृतराष्ट्रकोनिवेदना करनाभया ६ ७

धृतराष्ट्रउ. किमर्थं तप्यसे पुत्र श्रोतु मिच्छामि तत्वतः श्रुत्वात्वामनुनेष्यामि यदिसम्यग्भविष्यति ८ धृतराष्ट्रउ. हे पुत्र तू किस अर्थको संतापकरता हे मे तोसे सुनाचाहताहूं सुनकर मेतेरे संतापको नि हत्तकरो जो तेरे मतिशुभहोवेगी तो मे तोकी स्वीकरोंगा प

त्वयाच महदैश्वर्यं प्राप्तं परपुरंजय
किंकराभ्रातरस्सर्वे मित्रसंबंधिनःसदा ९

हे परपुरंजय तेनेभी महाएश्वर्यपायाहे सभही भ्राता तेरे किंकरहे मित्रसंबंधिबांधव सभतेरे सदावशहे ९

आच्छादयसि प्रावारा नश्नासिपिशितौदनं
आजानेयावहंत्यश्वाः केनासिहरिणः कृशः १०

उत्तमसोलके वस्त्रोंको तूंपहिरताहे और मनप्रीतिकरणेहारे मांस भोजनोंको करताहे और महाउत्तम आजानेय पश्चिमदेशके अश्वोंको असवारहोताहे तांबहोउ कौनदुखसे तूं हरीवर्ण कृशाको भयाहै १०

दुर्योधनउवाच दशतानि सहस्राणि स्नातकानां महात्मनां भुंजते रुक्मपात्रीभि युधिष्ठिरनिवेशने ११ दुर्योधनउवाच हेतात दशहजार वेदविद्यास्नात ब्राह्मण जोहे सो युधिष्ठिरके मंदिरविषे सुवर्णपात्रों विषे भोजनकरतेहे ११

दृष्टा च तां सभां दिव्यां दिव्यपुष्पफलान्वितां
अश्वांस्तित्तिरकल्माषांन्वस्त्राणि विविधानि च १ २
युधिष्ठिरके सभा दिव्य पुष्प उत्तम अश्वरत्न देषे हैं और अने
क प्रकारके। और तित्तिरवर्णके उत्तम अश्वरत्न देषे हैं और
अनेक प्रकारके दिव्य वस्त्र देषे हैं १२
दृष्ट्वा तां पांडवेयानां ऋद्धिं वैश्रवणीं शुभाम्
अमित्राणां सुमहतीं मनुशोचामि भारत १३
ऐसी पांडवोंकी कुबेर जैसी दिव्य समृद्धिवाली संपदा वृद्धि
के देषकर ऐसी दिव्य संपदा अपने शत्रुजनोंको प्राप्त भई
देषकर संतापको पाइकर शोचता हूं १३
धृतराष्ट्र उवाच यदीच्छसि श्रियं तात यादृशी सा १४
युधिष्ठिरे विशिष्टां वा नरव्याघ्र शीलवान्भव पुत्रक
धृतराष्ट्र उवाच हे तात पुत्र जो तूं जैसी युधिष्ठिरके संपदा है
ऐसी संपदाको अथवा उससेभी विशेष संपदाको वांछा क
रता है तो नरव्याघ्र तब तूं शीलवान हो १४
शीलेन हि त्रयो लोकाः शक्या जेतुं न संशयः
न हि किंचिदसाध्यं वै लोके शीलवतां भवेत् १५
शीलकर्के तीनो लोक जयकरणेको शक्य है इसमें संशय
नहीं है शीलवान जनोंको इस लोक विषे असाध्य कछु
नहीं है १५
एकरात्रेण मान्धाता त्र्यहेण जनमेजयः
सप्तरात्रेण नाभागः पृथिवीं प्रतिपेदिरे १६
एकरात्रकर्के मान्धाता शीलकर्के त्रैलोक्यको जयकरता
भया जनमेजय राजा तीन दिनकर्के जयकरता भया ८
सप्तरात्रकर्के नाभाग राजा पृथिवी जयको प्राप्त भया है १
एते हि पार्थिवाः सर्वे शीलवन्तो दयान्विताः
अतस्तेषां गुणक्रीता वसुधा स्वयमागता १७
यह ऐसेही सब राजे शीलवान दयावान होकर पृथिवी
जयको प्राप्त भये हैं शीलादि गुणोंकर्के विकार गई है ए

थिवी सो इन्द्रके वश आपहोगईहै १७

दुर्योधनउवाच कथं तत्प्राप्यते शीलं श्रोतुमिच्छा

मिभारत येनशीलेन तैः प्राप्ता तिप्रमेव वसुंधरा १८

दुर्योधनउवाच हे भारत ऐसापृथिवीको वशकरणेहारा

शीलकैसे प्राप्तहोताहै उसको मे सुनाचाहताहुं जिसकर्के

ऐसे राजालोकोने त्वरंतपृथिवी अपने वशप्राप्तभईहै १८

धृतराष्ट्रउवाच अत्राप्युदा हरंतीम मितिहासं पुरा

तनं नारदेन पुराप्रोक्तं शीलमाश्रित्य भारत १९

धृतराष्ट्रउवाच हे भारत एकपुरातन इतिहासकोभी उदा

हरणकहतेहै जो इतिहास नारदजीने शीलको मुख्यक

र्केकहाहै १९ ॥

प्रह्लादेन हृतं राज्यं महेन्द्रस्य महात्मनः

शीलमाश्रित्य दैत्येन त्रैलोक्यं च वशीकृतं २०

प्रह्लादने इंद्र महात्माकाराजा दैत्यहोकर्केभी हरलियाहै

त्रैलोक्यसंपूर्णहरलियाहै अपने वशकर हरलियाहै २०

ततो बृहस्पतिं शक्रः प्रांजलिःसमुपस्थितः

तमुवाच महाप्राज्ञः श्रेय इच्छामि वेदितुम् २१

तब इंद्रबृहस्पतिको प्रांजलिहोकर शरणको प्राप्तभयाहै

महाबुद्धि इंद्र बृहस्पतिको वचनकहताभया हे भगवन्

अपने कल्याणको उपायको आपसे जानाचाहताहुं २१

ततो बृहस्पति स्तस्मै ज्ञानं नैश्रेयसं परम्

कथयामास भगवा न्देवेंद्राय कुरूद्वह २२

तव बृहस्पति इंद्रको परमकल्याणका साधनभूत उत्तमनी

तिज्ञानको कहताभया हे कुरुश्रेष्ठ देवेंद्रके प्रति बृहस्प

ति कल्याणसाधनके ज्ञानको कहताभया २२

एतावच्छ्रेय इत्येव बृहस्पति रभाषत

इंद्रस्तु भूयः पप्रच्छ को विशेषो भवेदिति २३

एतावत् शीलही परमकल्याण रूपहै इंद्रबृहस्पतिको

बहोड प्रश्नकरताभया इसविषे विशेषगुणक्याहै जिसक

कैं अबभूपकल्याणहोवे उसकोकहो २३
बृहस्पतिउवाच विशेषोस्ति महांस्तात भार्गव
स्य महात्मनः अत्रागमय भद्रंते भूयएव सुरर्षभ
बृहस्पतिउवाच हे देवराजमेरेसे इसज्ञानकाविशेष शु
क्राचार्यविषेहे इसशुक्रको वहांउ इहांही बुलाओ तोको
वहांउभी परम सुखहोवेगा २४
आत्मनस्तु ततः श्रेयो भार्गवात्सुमहातपः
ज्ञान मागमयत्प्रीत्या पुनः सपरमद्युतिः २५
तूं अपने कल्याणके ज्ञानको शुक्रसेपावेगा प्रह्लाद म
हातपस्वीहे सो शुक्रसेही ऐसे ज्ञानको प्राप्तभयाहे तब
इंद्र परमतेजयुक्त शुक्रको प्राप्तहोताभया २५
तेनापि समनुज्ञातो भार्गवेण महात्मना
श्रेयोऽस्तीति पुनर्भूयः शुक्रमाह शतक्रतुः २६
महात्मा भार्गवजो शुक्र तिसनेभी इंद्रकोकहा तेराकल्या
णहोवे ऐसे सत्कारकिया तब इंद्र अपने वृतांतको शुक्रके
प्रति कहताभया २६
भार्गवस्त्वाह सर्वज्ञः प्रह्लादस्य महात्मनः
ज्ञानमस्ति विशेषेण ततोहृष्टः सोभवत् २७
तब सर्वज्ञशुक्र इंद्रको वचनकहताभया प्रह्लादआपम
हात्माहे इसको विशेषज्ञानहे ताते विशेषज्ञानयुक्तभया
इमनेभी दिखाहै २७
स ततो ब्राह्मणो भूत्वा प्रह्लादं पाकशासनः
गत्वा प्रोवाच मेधावी श्रेय इच्छामि वेदितुम्
हे पुत्र तब इंद्र ब्राह्मण होकर प्रह्लादके समीपजाइ
प्राप्तभयाहे तहांजाइकर अपनी बुद्धिसे प्रह्लादको वचन
कहताभया मे तुमसे अपने विषे शीलप्राप्तिके हितको
जानाचाहताहूं २८
प्रह्लादस्त्वब्रवीद्विप्रं क्षणोनास्ति द्विजर्षभ
त्रैलोक्यराज्यसक्तस्य ततोनोपदिशामिते २९

तब प्रह्लादब्राह्मणको देखकर वचनकहताभया हेविप्र मोको अबक्षण अवसर त्रैलोक्यराज्यकी आसक्तिसेनही है ताते मे तोको उपदेशनहीकरता २९

ब्राह्मणस्त्वब्रवीद्राजन्यस्मिन्कालेक्षणोब्रवीत् तदोपादेष्टु मिच्छामि यदाचार्य मनुत्तमे ३०

तब ब्राह्मण प्रहलादको वचनकहताभया हेराजन् जब तुमको अवसरक्षणहोवेगा तबही मे तुमसे अपने हितकार्यको प्राप्तभया चाहताहूं जिससे उत्तमकार्य और नहीहै ॥ ३०॥

ततःप्रीतो भवेद्राजा प्रह्लादो ब्रह्मवादिनः तथेत्युक्त्वा शुभेकाले ज्ञानतत्वं ददौ तदा ३१

हे पुत्र तबराजा प्रह्लादब्राह्मणके उपर प्रसन्नहोताभया तब शुभकालविषे ब्राह्मणके प्रतिज्ञान तत्वके उपदेशको देताभया ३१

ब्राह्मणोपि यथा न्यायं गुरुवृत्ति मनुत्तमां चकार सर्वभावेन यदस्य मनसेप्सितम् ३२

तब ब्राह्मणभी यथायोग्य संप्रदायके अनुसार आचार्यवृत्तिको सर्वभावकरकै जो उसके मनकीवांछारही तैसे करताभया ३२

पृष्टश्च तेन बहुशः प्राप्तंकथ मरिंदम त्रैलोक्यराज्यं धर्मज्ञ कारणं तद्ब्रवीहिमे प्रह्लादोपि महाराज ब्राह्मणं वाक्यमब्रवीत् ३३

तब प्रह्लाद इंद्रने बहोतविनय यत्नसेपूछा हे धर्मज्ञ तेने त्रैलोक्यराजको कैसेपायाहै उसकारणको मेरेप्रतिकहो तब प्रह्लाद इंद्रब्राह्मणको हे महाराज ऐसे वचनको कहताभया ॥ ३४

प्रह्लादउवाच नासूयामि द्विजान्विप्र राजास्मीति कदाचन काव्यानि वदतांतेषां संयच्छामि वहामिव

प्रह्लादउवाच हे विप्र मेब्राह्मणोकेप्रति अपनेको राजा मान

कर सर्वज्ञताके अभिमानकर्के अवज्ञानही करताऊं कायजो
है शुक्रप्रोक्त नीतिशास्त्र वचनतेइस्याकों ब्राह्मणोके मुखसे
धारग्रहणकर्के निश्चयबुद्धिसे धारणकरताऊं ३५

तेविशुद्धाः प्रभाषंते संयच्छंतिच मांसदा
तेमां काव्यपथे शुक्रं शुश्रुषुः मनस्त्वयकं ३६

सो ब्राह्मणलोक मेरीभक्तिशुश्रूषाको शीलस्वभावसे प्रशु
क्तभईको देषकर श्रद्धा चित्तहोकर मोको नीतिशास्त्रके उप
देशदेतेहे उक्तकेकहेकाया पथ्यजोहे शुक्रनीतिके मार्गको
मेसदा सर्वज्ञता अभिमानको त्यागकर श्रवणकी इच्छाको क
रताहूं॥ ३६

धर्मात्मानं जितं क्रोधं नियतं संयतेंद्रियम्
समासिंचंति शास्त्रारः क्षौद्रं मधिव माक्षिकाः ३६

सो ब्राह्मण लोकमोकों धर्मात्मा जितक्रोध नियमसंपन्न जि
तमतज्ञानका शासनकरे नीतिज्ञान संपन्नकरतेहे जैसे
मधुसंग्रहकरणेहारी मक्षिका समूह मधुपात्रको मधुसं
ग्रह संपन्नकरदेतेहे ३६

सोहं वागग्र विद्यानां रसाना मवलेहिताः
स्वजात्या निधि तिष्टासि नक्षत्राणीव चंद्रमाः ३७

सो मे जिनके मुखाग्रमो विद्याहे मलकविषे नहीहे ऐसे
ब्राह्मणोके वचनके नीतिशास्त्रके रसको अवलेहन क
रताऊं ताते अपने जातीके अक्षरलोकोको पालनेसे अ
धिपतीभयाऊं जैसे नक्षत्रोंका चंद्रमाबनाहे ३७

पतत्पृथिव्या मम्हत मेतच्चक्षु रनुत्तमम्
यद्ब्राह्मण मुखेकाव्य मेतच्छ्रुत्वा प्रवर्त्तते ३८

यह देवता नीतिशास्त्र संपन्न ब्राह्मणोकावचन पृथिवी
लोकविषे अमृतहे और अंतःकरणकी ज्ञानवृत्ति प्रका
शका नेत्रहे ऐसे शुक्रनीतिके शास्त्रको श्रवणकर्के प्र
वृत्तहोताहे ३८

पतावदुक्त्वा वचनं प्रह्लादो बलवादिनं
शुश्रूषत स्तेनतदो दैत्येंद्रो वाक्यमब्रवीत् ३९

एतावन्मात्रकल्याणरूपहे इसप्रकार ब्रह्मवादी ब्राह्मणको प्रह्लादकहताभया वहोउब्राह्मणने शुश्रूषाकरकें प्रसन्नकिया तव दैत्येंद्रब्राह्मणको वचनकहताभया ४९

यथावदुरुवृत्त्याते प्रीतोस्मि द्विजसत्तम
वरंवृणीष्व भद्रंते प्रदातास्मि नसंशयः ५०

हे द्विजसत्तम तेंने मोको गुरुवृत्तिकरकें शुश्रूषासे मोको प्रसन्नकियाहे तोको कल्याणहोवे वरको याचनकर मे तोको वरदेताहूं इसविषे संशयमतकरे ५०

कृतमित्येव दैत्येंद्र मुवाच सच वै द्विजः
प्रह्लादस्तु भवेत्प्रीतो गृह्यतां वर इत्यत ५१

हे दैत्येंद्र शुश्रूषाकरकें आपप्रसन्नभयेहो मोको यही कृतकृत्यतारूपी वरदानकरदियाहे ऐसा जब विप्रनेकहा तब प्रह्लाद अतिप्रसन्नहोकर वचनकहताभया मोसे तुमवरको ग्रहण अवश्यकरो ५१

ब्राह्मणउवाच यदिराजन्प्रसन्नस्त्वं ममचेदिच्छ
सि प्रियं भवतः शीलमिच्छामि प्राप्तमेषवरोमम ५२

ब्राह्मणउवाच हे राजन् जो तुममोपर प्रसन्नभयेहो मेरा प्रियकियाचाहतेहो तो मे आपके धर्मवृत्तिके शीलको प्राप्तभयेको चाहताहूं यही मोको वरप्राप्तिकी इच्छाहे ५२

ततः प्रीतस्तु दैत्येंद्रो भयमस्या भवन्महत्
वरेप्रदिष्टे विप्रेण नाल्पतेजाय मित्युत ५३

हे दुर्योधन तब दैत्येंद्र प्रह्लादप्रसन्नमनहोकर मनविषेविचारकरताभया शीलके प्रदानसे मोको भयहोवेगा मेरेवरप्रदानविषे यह अल्पतेजवालानहीहोवेगा महातेजस्वीहोवेगा तोभी अपनेवाक्यको सत्यकर्तव्यहे ५३

एवमस्त्विति तंप्राह प्रह्लादोविस्मितस्तदा
उपाकृत्य तु विप्राय वरंदुःखान्वितोभवत् ५४

एवमस्तु ऐसे विप्रको कहकर प्रह्लादविस्मितहोताभया वरको देकर विप्रको उपकारकरकें पश्चात् चिंता दुःखयुक्तहोताभया ५४

दत्तेवरे गते विप्रे चिंतासी न्महती तदा ॥
प्रह्लादस्य महाराज निश्चयं नवजग्मिवान् ४५
प्रह्लादने वरदिया विप्रवर लेकर जबगया तवप्रह्लादको
महाचिंता होती भई उसको चिंता निवृत्तिका निश्चय न
ही होताभया ॥ ४५
तस्य चिंतयेत स्तावच्छायाभूतं महाद्युतिः
तेजो विग्रहवत्जात शरीरमजहत्तदा ४६
हे पुत्र इसप्रकारचिंता युक्तप्रह्लादके शरीरसे छायारूपी
महाप्रकाशवाला शरीरधारी तेजोमयपुरुष प्रह्लादके शरी
रको त्यागकर जाताभया ४६
तमपृच्छ न्महाकाय प्रह्लादः कोभवानिति
प्रत्याह तंच शीलोस्मि त्यक्तोगच्छाम्यहं त्वया
ऐसे तेजोमय शरीरवालेपुरुषको प्रह्लादप्रश्नकरताभया मे ते
तूकौनहै कहांजाताहै उसको सो पुरुष कहताभया मे ते
राशीलहों तेने मोको वरप्रदानसे त्यागकियाहै तातेमें अ
बजाताहूं ४७
तस्मिन्द्विजोत्तमे राजन्वत्स्याम्यह मनुत्तमं
योसौ शिष्यत्व मागम्य त्वयिनित्य समाहितः
हे राजन् मे अब उसविप्रविषेजाइ वासकरताहूं सो विप्रअ
ब निंदादोषरहितभयाहै जौनसो शिष्यहोकरतेरे समीप
विषे सदास्थितभयाहै ४८
इत्युक्त्वांतर्हितं तद्वै शक्रं चान्वाविशत्प्रभो
तस्मिंस्तेजसियातेत ताद्रूपस्ततोपरः ४९
ऐसा कहकर सो तेजोमय पुरुष अंतर्धानहोकर इंद्रको
प्रवेशकरताभया उसकेगये पश्चात् तादृशस्वरूपवाला
और तेजोमयपुरुष प्रगटहोताभया ४९
शरीरान्निसृत स्तस्य कोभवानिति चाब्रवीत्
धर्मं प्रह्लाद मांविद्धि यत्रासौ द्विजसत्तमः ५०
प्रह्लादके शरीरसे निकसकरचलाहै उसकेभी प्रह्लाद
प्रश्नकेकरताभया तूंकौनहै तब सोभी प्रह्लादकोकहता

श्री. रा. प. टी. १९५

भया तुममोको धर्मरूपजानो जहां से द्विजसत्तम तुमा
रा शिष्यगयाहे ५०

तत्र यास्यामि दैत्येंद्र यतः शीलं ततोह्यहं
ततो परो महाराज प्रज्वलन्निव तेजसा ५१

हे दैत्येंद्र तहां जाताहूं जहांशीलगयाहे तहां मे स्थितहोता
हूं हे महाराज तव एकऔर पुरुष तेजकरके प्रज्वलित
जैसा भयाहे ५१ ॥

शरीरान्निःसृतस्तस्य प्रह्लादस्य महात्मनः
को भवानिति पृष्टश्च तमाह स महाद्युतिः ५२

प्रह्लादके शरीरसे निकसकरचलाहे उसकोभी प्रह्लादने
पृछाकीनी तूं कौनहे तवसोभीवचनकहताभया ५२

सत्यं विद्धि हि दैत्येंद्राद्य प्रयास्ये धर्ममन्वहम्
तस्मिन्ननुगते धर्मे महात्मा पुरुषो परः ५३

हे राजेंद्र मोको तुमसत्यजानो जहांधर्मगया उसकेपीछे
मेभीजाताहूं जब सत्यधर्मशरीरसे निकसकरगया तब
एकऔर तेजोमयरूप पुरुषप्रह्लादकेशरीरसे निकसक
रचलाहे उसकोभी पृछाकीनी तूं कौनहे तवसोभी क
हताभया ५३

निष्क्रमत ततस्तस्मा त्पृष्टश्चाहं महावलः
वृत्तं प्रह्लाद मां विद्धि यतः सत्यं ततोह्यहं ५४

हे महावल तुममोको अपना धर्मवृत्त आचारजानो जहां
सत्यधर्मगयेहे तहां मैभीजाताहूं ५४

तस्मिन्याते महाशब्दः शरीरात्तस्य निर्ययौ
पृष्टश्चाह बलं विद्धि यतो वृत्तमहं ततः ५५

वृत्तके जानेके समयविषे महाशब्दवाला एकमहावलपुरु
षशरीरसे निकसकरचलाहे उसकोभी प्रह्लादनेपृछाकीनी
तूं कौनहे तवसोभीकहताभया मोको तुम अपना बलरू
पजानो जहां शीलसत्य धर्मवृत्तगयेहे तहां मोकोभी तुम
गयेकोजानो ॥ ५५

इत्युक्त्वा प्रययौ तत्र यतो वृत्तं नराधिप

ततः प्रभामयी देवी शरीरात्तस्य निर्ययौ ५६
ऐसे कहकर हे नराधिप सो बलभी जाताभया जहां इन्द्रग
याहै तब प्रभारूप एकदेवी प्रह्लादके शरीरसे निकसजाती
भई ५६ ॥

तामपृच्छत्स दैत्येंद्रः साश्रीरित्येन मब्रवीत्
उषितास्मि स्वयंवीर त्वयिसत्य पराक्रम
त्वयात्यक्ता गमिष्यामि बलंह्यनुगताह्यहं ५७

उसको सो दैत्येंद्र पूछाकरताभया तबराज्यलक्ष्मी देवी वचनको
कहतीभई हे सत्य पराक्रम महावीर तेरेविषे मैबहुत
कालस्थितभईहो तैनेमोको त्यागकियाहै जहांबलगयाहै
तहांबलके पीछेमैभीजातीहूं ५७

ततो भयं प्रादुरासीत्प्रह्लादस्य महात्मनः
अपृच्छत्स ततो भूयः कयासि कमलालये ५ ८
हे राजन् तब प्रह्लादको महाभय उदेहोताभया तब प्रह्ला ५८
द पूछाकरताभया हे कमलालये श्रीदेवी तूंकहांजातीहै

त्वं हि सत्यव्रता देवी लोकस्य परमेश्वरी
कस्यासौ ब्राह्मणश्रेष्ठ स्तत्व मिच्छामि वेदितुं ५९
हे देवि संपूर्ण लोकका सत्यबलरूपहै सर्वजगतकी
परमेश्वरी रूपतूंहीहै मोको कहो जिसब्राह्मणके पीछे
तुमसभहीचलेहो सो ब्राह्मणकौनहै उसकोमै तत्वहै
पतासे जानाचाहताहूं ५९

श्रीरुवाच सशक्रो ब्रह्मचारीय स्त्वत श्चैवोपशि
क्षितः त्रैलोक्ये ते यदैश्वर्यं तत्तेनापहृतं प्रभो ६०
श्रीरुवाच हे प्रभो जौनसा ब्राह्मण तुमने शिक्षाकी शील
ताको प्राप्तकिया सो ब्रह्मचारी तुमाराशिष्य इंद्रदेवराजे
है जो तुह्मारा त्रैलोक्यका ऐश्वर्यहै सो उसने तुह्मारे
सेशीलदानके बहारसे हरलीनाहै ६०

निर्जिताः त्वयाधर्मज्ञ निर्जिताः
शीलेन हि त्रयोलोका

श्री.
रा.पं.
टी.
१९९

196

तद्विज्ञाय सुरेंद्रेण तवशीलं हृतंप्रभो ९१
हे महाप्रभो धर्मज्ञ तेने शीलकर्कै तीनोलोक जयकीने
है ऐसे जानकर इंद्रने ब्रह्मारसे सेवा शीलकर्कै तुम्हा
राशील हरलीनाहे ९१

धर्मः सत्यं तथा वृत्तं बलं चैव तथाप्यहं
शीलमूला महाप्राज्ञ सदानास्त्यत्र संशयः ९ २
धर्मजोहै सत्यजोहै वृत्तजोहै बलजोहै तैसे मेभी राज्य
संपदा रूपतासे हे महाप्राज्ञ सभही हमशील मूलता
से सदास्थितहोतेहे इसवातविषे संशयकोईनहीहे ९२
भीष्मउवाच एवमुक्ता गतार्थास्तु तेचसर्वे यु
धिष्ठिर दुर्योधनस्तु पितरं भूयएवाब्रवीद्वचः ९ ३
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर राज्यलक्ष्मी जोहै सो ऐसेकहिक
र प्रह्लादसे निकसकर इंद्रको शीलद्वारसे प्राप्तहोतीभई
ऐसा वचन सुनकर दुर्योधनजोहै सो ऐसे कहिकर अपने
पिताको धृतराष्ट्रको वहोउवचनको कहताभया ९३
दुर्योधनउवाच शीलस्य तत्त्वमिच्छामि वेत्तुंकौर
वनंदन प्राप्यते च यथाशीलं तंचोपायं वदस्व मे ९४
हे कौरवनंदन मेभी आपसे शीलकोजानाचाहताहूं सो
शीलजैसे प्राप्तहोताहै उसउपायको आपमोकोकहो ९४
धृतराष्ट्रउवाच सोपायंपूर्वमुद्दिष्टं प्रह्लादेन म
हात्मना संक्षेपेणतुशीलस्य शृणुप्राप्तिं नरेश्व
र ९५ ॥ धृतराष्ट्रउवाच हे नरेश्वर इसशीलका उपाय
प्रथम प्रह्लादके वृत्तांतकर्कै पूर्वही कहाहै महात्मा जो
प्रह्लाद उसने विप्ररूपी इंद्रको प्रथमकहाहै अब संक्षे
पकर्कै शीलके उपायको मे कहताहूं उसको तुमभी
मोसे श्रवणकर ९५
अद्रोहः सर्वभूतेषु कर्मणा मनसा गिरा
अनुग्रहश्च दानं च शीलमेतत्प्रशस्यते ९६
सर्वभूतोविषे कर्मकर्कै मनकर्कै वाणीकर्कै अद्रोहकरा

णा द्रोहनहीकरणा और सर्वभूतोंविषे अनुग्रहकरणा और
दानकरणा यही उपाय शीलकाउपाय सभही उत्तमजनो
ने प्रशंसाकर्के मानाहै ६६

यदन्येषां हितं नस्या दात्मनः कर्मपौरुषं
अपत्रपेत वायेन नतत्कुर्यात्कथंचन ६७

जो कर्म अपनेसे इतर और जीवोंको हितकारी नहोवे प
रोपकारनिमित्त अपने पौरुषसे नहीबने और जिसअपने
पौरुषकर्के अपनेको लज्जा निंदाहोवे उसकर्मकोनहीकरे

नतत्कर्म तथा कुर्या येन श्लाघेत संसदि
शीलं समासे नैतत्ते कथितं कुरुसत्तम ६८

ऐसे कर्मजो कर्महै उसको नहीकरे जिसकर्मकर्के सभा
विषे अपनी महिमासे भ्रष्टहोजावे यह तोको मैने शील
संक्षेपसे कहाहै हे कुरुसत्तम इसको तूं यथाविधि आ
चरणाकर ६८

यद्यप्य शीला न्रपते प्राप्नुवंति श्रियं क्वचित्
नभुंजते चिरं तात समूलाश्च नसंतिते ६९

हे न्रपते अशीलपुरुष यद्यपि संपदाको कदाचित् प्राप्तहो
तेहै तोभी हेतात चिरकालसंपदाको नहीभोगते अपने
वंशके मूलसंयुक्त महास्थानसे पतितहोजातेहै ६९

धृतराष्ट्रउवाच एतद्विदित्वा तत्वेन शीलवान्भ
व पुत्रक यदीच्छसि श्रियं तात सविशिष्टां युधि
ष्ठिरात् ७०॥ धृतराष्ट्रउवाच हे पुत्र ऐसेजानकर तूंभी
सदाशीलवानहो जो तूं अखंड संपदाको वांछाकरता
है तो शीलकर्के युधिष्ठिरसेभी अधिकसंपदाकोप्राप्तहो
वेगा ७०

भीष्मउवाच

एतत्कथितवान्पुत्रे धृतराष्ट्रो नराधिपः
एतत्कुरुष्व कौंतेय ततः प्राप्स्यसि तत्फलं ७१

इति श्री राजधर्मे शीलवर्णनंनामसर्गः॥

भीष्मउवाच हेराजन् धृतराष्ट्रराजा अपने पुत्रकोदुर्योधन
को इसप्रकारशीलके उपदेशको कहताभया ताते हे ८

श्री॰ राध॰ टी॰ १२०

297

कौंतेय तूभी इसप्रकारके शीलधर्मकोकर तबउत्तमया
ज्ञफलको प्राप्तहोवेगा ७१ इतिश्रीभाषार्थराजधर्मे शी-
लवर्णनेएकोनाशत्ततमोऽध्यायः १२४

युधिष्ठिरउवाच शीलंप्रधानं पुरुषे कथितं ते
पितामह कथंत्वाशा समुत्पन्ना याचाशा तद्वदस्व
मे १ ॥ युधिष्ठिरउवाच हेपितामहजी शीलप्रधानपुरु
षको उत्पन्नहोतीहै पुरुषको तुमने फलकहाहै सोफल
की अविनाशी कैसेहोतीहै इसको आपकहो १

संशयोमे महानेष समुत्पन्नः पितामह
छेत्ताच तस्य नान्योस्ति त्वत्तः परपुरंजय २

यह मोको महासंशयभयाहै इसको छेदनेकरणेहारा
तुमसे विना और नहीहै ताते तुमही इस संशयकोछेद
नकरो २ ॥

पितामहाशा महती ममासीद्धि सुयोधने
प्राप्ते युद्धे तु यद्युक्तं तत्कर्तायमिति प्रभो ३

हे पितामहजी मोको वनवासकालविषे राज्यके अर्थदा
ननिमित्त दुर्योधनविषे बहोतबनीरही युद्धविनाही रा-
ज्यको अर्द्धाको दुर्योधनदेवेगा जब युद्ध समयहोवेगा
तब अवश्यराज्यको अर्द्ध हमको देवेगा ३

सर्वस्याशाऽसुमहती पुरुषस्योपजायते ॥
तस्यां विहन्यमानायां दुःखंमृत्युर्नसंशयः ४

हे महाप्रभो ऐसी आशासंपूर्ण जीवजातीको पुरुषको
होतीहै सो आशाजनफलप्राप्तिविना भंगको प्राप्तहो
तीहै तो दुःखजो होताहै सो मृत्युके समानहोताहै इस
मे संशयनहीहै ४

सोहं हताशो दुर्बुद्धिः कृतस्तेन दुरात्मना
धार्तराष्ट्रेण राजेंद्र पश्यमन्दात्मता मम ५

सो मे हतआशावालाभया इस धृतराष्ट्रके पुत्रे दुर्बुद्धि कि
याऐसे दुरात्मा दुर्योधनने फलनाशरूपी दुष्टकर्मकार
कें युक्तकिया ५

आशां महत्तरां मन्ये पर्वतादपि सद्रुमात्
आकाशादपि वा राजन्नप्रमेयैव वा पुनः ४
इस आशाकोमे वृक्षलता युक्तपर्वतसेभी भारीजानताहूं
आकाशसेभी अप्रमेयविस्तार संयुक्त महादीर्घजानताहूं ४
एषा चैव कुरुश्रेष्ठ दुर्विचिंत्या सुदुर्लभा
दुर्लभत्वाच्च पश्यामि किमन्यद्दुर्लभं ततः ७
हे कुरुश्रेष्ठ यह आशामहादुर्विचिंत्यहै दुर्लभहै इसके
फलकी दुर्लभतासे और परे क्यादुर्लभपदार्थहै ७
भीष्मउवाच अत्रते वर्तयिष्यामि युधिष्ठिर निबो
धतत् इतिहासं सुमित्रस्य निर्वेदं ऋषभस्य च ८
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर इहां एकतोका इतिहासवर्णन
करतेहै उसको तुम विचारकरो सुमित्रराजाका ऋषभआ
स्त्रणकाहूवातेतभयाहै उसकोकहतेहै ८
सुमित्रो नामराजर्षि हैहयो मृगयांगतः
ससार स मृगं विद्धा बाणेनानत पर्वणा ९
सो मृगराजाने जब बाणकर्के वेधा तो बाणको लेकर अ
मितवेगकर्के चलाजाताभया राजाभी उसकेपीछे रथ
के अतिबलवेगके त्वरंत मृगयूथके स्वामीके प्रतिष्ठासे
जाताभया॥ सुमित्रनामवाला राजाहै हयदेशकाभयाहै
सो मृगया करणेको वनको जाताभया सेवनविषे बाणक
र्के मृगको वंधकरके वनविषे मृगके पीछे विचरताभया ९
स मृगबाणमादाय ययावमित विक्रमः
सचराजा बलात्तूर्णं ससार मृगयूथप १०
ततो निम्नस्थलं चैव स मृगेंद्र वदाद्रुगः
मुहूर्त मिव राजेंद्र समेनस ययागतम् ११
तबतहां एक सीमास्थान प्राप्तभया मृगउसस्थानको
जाताभया मुहूर्तमात्रसेही राजाभी उसकी समानगती
कर्के धनुषको खड्गकोवेगसे जाताभया ११
ततः सराजा तारुण्या दौरसेन बलेनच

श्री.
रा.य.
टी.
१५८

198

ससारबाणासनधृक् सखड्गो सतनुत्रवान् १२
तदनंतर राजा अपने यौवन बलकर्के और अपने हृद
यके बलकर्के धनुषको खड्गको कवचको धारणकर्के
मृगके पीछेही वेगसे धावताभया १२
ततो नदीर्नदीश्चैव पल्वलानि वनानि च
अतिक्रम्याभ्यतिक्रम्य ससारैको वनेचरः १३
उसके अनंतर मृगके पीछे राजा नदीकोनदीयोंको अ
नेक तडाग सरादि जलाशयोंको लंघकर्के एकलाही व
नचारी होकर विचरताभया १३
स तु कामान्मृगो राजन् आसाद्यासाद्य तं नृपं
पुनरभ्येति जवनो जवेन महता ततः १४
हे राजन् सो मृगभी राजाके समीपहोकर वारंवारवेगसे
पलायनकरके राजाके समीपको आजाताहै १४
स तस्य बाणैः बहुभिः समभ्यस्तो वनेचरः
प्रक्रीडन्निव राजेंद्र पुनरभ्येति चांतिकं १५
हे राजन् सो मृगराजाके बहोत बाणकर्के वेधा
है ऐसा वनचारी स्वभावसे खेलता जैसा राजाके
समीपको बहोडभी आजाताहै १५
पुनश्च जवमास्थाय जवनो मृगयूथपः
अतीत्यातीत्य राजेंद्र पुनरभ्येति चांतिकं १६
बहोडभी वेगवाला सो मृगयूथकामुख्य मृगेंद्रवेगक
र्के राजाकों दूरदूर त्यागकर्के बहोडभी समीपप्राप्तहोताहै १६
तस्य मर्मच्छिदं घोरं तीक्ष्णं चामित्रकर्षणः
समादाय शरं श्रेष्ठं कार्मुकेन तथासृजत् १७
तब उसके मर्मको भेदनेहारे तीक्ष्णघोरश्रेष्ठ बाणको
लेकर धनुषके साथ जोडकर छोडताभया १७
ततो गव्यूतिमात्रेण मृगयूथपयूथपः
तस्य बाणपथं त्यक्त्वा तस्थिवान्प्रहसन्निव १८

तदनंतर मृगजोहै सो मृगयूथपतीजोहै तिन्हकाभी यू
थपतिहै देोकोशुभर पलायनकर्के राजाके वाणकोगो
चरताको त्यागकरके बचाइकर हसता जैसा स्थितहोता
भया १८॥
तस्मि न्निपतिते वाणे भूमौ ज्वलित तेजसि
प्रविवेश महारण्यं मृगो राजाप्यथा द्रवत् १९
इति श्रीशांतौ राजधर्मे ऋषभगीतासु शांतोत्त
रपंचविंशः १२५॥
हे राजन् सो वाणराजाका वलितपराक्रमहोगया तबमृ
गजोहै सो महारण्यको प्रवेशकरताभया राजाभी उस
के पीछे धावताभया १९ इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्व
णि राजधर्मे ऋषभगीतासु शांतोत्तरपंचविंशोध्यायः १२५
भीष्मउवाच प्रविश्यतु महारण्यं तापसानाम
थाश्रमं आससाद ततो राजा श्रांतश्चोपविशत्तदा
भीष्मउवाच हेराजा तबवचनविषे प्रवेशकरताभया त
बही तपस्वी जनोके एक आश्रमको प्राप्तहोताभया तहा
राजाथकिकर प्रवेशकरके बेठजाताभया १
तं कार्मुक धरं दृष्ट्वा श्रमार्त्तं क्षुधितं तदा
समेत्य ऋषयस्तस्मिं पूजां चक्रुर्यथा विधि २
उस राजाको धनुषधारीको अतिथके को क्षुधातुरको देख
कर सभही आश्रमके मुनि मिलकर यथाविधिपूजाको
करतेभये २॥
स पूजा ऋषिभिर्दत्तां संप्रगृह्य नराधिपः
अपृच्छ तापसान्सर्वां स्तपसो वृद्धि मुत्तमां ३
सो नराधिप राजा ऋषिजनोने पूजाजोकीनी उसकोपाय
कर संपूर्ण तपस्वी जनोको तपश्चर्य्याकी निर्विघ्नतासि
द्धीकी कुशलताको पूछताभया ३
ते तस्य राज्ञो वचनं संप्रगृह्य तपोधनाः
ऋषयो राजशार्दूलं तमपृच्छ न्प्रयोजनं ४

श्री० रा० प० टी० १५५

129

सो मुनिगणभी राजाके कुशलप्रश्नकों यथाविधिमानकर रा
जयुधिष्ठिरकोकुशलप्रश्नकर आगमनके प्रयोजनपूछतेभये ४

केनभद्र स्वकार्येन संप्राप्तोसि तपोवनम्
पदातिबद्ध निस्त्रिंशो धन्वीवाणी नरेश्वर ५

हे राजन् तोको भद्र कल्याणहोवे कौनस्वकार्यके प्रयोजनार्थ
करकें तूं तपोवनकों आनप्राप्तभयाहै पदातीहै तरवा
रको कमरविषे बांधकर धनुष बाण लेकर इहांआया
है हे नरेश्वरकहो ५

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं कुतः प्राप्तोसि मानद
कस्मिन्कुलेत्वकाजन्स्थ किंनामाचासि ब्रूहितः ६

यहतुह्मारे आगमनको प्रयोजनको हमसुनाचाहतेहैं
हे सभको मानदान करणेहारे कहांसे इहां प्राप्तभयेहो
कौनकुलविषे जन्मधारीहो कौननामकर्के विख्यातहै
अपने समाचारकों कहो ६

ततः स राजा सर्वेभ्यो द्विजेभ्यः पुरुषर्षभ
आचचक्षे यथान्यायं परिचर्यां च भारत ७

हे राजन् युधिष्ठिर पुरुषोंविषे श्रेष्ठ तमसुनो तवसो
राजा ब्राह्मणोंके ताई अपने गोत्रनामपरिचर्याको यथा
विधिकहताभया ७ ॥

हैहयानां कुलेजातः सुमित्रो मित्रनंदनः
चरामि मृगयूथानि निघ्नन्बाणैः सहस्रशः ८

हैहय राजानके कुलविषे मेराजन्महै सुमित्रनामकर
कें प्रसिद्ध मैंहो मित्रोंका आनंदकारीहो इसवनविषे
बाणोंके सहस्रोंकर्के मृगयूथकों मारणेको मृगया
रतहोकर विचरताहूं ८

बलेन महता गुप्तः सामात्यः सावरोधनः
मृगस्तु विद्धोबाणेन मयासरति शल्यवान् ९

महासेना वालेकर्के गुप्तभयाहो अमात्य सहाय संयुक्त
भयाहूं अंतःपुरके लोकभी मेरे साथहै मेने बाणकर्के

एकवंधाहै सो बाणकोभी साथलेकर वनविषे विचरताहै ५
तेइवन्न मत्तुप्राप्तो वनमेतयदृच्छया ॥
भवत्सकाशं नष्टश्री र्हताशः श्रमकर्षितः १०
सोम्टगवेगसे दोउताहै उसके पीछे मे इसवनको आइप्राप्त
भयाहूं दैवयोगसे तुह्मारे समीप प्राप्तभयाहूं संपदानष्टभ
ईहै आशाभीहतभईहै अतिश्रमकरके आतुरभयाहूं १०
किंत्व दुःखमतोन्यद्धै यदयं श्रमकर्षितः
भवता माश्रमं प्राप्तो हताशो भ्रष्टलक्षणः ११
अब मे और क्या करूं जो मोको दुःखप्राप्तभयाहै जैसे मेश्रम
को प्राप्तभयाहूं मेरी मृगवधकी आशाहतभईहै सभही
लक्षण मेरे भ्रष्टभईहै ११
नराज्य लक्षण त्यागो नपुरस्य तपोधनाः
दुःखं करोति तत्तीव्रं यथाशा विहता मम १२
दुःखंकरोति तत्तीव्रं तेभी राजलक्षणोका त्यागमोको दुखनही करताहै
पुरनगर त्यागनही दुखकरता जैसा दुखमोको आ
शाके विघातकाभयाहै १२
हिमवान्वा महाशैलः समुद्रो वा महोदधिः
महत्वान्नाउ पयेतां नभसोवांतरं तथा १३
हेतपोधना हिमालयपर्वत महाअपार विस्तारवालाहै
समुद्र उससेभी महाअपार विस्तार उस्के विस्तारसेभी
आकाशकाविस्तार अपारहै अप्रमेयहै इन्होका विस्तार
आशाके विस्तारका एकअंशमात्रहै १३॥
आशाया स्तपसि श्रेष्ठा तथानांत समंगताः
भवतां विदितं सर्वं सर्वज्ञाहि तपोधनाः १४
हे तपोधनजी जैसे हिमालयके समुद्रके आकाशके अं
तको पुरुषप्राप्तनहीहोता तैसे आशाके अंतको पुरुषप्रा
प्तनहीहोता मे प्राप्तनहीभया तमको यह संपूर्णविदित
है तपोधन मुनीजन सर्वज्ञहोतेहै १४
भवन्तः समहाभागाः तस्मात्पृच्छामि संशयं
आशावान्पुरुषोयःस्या दंतरिक्त मथा पिवा १५

आप ऋषिलोक महाभागहो मे आपको अपने संशयको
पूछताहूं आशावान् पुरुषकी आशामहाविस्तारहे और
आकाशभी महाविस्तारहे १५

किंस्विदायततरं लोके महत्त्वात्प्रतिभाति वः
एतदिच्छामि तत्त्वेन श्रोतुं किमिह दुर्लभम् १६
इन्हो विषे महाविस्तारवान् कौन अधिकभासताहे हे द्विज
सत्तम आपसे मे यहजानचाहताहूं आपकेविचारनिश्चय
विषे क्या दुर्लभहे कछुदुर्लभ आपकोनहीहे १६

यदि गुह्यं तपो नित्यं तदा प्रब्रूत माचिरम्
न गुह्यं श्रोतुमिच्छामि शुश्रूषा द्विजसत्तमाः १७
जो यह बातकानिश्चय आपको गुह्यनही तोकहो विरम
तकरो जो तुह्मारेका गुह्यहे तोमेनहीसुनाचाहताहूं १७

भवत्तपो विघातो वा यदि स्याद्विरमे ततः
यदि वास्ति कथायोगो योयं प्रश्नो मयेरितः १८
जो मेरे करके आपके तपविषे विघ्नहोवेतोमेभी तुह्मी हो
कर विश्रामकरताहूं जो यह प्रश्नमेने कियासोकथायो
ग्यहे तो कृपासे कहो १८

एतत्कारणसामर्थ्यं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः
भवंतोपि तपोनित्या ब्रूयुरेतत्समन्विताः १९
इति राजधर्मे ऋषभगीता अध्यायः १२५
एतावत कारणसामर्थ्यको मे तत्त्वनिश्चयसे श्रवणकरा
चाहताहूं आपभी सभतपो योगनिष्ठाविषे सदापरायण
हो इससेमेरे प्रश्नको सावधानतासेकहो १९ इति भाषायां
राजधर्मे ऋषभगीतासु शततेनवपंचविंशोध्यायः ॥ १२५

भीष्म उवाच ततस्तेषां समस्तानामृषीणामृषि
सत्तमः ऋषभो नाम विप्रर्षिः विस्मयन्निदमब्रवीत् १
भीष्मउवाच हे राजन् तबजेते समस्तऋषिसत्तमहे तिन्हो
विषे ऋषिसत्तमजोहे ऋषभनामक विप्रऋषि सो सभको
विस्मयको प्राप्तकरताजैसे ब्रह्मवचनको कहताभया १

पुराहं राजशार्दूल तीर्थान्यनुचरन्प्रभो

ममासादितवान्दिव्यं नरनारायणाश्रमं २

हे राजशार्दूल इस कालके समयविषे मेभी तीर्थयात्राको करताभया नरनारायणऋषीजोहै तिन्हके दिव्यआश्रमको प्राप्तहोताभया २ ॥

तत्र सा बदरी रम्या ह्रदो वै हायसस्तथा ॥
यत्र चाश्वशिरा राजन् वेदान् पठति शाश्वतान्

जहां सो रमणीक दिव्य बदरीवनहै और आकाशगंगाके जलाशयका तीर्थराजहै जहां हयग्रीवभगवान् शाश्वतसनातन वेदाध्ययनको पाठको करतेहै ३

तस्मिं सरसि कृत्वाहं विधिवत्तर्पणं पुरा
पितृणां देवतानां च ततोश्रममियां तदा ४

हे राजशार्दूल उसजलाशयके सरविषे स्नानसंध्याकरके विधिवत् तर्पणको प्रथमकरताभया पितरोंको देवतागणोंको उद्देश विधिसे तर्पणकरके आश्रमको प्राप्तहोताभया ४ ॥

रेमाते यत्र तौ नित्यं नरनारायणावृषी
अदूरादाश्रमं किंचिद्वासार्थमगमं तदा ५

जहां नरनारायण दोनो महाऋषी नित्यप्रति तपायोग करके रममाणभयेहै तहां किंचित्काल वासकरणेके अर्थको जाताभया ५

तत्र चीराजिनधरं कृशमुग्रमतीव च
अद्राक्षमृषिमायांतं नरं नाम तपोधनं ६

तहां चीरवस्त्र मृगानवस्त्रको धारणेहारे अति अधिक कृशशरीरभये नरनामवाले तपोधनको आवतेको मे देषताभया ६ ॥

अन्यैर्नरैर्महावीरो वपुषा स्पष्टगुणान्वितम्
कृशता चापि राजर्षे न दृष्टा तादृशी क्वचित् ७

अन्यनरोंसे महावीर पुरुषोंसे वपुषा स्पष्टगुणान्वितम् इह ... ऋषि और भी नरदूजी तपोधनो केसाहै नरनामवाला ऋषि और भी नरदूजी तपोधनो केसाहै ... योगके जोहे तिन्हकरके संयुक्त करके युक्तहै और अष्टगुण योगके जोहे तिन्हकरके संयुक्तहै हे राजन् ऋषी जैसी कृशता नरनामवाले ऋषी कीहै हे राजन् ऋषी जैसी कृशता नरनामवाले ऋषी की देषीहै ऐसी कृशता मेने और कहीं नहीं देषीनीहै ७

शरीर मपि राजेंद्र तस्यका निष्टिका समम्
ग्रीवावाहू तथा पादौ कोशाचाद्भुत दर्शनाः ८
हे राजेंद्र शरीरभी उसका कृशताकी तपोनिष्टा समान
है ग्रीवा उसकी और वाहूलता और कोशभी अद्भुत क
ल्पनाकी स्थितवालेहै ८
दृष्टाहं तं कृशं विप्रं भीतः परम दुर्मनाः ९
पादौ तस्याभि विद्याथ स्थितः प्रांजलि रग्रतः
हे राजसत्तम ऐसे अद्भुतदर्शनवाले मुनिको अतिकृश
देषकर उससे भयभीतभया परमदुखी मनभया उस
मुनिके चरणोंको प्रणामकर्कें प्रांजलीहोकर उसके अ
ग्रदेशविषेही स्थितहोताभया ९
शिरः कायानुरूपं च कर्णौ नेत्रे तथैव च
तस्य वाक्चैव चेष्टा च सामान्य राजसत्तम १०
शिर उसका। शरीरचेष्टाके समानहै कर्णभी नेत्रभी त
दाकारहीहै उसकी वाणी और चेष्टाभी तपोनिष्टासमा
न अद्भुत दर्शनवालेहै १०
निवेद्य नाम गोत्रं च पितरं च नरर्षभ
प्रदिष्टे चासने तेन शनै रह मुपाविशं ११
उसको मे अपने नामको गोत्रको निवेदनकर्कें भी पिता
केभी नामसंवंधको कहकर्कें जो उसने मोको आसनदिया
याहै उसविषे मेभयभीतहोकर तूष्णीही वैठताभया ११
ततः स कथयामास कथां धर्मार्थ संहितां
ऋषिमध्ये महाराज तत्नुधर्मभृतां वर १२
हे राजन् तदनंतर सो तत्नुनामवाला मुनिजोहै सो ऋषी
सभाके मध्यमों धर्मार्थसहिताकी पुरातनकथा जोहै अप
नी इछासे कहता भया कैसाहै तत्नुनामवाला मुनि धर्मवा
ला जनोविषे परमश्रेष्टहै १२
तस्मिंस्तु कथयत्येव राजा राजीव लोचनः
उपायाद्भवनै रश्वैः सवलः सावरोधनः १३
हे राजन् सुमित्र तत्नुनामवालामुनि जव ऐसेप्रकारसे क

था प्रसंगको कहताहै उसकालकमलदल समाननेत्र जि
सकेहै ऐसा राजा तहांसेन कुटुंब सहित आवताभया १३

स्मरन्पुत्र मरण्ये वै नष्ट परम दुर्मनाः
भूरिद्युम्नपिता श्रीमान्वीरद्युम्नो महायशाः १४

उसराजाका पुत्र वनविषे नष्टगयाहै उसको सो राजा स्मर
णकरताहै परमदुःखी मनभयाहै भूरिद्युम्नका पिताही
वीरद्युम्न उसकानामहै महायशाकर्कै विख्यातहै १४

इह दृष्ट मितं पुत्रं द्रक्ष्यामीहीति पार्थिवः
एवमाशाधृतो राजा चरन्वनमिदं पुरा १५

उसको प्रणामपूजाकरताभया उसको
तनुनामवाले मुनिको राजा
यह आशानही मे अपने पुत्रको देषाचाहताऊं इसवनवि
षे पुत्रको देषोंगा ऐसी आशाके वशराजाभयाहै वनविषे
विचरताभया १५

दुर्लभः समया दृष्टुं नूनं परम धार्मिकः
एकपुत्रो महारण्य नष्टश्चस कन्तदा १६

परमधार्मिक मेरापुत्रहै मे
हे पुत्र मीने देषनेको दुर्लभहै ऐसे वचनको
रा एकपुत्र सो रहा वनविषे नष्टहोगयाहै
वारंवारकहताभया १६

दुर्लभः समयाद्रष्टु माशाच महती मम
तथा परीत गात्रोहं मुमूर्षु र्नात्र संशयः १७

बहोउभी ऐसे वचनको कहताभया मोको पुत्रको देषना
परमदुर्लभभयाहै आशामोको अतिबडीहै पुत्रकी आ
शाकर्कै मे पीडित शरीरभयाहै पुत्रके दर्शनविषा मरण
को प्राप्तहोताऊं इसबातमो संशयनहीहै १७

एतच्छ्रुत्वा स भगवां स्तनुर्मुनि वरोत्तमः
एतच्छ्रुत्वा स भगवान् ध्यानपरो मुहूर्त मिवतस्थिवान् १८
अर्वाक्शिरा ध्यानपरो मुहूर्त मिवतस्थिवान्

नामवालामुनि
हे राजन् सुमित्र ऐसे वचनको सुनकर मुहूर्त भरकाल ध्यान
भगवान् जोहै सोनीमा शिरकर्कै
परायण स्थितजैसा होताभया १८

तमनुध्यांत मालक्ष्य राजा परम दुर्मनाः

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
२०२

उवाचवाक्यं दीनात्मा मंदं मंद मिवासकृत्
तनुनामवाले मुनिको ध्यानकरलेको देषकर राजा परम
दुखीहोताभया मंदमंदजैसे वाक्यको दीनमनहोकर मुनि
को एकवार वचनको कहताभया १९

202

दुर्लभं किंनु देवर्षि आशायेश्चैव किं महत्
ब्रवीतु भगवानेतद्यदि गुह्यं नते मयि २०
हे देवऋषीजी आशाको क्यापरमदुर्लभहे इसवातको भ
गवान् आपकहो जो तुमको मेरेको वचनकहना गुह्यन
ही होवे तो कहो २०

मुनिरुवाच महर्षि भगवांस्तेन पूर्वमासीद्विमा
नितः बालिशां बुद्धि मास्थाय मंदभाग्य तयात्मनः
मुनिरुवाच हे राजन् तेरापुत्र उसने अपनी मंदभाग्यताक
र्के मूढबुद्धिको आश्रयकर्के एक महाऋषि अनादरको
प्राप्तकियाहै २१

अर्थयन् कलशं राजन् कांचनं वल्कलानि च
अवज्ञा पूर्वकेनापि नसंपादितवांस्ततः २२
हे राजन् सो महाऋषि तेरे पुत्रसे कलशयाचना करता
भया कांचनको और भूर्जादि वस्त्रोंको याचनकरताभया
उसको तेरापुत्र अवज्ञापूर्वकर्के कलशवस्त्रादिक नही
प्राप्तकरदिया २२

निर्विण्णः सततु राजर्षि निराशः समपद्यत
एवमुक्तोभिवाद्याथ तमृषिं लोकपूजितम् २३
हे सुमित्र राजन् तनुनामवाले मुनीको ऐसे वचनको सु
नकर वीरद्युम्नराजा दुःखितहोताभया निराशहोताभ
या बहोड सो राजा ऐसा मुनिने जबकहा तब उसको
प्रणामकरके लोकपूजित तनुमुनिको पूजाकरताभया २३

श्रान्तो ह्यसीदत् धर्मात्मा यथा त्वं नरसत्तम
अर्घ्यं ततः समानीय पाद्यं चैव महानृषिः २४
दुःखीहोकर तहां स्थित होताभया हे सुमित्र जैसे तूं भृग
की आशाकर्के दुःखीभयाहै तब तनुनामवाला महाऋ २४
षिभी राजाको अर्घ्यपाद्यको पूजाकरणेके लेआवताभया

आरण्ये नैव विधिना राज्ञे सर्वं न्यवेदयेत्
ततस्ते मुनयः सर्वे परिवार्य नरर्षभम्
उपाविशन्नरव्याघ्र सप्तर्षय इवध्रुवम् २५
वनवासकी पूजाविधिकर्के राजाको संपूर्णपूजाको अर्पण
करताभया तदनंतर सभही ऋषी नरोत्तम जो राजा
उसको आप चारोतरफ देषकर राजाको मध्यविषे करके
तेहे उसके चारोतरफ बेठकर स्थितहोतेभये जैसे सप्त
ऋषि ध्रुवको चारोतरफ स्थितहोकर मध्यविषे करलेते
हे सोजो राजाहे वीरद्युम्न उसको वचन कहतेभये २५
अपृच्छंश्चैवतं तत्र राजानमपराजितम्
प्रयोजनमिदं सर्वमाश्रमस्य निवेशने २८
इति श्री राजधर्मे ऋषभगीतासु समविंशः २७
बहोड वीरद्युम्न राजाको सभही मुनि पूछतेभये हे राजन
तेरा इस आश्रमविषे प्रवेशकरणेका यही प्रयोजनहे
औरभी तेरा प्रयोजनहे २८ इति श्री भारते भाषार्थ शां
तिपर्वणि राजधर्मे ऋषभगीता सु तोत्तरसप्तविंशः १२७
राजोवाच वीरद्युम्न इतिख्यातो राजाहं दिक्षु विश्रु
तः भूरिद्युम्नं सुतं नष्टं अन्वेष्टं वनमागतः १
राजोवाच हे विप्रश्रेष्ठ हे अनघ मेरा एकपुत्रहे सो बालक
हीहे इसवनविषे दृष्टमोको नहीहोताहे उसको देखने
वास्ते मे वनविषे विचरताहूं १
एकः पुत्रः स विप्राग्र्य बाल एव च मे नच
न दृश्यते वने चास्मिंस्तमन्वेष्टं चराम्यहं २
ऋषभउवाच इत्येव मुक्ते वचने राज्ञा मुनिरधोमु
खः तूष्णीमेवाभवत्तेन नच प्रत्युक्तवान्नृपम् ३
ऋषभउवाच हे सुमित्र राजन् ऐसा वचन राजा तवतउ
नामक मुनि अधोमुखताकर्के तूष्णीही स्थितहोताभया
राजाको उत्तर नही कहताभया ३
सहितेन पुराविप्रो राज्ञानात्यर्थ मानिजः
आशाकृतश्च राजेंद्र तपोदीर्घं समास्थितः ४

हे सुमित्र राजन् सो तनुनामकविप्र उसराजाने अत्यंतआ
दरकर्के पूर्वनही मानारहा उसकी आशाराजाने खंडि
तकीनीहे तवसे दीर्घतपकरणेकों स्थितभया ४

प्रतिग्रह मह राज्ञां नकरिष्ये कथंचन ॥
अन्येषां चैववर्णाना मितिकृत्वाधियंतदा ५

तव से तनुविप्रने प्रतिज्ञाकीनीहे राजालोकके प्रतिग्रह
को मे अवसेनही करोंगा तैसे और वर्णोकाभी प्रतिग्रह
नहीकरोंगा ऐसी निश्चयके तपश्चर्याविषे स्थितहोता
भया ५॥

आशाहि पुरुषं बाल लघ्यापयति तस्त्विषी
तामहं व्यपनेष्यामि इतिकृत्वा व्यवस्थितः ६
वीरद्युम्नस्ततं भूयः पप्रच्छ मुनिसत्तमम् ६

यह आशाहि मूढमति पुरुषको याचनाकरणेको उदर
वद्धकरतीहे वहोउ आपपुरुषके हृदयविषे स्थितहो
तीहे इस आशाको निवृत्तकरोगा ऐसा निश्चयकर्के वहो
उकरणेको स्थितहोता वीरद्युम्नजो राजाहे सोउसमुनि
सत्तमको वहोउ पूछताभया ७

राजोवाच आशायाः किंकृशत्वंच किंचेहभुविदु
र्लभं ब्रवीतु भगवानेत त्वंहिधर्मार्थदर्शिवान् ८

राजोवाच हे ब्रह्मन् आशाका कृशत्वक्यास्वरूपहे किंतु यह
इसलोकविषे दुर्लभहे इसको आपकहो तुमधर्मार्थदर्शीहो ८

ततः संस्मृत्य तत्सर्वं स्मारयिष्यन्निवाब्रवीत्
राजानं भगवान्विप्र स्ततः कृशतनुस्तदा ८

हे सुमित्र हे राजन् तव सकल वृत्तांतको स्मरनकरके राजा
को स्मरन करावता जैसा सो कृशतनु ब्राह्मण वचनक
हताभया ८॥

ऋषिरुवाच कृशत्वेन समं राजन् नाशायाः विद्यते
ऽपि तस्यावै दुर्लभत्वाच्च प्रार्थिताः पार्थिवाः मया ९

ऋषिरुवाच हे राजन् आशावाले पुरुषके और किसीकी
कृशतानहीहे आशाकी कृशताके दुर्लभतासे मेने वहो
त राजालोक याचनकियाहे ९

राजोवाच कृशात्कृशतमा ब्रह्मन् गृहीतं वचना
त्तव दुर्लभत्वं च तस्यैव वेदवाक्यमिव द्विज ९
राजोवाच हे ब्रह्मन् मे आपके वचन आशाके कृशत्व अरु
शत्वमेने ग्रहणकरेहि जानतनेहै जो पुरुष आशाकर्के जि
तहै सो कृशहै जिसने आशाको जीताहै सो पुरुष सदाउ
श्रमेने जानाहै इसको आशाकी दुर्लभतासे तेरावाक्य मो
को वेदवाक्य जैसाहै ९
संशयस्तु महाप्राज्ञ सञ्जातो हृदये मम
तन्मे सुमहितत्वेन वक्तुमर्हसि पृच्छतः ११
हे महाप्राज्ञ मेरे हृदयविषे महासंशयभयाहै इस संश
यको हे मुने मे पूछताहूं सोको आपतत्व निश्चयकर्के कहो ११
त्वत्तः कृशतरं किंनु ब्रवीतु भगवानिदम्
यदि गुह्यं न ते किंचि द्वियते मुनिसत्तम १२
तुमभी कृशतर तुम्हारेसेभी आशाकालकी कृशकता
अधिकविद्यमानहै हे मुनिसत्तम इसको आपकहो १२
कृश उवाच दुर्लभो ह्यर्थवानास्ति योर्थी धृतिमवा
प्नुयात् सुदुर्लभतरस्तात योर्थिनं नावमन्यते १३
कृशउवाच दुर्लभक्याहै ऐसे प्रथमप्रश्नके उत्तरको क
हतेहै हे राजन् ऐसापुरुष दुर्लभहै अर्थवानही जोनसा
अर्थीधीरताको प्राप्तहोवे हे तात इससेभी सो पुरुषदुर्ल
भहै अर्थीकी ताई अवमाननहीकरे १३
संकृत्य नोपकुरुते परं शक्त्या यथार्हतः
२ यासक्ता सर्वभूतेषु साशा कृशतरी मया १४
तुमसे कृशतर कौनहै इसप्रश्नके उत्तरको कहतेहै
जो पुरुष अपने यथाशक्तिकर्के अर्थीको यथाकामना
से परमसत्कारसे उपकार नहीकरे जोनसे आशा सर्वभू
तोविषे आसक्तभईहै आशामेरे समान कृशाहोतीहै १४
कृतघ्नेषु च या सक्ता नृशंसेष्वलसेषु च ।
अपकारिषु चासक्ता साशा कृशतरी मया १५
जोनसी आशा कृतघ्न पुरुषोविषे आसक्तभईहै सो
आशामेरे समान कृश पुरुषोविषे आसक्तभईहै आल·

सीपुरुषोंविषे आसक्तभईहे सो निष्फलहोतीहे ताते मेरेसमान कृशतरहोतीहे १५

एकः पुत्रः पिता पुत्रे नष्टे वा प्रोषिते पि वा
प्रवृत्तिं यो न जानाति साशा कृशतरी मया १६

हे राजन् जोनसा पुरुषएक पुत्रवाला उसका पुत्र नष्ट होताहे अथवा परदेशविषे प्रेषितहोताहे उसकी वृत्तांत वार्ताको नही जानता उस पिताकी आशा मेरे समान कृशतरहोतीहे १६

प्रसवे चैव नारीणां वृद्धानां पुत्रकारिता
तथा नरेंद्र धनिनां साशा कृशतरी मया १७

जोनसी वृद्धानारीजनोंविषे पुत्रकारिता आशा अतिकृशतरहोतीहे अथवा धनीपुरुषोंको अपने पुरुषार्थ प्रयत्नविषे धनकी आशा अतिकृशहोतीहे सो आशा मेरे जैसी अतिकृशतरहोतीहे १७

प्रदानकांक्षिणीनां च कन्यानां वयसि स्थिते
श्रुत्वा कथा स्तथायुक्ताः साशा कृशतरी मया १८

हे राजन् जोनसी कन्याकुमारीआं जोहे उन्हको वरको अपने पानकी आकांक्षाहोतीहे और यौवनका समयपरिपक्कहो जाताहे और विवाह योग्यकथा अनेकश्रवणकर्के उन्हको विवाहकी आशाजो अतिकृशहोती सो आशामेरे समान कृशतरहोतीहे अतिदीनताकोकरतीहे १८ एतच्छ्रुत्वा ततो राजन् स राजा सावरोधनः
संस्पृश्य पादौ शिरसा निपपात द्विजर्षभे १९

हे राजन् सुमित्र तनु कृशमुनिका ऐसावचन श्रवणकरके वीरद्युम्नराजा अपने कुटुंबसंयुक्त कृशतनुद्विजश्रेष्ठके चरणोंके शिरकरस्पर्शकर्के उसके सन्मुख अपने आपको अपराधीजानकर शरणागतजैसा पड जाताभया १९

राजोवाच प्रसादये त्वां भगवन् पुत्रेणाभिसमागमं
यदेतदुक्तं भवता संप्रति द्विजसत्तम २०

राजोवाच हे भगवन् मे आपको प्रसन्नकिये चाहताऊं।

पुत्रके संगमेकों नहीचाहताऊं जो वचनमोको आपने
अवश्यकहाहे १९

सम्पसेत न संदेहो यदेत ब्याहृतं त्वया
ततः प्रहस्य भगवां स्तनुधर्म भृतांवरः २१

हे द्विजसत्तम सो यहवचन जैसा तुमनेकहा तैसा मैने मान
नीयहे इसविषे संशयनहीहे हे सुमित्र ऐसावचन राजाने
कहा तवधर्मकारी जनोविषे श्रेष्ठ जो तनुकृशाङ्गमुनि सो रा
जा हसकर देषताभया २१

पुत्रमस्यानय त्क्षिप्रं तपसा च श्रुतेनच
समानीय तत्पुत्रं तमुपालभ्य पार्थिवं २२

उसराजाके पुत्रको अपने तपोयोगकर्के राजाको अपने और
शास्त्र मार्गकर्के अपने समीप आवाहनकर्के राजको अव
मानके उपालंभकर्के अपरायस्थापनकर्के पुत्रको मंगाय
देताभया २२ ॥

आत्मानं दर्शयामास धर्मं धर्मभृतांवरः
स दर्शयित्वा चात्मानं दिव्यमद्भुतदर्शनं २२

और अपनेकोभी धर्ममार्गसंयुक्त दिषावताभया सकलधर्म
कर्मधारी जनोविषे श्रेष्ठ दिव्य अद्भुतदर्शन चरित्रकारी दि
षाइकर २२

विपाप्मा विगत क्रोध श्चचार वनमंतिकात्
पत हृष्टं मया राजं स्तथाच वचनं श्रुतम्
पत हृष्टं मया राजं स्तथाच वचनं श्रुतम्
आशामपनयस्वाशु ततः कृशतरी मिमां २३

वनविषे तुरंत
पापवृत्तिरहितभयाहे गतक्रोधभयाहे हे राजन् सुमित्र यहमेने आ
ही तपश्चर्याको करताभया वचनभी श्रवणकि
यहीवृत्तांत देषाहे और कृशतनुमुनिका वचनभी श्रवणकि
याहे अव तंभी अपने शरीरको कृशता करणेहारी आ
शाको परित्यागकर २३ स तथोक्त स्तदा राजन् नृषभेन महा २४
भीष्मउवाच
त्मना सुमित्रोपनयत्क्षिप्र माशां कृशतरी ततः

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर सुमित्र राजाजोहे सो महात्मा ऋ
षभऋषीने ऐसे वचनकहा तव अपने आत्माको कृशक
रणेहारी आशाको तत्काल त्यागकरताभया २४

एवं त्वमपि कौंतेय श्रुत्वावाणी मिमां मम
स्थिरो भव महाराज हिमवानिव पर्वतः २५

हे कौंतेय ताते ऐसी मेरी कही वाणीको श्रवणकर्के आ
पुणको त्यागकर हिमालयपर्वत जैसी शीतलताको
पाइकर दृढस्थितीको अंगीकारकर २५

त्वं हि प्रष्टा च श्रोता च कृच्छ्रेषु अगतोषि ह
श्रुत्वा मम महाराज न संतप्तुमिहार्हसि २६

इति श्री राजधर्मे ऋषभगीतानामोष्टाविंशः १२८

हे राजन् तूही प्रश्नकरताहे श्रोताभीहे केते प्रकारके
घोर संकट प्राप्तहोवे तिन्होविषे मेरे वचनकोकहे श्रवणक
र्के संताप पश्चात्तापकरणेको श्रवणकर्के योग्यनहीहे २६
इति श्री भाषार्थ शांतिपर्वणि राजधर्मे ऋषभगीता शतोत्त
रोष्टाविंशोध्यायः ॥ १२८ ॥

युधिष्ठिरउवाच नामृतस्येव पर्याप्तिः समास्ति ब्रु
वति त्वयि यथा हि स्वात्मतृप्तिस्य तथा तृप्तोस्मि
भारत १॥ युधिष्ठिरउवाच हे भारत पितामहजी मोको
ऐसी अमृतपानकर्के तृप्ति नहीहोती जैसी तृप्ति आपके वच
नैको श्रवणकर्के स्वात्मतृप्तिविषे स्थितहोकर मे स्वतृप्त
भयाहूं ॥ १ ॥

तस्मात्कथय भूयस्त्वं धर्ममेव पितामह
नहि तृप्तिमहं यामि पिबन्धर्मामृतं हितं २

ताते हे पितामह मोको बहोडुभी धर्महीकहो आपके
मुखसे धर्मनिश्चयके अमृतको मे श्रवणकरता तृप्तन
ही होताहूं २ ॥

भीष्मउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरात
नं गौतमस्य च संवादं यमस्य च महात्मनः ३॥
भीष्मउवाच हे राजन् शीलवान आशाजीतनेहारे पुरु
षको जो कर्तव्यहे इसविषे पुरातन इतिहासको उदाह
रणकहतेहे गौतमका यमराजका अन्योन्यसंवाद
भयाहे उसको सुनो ३॥

पारियात्रगिरिं प्राप्य गौतमस्याश्रमो महान्

उवास गौतमो यं च कालं तमपि मे शृणु ४
हे राजन् पारियात्र पर्वतको प्राप्त होकर गौतमजीका आश्र
म रेखा है तहां गौतम जौनसे कालको निवासकरताभया
उसको श्रवणकरो ४
षष्टिं वर्षसहस्राणि सो तप्यद्गौतमस्तपः
तमुग्रतपसा युक्तं भावितं स महामुनिं ५
गौतम तहां षष्टी हजार कालभर तपको करताभया
महाउग्रतपकरणेहारे गौतमको करताभया महा
उग्रतपकरणेहारे गौतमको प्रति उत्तमभावनावाले
को उग्रज्ञानकर ५॥
उपयातो नरव्याघ्र लोकपालो यमस्तदा
तमपश्यत्सुतपसं ऋषिं वै गौतमं तदा ६
हे नरव्याघ्र तहां यमलोकपाल आन प्राप्त होताभया
यमराजाभी सुंदरतपयुक्त गौतममुनिको देखताभया ६
स तं विदित्वा ब्रह्मर्षिं यममागतमोजसा
प्रांजलिः प्रयतो भूत्वा उपतिष्ठत्तपोधनः ७
गौतम महाऋषि अपने तपके प्रभावकरके यमराजाको प्राप्त
भये जानकर पूजाकरके प्रणामकरके जितात्माहोकर प्रांज
लिहोकर तपोधन स्थितहोताभया ७
तं धर्मराजो दृष्ट्वैव सत्कृत्यैव द्विजर्षभम्
न्यमंत्रयत धर्मेण क्रियतां किमिति ब्रुवन् ८
धर्मराजभी महातपस्वी द्विजपुंगव गौतमजो है उसको स
त्कारकरके धर्मशास्त्रके विधानसे पूजाको लेकर कहताभ
या हे गौतम तुमको क्यावर प्रदानदेवे उसको कहो ८
गौतम उवाच मातापितृभ्यामानृण्यं किं कृत्वा सम
वाप्नुयात् कथं च लोकान्प्राप्नोति पुरुषो दुर्लभाञ्छु
चीन् ९ गौतम उवाच हे लोकपाल यह पुरुष मातापि
ताजो है इन्हकी अनृणताको क्या विधानकरके प्राप्त होता है
और दुर्लभलोकोंको पुरुषके
उस उपायविधिको आपकहो
से प्राप्त होता है ९॥
यम उवाच तपः शौचवता नित्यं सत्यधर्मरतेन च
मातापित्रो रहरहः पूजनं कार्यमंजसा १०

श्री॰ रा॰ध॰ टी॰ २०९

२०८

यमउवाच हे गोतम मुनिपुंगव यह पुरुष तपोयुक्तहोकर पुनःपवित्राचारकर्के ओर सत्यधर्मविषे रतहोनेकर्के मातापिताजोहे उनकापूजन श्रद्धाभक्तिकर्के सदादिनदिन प्रतिकर्तव्यहे १०

अश्वमेधेश्च यष्टव्यं वहुभि स्वाप्तदक्षिणैः
तेनलोकान वाप्नोति पुरुषाद्भुतदर्शनात् ११
इतिश्री राजधर्मे शतोत्तर एकोनत्रिंशोध्यायः १२९

मातापिताकी अज्ञाणताकोकहकर अव उत्तमलोककी प्राप्तिके विधानको कहतेहे हे गोतम बहोतदक्षिणा संपन्न अश्वमेधोकर्के यष्टव्यहे यज्ञदानादि विधानसे कर्तव्यहे तव अद्भुतदर्शनवाले लोकोको यह पुरुष प्राप्तहोताहे
इतिश्री राजधर्मेशतोत्तर एकोनविंशोध्यायः १२९ ॥

युधिष्ठिरउवाच मित्रैः प्रहीयमानस्य वहुमित्रस्य कागतिः राज्ञः संक्षीणकोशस्य वलहीनस्य भारत १

युधिष्ठिरउवाच हे भारत जो राजा मित्रोंकर्के रहितहोवे वहोतजिसके अमित्र शत्रुहोवे उसकी क्या गतिहे जिसकाकोशखजाना क्षीणहोगयाहोवे वलहीन सो राजाभयाहे १

दुष्टामात्य सहायस्य स्रुतमंत्रस्य सर्वशः ॥
राज्यात्प्रच्यवमानस्य गतिमग्र्याम पश्यतः २

जिस राजाके अमात्यमंत्री सहायकरणेहारेहे जिसकामंत्रसामर्थ्यभी भ्रष्टभयाहे ताते राज्यसे भ्रष्टहोनेलगाहे अपने उत्तमपदकी प्राप्तिकी नहीजानशक्ताहे ॥२

परचक्राभि यातस्य परराष्ट्राणि मर्द्दतः
विग्रहे वर्तमानस्य दुर्वलस्यवलीयसा ३

ओर जिसको परचक्रागमनकी वाधाभईहे ओर आपदानिवृत्तिनिमित्त परराष्ट्रोको मर्दनकरताहे ओर वलवान् शत्रुके साथ विग्रहकरणेको प्रवृत्तभयाहे ओर आप दुर्वलभयाहे ३ ॥

असंविहित राष्ट्रस्य देशकालाव जानतः ॥
अप्राप्यच भवेत्सांतं भेदोवाप्यति पीडनात् ४
जीवितं त्वर्थहेतर्वा तत्र किं सुकृतं भवेत्

और जिसका राष्ट्रदेश सम्यक् प्रकारसे रक्षितनही भयाहै
अपने राष्ट्रके अतिपीडनसे पराये अमात्यका भेदनहीहो
ता तब सामभेदवी अर्थसाध्यहै अपना जीवनाभी अर्थसा
ध्यहै उसके निमित्त देशकाल बलकोभी सो राजाजानताहै
तब उस राजाने अपने जीवनेवाले अधर्मकर्केभी अर्थग्र
हणाकर्तव्यहै अथवा मरणउसको कल्याणरूपहै उसको
क्या करणोसे श्रेयहोताहै इसप्रकार प्रश्नकरके वत्यमा
ण आपदाधर्मोका सूत्रभूतयहहै अध्यायहै तहांप्रकारसे
आपदा आनप्राप्तहोवे तो अधर्मकर्के प्रजापीडनादिकर्के
कोशवृद्धिकर्तव्यहै आपदाकालको तरके पश्चात् प्रजाको
अनुग्रहकर्के पालनकर्तव्यहै ४
भीष्मउवाच गुह्यं धर्मज्ञमाप्राक्षी रतीव भरतर्षभ
अपृष्टो नोत्सहे वक्तुं धर्म मेतं युधिष्ठिर ५
भीष्मउवाच हे धर्मज्ञ जो अत्यंत गुह्यको तूं मोको मतप्रश्न
करे और ऐसे राजधर्मको मेभी पूछाविना कहनेको इच्छान
ही करता तेने मोको अब अतिगुह्य प्रश्नकियाहै ५
धर्माख्यनीयान्वचना द्बुद्धिस्त्र भरतर्षभ ॥
श्रुत्वोपास्यसदाचारैःसाधुर्भवति सकचित् ६
हे धर्मराजा धर्मअतिसूक्ष्मगतिहै उसकी बुद्धिविचारने अ
तिसूक्ष्महै शास्त्रविचारके वचनको श्रवणकर्के और संतज
नोको उपासनकर्के सदाचारसेवनकर्के कोई विरला
एकसाधुहनवाला कोईसाधुहोताहै ६
कर्मणा बुद्धिपूर्वेण नवत्याढ्यो नवा पुनः
ताहशोय मनुप्रश्नःसंव्यवस्यःस्वया धिया ७
हे राजन् बुद्धिविचार संपन्नकरमकरके कोई सामर्थ्यवाला
पुरुष धनसंपदा संपन्नहोताहै अथवा दैवगतीकरके न
हीभी होताहै इसका यह प्रयोजनहै आपदाकालविषे
धनप्राप्तिवाले प्रजापीडनकर्केभी धनलाभकरलेवे आ
पदाकालको तरकर्के पश्चात् अनुग्रहकर्के प्रजापालन
करे जो वहोउधनको नहीप्राप्तहोवे तो प्रजाको नाश
तो हो गयाहै तो ऐसे प्रश्नका विचार आपही देशकाल
बलविचारसे चिंतनीयहै ७॥

उपायं धर्मबहुलं यात्रार्थं शृणु भारत
नाहमेतादृशं धर्मं बुभूषे धर्मकारणात् ८
हे राजन् राजाको व्यवहारयात्रावास्ते आपदाकालके धर्म
बहोत उपायसंपन्नहे उसको आपश्रवणकरो उसकालवि
षे ऐसे अनादरनही करणा मे ऐसी अधर्मप्रधानउपाय
को नही आदरणकियाचाहताहूं ८
दुःखादान इह ह्येषः स्यात्तु पश्चात्क्षयोपमः
अभिगम्य मतीनांहि सर्वासामेव निश्चयः ९
यह प्रजापीडनरूपउपाय दुःखग्रहणकाकारणहे प्रजापीड
नसे पश्चात् मेराभी क्षयहोवेगा नीतिशास्त्रमे इसका प्रमाण
प्रजापीडनसंतापसे प्रजासंतापाकी अग्निउत्पन्नहोतीहे सो
राजाकी संपदाको प्राणोको बलको कोशखजानेको दग्धक
रकेभी बहोउसंतापशांतिको नहीप्राप्तहोतीहे इसवासते
आपत्कालविषे कोशसंग्रहवास्ते प्रजालोकोंकी सभकी
संमतीके यत्नसेग्रहणयोग्यहे मेरीआपदाकर्के तुम्हाराभी
क्षयहोताहे अपनी रक्षावासते तुममेरासहायसंपदादान
सेकरो पश्चात् तुमारीसंपदातुमको प्राप्तहोवेगी ९
यथा यथा हि पुरुषो नित्यं शास्त्र मवेक्षते
तथा तथा विजानाति विज्ञान मथ रोचते १०
हे राजन् यह पुरुष अभ्यासकैसे जैसे जैसे शास्त्रविचारको
देषताहे तैसे तैसे कर्तव्यताको जानताहे पश्चात् जोकर्तव्य
होताहे उसको करणेको रुचिको करताहे १०
अविज्ञानाद्ययोगो हि योगोभूतिकरः परः
अशंकमानो वचनं मनस्यु विदं शृणु ११
जबकर्तव्यताका विज्ञाननहीभया तो प्राप्तअर्थका उद्यो
गका अभावहोताहे ताते कर्तव्यताका उद्योगही राजालो
कोको संपदाकोकरताहे हे राजन् तंभी शंकाको त्यागक
र दोषकल्पनारहितहोकर्के मेरे कहे इसवचनको श्रवण
कर ११

राज्ञः कोशक्षयादेव जायते बल संक्षयः
कोशं च जनये द्राजा निर्जलेभ्यो यथाजलं १२

राजाको कोशखजानेको क्षयसे बलसेनाका क्षयहोताहै ।
ताते राजसभासे संग्रहकर्के कोशवृद्धिके यतनकरै जैसे नि
र्जलदेशोसे कूपादि प्रयत्नकर्के जलको संग्रहकरतेहै १२
कालं प्राप्यानुगृह्णीयाद् एषधर्मः सनातनः
उपायधर्मं प्राप्येमं पूर्वैराचरितं जनैः १३
आपदाकालविषे सभसे धनलेकर्के कोशका संग्रहकरै
संपदाकालकोपाइकर सभको अनुग्रहकर्के धनसंपदा
कोदेवै ऐसायह धर्मसनातनवनीहै ऐसी उपायधर्मको
प्राप्तहोकर कोशसंग्रहकोकरै कोशसंग्रहका धर्मपूर्वले
राजालोकोनेभी आचरन कियाहै १३
अन्योधर्मः समर्थानां आपत्स्वन्यश्च भारत
प्राक्कोशात् प्राप्यतेधर्मो वृत्तिर्धर्माद्गरीयसी १४
हे राजन् संपदासामर्थवाले जनोका और धर्महै और आप
दाविषे और धर्महै संपदाविषे दानधर्महै आपदाविषेसं
ग्रहकरणाधर्महै कोशसंग्रहसेपूर्व तपआदिक धर्मप्रा
प्तहोताहै अपने कुटुंबपालनाकी वृत्तिजोहै सो दानधर्म
से बलवानहै वृत्तिक्षयकरके दानधर्मकरणा अधर्म रू
पहै १४ ॥
धर्मं प्राप्य न्यायवृत्तिं न बलीयान विंदति
यस्माद्बलसो पपत्ति रेकांतेन । न विद्यते १५
जोनसा पुरु
कोईपुरुषभी सदाबलवाननहीहोताहै सो आपदाविषे न्यायवृ
षधनक्षयकर्के दुर्बलभयाहै जिसहेतूसे वृ
त्तिकर्के जीविकाको प्राप्तनहीहोताहै जिसकर्के अवपुमही
सोप्रयत्ननियम संपन्ननहीहै
बलसंपन्नताहोतीहै १५
तस्मादापत्स्वधर्मोपि श्रूयते धर्मलक्षणः
अधर्मो जायते तस्मिन्निति वै कवयो विदुः १६
आपदाविषे अधर्मकरणाभी धर्मजैसाकर्त
ताते हे राजन् अधर्मकरणाभी
व्यहोताहै प्रजाकी धनरक्षाताहूपी

श्री. शां.प. टी. २०८

आपमारणक्रिया शास्त्रविजयादिकुलधर्महोताहै धर्मवेत्ता
जन इसीप्रकार स्वधर्मरक्षाको कहतेहै १६

अनंतरं क्षत्रियस्य तत्र किं विचिकित्सति
यथास्य धर्मो नग्लायेन्नेयाच्छत्रुवशं यथा १७

क्षत्रीको जबआपदा निवृत्तहोवे तव अधर्मदोषनिवृत्ति
वासते दानधर्मादिप्रायश्चित्तरूप चिकित्साकहीहै जिस
करके इसकारण क्रियादिधर्मक्षीणनहीहोवे औरशत्रुज
नके वशभी क्षत्री राजानहोवे सो यत्न इसको कर्तव्यहै
अपनेको आपदाका क्लेशनहीहोवे सोई उसको अवश्य
कर्तव्यधर्महै १७

तत्कर्तव्य मिहेत्याहु र्नात्मान मवसादयेत्
सर्वात्मनैवधर्मस्य न परस्य नचात्मनः
सर्वोपायैरुज्जिहीर्षे दात्मान मिति निश्चयः १८

सर्वप्रकारसे धर्मअपना अथवा परायेका द्रव्यग्रहणक
रणा आपदाविषे धर्मरूपहीहै अपने आत्माको सर्व
प्रकारोंकरके आपदासे उद्धारकरे यही धर्मका निश्च
य भयाहै १८

तत्र धर्मविदां तात निश्चयो धर्म नैपुणे
उद्यमो नैपुणं क्षात्रे बाहुवीर्या दितिश्रुतिः १९

आत्मरक्षणविषे धर्मवेत्ताजनोंका धर्मकी निपुणताका
निश्चयप्रसिद्धहै क्षत्रिजातिविषे अपना उद्यमही धर्महै
सो अपने बाहुबलके वीर्यसे होताहै इसप्रकारकी पूर्व
ले लोकोंकी श्रुति प्रसिद्धभईहै १९

क्षत्रियो वृत्तिसंरोधी कस्य नधातु मर्हति
अन्यत्र तापसस्वाच्च ब्राह्मणस्वाच भारत २०

हे भारत क्षत्री राजाहै सो अपनी राजधर्मकी। वृत्तिके नि
रोधाविषे किसके द्रव्यको नहीग्रहणकरणेयोग्यहै उस
विषेभी तपस्वी जनोंकाद्रव्य और वेदवृत्ति संपन्न कुटुंबी
ब्राह्मणोंके द्रव्यविना सभके द्रव्यग्रहणकरणेको योग्यहै २०

यथा वै ब्राह्मणः सीद न्नयाज्य मपियाजयेत्

अभोज्या जाति चाश्नीया नथेदं नात्रसंशयः
जैसे ब्राह्मणजोहै सोकुटुंबपालनाकीवृत्तिसे कष्टहोवे तो
अयाज्यजोहै शूद्रादिक तिन्होंकोभी यज्ञादिककरावे अभो
ज्य अन्नकोभी भोजनकरे तैसे राजाभी आपदानिवृत्तिवा
ले प्रजासे अपने दंडकरादि द्रव्यगुणसेभी अधिकद्र
व्यको ग्रहणकरे २१
पीडितस्य किमद्वारं उत्पथो विधृतस्य च
अद्वारतः प्रद्रवति यदाभवति पीडितः २२
जो पुरुष पीडाको प्राप्तहोताहै उसको अपनी रक्षावास्ते
द्वारसे निकसना कहाहोताहै और जिसको बंधनस्थानवि
षे रोकरखाहै ऐसे पुरुषको अपने पलायनविषे अमार्ग
कुमार्गविचारकोहोताहै अपनी रक्षावास्ते सो पुरुषको
रविनाभी अमार्गकुमार्गसेभी अपनीइच्छासे निकस ॥
जाताहै ॥ २२
यस्य कोशबलग्लान्या सर्वलोक पराभवः
भैक्ष्यचर्या न विहिता नच विट् शूद्रजीविका २३
जिसराजाको कोशकी क्षीणताकरकै बलसेनाकी हानिकृ
कै सर्वलोक अपमानकरकै मानहानिहोतीहै भिक्षाचर्या
तो अतिनिंदितहै सो उसने क्षत्रिहोकर नहीकरणी और
वैश्यशूद्रादि नीचवर्णोकी सेवा वृत्तिभीनहीकरणीयोग्यहै
स्वधर्मानंतरावृत्ति र्जात्यानन्तरय जीवनः
वहतः प्रथमं कल्प मनुकल्पेन जीवनं २४
हे राजन् राजाको शत्रुविजयकरकै धनसंपादनकरणा
उत्तमवृत्तिको उसवृत्तिसे निकृष्ट अपने समीपवर्ति अप
नेपरायेराष्ट्रको लूटमारकरकै वृत्तिकरतव्यहै और अपनी
जातीलोकोसे याचनकरणा अतिनिकृष्टवृत्तिहै तातें
जिसको शत्रुविजयादि उत्तमस्वधर्मवृत्तिकाबलनहीहै
उसको निकृष्टवृत्तिजोहै प्रजापीडनादिकसोभी राजाको
योग्यकहीहै जैसे वृत्तिहीन बुभुक्षित ब्राह्मणको दानभी
नहीमिले तो ब्राह्मण धनहरणेविना चोरीआदिक वृ
त्तिभी आपदातरणेवास्ते धर्मरूपकहीहै जिसको आप

श्री. रा.प. मी. २०५

209

दाकर्के स्वधर्मवृत्तिनही होवे तो उसने अन्यायकर्केभी
वृत्तिकरणे धर्मरूपहै २४

आपद्गतेन धर्माणा मन्यायेनोपजीवनम्
अपिह्येत द्ब्राह्मणेषु दृष्टवृत्ति परिक्षये २५

जो आपदाविषे ब्राह्मणकोभी चौर्यादिवृत्तिकहीहे तो
क्षत्रियको प्रजापीडनादिवृत्तोविषे क्या संदेहवनताहे
यहधर्मवेत्ताजनोका निश्चितमतहे ताते आपदाविषे क्ष
त्रीधनसंपदावाले जोनसे बलकर्केभी धनको ग्रहण
करे आपदुःखीकदापिनहीहोवे २५

क्षत्रिये संशयःकस्मा दित्येवं निश्चितं सदा
आददीत विशिष्टेभ्यो नावसीदेत्कथंचन २६

कोभीकहतेहे ताते आत्म
रक्षाकरणेहारे +४

हे राजन् क्षत्रीको लोकोंको मारणेवालेको कहताहे और
रक्षाकरणेहारे क्षत्रीको बलसेभी धनहरणा कर्तव्यहे २६

हंतारं रक्षितारं च प्रजानां क्षत्रियं विदुः
तस्मात्संरक्षिताकार्य मादानं क्षत्रबंधुना २७

क्षत्रीको हिंसाविना और वृत्तिनहीहे इतरजीवमात्रकोभी
हिंसाशून्यवृत्तिनहीहे जोकोई अरण्यवासी मुनिजनहे
तिन्होकोभी हिंसाशून्यवृत्ति दृष्टनही होती हिंसा अन्नफ
लमूलादिकोविषेभी बीजांतर्गत जीवसत्ताबनीहे २७

अन्यत्रराज न्हिंसाया वृत्तिर्नेहास्ति कस्यचित्
अप्यरण्य समुत्थस्य एकस्यचरतो मुनेः २८

हे कुरुश्रेष्ठ ताते अपने ललाटको शंखरूपअस्थीविषे
लिखितवृत्तिके आश्रयको मानकर जीवना किसीको
शक्यनहीहोता विशेषकर्के प्रजापालन करणेहारे रा
जाको ललाटलिखी रेखाका आश्रयकहां बनताहे २८

नशंखलिखितां वृत्ति शक्यमास्थाय जीवितुं
विशेषतः कुरुश्रेष्ठ प्रजापालनमीप्सया २९

आपदाकालकी प्राप्तिविषे राजाने और राष्ट्रवासी लोको
नेनित्यही परस्पर रक्षाकरणे योग्यहे यह रक्षाधर्म
सदाही ऐसा सनातन बनताहे २९

परस्परं हि संरक्षा राज्ञा राष्ट्रेण चापदि
नित्यमेव हि कर्तव्या एष धर्मः सनातनः

जैसा राजा अपने राष्ट्रको आपदाकी प्राप्तिविषे द्रव्यसं
पदाके समूहकर्के सदा रक्षा करताहै तैसे राष्ट्रवासी लोको
ने राजाको आपदाप्राप्तिविषे द्रव्यदानकर्के रक्षाकर्तव्यहै ३०

राजा राष्ट्रं यथा यत्सु द्रव्यौघैरभि रक्षति
राष्ट्रेण राजाव्यसने रक्षितव्य स्तथा भवेत् ३१

हे राजेन्द्र जो राजा आपदाकर्के बुभुक्षित होवे सो अपने
कोशसंग्रहको अपनी वलसेनाको और मित्रको और जो कछु
शास्त्रवस्त्र अन्नादिक संग्रहविषे विचारकरे तो उसको
अपनीसे हरनहीकरे सभको अपने वशकरे ३१

कोशं दंडं वलं मित्रं यदन्य दपि संचितं
न कुर्वीता नरं राष्ट्रे राजा परिगतः क्षुधा ३२
वीजं भक्तेन संपाद्य मिति धर्मविदो विदुः
अत्रैतच्छंबरस्याहु र्महामायस्य दर्शने ३३

अपना वीज जोहै राजा सो भक्त जोहै प्रजालोक उसने सं
पदा संपन्न कर्तव्यहै नही रक्षाकरे तो अपने पश्चात्
जीवनेकेभी दुर्लभता होतीहै धर्मवेत्ताजन इसप्रकार
के तत्वविचारको जानतेहैं इसअर्थके निश्चयविषे म
हाउत्तम माया चरित्रका वेत्ता जो शंबरनामवाला दैत्या
चार्य उसका मत उदाहरणसे प्रमाणहै ३३

धिक्तस्य जीवितं राज्ञो राष्ट्रं यस्या वसीदति
अवृत्त्याल्प मनुष्योपि यो वै देशिक स्तथापि

जिसराजाका राष्ट्र अवृत्तिकर्के जीवनेको दुःखीहोता
है अल्पपरिवारवालाभी परसेवा वालाभी दुःखीसे
जीवताहै और परदेशकाभी मनुष्य जिसके राज्यविषे
उपजीवका विना दुःखसे जीवताहै ऐसे मंदभाग्य
राजाको धिगहै ३४

राज्ञः कोशबलं मूलं कोशमूलं पुनर्बलं
तन्मूलं सर्वधर्माणां धर्ममूलाः पुनः प्रजाः

कोशसंग्रह और बलसेना यह राजाके मूलकारणहे औ
र सेनाबलका मूल राजाका कोशसंग्रहहे सोकोशसं
ग्रह सर्वधर्मोंका मूलहै ताते राजधर्मका मूल सबही
प्रजाबनीहे ३५

नाम्या न पीडयित्वेह कोशः शक्यः कुतो बलं
तदर्थं पीडयित्वा च दोषं प्राप्नं न सोर्हति ३६

हे राजन् प्रजालोकोंको पीडाकरणे विना कोशसंग्रहक
रणा शक्यनहीहोता और कोशविना सेनाकाबलक
हाहोताहे ताते कोशवास्ते सेनाबलवास्ते प्रजापीडा
कोभी करलेवे राजा सो राजा दोषप्राप्तियोग्यनहीहोता

अकार्यमपि यज्ञार्थं क्रियते यज्ञकर्मस्
पतस्मात्कारणाद्राजा नदोषं प्राप्नुमर्हति ३७

यज्ञकर्मके विधानविषे पशुहिंसादि अकार्यभी किया
जाताहे इसकारणसे कोशसंग्रहवास्ते प्रजापीडाके
दोषको राजा प्राप्तहोने योग्यनही होताहे ३७

अर्थार्थमन्यद्भवति विपरीतमथापरं
अनर्थार्थमथाप्यन्यत्तत्सर्वं ह्यर्थकारणं ३८

हे राजन् अपने अर्थके वास्ते अन्यकार्यहोताहे उसको
न्यायकार्यके और विपरीत अनर्थकार्यहोताहे उस
अनर्थकार्य होर अर्थकार्यहोताहे यहसबही अपने
अनर्थका कारणहे ३८

एवं बुद्ध्या संप्रपश्येत् मेधावी कर्मनिश्चयं
यज्ञार्थमन्यद्भवति यज्ञोन्यार्थस्तथापरः

इसप्रकार बुद्धिवान् पुरुष कर्मकर्तव्यताके निश्चयको
जाने जैसे पशुहिंसादिक अन्यकार्यहे सो यज्ञवास्तेहे
और यज्ञजोहे अन्यकार्यके अपने चित्तके शुद्धिसंस्का
रवास्तेहे ताते यज्ञ और पशुहिंसा और चित्तचित्तसंस्का
र मोक्षवास्ते होताहे तैसे प्रजादंड कोशसंग्रहवास्ते
और शत्रुग्रह कोशसंग्रह सेनाबलके वृद्धिवास्तेहे कोश
बल वृद्धि शत्रुपराजयवास्ते और शत्रुपराजय अपने रा
ष्ट्रके पुष्टिवासते बनेहे यज्ञकाजो अर्थहे उसके अर्थवास्ते

और अन्यग्रन्थ वनाहे यह सभही यज्ञके साधनहे ३९

यज्ञस्यार्थार्थ मेवास्य तन्नावें यज्ञसाधनं ३९
उपमामत्र वक्ष्यामि धर्मतत्व प्रकाशिनीम्
यूपंछिन्दंति यज्ञार्थं तत्र ये परिपंथिनः ४०

हे राजन् इहां उदाहरणके उपमाकहतेहे सो उपमाकहते
हे सो उपमाधर्मतत्वको प्रकाशकरतेहे यज्ञक्रियाके अर्थ
वासते यूपस्तंभको जो पुरुष छेदनकरतेहे ४०

द्रुमाः केचन सामंता ध्रुवं छिंदंति तानपि
तेचापिनिपतंतोन्या निघ्नन्त्येव वनस्पतीन् ४१

उन्हके शत्रुहत्तहोतेहे और हक्षोके शत्रुभूतछेदनेकरणेहा
रे पुरुषहोतेहे सो हक्षजब छेदन होतेहे सो अपनेसमी
पकहक्षके शत्रुभूतहोतेहे जबयूपके हक्षछेदकर्के पति
तहोतेहे अपने आसपासके हक्षोंका अपने पाससे गिरा
इदेतेहे ४१

एवंकोशस्य महतो येनराः परिपंथिनः
तानहत्वा न पश्यामि सिद्धिमत्र परंतप ४२

इसीप्रकार कोशकासंग्रह करणेवाले जोनसे पुरुष म
हासंपदावालेहे उन्हको शत्रुरूपजोने उन्हको पीडनक
रणेविना इसलोकविषे आपदानिहत्तकरणेको और
उपायसिद्धीको मेनही विचारसेदेषताहूं ४२

धनेन जयते लोका वुभौ परमिमं तथा
सत्यं च धर्मवचनं यथा नास्त्यधनस्तथा ४३

हे राजन् धनकरके यह पुरुष उभयलोकोकोजयकरता
हे इह लोकोको शत्रुजयादिकर्मसे जयकरता और पर
लोकोको यज्ञादिकर्मसे जयकरताहे अपना सत्यधर्मको
रक्षाकरणेहोवे और धर्मकर्मकावचन प्रमाणकरणेहो
वेतो जैसाधनवानसमर्थहोताहे ऐसा अधनपुरुष
समर्थनहीहोताहे ४३

सर्वोपायै राददीत धनं यज्ञप्रयोजनम्
न तुल्यदोषः स्यादेवं कार्याकार्येषु भारत ४४

तातेयज्ञयागादि धर्मकर्म सिद्धिवास्ते सर्वोपायवलक

कैं धनकोग्रहणकरे परंतु कार्यग्रकार्य विहितनिषेध विचारकर्तव्यहे जैसे ग्रापदाविषे धनवास्ते प्रजापीडन करणाविहितहे और प्रजापीडनासे धनसंग्रहकरणा निषिद्धहे इसप्रकारके ग्रर्थसंग्रहविषे विचारकरे तो शास्त्रविधिको तुल्यदोषनहीहोताहे और देशकालके ग्रनुसारभी कोईकार्यभी ग्रकार्यहोताहे और ग्रकार्यभी कार्यहोताहे तहांकार्याकार्यकी विपरीतताका दोषनहीहोताहे ४४ ॥

नैतौ संभवतो राजन्कथंचिदपि भारत
नह्यरण्येषु पश्यामि धनवृद्धानहं क्वचित् ४५

हे राजन् यह जोहे धनसंग्रह और धनत्यागसो दोनोही एककालविषे एकपुरुषविषे सदाएकजैसे कदापिनहीहोते जो पुरुष सर्वत्यागकरके वनकोगयेहे तिन्हको धनसंपदासे वृद्धीवालेपुरुष मेनेकदापिकहीनहीदेखे ४५

यदिदं श्रूयते वित्तं पृथिव्यामिह किंचन
ममेदं स्यान्ममेदं स्यादित्ययं कांक्षते जनः ४६

जो यत्किंचित् पृथिवीविषे किंतहष्टहोताहे इसविषे विरक्त पुरुषकोई दृष्टनहीहोता मेरेको यह पदार्थहोवे मेरेको प्राप्तहोवे इसप्रकार सभही उत्तम मध्यम ग्रधमजन वांछाकरताहे ४६

न च राज्यसमो धर्मः कश्चिदस्ति परंतप
धर्मः संशब्दितो राज्ञामापदर्थमितोन्यथा ४६

और तुमने ग्रपने राज्यकर्मविषे पापशंका कदापिनहीकर्तव्यहे हे परंतप राज्यधर्मके समान और उत्तमधर्मनही है राजाको ग्रापदाविनाही बहोतधन प्रजासे ग्रहणकरणा पापदोषनहीकरताहे ४६

दानेन कर्मणा चान्ये तपसान्ये तपस्विनः
बुद्ध्यान्ये दाक्ष्येण चैवान्ये विन्दन्ति धनसंचयान्

हे राजन् केतेपुरुषदानकरकें धनवांछाकरतेहे और केतेपुरुष तपकरकें धनवांछाकरतेहे और केतेपुरुष ग्रपनी बुद्धीकी चतुरतासे धनकी वांछाकरतेहे धनसे विरक्त योगी तपस्वीजनभी नहीहे ४७

अधनं दुर्बलं प्राहु धनेन बलवान्भवेत्
सर्वं धनवताप्राप्य सर्वं तरतिकोशवान् ४८
अधन पुरुषको सभही दुर्बलकहतेहे धनकर्के पुरुष
बलवान्होताहे भोगसुख स्वर्गसुखजेताहे सोधनवा
नपुरुषको प्राप्तहोताहे धनवान् पुरुष संपूर्ण आपदा
समुद्रकोतरजाताहे ४८
कोशेन धर्मः कामश्च परलोकस्तथाप्ययं
तं च धर्मेण लिप्सेत नाधर्मेण कदाचन ४९
इति श्री महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां
शांतिपर्वणि राजधर्मेषु आपद्गत राजहानि
र्नाम शताधिकस्त्रिंशतमोध्यायः ॥ १३० ॥
हे राजन् धनसंग्रह कोशकर्के धर्मकर्म होताहे
परलोक यहलोकभी धनकर्के सिद्धहोताहे ऐसेध
नको देशकाल अवस्थाके मर्यादाकर्के संग्रहकरे
अधर्मकर्के अपने कोशविषे राजा धनसंग्रहको
कदापिनहीकरे ५० इतिश्री महाभारते शतसाह
स्र्यां संहितायां शांतिपर्वणि राजधर्मेषु आपद्गत रा
जहानिर्नाम शताधिक त्रिंशतमोध्यायः १३० ॥
शुभमस्तु सर्वजगताम्
॥ ॥
श्रीरामायनमः

पह महाभारत राजधर्मका पुस्तक श्रीमन्महारा
जासाहिब रणवीरसिंह बहादुर जी सी एस
आइ इंद्र महेंद्र सिपर सलतनत जंबू काश्मीर व ति
बतादिपतिके पढनेकाहे ॥